BAHN602DST

हिन्दी निबंध

बी.ए.

(छठे सेमेस्टर के लिए)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© **Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad**

Course : Hindi Nibandh

ISBN: 978-81-971904-1-4

First Edition: April, 2024

Publisher	:	Registrar, Maulana Azad National Urdu University
Edition	:	2024
Copies	:	200
Price	:	675/-
Copy Editing	:	Dr. Wajada Ishrat, MANUU, Hyderabad
		Dr. L. Anil, DDE, MANUU, Hyderabad
Cover Designing	:	Dr. Mohd. Akmal Khan, DDE, MANUU, Hyderabad
Printing	:	Print Time & Business Enterprises, Hyderabad

Hindi Nibandh

For

B.A. Hindi

6th Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

*Director:*dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)

संपादक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल
(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, स्नातकोत्तर और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिन्दी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabha Deo Sharma
Former Head, P.G. and Research Institute, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि.,हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

प्रो. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिन्दी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Prof. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Hyderabad Centre, Secunderabad, Hyd

डॉ. आफ़ताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (सं)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

डॉ. एल. अनिल
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (सं)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. L. Anil
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग

सहायक कुल सचिव, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

लेखक	**इकाई संख्या**
• **डॉ. वाजदा इशरत,** अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफेसर(सं), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू	1
• **श्रीमती शीला बालाजी**, असिस्टेंट प्रोफेसर, लिटिल फ्लावर डिग्री कॉलेज, उप्पल, हैदराबाद	2,3
• **डॉ. सुपर्णा मुखर्जी,** सहायक प्रोफेसर, भवन्स विवेकानंद डिग्री कॉलेज, सिकंदराबाद	4
• **डॉ. मंजु शर्मा,** अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, चिरेक इंटरनेशनल, हैदराबाद	5
• **डॉ. अनिता पाटिल,** सहायक प्रोफेसर, गुरु नानक महाविद्यालय, वेलाचेरी, चेन्नै	6
• **डॉ. डॉली,** सहायक प्रोफेसर, गुरु नानक महाविद्यालय, वेलाचेरी, चेन्नै	7
• **प्रो. निर्मला एस. मौर्य,** पूर्व कुलपति, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर	8
• **डॉ. चंदन कुमारी,** स्वतंत्र लेखिका, भोपाल (मध्य प्रदेश)	9
• **डॉ. बलजीत कुमार श्रीवास्तव,** सहायक आचार्य, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ	10
• **डॉ. हसन युनुस पठान,** सहायक प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सेंट जोसेफ विश्वविद्यालय, बेंगलुरू	11
• **श्री धर्मेंद्र कुमार सिंह,** सहायक शिक्षक, यूएचएस भतखोरिया गर्ल्स, बनियाडीह, गोड्डा(झारखंड)	12
• **डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा**, एसोशिएट प्रोफेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, चेन्नै	13
• **डॉ. आलोक कुमार पांडेय,** सहायक आचार्य, त्रिपुरा केंद्रीय विश्वविद्यालय, अगरतला.	14

- **डॉ. एल. अनिल,** अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफेसर(सं), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू, हैदराबाद 15
- **डॉ. शेख अफ़रोज फातेमा शेख हबीब,** एसोशिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मौलाना आज़ाद कॉलेज ऑफ आर्ट्स, साइंस एंड कॉमर्स, औरंगाबाद 16
- **डॉ. मोहम्मद आल अहमद,** सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, मुमताज़ पीजी कॉलेज, लखनऊ 17
- **प्रो. गोपाल शर्मा,** पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषाविज्ञान विभाग, अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथोपिया 18,24
- **श्रीमती पी. एल. निलया रेड्डी,** हिन्दी अध्यापक, हैदराबाद पब्लिक स्कूल, बेगमपेट, हैदराबाद 19
- **डॉ. अबु होरैरा**, अतिथि प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, मानू, हैदराबाद 20
- **डॉ. के. अविनाश,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, डॉ. बी. आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद 21
- **डॉ. सुषमा देवी**, एसोशिएट प्रोफेसर (हिन्दी), बद्रुका कॉलेज, हैदराबाद 22
- **डॉ. शशिबाला**, पूर्व हिन्दी अध्यापक, केंद्रीय विद्यालय, राष्ट्रीय पुलिस अकादमी, हैदराबाद 23

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	8
संदेश	:	निदेशक	10
भूमिका	:	पाठ्यक्रम–समन्वयक	12

खंड/ इकाई		**विषय**	**पृष्ठ संख्या**
खंड 1	**:**		
इकाई 1	:	निबंध: परिभाषा, स्वरूप, तत्व और प्रकार	15
इकाई 2	:	हिन्दी निबंध और निबंधकार : भारतेंदु युग और द्विवेदी युग	29
इकाई 3	:	हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्ल युग	46
इकाई 4	:	हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्लोत्तर युग	58
खंड 2	**:**		
इकाई 5	:	निबंधकार बालकृष्ण भट्ट : एक परिचय	73
इकाई 6	:	बालकृष्ण भट्ट के निबंध ‘साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है’ की विवेचना	90
इकाई 7	:	निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी: एक परिचय	113
इकाई 8	:	चंद्रधर शर्मा गुलेरी के निबंध ‘कछुआ धरम’ की विवेचना	126
खंड 3	**:**		
इकाई 9	:	निबंधकार रामचंद्र : शुक्ल एक परिचय	141
इकाई 10	:	रामचंद्र शुक्ल के निबंध ‘कविता क्या है’ की विवेचना	156
इकाई 11	:	निबंधकार हजारी प्रसाद द्विवेदी : एक परिचय	174
इकाई 12	:	हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध ‘अशोक के फूल’ की विवेचना	190
खंड 4	**:**		
इकाई 13	:	निबंधकार महादेवी वर्मा : एक परिचय	204

इकाई 14	:	महादेवी वर्मा के निबंध 'जीने की कला' की विवेचना	219
इकाई 15	:	रामधारी सिंह 'दिनकर' : एक परिचय	238
इकाई 16	:	रामधारी सिंह 'दिनकर' के निबंध 'भारत की सांस्कृतिक एकता' की विवेचना	248
खंड 5			
इकाई 17	:	निबंधकार हरिशंकर परसाई : एक परिचय	259
इकाई 18	:	हरिशंकर परसाई के निबंध 'पगडंडियों का जमाना' की विवेचना	269
इकाई 19	:	निबंधकार विद्यानिवास मिश्र: एक परिचय	279
इकाई 20	:	विद्यानिवास मिश्र के निबंध 'अस्ति की पुकार – हिमालय' की विवेचना	292
खंड 6			
इकाई 21	:	निबंधकार निर्मल वर्मा : एक परिचय	305
इकाई 22	:	निर्मल वर्मा के निबंध 'अतीत: एक आत्ममंथन' की विवेचना	320
इकाई 23	:	निबंधकार कुबेरनाथ राय : एक परिचय	334
इकाई 24	:	कुबेरनाथ राय के निबंध 'एक महाकाव्य का जन्म' की विवेचना	345
		परीक्षा प्रश्नपत्र का नमूना	**356**

प्रूफ रीडर:

प्रथम	:	डॉ. वाजदा इशरत, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर(सं), दू. शि. नि., मानू
द्वितीय	:	डॉ. एल. अनिल, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (सं), दू. शि. नि., मानू
अंतिम	:	डॉ. आफ़ताब आलम बेग, सहायक कुलसचिव, दू. शि. नि., मानू.

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यता प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय मातृभाषा / घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनने को अपना सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां हैं जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपने दूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ़्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना चुका है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले वर्षों कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामलों और संचार में भी काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किए गए हैं।

मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस परिवार का अंग बनने के लिए ह्रदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके के लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली से हुआ और इस के बाद 2004 में विधिवत तौर पर पारंपरिक शिक्षा का आग़ाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए।

देश की शिक्षा प्रणाली को बेहतर अंदाज़ से जारी रखने में UGC की अहम् भूमिका रही है। दूरस्थ शिक्षा (ODL) के तहत जारी विभिन्न प्रोग्राम UGC-DEB से मंजूर हैं।

पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है कि दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के छात्रों के मेयार को बुलंद किया जाये। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक़ दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवत्तापूर्ण करके स्व-अध्ययन सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड- 24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार किया गया है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज़ पर आधारित कुल 17 पाठ्यक्रम चला रहा है। साथ ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम भी शुरू किए जा रहे हैं। शिक्षार्थियों की सुविधा के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बेंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकत्ता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 6 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह, अमरावती और वाराणसी) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क मौजूद है। इस के अलावा विजयवाड़ा में एक एक्सटेंशन सेंटर कायम किया गया है। इन क्षेत्रीय केन्द्रों के अंतर्गत 160 से अधिक अधिगम सहायक केंद्र (Learner Support Centre) और 20 प्रोग्राम सेंटर काम कर रहे हैं, जो शिक्षार्थियों को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (DDE) अपने शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल कर रहा है। साथ ही सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ़ ऑनलाइन तरीके से ही दिया जाता है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर शिक्षार्थियों को स्व-अध्ययन सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध है। इसके साथ-साथ शिक्षार्थियों की सुविधा के लिए SMS और व्हाट्सएप्प ग्रुप एवं ईमेल की व्यवस्था भी की गयी है। जिसके द्वारा शिक्षार्थियों को पाठ्यक्रम के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसलिंग, परीक्षा आदि के बारे में सूचित किया जाता है। गत वर्षों से रेगुलर काउंसेलिंग के अतिरिक्त एडिशनल रेमेडिअल क्लासेस(ऑनलाइन) उपलब्ध कराये जा रहे हैं। ताकि शिक्षार्थियों के मेयार को बुलंद किया जा सके।

आशा है कि देश की शैक्षणिक और आर्थिक रूप में पिछड़ी आबादी को आधुनिक शिक्षा की मुख्यधारा से जोड़ने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी। आने वाले दिनों में शैक्षणिक जरूरतों के अनुरूप नई शिक्षा नीति (NEP 2020) के अंतर्गत विभिन्न पाठ्यक्रमों में परिवर्तन किया जायेगा और आशा है कि यह दूरस्थ शिक्षा को अत्यधिक प्रभावी और कारगार बनाने में मददगार साबित होगा।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'हिन्दी निबंध' शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के **बीए (हिन्दी) के छठे सेमेस्टर** के दूरस्थ शिक्षा माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार, नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

जैसा कि पुस्तक के नाम से ही स्पष्ट है, इसमें विद्यार्थियों के निमित्त आधुनिक हिन्दी साहित्य की अत्यंत महत्वपूर्ण विधा 'निबंध' से संबंधित सामग्री प्रस्तुत की गई है। कुल 24 इकाइयों में नियोजित इस सामग्री को 6 खंडों में विभाजित किया गया है। पहले खंड में निबंध के विधागत स्वरूप का परिचय देने के बाद हिन्दी साहित्य में इस विधा के उद्भव और विकास का जायजा लिया गया है। आगे 5 खंडों में से प्रत्येक में हिन्दी के दो-दो प्रतिनिधि निबंधकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय देते हुए उनके एक-एक निबंध की गहन विवेचना की गई है। इन निबंधकारों में शामिल हैं- बालकृष्ण भट्ट, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, हरिशंकर परसाई, विद्यानिवास मिश्र, निर्मल वर्मा और कुबेरनाथ राय। इन निबंधकारों और निबंधों का चयन इस प्रकार किया गया है कि छात्रों को हिन्दी निबंध की लगभग 150 साल की यात्रा के विकासक्रम का विधिवत परिचय प्राप्त हो सके और वे जान सकें कि इस विधा में कितनी अधिक विविधता है। पुस्तक की सारी सामग्री को छात्रों की सुविधा के लिए सरल, सहज और सुबोध भाषा-शैली में प्रस्तुत किया गया है।

सामग्री के चयन और इकाइयों के लेखन में यह भी ध्यान रखा गया है कि इनके अध्ययन से छात्रों में श्रेष्ठ मानवीय जीवन मूल्यों का विकास हो सके, वे राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ सकें और मानवता तथा विश्व-बंधुता के आदर्शों से भी अनुप्राणित हो सकें। यह पाठ सामग्री छात्रों की साहित्य और भाषा विषयक समझ का तो विकास करेगी ही, उनकी सौंदर्य दृष्टि को भी उदात्त बना सकेगी। इस पाठ सामग्री के अध्ययन से छात्रों के बौद्धिक, नैतिक और भाषिक स्तर का निश्चय ही विकास हो सकेगा, ऐसा विश्वास है।

इस समस्त पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन विद्वान इकाई लेखकों, ग्रंथों और ग्रंथकारों से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञ हैं।

डॉ. आफ़ताब आलम बेग
पाठ्यक्रम समन्वयक

हिन्दी निबंध

इकाई 1: निबंध: परिभाषा, स्वरूप, तत्व और प्रकार

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मूल पाठ: निबंध: परिभाषा, स्वरूप, तत्व और प्रकार

1.3.1 निबंध: अर्थ और परिभाषा

1.3.2 हिन्दी निबंध का स्वरूप

1.3.3 हिन्दी निबंध का क्रम

1.3.4 निबंध के तत्व

1.3.5 निबंध के प्रकार

1.4 पाठ सार

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

1.6 शब्द संपदा

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1प्रस्तावना

जिस रचना में किसी विषय पर भावों या विचारों को व्यस्थित ढंग से क्रमबद्ध रूप से सुगठित गद्य में प्रस्तुत किया जाए उस रचना को निबंध कहते हैं। निबंध किसी भी विषय पर लिखा जा सकता है। सफल निबंध की पहचान है कि वह विषय को पाठक के समक्ष स्पष्ट करने में समर्थ हो। निबंध को गद्य की कसौटी माना गया है। यह गद्य की आधुनिक विद्या है। निबंध का आरंभ भी भारतेंदु युग से ही हुआ था। इस काल में भारतीय समाज में एक नई चेतना का विकास हो रहा था। पढ़े-लिखे लोग अपने विचारों को स्वच्छंदतापूर्वक व्यक्त करने लगे थे। इस समय तक हिन्दी की अनेक पत्र पत्रिकाएँ प्रकाशित होने लगी थी। इनमें विविध विषयों पर जो विचार व्यक्त किए जाते थे। उन्हें हिन्दी निबंध का प्रारंभिक रूप कहा जा सकता है।

1.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों ! इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- निबंध के अर्थ और परिभाषा से परिचित हो सकेंगे।
- हिन्दी निबंध के उदभव के बारे में जान सकेंगे।
- हिन्दी निबंध साहित्य के विकास क्रम से परिचित हो सकेंगे।

- हिन्दी निबंध के स्वरूप एवंत त्व को जान सकेंगे।
- निबंध के प्रकार से अवगत होंगे।

1.3 मूल पाठ: निबंध: परिभाषा, स्वरूप, तत्व और प्रकार

1.3.1 निबंध: अर्थ और परिभाषा

गद्य की सभी विधाओं में निबंध का अपना अलग महत्व है। इस विधा को आत्माभिव्यक्ति के साधन के रूप में देखा जाता है। अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए साहित्य में काफी विधाएँ हैं। परंतु निबंध इनसे अलग है। निबंध में अप्रत्यक्ष रूप से घुमा फिरा कर लेखक अपनी बात नहीं करता बल्कि सीधे-सीधे पाठकों से बात करता है। निबंध में लेखक की अपनी निजी भावनाएँ और विचार होते हैं।

'निबंध' शब्द संस्कृत साहित्य से हिन्दी में लिया गया है। इसका अर्थ है एकत्र करना, जोड़ना, बाँधना, संगठन करना, रोकना आदि। प्राचीन काल में प्रेस अथवा मुद्रणालय नहीं थे। उस समय ऋषि मुनि अपने विचार भोज पत्रों पर लिखते थे। इन भोज पत्रों को संग्रह कर बाँधने और कसने की क्रिया को निबंध कहा जाता था। बाद में अर्थ संकोच के कारण इसका प्रयोग साहित्यिक रचना के लिए होने लगा।

अंग्रेज़ी के 'एसे' के पर्यायवाची रूप में ही निबंध का प्रयोग होता है। निबंध रचना में पृष्ठों की सीमा नहीं होती। यह विषय पर आधारित होता है। यह भी आवश्यक नहीं है कि निबंध लेखक साहित्यकार हो।

हिन्दी में निबंध साहित्य का विकास पाश्चात्य साहित्य की प्रेरणा से हुआ है। भारतीय और पाश्चात्य आचार्यों और समीक्षकों ने निबंध की अनेक परिभाषाएँ दी हैं, जिनसे निबंध के स्वस्प के अध्ययन में सहायता मिलती है।

आधुनिक 'एसे' अर्थात निबंध के जन्मदाता फ्रांसीसी लेखक माननेन के अनुसार 'निबंध विचारों, उद्देश्यों और कथाओं का मिश्रण है।'

अंग्रेज़ी निबंध साहित्य में बेकन का स्थान सबसे ऊपर है। उनके अधिकतर निबंध दार्शनिक विचारों और जीवन के यथार्थ अनुभवों से ओतप्रोत हैं। उनके अनुसार 'निबंध रचना कुछ इने-गिने पृष्ठों में होनी चाहिए तथा उसमें विचारों का अनावश्यक विस्तार न होकर, उसका सारगर्भित संक्षिप्त रूप होना चाहिए।'

पाश्चात्य विद्वान मरे ने लिखा है कि 'निबंध किसी विषय विशेष अथवा विषय की शाखा विशेष लिखी गई असाधारण लंबी रचना होती है, जिसमें मूलतः विरोध रहता है।' उनके अनुसार निबंध अनियमित, अपरिपक्क रचना होती है। अब इसे ऐसी रचना माना जाता है जो अपनी शैली में न्यूनाधिक व्यापक होती है, यद्यपि अपने विस्तार में सीमित रहती है।'

निबंध को लेकर भारतीय विद्वानों ने भी अपने विचार व्यक्त किए हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल भारतीय तथा पाश्चात्य साहित्य दोनों के जानकार थे। इसलिए निबंध को लेकर विचार व्यक्त करते समय दोनों साहित्य दृष्टियों को सामने रखकर उन्होंने लिखा है "आधुनिक पाश्चात्य लक्षणों के अनुसार निबंध उसी को कहना चाहिए जिसमें व्यंितव अर्थात व्यक्तिगत विशेषता हो। बात तो ठीक है यदि ठीक तरह से समझी जाए। व्यक्तिगत विशेषता का यह मतलब नहीं कि उसके प्रदर्शन के लिए विचार की श्रृंखला रखी ही न जाए या जान बूझकर जगह-जगह से तोड़ दी जाए, भावों की विवित्रता दिखाने के लिए ऐसी अर्थ-योजना की जाए जो उनकी अनुभूति के प्रकृत या लोकसामान्य स्वरूप से कोई संबंध ही न रखे अथवा भाषा से सरकस वालों की सी कसरतें या हठयोगियों के से आसन कराए जाएँ जिनका लक्ष्य तमाशा दिखाने के सिवाय और कुछ न हो। "शुक्ल जी ने निबंध को गंभीर विचार प्रकाशन का माध्यम माना। उनके अनुसार यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव है। इसलिए गद्य शैली के विवेचक उदाहरणों के लिए अधिकतर निबंध ही चुना करते हैं। शुक्ल जी स्वयं एक श्रेष्ठ निबंधकार थे। इसलिए यह परिभाषा काफी सारगर्भित है।

इन सभी परिभाषाओं के अध्ययन के बाद यह कहा जा सकता है कि निबंध गद्य साहित्य की वह सीमित पृष्ठवाली रचना है जिसमें लेखक अपने व्यक्तिगत विचार कसी हुई भाषा में कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त करता है।

बोध प्रश्न

- . निबंध किसे कहा जाता है?

1.3.2 हिन्दी निबंध का स्वरूप

निबंध हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग की एक महत्वपूर्ण गद्य विद्या है।

संस्कृत की प्रसिद्ध उक्ति "गद्य कविनां निकषं वदन्ति" के आधार पर हिन्दी के प्रमुख आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निबन्ध विद्या के बारे में कहा है कि "यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही अधिक हुआ है।

निबंध एक ऐसी विद्या है जिसमें निबंधकार किसी विषय पर अपने विचारों एवं भावों की प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्ति करता है। इससे रचनाकार के व्यंितव का भी प्रकाशन होता है। इसीलिए निबंध को आत्मभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम भी माना गया है।

निबंधों के जन्मदाता एवं फ्रेंच साहित्यकार मान्तेन कहते हैं कि 'मैं अपने को ही निबंधों में चित्रित करता हूँ।'

निबंधों में साहित्य की सभी विद्याओं के कुछ महत्वपूर्ण तत्वों का समावेश रहता है। कविता की भावुकता, नाटक की प्रभावशीलता, गतिशीलता रेखाचित्र की चित्रात्मकता संस्मरण की विवरगात्मता आदि तत्व निबंध विद्या को गद्य साहित्य की कसौटी के रूप प्रतिष्ठित करते हैं।

अतः निबंध गद्य साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली लेकिन अभिव्यंजना की दृष्टि से कठिन गद्य विद्या है।

1.3.3 हिन्दी निबंध का क्रम

हिन्दी में निबंध का जन्म और विकास आधुनिक काल की देन है। राष्ट्रीय चेतना के जागरण ने गद्य को विकास की भूमि प्रदान की जिसमें अन्य विधाओं के साथ निबंध का भी विकास होने लगा। राष्ट्रीय जागरण का उत्साह उमंग देश प्रेम सामाजि सरोकार मुद्रणकला का प्रचार-प्रसार, समाचार पत्रों का प्रकाशन और उनके माध्यम से लेखक और पाठक में आत्मीय संबंध की स्थापना आदि अनेक कारणों से साहित्य के अनेक रूपों के साथ निबंध का भी आरंभ हुआ।

हिन्दी साहित्य में निबंधों का उदय आधुनिक काल में अर्थात भारतेंदु युग में हुआ। यही निबंध का जन्मकाल है। इस कारण काल विभाजन में हिन्दी निबंध का प्रारंभिक काल भारतेंदु युग माना जा सकता है। हिन्दी निबंध के विकास को चार कालों में बाँटा जा सकता है-

(क) भारतेंदु युग

(ख) द्विवेदी युग

(ग) शुक्ल युग

(घ) शुक्लोत्तर युग

(क) भारतेंदु युग - भारतेंदु युग हिन्दी निबंध का आरंभिक काल है। हिन्दी साहित्य में निबंधों की उपलब्ध परंपरा का प्रवर्तन भारतेंदु हरिश्चंद्र से प्रारंभ हुआ। भारतेंदु युग में नई चेतना जाग रही थी। यह काल नवीन और पुरातन परंपराओं और विचारों के संघर्ष का काल था। भारतेंदु और उनके सहयोगी लेखकों ने पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी विधा के विकास में भरपूर योगदान दिया।

हिन्दी के पहले निबंध और निबंधकार को लेकर विद्वानों में काफी मतभेद है। कुछ बालकृष्ण भट्ट को तो कुछ भारतेंदु को प्रथम निबंधकार मानते हैं। इससे पूर्व के गद्य लेखकों का रचनाओं में निबंध के गुण उपलब्ध नहीं थे। अतः भारतेंदु के निबंध ही हिन्दी के प्राथमिक निबंध हैं। इनमें निबंध कला की सभी विशेषताएँ उपलब्ध हैं। भारतेंदु ने हिन्दी गद्य की अनेक विधाओं का सूत्रपात किया। भारतेंदु ने भिन्न-भिन्न विषयों को लेकर निबंधों की रचना की। उन्होंने इतिहास, समाज, धर्म, राजनीति, यात्रा, प्रकृति वर्णन एवं व्यंग्य - विनोद जैसे विषयों पर निबंधों की रचना की। सामाजिक कुरीतियों का खंडन उन्होंने अपने सामाजिक निबंधों के अंतर्गत किया हैं भारतेंदु ने अपने निबंधों में अंग्रेज़ी सरकार के ऊपर भी तीखा व्यंग्य किया है। उन्होंने सरल भाषा शैली में अपने आलोचनात्मक निबंधों की रचना की है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के निबंध 'भारतेंदु ग्रंथावली' के तीसरे खं डमें संकलित हैं। उनके प्रमुख निबंधों में शामिल हैं - नाटक, कालचक्र (जर्नल), लेवी प्राण लेवी, भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?, कश्मीर कुसुम,

जातीय संगीत, संगीत सार, हिन्दी भाषा और स्वर्ग में विचार सभा। भारतेंदु युग के निबंध मुख्य रूप से पत्र - पत्रिकाओं में प्रकाशित होते थे। उनका मुख्य उद्देश्य जनता को शिक्षित करना था।

भारतेंदु युग के प्रमुख निबंधकारों में बालकृष्ण भट्ट, बदरी नारायण चैधरी ‘प्रेमघन’, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, राधाचरण गोस्वामी, अंबिकादत्त व्यास। इन सभी निबंधकारों ने हिन्दी निबंध के विकास में बहुत योगदान दिया है।

बालकृष्ण भट्ट भारतेंदु युग के सर्वाधिक महत्वपूर्ण निबंधकार थे। ये ‘हिन्दी प्रदीप’ के संपादक थे। और अपनी पत्रिका के माध्यम से अपने निबंधों का संदेश जनता तक पहुँचाते थे। उन्होंने समकालीन समस्याओं पर जम कर लिखा है। बाल विवाह, स्त्रियाँ और उनकी शिक्षा, राजा और प्रजा, कृषकों की दयनीय स्थिति, देश सेवा का महत्व, महिला स्वतंत्रता आदि उनके निबंधों के मुख्य विषय हैं। बालकृष्ण भट्ट ने साहित्यिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि विषयों पर अत्यंत रोचक निबंध लिखे।

बदरीनारायण चैधरी ‘प्रेमघन’ की निबंध शैली को काफी विलक्षण माना जाता है। उन्होंने विचारात्मक और वर्णनात्मक निबंध लिखे। इनके निबंधों में समसामयिक विषयों और समस्याओं को देखा जा सकता है। इनके निबंधों की भाषा में आलंकारिता एवं कृत्रिमता देखने को मिलती है।

पं. प्रतापनारायण मिश्र भारतेंदु युग के प्रतिनिधि निबंधकार माने जाते हैं। ये विख्यात पत्रिका ‘ब्राह्मण’ के संपादक थे। ये मनोरंजक एवं व्यंग्य प्रधान निबंधों को लिखने में बहुत कुशल थे। भौं, पेठ, दाँत, नाक आदि पर इन्होंने निबंध लिखे हैं। ये अपने निबंध को विनोदपूर्ण बनाने का प्रयास करते थे। इनकी भाषा मुहावरेदार होती थी। भाषा पर इनकी बहुत जबरदस्त पकड़ थी।

बालमुकुंद गुप्त भी भारतेंदु युग के प्रमुख निबंधकारों में प्रमुख स्थान के अधिकारी हैं। इन्होंने भारतवासियों की राजनीतिक विवशता को नज़र में रखकर ‘शिवशंभु के चिट्ठे’ नाम का निबंध लिखा जो लाॅर्ड कर्ज़न को संबोधित है। इस युग के महत्वपूर्ण निबंधकारों में राधाचरण गोस्वामी का नाम भी उल्लेखनीय है। इन्होंने अपने निबंधों में सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किया।

छात्रो! अब तक की चर्चा से आप यह समझ सकते हैं कि भारतेंदु युग के निबंधकारों में विषय की विवधता पाई जाती है। इस युग में विभिन्न विषयों पर निबंध लिखे गए। इनके निबंधों की शैली में हास्य - व्यंग्य एवं मनोरंजन की प्रधानता है। भारतेंदु युग के निबंधकारों का मूल्यांकन करते हुए डाॅ. रामविलास शर्मा ने लिखा है ‘‘जितनी सफलता भारतेंदु युग के लेखकों को निबंध रचना में मिली उतनी कविता और नाटक में भी नहीं मिली। भारतेंदु युग की गद्य शैली के सबसे चमत्कारपूर्ण दर्शन निबंधों में ही मिलते हैं।’’

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युगीन निबंधों का विषय क्या था?
- बालमुकुंद गुप्त ने 'शिवशंभु के चिट्ठे' क्यों लिखे थे?

(ख) द्विवेदी युग - भारतेंदु युग में पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से निबंध साहित्य की पूर्ण प्रतिष्ठा हो चुकी थी। इसे आगे बढ़ाने का कार्य द्विवेदी युग में हुआ। यह युग द्विवेदी जी की भाषाई शुद्धता, नैतिकता एवं बौद्धिकता से काफी प्रभावित रहा। इस युग को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर द्विवेदी युग कहा गया है। इस युग के प्रमुख निबंधकारों में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, गोविंदनारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, माधव प्रसाद मिश्र, मिश्रबंधु, सरदार पूर्णसिंह, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, श्यामसुंदर दास, पद्मसिंह शर्मा, रामचंद्र शुक्ल, शिवपूजन सहाय और अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' आदि प्रमुख हैं।

इस युग की समस्त साहित्य चेतना महावीर प्रसाद द्विवेदी से आई है। उन्होंने सबसे पहले भाषा के शुद्ध रूप पर बल दिया। भाषा में व्याकरण एवं विराम चिन्हों के उपयोग पर बल दिया। इन सबका प्रभाव उस समय के निबंधों पर भी देखा जा सकता है। आचार्य द्विवेदी ने बेकन के निबंधों को बहुत ही आदर्श माना और उनका हिन्दी अनुवाद 'बेकन विचार रत्नावली' के नाम से किया। द्विवेदी जी के निबंधों का संग्रह है 'रसज्ञ रंजन'। इनके कुछ प्रमुख निबंध हैं कवि और कविता, प्रतिभा, साहित्य की महत्ता, कवि कर्तव्य, लोभ, मेघदूत आदि। इनके निबंधों में भारतेंदु युग की हास्य-व्यंग्य शैली का अभाव पाया जाता है। द्विवेदी जी के निबंधों की भाषा शुद्ध एवं सरल दिखाई पड़ती है जिसके कारण उनको समझना आसान होता है। इनके निबंध व्यास शैली में लिखे गए हैं। व्यास शैली में निबंधकार किसी विषय को कथावाचक की भाँति विस्तार से समझाते हुए चलता है।

द्विवेदी युग की निबंध परंपरा भारतेंदु युग की निबंध परंपरा से भिन्न पाई जाती है। कहने का अर्थ है कि दोनों में एक प्रकार का अलगाव पाया जाता है। गोविंदनारायण मिश्र द्विवेदी युग के मुख्य निबंधकार माने जाते हैं। उनके निबंधों के विषय साहित्यिक एवं सांस्कृतिक होते थे। इनके निबंध 'गोविंद निबंधावली' में संग्रहीत हैं। मिश्र जी के निबंधों में संस्कृत शब्द अधिक मिलते है।। अतः उनके निबंधों की भाषा तत्सम प्रधान है। उनके निबंध 'सार सुधा निधि' में प्रकाशित हुआ करते थे। आलंकारिक गद्य शैली के कारण आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उनके निबंधों को 'सायास अनुप्रास में गुँथे शब्द - गुच्छों का अटारा' कहा है।

द्विवेदी युग में आलोचनात्मक निबंध लिखने का श्रेय श्यामसुंदर दास को प्राप्त है। इनके निबंधों में विचारों की अभिव्यक्ति पर बल दिया जाता था। इनके मुख्य निबंध हैं भारतीय साहित्य की विशेषता, कर्तव्य और सभ्यता, समाज और साहितय आदि।

सरदार पूर्णसिंह के निबंधों के विषय अधिकतर नैतिक और सामाजिक होते हैं। संख्या में इनके निबंध बहुत अधिक नहीं हैं किंतु जितना भी हैं उनमें गुणवत्ता पाई जाती है। इसी कारण इन्हें द्विवेदी युग के श्रेष्ठ निबंधकार माना जाता है। इनके निबंध हिन्दी की अमूल्य निधि है। इनके प्रसिद्ध निबंधों में स्वाधीन चिंतन के साथ-साथ लाक्षणिक एवं व्यंग्य प्रधान शैली का प्रभाव देखा जा सकता है। इनके निबंध निम्नलिखित हैं - आचरण की सभ्यता, मज़दूरी और प्रेम, सच्ची वीरता, पवित्रता, कन्यादान और अमेरिका का मस्त योगी बाल्ट व्हिटमैन आदि।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी के निबंध भी संख्या में कम हैं किंतु उन्होंने कम ही रचनाओं के सहारे बहुत ऊँचा स्थान बना लिया। इनकी साहित्य क्षमता अप्रतिम थी। वे पुरातत्व के जाने माने विद्वान थे। कहानी और निबंध के क्षेत्र में उनका बहुत ऊँचा स्थान है। गुलेरी जी के निबंधों में उच्च कोटी का पांडित्य एवं व्यंग्य पाया जाता है। उनकी भाषा विषय के अनुकूल होती है तथा उसमें प्रौढ़ता का पुट पाया जाता है। उनके निबंध संग्रहों के नाम हैं - गोबर गणेश संहिता, कछुआ धर्म और मारेसि मोहि कुठाँव।

निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि द्विवेदी युग में अधिकतर विचार प्रधान निबंधों की रचना हुई। इस युग में भारतेंदु युग की अपेक्षा अधिक प्रौढ़ भाषा का प्रयोग निबंधों में किया गया है। इन निबंधकारों ने युगीन समस्याओं की अपेक्षा साहित्यिक एवं वैचारिक समस्याओं पर अपना ध्यान केंद्रित किया है। इस समय के निबंधकारों की भाषा व्याकरणसम्मत एवं प्रौढ़ है।

बोध प्रश्न

- 'व्यास शैली' किसे कहते हैं?
- गोविंदनारायण मिश्र के निबंधों के संबंध में शुक्ल जी का क्या विचार है?

(ग) शुक्ल युग - हिन्दी निबंध के तृतीय चरण को शुक्ल युग के नाम से जाना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने द्विवेदी युग से ही लिखना शुरू कर दिया था, किंतु उनके विचारों में प्रोढ़ता तथा गंभीरता उनके बाद के निबंधों में नज़र आती है। शुक्ल जी हिन्दी के सर्वाधिक चिंतनशील निबंधकार के रूप में आए और अपनी उच्च कोटी के लेखन से सबको प्रभावित किया। इसलिए इस अवधि को हिन्दी निबंध का 'उत्कर्ष काल' अथवा 'स्वर्ण युग' कहा जाता है। इस युग के प्रमुख निबंधकारों में आचार्य रामचंद्र शुक्ल, जयशंकर प्रसाद, गुलाब राय, बेचन शर्मा उग्र, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, माखनलाल चतुर्वेदी, वियोगी हरि, रायकृष्ण दास, वासुदेव शरण अग्रवाल, शांतिप्रिय द्विवेदी, रघुवीर सिंह आदि आते हैं।

इस युग के निबंध साहित्य को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने गहन अध्ययन और चिंतन से परिष्कृत किया है। चिंतामणि भाग 1 और 2 में संकलित निबंधों में मस्तिष्क और हृदय का सुंदर संयोग पाया जाता है। चिंतामणि में संकलित निबंधों ने हिन्दी निबंध को बहुत ऊँचाई पर पहुँचा दिया। निबंध के सभी गुण इनके निबंधों में पाए जाते हैं। इनके निबंध दो प्रकार के हैं -

साहित्यिक समीक्षा संबंधी निबंध तथा मनोविकार संबंधी निबंध। तुलसी का भक्ति मार्ग, कविता क्या है, साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद साहित्यिक समीक्षा के अंतर्गत आने वाले निबंध हैं। उत्साह, लज्जा और ग्लानि, श्रद्धा-भक्ति, क्रोध आदि मनोविकार संबंधी निबंध हैं।

शुक्ल जी के निबंध विषय प्रधान या व्यक्ति प्रधान होते हैं। भाषा की दृष्टि से उनके निबंधों को हिन्दी निबंध का आदर्श कहा जा सकता है। उनके निबंधों में सभी प्रकार की शैलियों का प्रयोग पाया जाता है। गणपतिचंद्र गुप्त ने शुक्ल जी के विषय में अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है - "वस्तुतः शुक्ल जी के निबंधों में वे सभी गुण मिलते हैं जो गंभीर विषयों के निबंधों के लिए अपेक्षित हैं। शुक्ल जी की शैली में भी निजी विशिष्टता मिलती है। भारतेंदु युग की सी मौलिकता उसमें है, किंतु वे उनके छिछलेपन से दूर है, द्विवेदी युग की सी विचारात्मकता उसमें है किंतु वैसी शुष्कता का उनमें अभाव है।" शुक्ल जी के निबंधों में साहित्यिक भाषा का प्रयोग पाया जाता है।

शुक्ल युग के महत्वपूर्ण साहित्यकार हैं बाबू गुलाबराय। ललित निबंध की दृष्टि से इनकी कुछ रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। ठलुआ - क्लब, फिर निराशा क्यों, मेरी असफलताएँ आदि संग्रहों में इनके व्यक्तिगत निबंध संकलित हैं। मेरा मकान, मेरी दैनिकी का एक पृष्ठ, प्रीतिभोज आदि उनके उल्लेखनीय ललित निबंध हैं।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी के मुख्य निबंध हैं अतीत स्मृति, उत्सव, रामलाल पंडित, श्रद्धांजलि के दो फूल। इनके निबंधों में लेखक की भावुकता, आत्मीयता और व्यंग्य का मिला जुला रूप देखा जा सकता है। इनके निबंध 'पंचपात्र' में संग्रहीत हैं।

शुक्ल युग के एक और महत्वपूर्ण निबंधकार हैं शांतिप्रिय द्विवेदी। इन्होंने आलोचनात्मक निबंध की रचना की। इनके अतिरिक्त सांस्कृतिक विषयों पर निबंध लिखने वाले निबंधकार में डाॅ. वासुदेव शरण अग्रवाल का नाम आता है। लाक्षणिक एवं प्रतीकात्मक भाषा शैली तथा भावप्रधान निबंध लिखने वालों में माखनलाल चतुर्वेदी का नाम लिया जा सकता है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि शुक्ल युग में निबंधों का विषय बहुत ही गंभीर तथा ठोस हुआ करता था। सभी प्रकार की समस्याओं पर लिखा जाता था।

बोध प्रश्न

- शुक्ल युग में निबंधों का विषय क्या रहा?

(घ) शुक्लोत्तर युग - शुक्लोत्तर युग का आरंभ 1940 ई. से माना जाता है। इस युग की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इस समय देश की राजनीति और सामाजिक समस्याओं में काफी बदलाव आया। शुक्लोत्तर युग परतंत्रता और स्वतंत्रता दोनों का मिला - जुला समय था। इस युग के साहित्यिकारों पर अनेक विचारधाराओं का प्रभाव पड़ा। इस युग के सभी निबंधकारों ने

निबंध की नई दिशाएँ खोजीं। इस काल में समीक्षात्मक, विचारात्मक तथा ललित निबंधों की रचना हुईं। क्योंकि इस युग के निबंधकार भारत - पाठ युद्ध, भारत-चीन युद्ध, आपातकाल आदि से भी प्रभावित थे।

इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेंद्र, रामधारी सिंह दिनकर, जयशंकर प्रसाद, इलाचंद्र जोशी, जैनेंद्र, प्रभाकर माचवे, डॉ. भगीरथ मिश्र, डॉ. रामविलास शर्मा, डॉ. विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, देवेंद्र सत्यार्थी, कन्हैलाल मिश्र आदि।

शुक्ल जी की परंपरा को आगे बढ़ाने वालों में प्रमुख हैं नंददुलारे वाजपेयी। इनके निबंधों में वैयक्तिकता एवं व्यंग्य की प्रधानता पाई जाती है। उनके मुख्य निबंध हैं हिन्दी साहित्य: बीसवीं शताब्दी, आधुनिक साहित्य, नया साहित्य: नए प्रश्न आदि।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी शुक्लोत्तर युग के प्रमुख निबंधकार के रूप में जाने जाते हैं। इनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह हैं अशोक के फूल, विचार और वितर्क, कल्पलता, विचार प्रवाह, कुटज, हमारी साहित्यिक समस्याएँ, गतिशील चिंतन, नाखून क्यों बढ़ते हैं, आम फिर बौरा गए आदि। द्विवेदी जी के निबंधों में सामाजिक समस्याओं का चित्रण भारतीय परंपरा का प्रदर्शन तथा मानव मूल्यों का विश्लेषण पाया जाता है। द्विवेदी जी के निबंधों का विषय बहुत व्यापक है। इनकी शैली विषय के अनुरूप बदलती है। आधुनिक युग की बुराइयों का चित्रण करने के लिए वे हास्य - व्यंग्य शैली का प्रयोग करते हैं। कालीदास के युग का वर्णन करते समय उनके शब्द संस्कृत के हो जाते हैं। उन्होंने शोधपरक निबंधों की भी रचना की है। कहने का अभिप्राय है कि भाषा की लय, गुँफित पदावली, विषय वैविध्य, बिंबात्मक चित्रण आदि के कारण द्विवेदी जी के निबंध श्रेष्ठ हैं।

शुक्लोत्तर युग के प्रमुख निबंधकारों में शांतिप्रिय द्विवेदी जी का नाम भी आता है। ये एक समीक्षात्मक निबंध लेखक है। इनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं - संचारिणी, युग और साहित्य, धरातल, साकल्य, वृंत और विकास। हिन्दी में शांतिप्रिय द्विवेदी को प्रभाववादी समीक्षा के अग्रदूत के रूप में जाना जाता है। इनके समीक्षात्मक निबंधों का विषय अधिकतर साहित्येतर हैं।

रामधारी सिंह 'दिनकर' ने भी निबंधों की रचना की। अर्धनारीश्वर, हमारी सांस्कृतिक एकता, प्रसाद, पंत और मैथिलीशरण, राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय साहित्य उनके निबंध संग्रह हैं। उनके निबंधों में मानवीय आस्था को देखा जा सकता है।

डा. नगेंद्र की यह विशेषता है कि वह गंभीर से गंभीर विषय को बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हैं ताकि पढ़ने वाले को आसानी से समझ में आ जाए। उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं विचार

और विवेचन, विचार और अनुभूति, विचार और विश्लेषण आदि। उनके निबंधों का बृहत संग्रह है 'आस्था के चरण'।

रामविलास शर्मा प्रगतिशील निबंधकार माने जाते हैं। उन्होंने अपने निबंधों के माध्यम से प्रगतिशील दृष्टिकोण दिखाने का प्रयास किया है। उन्होंने व्यंग्यपूर्ण शैली में गंभीर विचारों को प्रस्तुत किया। इनके मुख्य निबंध हैं प्रगति और परंपरा, संस्कृति और साहित्य आदि।

1.3.4 निबंध के तत्व

निबंध के प्रमुख तत्व निम्नलिखित होते हैं।

1. संक्षिप्तता
2. गद्य की अनिवार्यता
3. व्यक्तित्व की प्रधानता
4. सजीवता
5. भाषा शैली

1. संक्षिप्ता:- निबंध में संक्षिप्ता बहुत ही महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है। सभी महत्वपूर्ण बातें संक्षेप में होनी चाहिए। इसका सारांश विषय ही पुनः झलक देता है और पाठक को आखिरी संदेश वहीं से मिलता है।

2. गद्य की अनिवार्यता:- निबंध गद्य की ही विद्या है। अधिकतर निबंध गद्य में ही होता है गद्य इसकी अनिवार्य शर्त होती है, किन्तु कभी कभी इसमें पद्य का भी समावेश देखा जाता है।

3. व्यक्तित्व की प्रधानता:- जब कोई लेखक किसी विषय पर निबंध लिखता है तो उस निबंध में उसका व्यक्तित्व भी नज़र आ जाता है। उदाहरण के लिए हम आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंधों को देख सकते हैं। इन निबंधकारों के निबंधों में इसका व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ता है।

4. सजीवता:- निबंधकार जब किसी निबंध की रचना करता है तो वह उसके माध्यम से किसी विचार की अभिव्यक्ति करता है या किसी भावना का चित्रण करता है। अतः निबंध को रोचक होना चाहिए उसमें सजीवता का होना भी आवश्यक होता है।

5. भाषा शैली:- निबंध की भाषा सरल होनी चाहिए वह भाषा शैली प्रभावशाली होनी चाहिए। निबंध में भाषा शैली का महत्वपूर्ण स्थान होता है। निबंध की भाषा विषय के अनुरूप होनी चाहिए। तथा इसकी भाषा संस्कृतिक, उर्दूनिष्ठ तथा बोल-चाल के निकट होनी चाहिए।

1.3.5 निबंध के प्रकार

मुख्य तौर पर निबंध के चार प्रकार माने गए हैं-

(1) वर्णनात्मक निबंध:- वर्णनात्मक निबंध उस निबंध को कहते हैं जिसमें किसी घटना, वस्तु अथवा स्थान का वर्णन होता है। इसकी भाषा सरल और रोचक होती है। वर्णणात्मक निबंध को

पढ़कर उस वस्तु घटना या स्थान का पूरा चित्र आँखों के सामने आ जाता है। किसी त्यौहार जैसे - होली दीपावली, ईद या क्रिसमस, यात्रा, दृश्य स्थान या घटना, गणतंत्र दिवस की परेड, ताजमहल, ओलंपिक खेल आदि पर लिखे गए निबंध प्रायः वर्णनात्मक निबंध के अंतर्गत आते हैं।

(2) विचारात्मक निबंध:- विचारात्मक निबंध चिंतन अर्थात विचार की प्रधानता होती है। इस प्रकार के निबंध लिखना प्रायः थोड़ा कठिन होता है। मूदान यज्ञ, अहिंसा परमो धर्म, विधवा विवाह जैसे सामाजिक राष्ट्रीय एकता, विश्वबंधुत्व जैसे राजनीतिक तथा दार्शनिक विषय इस निबंधों के अन्तर्गत आते हैं।

(3) भावात्मक निबंध:- भावात्मक निबंध हमेशा भावना प्रधान होते हैं जैसे गर्मी की छुट्टी, बरसात की रात, बुढ़ापा, मेरे सपनों का भारत आदि। इसमें कल्पनात्मक निबंध भी आते हैं। कल्पनात्मक निबंध के उदाहरण हैं - यदि मैं एक दीन का प्रधानमंत्री होता, मेरी अभिलाषा, नदी की आत्मकथा आदि।

(4) साहित्यिक या आलोचनात्मक निबंध:- किसी साहित्यकार के द्वारा किसी साहित्यिक विद्या या साहित्यिक प्रवृत्ति पर लिखा गया निबंध साहित्यिक या आलोचनात्मक निबंध कहलाता है, जैसे प्रेमचंद, तुलसीदास आधुनिक हिन्दी कविता, छायावाद हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग आदि इसमें ललित निबंध भी आते हैं। इनकी भाषा काव्यात्मक और रसात्मक दोनों होती है।

1.4 पाठ सार

निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें लेखक किसी विषय पर अपने विचारों को स्वच्छंद रूप में व्यक्त करता है। हिन्दी निबंध के विकास को चार कालों में विभक्त किया जा सकता है। जैसे भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, शुक्ल युग और शुक्लोत्तर युग।

भारतेंदु युग हिन्दी निबंध की विकास यात्रा का प्रारंभिक चरण है। भारतेंदु के निबंध ही हिन्दी के प्राथमिक निबंध हैं जिनमें निबंध कला की मूलभूत विशेषताएँ उपलब्ध हैं। भारतेंदु के निबंध विषय एवं शैली की दृष्टि से बहुत ही उच्च कोटी के हैं। उन्होंने इतिहास समाज, धर्म, राजनीति, प्रकृति जैसे विषयों पर निबंधों की रचना की। इस युग के प्रमुख निबंधकारों में भारतेंदु के अतिरिक्त बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुंद गुप्त, राधाकृष्ण गोस्वामी, अंबिकादत्त व्यास आदि प्रमुख हैं। भारतेंदु युग के निबंधकारों के विषय वस्तु व्यापक थे। इस युग के निबंधकरों के निबंध में हास्य-व्यंग्य एवं मनोरंजन का पुट पाया जाता है।

हिन्दी निबंध के विकास के दूसरे चरण को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर 'द्विवेदी युग' कहा जाता है। इस काल के निबंधों में गंभीरता है तथा भारतेंदु युग की हास्य-व्यंग्य शैली का अभाव। इस युग में भाषा की शुद्धता पर अधिक बल देने के कारण इनकी भाषा में

प्रौढ़ता पाई जाती है। इनकी भाषा व्याकरण सम्मत थी। इस समय के निबंधकारों ने साहित्यिक एवं वैचारिक समस्याओं को अपने निबंधों का विषय बनाया।

हिन्दी निबंध के तृतीय चरण को 'शुक्ल युग' कहा जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के नाम पर इस युग का नाम शुक्ल युग रखा गया। इनके निबंध चिंतामणि में संकलित हैं। चिंतामणि में संकलित निबंधों में निबंध कला के सभी गुण मौजूद हैं। शुक्ल युग को हिन्दी निबंध का स्वर्ण युग कहा जाता है। इस युग में निबंधों का विषय बहुत व्यापक था तथा उसमें गंभीरता भी पाई जाती थी। भाषा शैली की दृष्टि से यह युग द्विवेदी युग की तुलना में अधिक विकसित एवं प्रौढ़ है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल इस युग की महानतम उपलब्धि है और वे हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ निबंधकार कहें जाते हैं।

'शुक्लोत्तर युग' हिन्दी निबंध का चैथा चरण है। इसका आरंभ 1940 ई. से माना जाता है। इस समय देश की राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं में काफी बदलाव आया। इनका प्रभाव उस समय के निबंधों पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इस समय में ज़्यादातर समीक्षात्मक, विचारात्मक तथा ललित निबंधों की रचना हुई। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, नंददुलारे वाजपेयी और पं. विद्यानिवास मिश्र इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं।

छात्रो! इस प्रकार हम देख सकते हैं कि हिन्दी निबंध साहित्य ने बहुत कम समय में प्रगति की है। भारतेंदु युग से लेकर वर्तमान युग तक हिन्दी निबंध ने क्रमशः प्रौढ़ता प्राप्त की है। आज भी हिन्दी निबंध नवीनता की खोज में है।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. राष्ट्रीय चेतना और नवजागरण ने हिन्दी में निबंध विधा के उभ्दव और विकास को गति प्रदान की।
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र और बालकृष्ण भट्ट को हिन्दी के आरंभिक निबंधकारों के रूप में जाना जाता है।
3. पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से भारतेंदु युग में निबंध साहित्य की पूर्ण प्रतिष्ठा हो चुकी थी।
4. द्विवेदी युग में विचार प्रधान सामाजिक और नैतिक विषयों पर अनेक निबंधकरों ने अपनी कलम चलाई। इस युग में थोड़ा लिखकर अधिक प्रभाव उत्पन्न करने की दृष्टि से अध्यापक पूर्णसिंह का नाम विशेष उल्लेखनीय है।
5. छायावाद युग को निबंध साहित्य के युग में 'शुक्ल युग' कहा जाता है। क्योंकि आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'चिंतामणि' के अपने निबंधों द्वारा इस विधा को उच्च शिखर तक पहुँचाया।
6. शुक्लोत्तर युग में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'ललित निबंध' को हिन्दी में प्रतिष्ठित किया। आगे इसकी एक लंबी परंपरा चली।

1.6 शब्द संपदा

1. अग्रसर	-	आगे बढ़ता हुआ
2. अप्रत्यक्ष	-	जो दिखाई न दें
3. कुरीति	-	बुरी रीतियाँ, जिसमें समाज या व्यक्ति को हानि हो
4. चिंतन	-	गहराई से सोचना
5. परिष्कृत	-	सुधारा हुआ, शुद्ध किया हुआ
6. प्रारंभिक रूप	-	शुरूआती रूप से
7. प्रौढ़ता	-	परिकल्पना
8. मुद्रणालय	-	छापाखाना, प्रेस
9. मौलिकता	-	असली, वास्तविक
10. विधा	-	साहित्य का एक रूप
11. व्यापक	-	विस्तृत रूप से
12. शैली	-	तरीका, ढंग
13. समस्या	-	परेशानी
14. सारगर्भित -		जिसमें कुछ महत्व की बात हो, सार पूर्ण
15. स्वच्छंद रूप	-	अपने इच्छा अनुसार
16. हास्य-व्यंग्य	-	किसी पर व्यंग्य से हँसा जाए या उपहास

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खण्ड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. हिन्दी निबंध के विकास क्रम का संक्षिप्त परिचय दीजिए
2. हिन्दी निबंध के विकास क्रम में द्विवेदी युग के योगदान का वर्णन कीजिए।
3. 'शुक्ल युग हिन्दी निबंध का उत्कर्ष काल है।' इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

खण्ड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. निबंध के अर्थ एवं परिभाषा पर विचार कीजिए।

2. रामचंद्र शुक्ल के निबंध कला पर प्रकाश डालिए।

3. शुक्लोत्तर युग का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

खण्ड (स)

। सही विकल्प चुनिए

1. 'स्वर्ग में विचार सभा' के रचनाकार कौन हैं?

(क) रामचंद्र शुक्ल (ख) भारतेंदु हरिश्चंद्र

(ग) विद्यानिवास मिश्र (घ) शांतिप्रिय द्विवेदी

2. इनमें से एक हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध संग्रह नहीं है।

(क) अशोक के फूल (ख) कुटज (ग) श्रद्धा-भक्ति (घ) कल्पलता

3. प्रभाववादी समीक्षा के अग्रदूत कौन हैं?

(क) रामचंद्र शुक्ल (ख) भारतेंदु हरिश्चंद्र

(ग) विद्यानिवास मिश्र (घ) शांतिप्रिय द्विवेदी

।। रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. 'साधारणीकरण' ....के अंतर्गत आने वाला निबंध है।

2. 'शिवशंभु के चिट्ठे' में .... को संबोधित किया गया है।

3. द्विवेदी युग में आलोचनात्मक निबंध लिखने का श्रेय .... को प्राप्त है।

।।। सुमेल कीजिए

(1)आस्था के चरण (क) सरदार पूर्णसिंह

(2) चिंतामणि (ख) विद्यानिवास मिश्र

(3) तुम चंदन हम पानी (ग) रामचंद्र शुक्ल

(4) मजदूरी और प्रेम (घ) नगेंद्र

1.8 पठनीय पुस्तकें

---

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र और हरदयाल

2. हिन्दी साहित्य का गद्य साहित्य, रामचंद्र तिवारी

3. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, बच्चन सिंह

4. गद्य की नई विधाओं का विकास, माजीद असद

5. हिन्दी साहित्य का नवीन इतिहास, लाल साहब सिंह

इकाई 2 : हिन्दी निबंध और निबंधकार : भारतेंदु युग और द्विवेदी युग

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मूल पाठ : हिन्दी निबंध और निबंधकार : भारतेंदु युग और द्विवेदी युग
2.3.1 भारतेंदु युग के निबंध और निबंधकार
2.3.2 द्विवेदी युग के निबंध और निबंधकार
2.4 पाठ सार
2.5 पाठ की उपलब्धियाँ
2.6 शब्द संपदा
2.7 परीक्षार्थ प्रश्न
2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के समय अर्थात सन् 1850 (लगभग) तक भारत में स्थापित हो चुके थे। समाचार पत्र भी प्रकाशित होने लगे थे। हिन्दी का प्रथम समाचार पत्र (साप्ताहिक) उदंत मार्तंड शुरु होकर आर्थिक तंगी के कारण बंद हो चुका था। लेकिन हिन्दी सेवियों और प्रेमियों की कमी न थी। इन दो सुविधाओं के चलते हिन्दी में गद्य साहित्य विशेषकर निबंध लेखन को प्रेरणा मिली। हिन्दी के निबंध साहित्य को अध्ययन की सुविधा के लिए भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, शुक्ल युग और शुक्लोत्तर युग के शीर्षकों में बाँटा जाता है।

प्रिय छात्रो, इस इकाई में हम भारतेंदु युग और द्विवेदी युग के निबंध और निबंधकारों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का पहला युग भारतेंदु युग (लगभग सन् 1850 – 1900 तक) के नाम से जाना जाता है। इस युग के प्रवर्तक रचनाकार भारतेंदु हरिश्चंद्र थे। इसी युग में नाटक, उपन्यास, कहानी, आलोचना, रेखाचित्र, यात्रावृतांत, आत्मकथा आदि गद्य की विभिन्न विधाओं के उद्भव व विकास के साथ ही निबंध का उद्भव व विकास हुआ। इस युग का गद्य साहित्य व निबंध भारत की जनता में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक रूप से चेतना के जागृत होने का साक्षी हैं। इसीलिए इस युग को पुनर्जागरण काल भी कहा जाता है। इसी युग से गद्य लेखन के लिए खड़ी बोली हिन्दी का प्रयोग स्थापित हो गया। स्वयं भारतेंदु ने पद्य के लिए ब्रजभाषा तथा गद्य के लिए खड़ी बोली को चुना।

द्विवेदी युग का समय लगभग सन् 1900 – 1920 तक का माना जाता है। इस युग के प्रमुख रचनाकार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी थे। वे सरस्वती पत्रिका के संपादक थे। इस पत्रिका के माध्यम से आचार्य द्विवेदी ने अपने समय के साहित्यकारों की भाषा को सुधारा।

हिन्दी भाषा व साहित्य को व्यवस्थित और प्रतिष्ठित करने में आचार्य द्विवेदी द्वारा संपादित सरस्वती पत्रिका की बहुत बड़ी भूमिका है। इस युग से पद्य और गद्य दोनों ही के लिए खड़ी बोली का प्रयोग होने लगा।

2.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप निम्नलिखित बिंदुओं पर चर्चा और ज्ञान प्राप्त करेंगे –

1. हिन्दी साहित्य में निबंध विधा का उद्भव एवं विकास की जानकारी प्राप्त करेंगे
2. हिन्दी साहित्य के पुनर्जागरण काल के आरंभिक निबंधों के विषयों के बारे में जानेंगे
3. भारतेंदु युग के निबंधकारों का संक्षिप्त परिचय और उनके निबंध की विशेषताओं को जानेंगे
4. द्विवेदी युग के निबंधकारों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करके उनके निबंधों की विशेषताएँ जान पाएँगे

2.3 मूल पाठ : हिन्दी निबंध और निबंधकार : भारतेंदु युग और द्विवेदी युग

2.3.1 भारतेंदु युग के निबंध और निबंधकार

भारतेंदु युग का समय सन् 1857 से 1900 तक माना जाता है। इस काल खंड में हिन्दी में गद्य की विभिन्न विधाओं में लेखन शुरु हुआ। निबंध लेखन का विकास भी इसी समय हुआ। वैसे हिन्दी में निबंध लेखन की शुरुआत राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद द्वारा रचित राजा भोज का सपना (1839) से माना जाता है। यह निबंध एक स्वप्न की कथा है। इसमें लेखक ने नैतिक सिद्धांत एवं उपदेशात्मक विचार को अंकित किया है। लेकिन इस निबंध के बाद कोई सुव्यवस्थित परंपरा नहीं दिखाई देती है। भारतेंदु हरिश्चंद्र तथा उनके समय के निबंधकारों से हिन्दी में निबंध लेखन की सुव्यवस्थित परंपरा की शुरुआत होती है। हिन्दी निबंध के विकास में भारतेंदु युगीन हरिश्चन्द्र चंद्रिका, ब्राह्मण, सार सुधा निधि, प्रदीप आदि पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन की बहुत बड़ी भूमिका रही है। भारतेंदु के समय के रचनाकारों में प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, चौधरी बद्रीनारायण उपाध्याय प्रेमघन आदि प्रमुख रहे हैं। इस को युग निबंध कला स्वर्ण युग भी कहा जाता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र (9 सितंबर 1850-6 जनवरी 1885) **:**

प्रिय छात्रो, नाम से ही पता चलता है कि इस युग के प्रमुख साहित्यकार भारतेंदु हरिश्चंद्र हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म काशी के एक संपन्न वैश्य अमीनचंद के परिवार हुआ था। भारतेंदु के पिता गोपालचंद्र 'गिरधरदास' उपनाम से कविता लिखा करते थे। कविता लेखन की प्रतिभा भारतेंदु को उनके पिता से विरासत में मिली थी। उनकी माता का श्रीमती पार्वती देवी था। उनका मूल नाम 'हरिश्चन्द्र' था, 'भारतेन्दु' उनकी उपाधि थी। उस समय ब्रिटिश सरकार लेखकों को सितारे हिंद की उपाधि दिया करती थी। लेखक राजा शिव प्रसाद को यह उपाधि मिली थी। इसे देखकर जनता ने हरिश्चंद्र का मान बढ़ाने के लिए उन्हें भारतेंदु की उपाधि दे डाली। तभी से वे भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाम से जाने लगे। उन्हें हिन्दी गद्य का जनक कहा जाता है। उन्होंने हिन्दी पद्य के साथ-साथ गद्य के अनेक विधाओं में लेखन की शुरुआत की, नाटक,

निबंध, आलोचना, इतिहास, यात्रा वर्णन आदि सभी रूपों का विकास किया। भारतेंदु को संस्कृत, मराठी, बंगला, गुजराती, पंजाबी और उर्दू आदि भाषाओं का ज्ञान था।

भारतेंदु हरिश्चंद्र के निबंधों की विशेषता :

भारतेंदु के निबंधों का क्षेत्र उनकी कविता और नाटक की तरह ही व्यापक है। इतिहास, धर्म, समाज, राजनीति, आलोचना, खोज, यात्रा, प्रकृति वर्णन, आत्मचरित, व्यंग्य-विनोद आदि सभी विषयों पर उन्होंने कलम चलाई है। इनके 9 निबंध संग्रह प्रकाशित हैं - नाटक, कालचक्र (जर्नल), लेवी प्राण लेवी, भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?, कश्मीर कुसुम, जातीय संगीत, संगीत सार, हिन्दी भाषा, स्वर्ग में विचार सभा।

भारतेंदु समकालीन राजनीति पर पैनी दृष्टि रखनेवाले रचनाकार थे। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से टैक्स, महामारी, धन के विदेशों में प्रवाह के विरूद्ध आवाज उठाते हैं। एक ओर जहाँ हमें कश्मीर-कुसुम, उदयपुरोदय, कालचक्र,बादशाह-दर्पण आदि निबंधों से भारतेंदु की सूक्ष्म ऐतिहासिक दृष्टि का परिचय मिलता है तो दूसरी ओर वैद्यनाथ धाम, हरिद्वार और सरयूपार की यात्रा में उनका भारत भूमि, भारतीय जनता की दशा पर चिंता व चिंतन तथा भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग। वे लिखते हैं – गाड़ी भी ऐसी टूटी-फूटी जैसे हिंदुओं की किस्मत और हिम्मत। xxxx अब तो तपस्या करके गोरी-गोरी कोख से जन्म लें तब ही संसार में सुख मिले।

भारतेन्दु का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि उन्होंने हिन्दी साहित्य को और उसके साथ समाज को साम्राज्य-विरोधी दिशा में बढ़ने की प्रेरणा दी। उन्होंने 1870 में कविवचनसुधा में लॉर्ड मेयो को लक्ष्य करके 'लेवी प्राण लेवी' नामक लेख लिखकर हिन्दी साहित्य में एक नयी साम्राज्य-विरोधी चेतना और स्वदेश प्रेम का प्रसार आरंभ किया। भारतेन्दु की वैश्विक चेतना भी अत्यन्त प्रखर थी। उन्हें अच्छी तरह पता था कि विश्व के अन्य देश कैसे और कितनी उन्नति कर रहे हैं। उन्होंने सन् 1884 में बलिया के दादरी मेले में 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है' पर अत्यन्त सारगर्भित भाषण दिया था। यह लेख उनकी अत्यन्त प्रगतिशील सोच का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। इसमें उन्होंने लोगों से कुरीतियों और अंधविश्वासों को त्यागने शिक्षित बनने, उद्योग-धंधों को विकसित करने, सहयोग एवं एकता पर बल देने तथा सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होने का आह्वान किया था। दादरी जैसे धार्मिक और लोक मेले के साहित्यिक मंच से भारतेंदु के उद्बोधन को आधुनिक भारत के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक चिंतन का प्रस्थानबिंदु कहा जा सकता है। उन्होंने अनेक निबंधों में तत्कालीन धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीति समस्याओं पर तीक्षण व्यंग्य किया था। लेवी प्राण लेवी, स्वर्ग में विचार सभा का अधिवेशन, जाति विवेचिनी सभा, पाँचवें पैंगबर, अंग्रेज स्तोत्र, कंकड स्तोत्र आदि निबंध इसी श्रेणी में आते हैं। भारतेंदु ने नाटक (1883) शीर्षक से एक लंबा निबंध लिखा था। उसे हिन्दी आलोचना की आधारशीला कहा जाता है।

भारतेंदु को अपनी भाषा के प्रति विशेष प्रेम था। भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है में वे लिखते हैं – परदेसी वस्तु और परदेसी भाषा का भरोसा मत करो। यही विचार हमें आगे चलकर महात्मा गांधी में देखने को मिलते हैं। इनके निबंधों में विषय के अनुरूप भाषा-शैली का प्रयोग दिखाई देता है। उनके निबंधों में कहीं स्वाभाविक अलंकार योजना है तो कहीं गोष्ठी-वार्तालाप का ढंग। नाटक, वैष्णवता और भारतवर्ष जैसे निबंधों में भाषा अत्यंत प्रौढ होते हुए भी उसमें दुरूहता, दुर्बोधता, कृत्रिमता और समासात्मकता नहीं है। विषय-शैली दोनों ही दृष्टि से भारतेंदु का निबंध साहित्य व्यापक है।

भारतेंदु के व्यक्तित्व और कृतित्व में कई अंतर्विरोध दिखाई देते हैं। वे एक साथ विशिष्ट भी थे और सामान्य भी, राजभक्त भी थे और देशभक्त भी, सनातनी वैष्णव थे, आडंबरों के विरोधी भी, कर्मकांड समर्थक थे, ईश्वरवादी और निरीश्वरवादी भी, परंपरावादी और आधुनिक भी। इतने अंतर्विरोध होने के बावजूद धर्म के प्रति जो उनकी मूल अवधारणा थी, वह प्रगतिशील थी।

प्रतापनारायण मिश्र (24 सितंबर, 1856 - 6 जुलाई, 1894) **:**

प्रतापनारायण मिश्र का जन्म बैजे गांव, बेथर (जनपद उन्नाव) बैसवारा (उत्तरप्रदेश) हुआ था। वे भारतेन्दु मण्डल के प्रमुख लेखक, कवि और पत्रकार थे। आधुनिक हिन्दी भाषा तथा साहित्य के निर्माणक्रम में उनके सहयोगी थे। भारतेंदु जैसी रचनाशैली, विषयवस्तु और भाषागत विशेषताओं के कारण प्रतापनारायण मिश्र प्रति-भारतेंदु और द्वितीय हरिश्चंद्र कहे जाने लगे थे। वे हिन्दी, उर्दू और बँगला तो अच्छी जानते ही थे, प्रतिभा और स्वाध्याय के बल से फारसी, अंग्रेज़ी और संस्कृत में भी अच्छी पकड़ बना ली थी।

प्रतापनारायण मिश्र के निबंधों की विशेषता :

प्रतापनारायण मिश्र भारतेंदु के विचारों व आदर्शों से काफी प्रभावित थे। उनके प्रोत्साहन से वे हिन्दी गद्य तथा पद्य में लेखन किया। उनके निबंध संग्रह- निबंध नवनीत, प्रताप पीयूष, प्रताप समीक्षा हैं। समाजसुधार को दृष्टि में रखकर उन्होंने सैकड़ों लेख लिखे हैं। एक सफल व्यंग्यकार और हास्यपूर्ण गद्य-पद्य-रचनाकार के रूप में हिन्दी साहित्य में उनका विशिष्ट स्थान है। मिश्रजी के निबंधों में विषय की पर्याप्त विविधता है। देव-प्रेम, समाज-सुधार एवं साधारण मनोरंजन आदि मिश्रजी के निबंधों के मुख्य विषय थे।

ब्राह्मण मासिक पत्र के संपादक प्रतापनारायण मिश्र पत्र में विभिन्न विषयों पर निबंध लिखे थे। कभी उन्होंने भौं, दाँत, पेट, मुच्छ, नाक आदि पर विनोदिनी लेखनी चलाई तो कभी वृद्ध, दान, जुआ, अपव्यय जैसे विषयों पर गंभीरता से प्रकाश डाला। इसी तरह उन्होंने नास्तिक, ईश्वर की मूर्ति, शिव मूर्ति, सोने का डंडा, मनोयोग जैसे निबंध लिखे तो दूसरी ओर

समझदार की मौत है, टेढ़ जान शंका सब काहू, धूरे क लताँ विनै, कनातन क डौल बाँधै, होली है अथवा होरी है जैसे उक्तियों पर व्यांग्यात्म निबंध। मिश्र जी 'हिन्दी, हिंदू, हिंदुस्तान' के कट्टर समर्थक थे, अतः उनकी रचनाओं में इनके प्रति विशेष मोह प्रकट हुआ है।

प्रतापनारायण मिश्र ने अपने साहित्य में खड़ीबोली के रूप में प्रचलित जनभाषा का प्रयोग किया। उनकी भाषा सहज-सरल थी। कृतिमता से दूर थी। ग्रामीण शब्दों का प्रयोग स्वच्छंदता पूर्वक हुआ है। संस्कृत, अरबी, फारसी, उर्दू, अंग्रेज़ी, आदि के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग है। वे भाषा का प्रयोग विषय के अनुकूल है। गंभीर विषयों पर लिखते समय भाषा और गंभीर हो जाती है। कहावतों और मुहावरों के प्रयोग में मिश्रजी बड़े कुशल थे। मुहावरों का जितना सुंदर प्रयोग उन्होंने किया है, वैसा बहुत कम लेखकों ने किया है। कहीं-कहीं तो उन्होंने मुहावरों की झड़ी-सी लगा दी है। उनकी शैली वर्णनात्मक, विचारात्मक तथा हास्य-व्यंग्यात्मक है।

बालकृष्ण भट्ट (3 जून 1844-20 जुलाई 1914)

बालकृष्ण भट्ट हिन्दी के प्रसिद्ध पत्रकार, उपन्यासकार, नाटककार तथा निबंधकार थे। उनका हिन्दी गद्य साहित्य के निर्माताओं में प्रमुख स्थान है। उन्हें आज की गद्य प्रधान कविता का जनक भी माना जाता है। उनके पिता पं. वेणी प्रसाद भट्ट एक व्यापारी थे और उनकी माता पार्वती देवी एक पढ़ी-लिखी और विदुषी महिला थीं। बालकृष्ण भट्ट पर उनकी माता का अधिक प्रभाव था। उन्हें संस्कृत के अतिरिक्त हिन्दी, अंग्रेज़ी, उर्दू, और फारसी भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। भट्ट जी स्वतंत्र प्रकृति के व्यक्ति थे। उन्होंने व्यापार किया और कुछ समय तक कायस्थ पाठशाला प्रयाग में संस्कृत के अध्यापन भी किया। भारतेंदु से प्रभावित होकर वे हिन्दी-साहित्य की ओर आकर्षित हुए। भट्ट जी ने **हिन्दी प्रदीप** नामक मासिक पत्र निकाला। इस पत्र के वे स्वयं संपादक थे। उन्होंने इस पत्र के द्वारा निरंतर 32 वर्ष तक हिन्दी की सेवा की। काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा आयोजित हिन्दी शब्दसागर के संपादन में भी उन्होंने बाबू श्याम सुंदर दास तथा शुक्ल जी के साथ कार्य किया। वे बहुत व्यस्त रहते थे। उन्हें पुस्तकें लिखने के लिए अवकाश ही नहीं मिलता था। फिर भी उन्होंने सौ अजान एक सुजान, रेल का विकट खेल, नूतन ब्रह्मचारी, बाल विवाह तथा भाग्य की परख आदि छोटी-मोटी दस-बारह पुस्तकें लिखीं।

बालकृष्ण भट्ट के निबंधों की विशेषता

बालकृष्ण भट्ट भारतेन्दु युग के प्रतिष्ठित निबंधकार थे। उनके निबंध संग्रह हैं - साहित्य सुमन, भट्ट निबंधमाला, आत्मनिर्भरता। उनके निबंध अधिकतर हिन्दी प्रदीप में प्रकाशित होते थे। उनके निबंध सदा मौलिक और भावना पूर्ण होते थे। उन्होंने साहित्यिक, राजनीतिक,

सामाजिक आदि विषयों पर बहुत ही रोचक निबंध लिखे हैं। उनके द्वारा लिखे निबंधों के शीर्षकों से ही उनके विषय-क्षेत्र और व्यापकता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है – जैसे मेला-ठेला, वकील, सहानुभूति, आशा, खटका, इंगलिश पढ़े तो बाबू होय, रोटी तो किसी भाँति कमा खाय मुछंदर, आत्मनिर्भरता, माधुर्य, शब्द की आकर्षण शक्ति आदि। इनके निबंधों में विचारों की मौलिकता और शैली की रोचकता के गुण विद्यमान हैं। उनके द्वारा लिखे भय, दृढ़ता, प्रेम और भक्ति आदि मनोवैज्ञानिक निबंधों का विकास आगे चलकर रामचंद्र शुक्लके मनोवैज्ञानिक निबंधों में देखा जा सकता है।

बालकृष्ण भट्ट ने अपनी रचनाओं में यथाशक्ति शुद्ध हिन्दी का प्रयोग किया। भावों के अनुकूल शब्दों का चुनाव करने में भट्ट जी बड़े कुशल थे। कहावतों और मुहावरों का प्रयोग भी उन्होंने सुंदर ढंग से किया है। भट्ट की भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ-साथ तत्कालीन उर्दू, अरबी, फारसी तथा अंग्रेजी भाषा के शब्दों का भी प्रयोग मिलता है। वे हिन्दी की परिधि का विस्तार करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने भाषा को विषय एवं प्रसंग के अनुसार प्रचलित हिन्दीतर शब्दों से भी समन्वित किया है। उनके निबंधों में विचारों की गहनता, विषय की विस्तृत विवेचना, गम्भीर चिन्तन के साथ एक अनूठापन भी है। यत्र-तत्र व्यंग्य एवं विनोद उनकी शैली को मनोरंजक बना देता है। उन्होंने हास्य आधारित लेख भी लिखे हैं, जो अत्यन्त शिक्षादायक हैं। भट्ट जी का गद्य गद्य न होकर गद्यकाव्य सा प्रतीत होता है। उनकी लेखन शैली में वर्णनात्मक शैली, विचारात्मक शैली, भावात्मक शैली और व्यंग्यात्मक शैली के दर्शन होते हैं।

बदरीनारायण चौधरी उपाध्याय "प्रेमघन" (1855 ई०-1923 ई०)

भारतेन्दु मण्डल में गिने जाने वाले प्रेमघन हिन्दी व संस्कृत के अपने समय के प्रसिद्ध प्रचार-प्रसार कर्ता के रूप में जाने जाते हैं। हिन्दी आलोचना व अन्य गद्य विधाओं के विकास में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वे संस्कृत, हिन्दी, फ़ारसी और अंग्रेजी भाषा के ज्ञाता थे। संगीत में रूचि थी जिसके कारण उन्हें ताल, लय, राग, रागिनी का अच्छा ज्ञान था। वे भारतेंदु हरिश्चन्द्र से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने न केवल उनकी रचनाशैली व जीवनपद्धति को अपनाया बल्कि उनकी वेशभूषा को भी अपने जीवन में उतारा।

बदरीनारायण चौधरी उपाध्याय "प्रेमघन" के निबंधों की विशेषता

बदरीनारायण चौधरी उपाध्याय "प्रेमघन" ने "आनंद कादंबिनी" नामक मासिक पत्र और 'नागरी नीरद' नामक साप्ताहिक का संपादन व प्रकाशन किया। इन पत्र में उन्होंने अपने लेखों के माध्यम से अंग्रेजी नीति का विरोध प्रकट किया करते थे। उनमें भारतीय किसानों की दशा का वर्ण भी होता था। इसी कारण उन्हें सामाजिक निबंधकार के रूप में पहचान मिली थी। नेशनल कांग्रेस की दुर्दशा, भारतीय प्रजा के दुःख की दुहाई और ढिठाई पर गवर्नमेंट की कड़ाई आदि

निबंधों में उन्होंने देश की राजनीतिक परिस्थिति को रेखांकित किया है। प्रेमघन ने धर्म, सभ्यता, समाज आदि विषयों के साथ ही समसामिक राजनीति आंदोलनों पर भी निर्भीकता से अपनी लेखनी चलाई थी।

प्रेमघन की गद्य रचनाओं में हास परिहास का पुट मिलता है। उर्दू, फारसी, संस्कृत के तत्सम व तद्भव शब्दों के साथ ही खड़ी बोली हिन्दी का सहज समावेश हुआ है। इनके लिखे निबंधों को वर्णनात्मक, भावात्मक, विचारात्मक आदि कोटि में रखे जा सकते हैं। इनके प्रमुख निबंधों में बनारस का बुढ़वा मंगल, दिल्ली दरबार में मित्र मंडली के यार आदि उल्लेखनीय हैं। इनका निबंध साहित्य कथोपकथन शैली, काव्यात्मकता और मुहावरेदार भाषा का अच्छा नमूना है। अनुप्रास और अनूठे पदविन्यास उनके लेखन की विशेष पहचान है। वे कोई लेख लिखकर जब तक कई बार उसका परिष्कार व मार्जन करके संतुष्ट नहीं हो जाते थे तब तक उसे छपने नहीं देते थे। आचार्य शुक्ल के अनुसार वे गद्य रचना को एक कला के रूप में ग्रहण करनेवाले, कलम की कारीगरी समझनेवाले, लेखक थे।

इन निबंधकारों के अलावा भारतेंदु युग के प्रसिद्ध निबंधकारों में लाला श्रीनिवासदास (1851-87ई), राधाचरण गोस्वामी (1859-1925ई), मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या (1850-1912ई), काशीनाथ खत्री (1849-1891ई), तथा चंद्रभूषण चातुर्वेद्य आदि निबंधकारों ने इस युग के निबंधों की श्रीवृद्धि की है।

लाला श्रीनिवासदास अंग्रेजी साहित्य के अध्येयता थे, जिसकी वजह से उनके लेखन में पाश्चात्य साहित्य और विचारों का प्रभाव दिखाई देता है। वे अपने विचारों को अधिक प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करते थे। उनके निबंधों में भरत खण्ड की समृद्धि तथा सदारचरण महत्वपूर्ण हैं। **राधाचरण गोस्वामी** ने सामयिक एवं सामाजिक विषयों पर अपनी लेखनी चलाई थी। वे भारतेंदु (1833) नामक वृंदावन की मासिक पत्रिका में नियमित लिखा करते थे। उनके निबंध मनोरंजन का पुट लिए होते थे। उनकी भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित थी। **मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या** के निबंध उनके द्वारा संपादित पत्र हरिश्चंद्र चंद्रिका और मोहन चंद्रिका में प्रायः प्रकाशित हुआ करते थे। उनके निबंधों के विषय सामाजिक हैं। उनके प्रमुख निबंधों हैं हम लोगों की वृद्धि किस रीति से होगी, बंधुत्व किसे कहते हैं, खुशामद आदि। **काशीनाथ खत्री** को रामचंद्र शुक्ल के अनुसार मातृभाषा का सच्चा सेवक कहा जाता रहा है। उन्होंने नैतिक तथा सामाजिक विषयों पर निबंध लेखे। उन्होंने अपने निबंध में स्वदेश प्रेम, कर्तव्यपालन और विधवा विवाह जैसे सामयिक विषयों पर प्रकाशडाला है। **चंद्रभूषण चातुर्वेद्य** के निबंध प्रेमघन के संपादन में प्रकाशित साप्ताहिक नागरीनीरद में प्रायः प्रकाशित हुआ करते थे। उन्होंने न केवल पर्व, त्यौहार, धर्म, कर्तव्यपालन, स्त्री-महत्व, जाति-भेद जैसे विषयों पर निबंध लिखे बल्कि क्षमा, उपकार, छल आदि मनोविकारों पर भी धार्मिक दृष्टि से विचार व्यक्त किए।

भारतेंदु ने संवत् 1925 में कविवचनसुधा नामक पत्रिका निकाली। उसमें हिन्दी में लिखे गद्य लेख छापने लगे। इसके बाद 1930 में हरिश्चंद्रिका मैगजीन नामक मासिक पत्रिका निकाली

जिसमें हिन्दी निबंधों (गद्य लेख) का परिष्कृतरूप देखने को मिलता है। भारतेंदु मंडल के लेखकों के लेख लोग बड़े चाव से पढ़ा करते थे। कुछ-कुछ लेख तो कई दिनों तक लगातार पढ़े जाते थे। चंद्रिका में हरिश्चंद्र का पाँचवें पैगंबर, मुंशी ज्वालाप्रसाद का कलिराज की सभा, बाबू तोताराम का अद्भुत अपूर्व स्वप्न, बाबू कार्तिक प्रसाद का रेल का टिकट खेल आदि लेख ऐसे ही थे जिन्हें लोग बार-बार पढ़ना पसंद करते थे। कहा जा सकता है कि भारतेंदु युग के निबंध हिन्दी साहित्य के आरंभिक निबंध थे। उनमें न बुद्धि वैभव था, न पांडित्य प्रदर्शन और न ग्रंथ ज्ञान ज्ञापन दंभ। इस काल के लेखकों की रुचि विस्तृत विषयों में थी। वे किसी भी विषय पर लिखते समय अपनी ओर से कोई अंतिम निष्कर्ष नहीं देते थे, बल्कि पाठक के विवेक पर छोड़ देते थे। वे पाठक के साथ संवाद स्थापित करना चाहते थे, विचार-विमर्श करना चाहते थे। अपने लेखन से पाठक के साथ आत्मीयता स्थापित करने में इस युग के रचनाकार सफल हुए हैं। वैयक्तिकता के साथ सामाजिकता इनके निबंधों की विशेषता है। इनके व्यंग्य सोद्देश्य हैं। सामाजिक व राजनीति विषमता पर गहरी चोट करते हैं। इस युग के निबंधों में संपूर्ण युग की चेतना प्रतिबिंबित होती है। इन निबंधों का विशेष गुण भाषा-शैली की सरलता है।

बोध प्रश्न –

- भारतेंदु ने कविवचनसुधा नामक पत्रिका का प्रकाशन कब किया?
- बनारस का बुढ़वा मंगल किसका निबंध है?
- रामचंद्र शुक्ल के मनोवैज्ञानिक निबंधों को किनके निबंधों का विकास माना जाता है?
- किन की रचनाओं में 'हिन्दी, हिंदू, हिंदुस्तान' के प्रति विशेष मोह प्रकट हुआ?

2.3.2 द्विवेदी युग के निबंध और निबंधकार

द्विवेदी युग का समय सन् 1900 – 1920 तक माना जाता है। इस युग के प्रमुख रचनाकार महावीर प्रसाद द्विवेदी थे। इन्हीं के नाम से इस युग का नाम रखा गया। यह समय सरस्वती पत्रिका के प्रकाशन का समय है। इस समय में देश की आजादी की लड़ाई में सामान्य जनता भी शामिल होने लगी थी। गोपालकृष्ण गोखले तथा बाल गंगाधर तिलक जैसे कर्मठ नेताओं का अविर्भाव हो चुका था। इस युग का रचनाकार केवल भारत दुर्दशा पर दुःख प्रकट करके शांत बैठने वाला नहीं था, बल्कि देशवासियों को स्वतंत्रता प्राप्ति की प्रेरणा दे रहा था। इसी समय जनता की रुचि एवं आकांक्षाओं के पारखी तथा साहित्य के दिशा-निर्देशक के रूप में आचार्च महावीर प्रसाद द्विवेदी का प्रादुर्भाव हुआ। सन् 1903 में आचार्य द्विवेदी सरस्वती पत्रिका के संपादक बने।

द्विवेदी युग में प्रायः उन सभी भावनाओं, विचारों, शैलियों एवं साहित्यिक विधाओं का विकास तथा प्रसार हुआ जिनका आरंभ भारतेंदु युग में हो चुका था। परिणामतः निबंध लेखन में भी विषय, शैली और विचारधारा की दृष्टि से विकास दिखाई देता है। इस युग में सात प्रकार के विषयों पर निबंध लेखन हुआ – साहित्य एवं भाषा, वैज्ञानिक आविष्कार, पुरातत्व एवं

इतिसाह, भूगोल, जीवन-चरित, अध्यात्म और अन्य उपयोगी विषय। इसी क्रम में साहित्य एवं भाषा संबंधी निबंधों को चार रूपों में विभाजित किया जा सकता है – भाषा और व्याकरण, लेखक तथा ग्रंथों की आलोचना, साहित्यशास्त्र तथा सामयिक साहित्य। द्विवेदी युग के प्रमुख निबंधकारों में महावीरप्रसाद द्विवेदी (1864-1937ई), गोविंदनारायण मिश्र (1859-1926ई), बालमुकुंद गुप्त (1865-1907ई), माधव प्रसाद मिश्र (1871-1907ई), चंद्रशर्मा गुलेरी (1883-1920ई), बाबू श्यामसुंद्रदास (1875-1944ई) आदि शामिल हैं।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी (1864-1937ई) :

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी हिन्दी के महान साहित्यकार, पत्रकार एवं युगप्रवर्तक थे। उन्होंने अपने युग की साहित्यिक और सांस्कृतिक चेतना को दिशा और दृष्टि प्रदान की थी। उनके इस अतुलनीय योगदान के कारण आधुनिक हिन्दी साहित्य का दूसरा युग 'द्विवेदी युग' के नाम से जाना जाता है। उन्होंने सत्रह वर्ष तक हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका सरस्वती का संपादन किया। हिन्दी नवजागरण में उनकी महान भूमिका रही। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन को गति व दिशा देने में भी उनका उल्लेखनीय योगदान रहा।

महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले के दौलतपुर गाँव हुआ था। धनाभाव के कारण इनकी शिक्षा का क्रम अधिक समय तक न चल सका। 25 वर्ष की आयु में इन्हें जी आर पी रेलवे में नौकरी मिल गई। नौकरी छोड़कर टेलीग्राफ का काम सीखाकर इंडियन मिडलैंड रेलवे में तार बाबू के रूप में नियुक्ति हुए। किंतु स्वाभिमानी द्विवेदी जी की अपने उच्चाधिकारी से न पटने के कारण 1904 में झाँसी में रेल विभाग की 200 रुपये मासिक वेतन की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया था। नौकरी के साथ-साथ द्विवेदी स्वाध्याय से हिन्दी के अतिरिक्त मराठी, गुजराती, संस्कृत आदि का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया।

सन् 1903 में द्विवेदी जी ने सरस्वती मासिक पत्रिका के संपादन का कार्यभार सँभाला और उसे सत्रह वर्ष तक कुशलतापूर्वक निभाया। सरस्वती में काम करने के दौरान द्विवेदी ने पहला काम तत्कालीन लेखकों की भाषा को संस्कारित एवं परिमार्जित करने का किया। व्याकरण संबंधी त्रुटियों को दूर करने और विराम चिह्न के प्रयोग के महत्व को समझाया।
महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी के पहले लेखक थे, जिन्होंने केवल अपनी जातीय परंपरा का गहन अध्ययन ही नहीं किया था, बल्कि उसे आलोचकीय दृष्टि से भी देखा था। उन्होंने अनेक विधाओं में रचना की। कविता, कहानी, आलोचना, पुस्तक समीक्षा, अनुवाद, जीवनी आदि विधाओं के साथ उन्होंने अर्थशास्त्र, विज्ञान, इतिहास, पुरातत्व, समाजशास्त्र आदि अन्य अनुशासनों में न सिर्फ विपुल मात्रा में लिखा, बल्कि अन्य लेखकों को भी इस दिशा में लेखन के लिए प्रेरित

किया। वस्तुतः स्वाधीनता, स्वदेशी और स्वावलंबन को गति देने वाले ज्ञान-विज्ञान के तमाम आधारों को वे आंदोलित करना चाहते थे। इस कार्य के लिये उन्होंने सिर्फ उपदेश नहीं दिया, बल्कि मनसा, वाचा, कर्मणा स्वयं लिखकर दिखाया। उनके प्रमुख व मौलिक गद्य रचनाओं में नाट्यशास्त्र, विक्रमांकदेव चरितचर्या, हिन्दी भाषा की उत्पत्ति, संपत्ति शास्त्र, तरुणोपदेश, नैषध चरित्र चर्चा, कालीदास की निरंकुशता, वनिता-विलाप, औद्यागिकी आदि शामिल हैं।

महावीर प्रसाद द्विवेदी के निबंधों की विशेषता

निबंधकार द्विवेदी का आदर्श बेकन था। उन्होंने बेकन के निबंधों का अनुवाद बेकन विचार रत्नावली के नाम से किया था। बेकन के भाँति ही उन्होंने निबंधों में विचारों को प्रमुखता दी। उनके निबंध कवि और कविता, प्रतिभा, कविता, साहित्य की महत्ता, क्रोध, लोभ आदि नए-नए विचारों से ओत-प्रोत हैं। उनके बहुसंख्यक निबंध परिचयात्मक या आलोचनात्मक हैं। आत्मव्यंजना का तत्व कहीं नहीं है। जब कभी वे अनुचित कार्यों का विरोध करते हैं, आक्रोश या क्षोभ प्रकट करना चाहते हैं, तब व्यंग्य-रूप में उनकी आंतरिक भावना प्रकट हुई है। ऐसे निबंधों में उनके न्यायनिष्ठ भावना की झलक दिखाई देती है। उनके व्यंग्य शैली का रूप म्युनिसिपैलिटी के कारनामे में देख सकते हैं। आत्मनिवेदन, प्रभात, सुतापरादे जनकस्य दंड आदि निबंधों में व्यक्तिव्यंजना के तत्व भी मिलते हैं।

द्विवेदी जी के निबंधों में भारतेंदु युगीन निबंधों की तरह वैयक्तिकता का प्रदर्शन, सजीवता, रोचकता एवं सहज-उच्छृखंलता नहीं है लेकिन उनके निबंधों में भाषा की शुद्धता, सार्थकता एकरूपता, शब्द प्रयोग पटुता के गुण देखने को मिलते हैं। उनके निबंधों में व्यास शैली के कारण पर्याप्त सरलता है। कहीं-कहीं हास्य-व्यंग्य व भावात्मकता का भी प्रस्फुटन हुआ है। जैसे – फ्रांस में प्रजा की सत्ता का उत्पादन और उन्नयन किसने किया? पादाक्रांत इटली का मस्तक किसने ऊँचा उठाया? साहित्य ने! साहित्य ने !! साहित्य ने!!! इसी तरह उन्होंने आजकल के छायावादी कवि और कविता लेख में छायावादी कवियों के कविता लेखन पर कटाक्षव किया है – छायावादियों की रचना तो कभी-कभी समझ में भी नहीं आती। ये बहुधा बड़े ही विलक्षण छंदों या वृत्तों का भी प्रयोग करते हैं। कोई चौपदे लिखते हैं, कोई छः पदे, कोई ग्यारह पदे तो कोई तेरह पदे। किसी की चार सतरें गज-गज लंबी तो , दो ही अंगुल की! फिर ये लोग बेतुकी पद्यावली भी लिखने की बहुधा कृपा करते हैं। द्विवेदी जी के निबंधों में विषय के अनुसरूप शैली में गंभीरता दिखाई देती है। मेघदूत निबंध की कुछ पंक्तियाँ प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत हैं – कविता-कामिनी के कमनीय नगर में कालिदास का मेघदूत एक ऐसे भव्य-भवन के सदृश है, जिसमें पद्य रूपी अनमोल रत्न जड़े हुए हैं। ऐसे रत्न जिनका मोल ताजमहल में लगे हुए रत्नों से भी कहीं अधिक है।

भाषा के संबंध में द्विवेदी जी की नीति स्पष्ट थी। उनका मानना था कि हिन्दी को अन्य भाषाओं के शब्दों से अछूता न रखा जाए। इसका अर्थ यह नहीं था कि प्रयत्नपूर्वक तत्सम शब्दों का बहिष्कार किया जाए। उनकी इस नीति का प्रभाव उनके समय के प्रमुख निबंधकारों की भाषा-शैली पर पड़ा।

बालमुकुन्द गुप्त (14 सितंबर 1865-18 सितंबर 1907)

बालमुकुन्द गुप्त का जन्म गुड़ियानी गाँव, जिला रिवाड़ी, हरियाणा में हुआ। वे हिन्दी के ऐसे निबंधकार व पत्रकार थे जिन्हें उर्दू में लेखन से बहुत ख्याति मिली। वे विद्यार्थी जीवन से ही उर्दू पत्रों में लेख लिखने लगे। उन्होंने कई उर्दू और हिन्दी पत्रों के लिए काम किया। उर्दू - जिला रोहतक के रिफाहे आम अखबार, मथुरा के मथुरा समाचार, चुनार के उर्दू अखबार अखबारे चुनार, लाहौर के उर्दू पत्र कोहेनूर, मुरादाबाद के भारत प्रताप का संपादन किया। इस कारण उनकी उर्दू के नामी लेखकों में गणना होने लगी थी। हिन्दी पत्र - कालाकाँकर (अवध) के हिन्दी दैनिक हिंदोस्थान, कलकत्ता के हिन्दी बंगवासी, भारतमित्र आदि। पं. प्रतापनारायण मिश्र की प्रेरणा से हिन्दी के पुराने साहित्य का अध्ययन किया और उन्हें अपना काव्यगुरू स्वीकार किया। वे हिन्दी, उर्दू, फारसी और अंग्रेजी भाषाओं के ज्ञाता थे। उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं- हरिदास, खिलौना, खेलतमाशा, स्फुट कविता, शिवशंभु का चिट्ठा, सन्निपात चिकित्सा, बालमुकुंद गुप्त निबंधावली।

बालमुकंद गुप्त के निबंधों की विशेषता

भारतेंदु और द्विवेदी युग की संधि पर विद्यमान सच्चे निबंधकार हैं – बालमुकुन्द गुप्त। उनके निबंधकार के रूप में ख्याति का आधार उनका शिवशम्भु का चिठ्ठा है। इन चिट्ठों और खतों में गुप्तजी ने मुख्यत: अपने समकालीन अंग्रेज़ी शासन और उसकी नीतियों की करारा व्यंग्य किया है। इनमें एक ओर तीखा व्यंग्य है तो दूसरी ओर पराधीन देश के नागरिक की पीड़ा। ये चिट्ठे भारत मित्र में 1904-1905 ई में प्रकाशित हुआ करते थे। ये चिट्ठे तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड कर्ज़न को संबोधित करके लिखे गए हैं। गुप्त जी ने कर्ज़न के भारत विरोधी नीतिओं पर ओजपूर्ण, तीखी एवं व्यंग्यात्म शैली में प्रहार किया है। उनके निबंध में भारतवासियों की राजनीतिक विवशता को अभिव्यक्ति मिली है। होली पर लिखे गए चिट्ठे में वे लिखते हैं – कृष्ण हैं, उद्धव हैं, पर ब्रजवासी उनके निकट भी नहीं फटकने पाते। सूर्य है, धूप नहीं। चंद्र है चाँदनी नही। माई लार्ड नगर में ही हैं, पर शिव-शंभु उनके द्वार तक नहीं फटक सकता है, उनके घर चल होली खेलना तो विचार ही दूसरा है। माई लार्ड के घर तक बात की हवा तक नहीं पहुँच सकती। माई लार्ड के मुख चंद्र के उदय के लिए कोई समय भी नियत नहीं है।

बालमुकुंद गुप्त जी अपने समय के जागरूक पत्रकार व निबंधकार थे। उन्होंने तत्कालीन साहित्यिक, राजनीतिक, भाषा संबंधी तथा राष्ट्रीय महत्व के कई मामलों पर निर्भीकता से प्रश्न

उठाए। वे उर्दू से हिन्दी में आए थे। उनकी लेखनी में उर्दू-फारसी के शब्द अनायास ही आ जाते हैं। उनकी गद्य-शैली तीखी, प्रवाहपूर्ण, चुस्त, चुटीलीस, सजीव, व्यावहारिक एवं सर्वजनग्राह्य है। उनके परवर्ती एवं समकालीन लेखकों पर इनकी शैली का प्रभाव दिखाई देता है। उनकी की बयालीस साल में अकाल-मृत्यु हुई थी। उन्होंने हिन्दी की सेवा में अपना शरीर गला डाला था। वे भारतेन्दु और प्रतापनारायण मिश्र के सच्चे उत्तराधिकारी थे। उनके गद्य में दासता के बंधन तोड़ने को उठने वाले राष्ट्र का आत्मविश्वास है। उनके गद्य में भारतेन्दु युग की वह जिन्दादिली है जो विपत्तियों पर हँसती है।

वस्तुत: द्विवेदी युग के अन्य विशिष्ट निबंधकारों में –माधवप्रसाद मिश्र , गोविंदनारायण मिश्र, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, सरदार पूर्ण सिंह और बाबू श्यामसुंदर दास (1875-1945) के नाम उल्लेखनीय हैं।

सुदर्शन और वैश्योपकारक पत्र के संपादक के रूप में **माधव प्रसाद मिश्र** जी ने राजनीति, साहित्य, तीर्थस्थानों, पर्व-त्योहारों आदि से संबंधित अनेक लेख लिखे, जिनमें अंकित विचारों में उनका व्यक्तित्व दिखाई देता है। उनके निबंध माधव मिश्र निबंध माला के नाम से प्रकाशित हैं। उनके द्वारा लिखित निबंध सब मिट्टी हो गया, श्रीपंचमी, कुंभपर्व, विजयादशमी, रामलीला, क्षमा आदि निबंधों में उनका भावुक, संवेगात्मक, राष्ट्रीयता की भावना से परिपूर्ण व्यक्तित्व प्रकट हुआ है। वे भारतीय संस्कृति, सनातन धर्म, संस्कृत भाषा और साहित्य आदि के प्रति प्रतिबद्ध थे। इनका विरोध उन्हें असहनीय था। उनकी लेखन-शैली में तर्क, आवेश और भावुकता का अद्‌भुत मिश्रण दिखाई देता है।

बालमुकुंदगुप्त के समकालीन **गोविंदनारायण मिश्र** कवि और वैयाकरण थे। उन्होंने साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विषयों पर कतिपय निबंध लिखे हैं जो गोविंद निबंधावली नाम से प्रकाशित है। उनके निबंधों में तत्सम शब्दावली की प्रधानता है। उनकी शैली समासयुक्त है। इससे ऐसा लगता है कि उनके निबंधों में विचारों के प्रतिपादन के स्थान पर पांडित्य का प्रदर्शन अधिक हो गया है। उनके निबंध प्राकृत विचार और विभक्त विचार क्रमशः भाषा के उद्भव व विकास तथा विभक्तियों पर केंद्रित हैं। उनके गद्य विधान को आचार्य शुक्ल ने सायास अनुप्रास में गुंथे शब्दों-गुच्छों का अटाला कहा है। तथापि उनके निबंध षड्ऋतु वर्णन और आत्माराम की टें-टें उल्लेखनीय हैं। इनमें प्रयुक्त उनकी भाषा चुटिली है। पाठकों को आकर्षक लगती है। उनकी शब्द-योजना और वाक्य-रचना बाणभट्ट की याद दिलाती है।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी समालोचक के संपादक थे। यह पत्र सरस्वती का समाकालीन पत्र था। वे संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान होने के साथ-साथ श्रेष्ठ भाषाविद्, अनुसंधानकर्ता, कवि, कहानीकार और निबंध लेखक थे। उन्होंने एक ओर तो अशोक की धर्मलिपियों का संपादन किया, दीदर गंज की मूर्तियों का पुरातात्विक विश्लेषण करते हुए पुरानी हिन्दी नामक निबंधमाला की रचना करके अपभ्रंश की विशेषताएँ उद्घाटित करके अपनी विद्वता साबित की तो दूसरी ओर काशी, जय जमुना मैयाजी, जैसे निबंधों की रचना की। वे जीवंत और सरस

व्यक्तित्व के धनी थे। उनकी सभी रचनाओं में उनका पांडित्य, जीवंतता और सरसता झलकती है। लेकिन उनके निबंधों में ये विशेष रूप से परिलक्षित होती हैं। कछुआ धर्म, मारेसि मोहिं कुठांव, काशी की नींद और काशी के नूपुर, होली की ठिठोली व एप्रिल फूल जैसे निबंधों में उनके व्यक्तित्व की इन विशेषताओं के साथ-साथ उनकी प्रगतिशील दृष्टि भी अभिव्यक्त हुई है। हास्य, व्यंग्य और संदर्भ-बहुलता का उपयोग करते हुए अर्थगर्भित वक्रतापूर्ण भाषा-शैली में उन्होंने अपने निबंधों में अपने पाण्डित्य के बल पर रूढियों और अंधविश्वासों पर प्रहार किया है।

अंग्रेजी और पंजाबी में लेखक **सरदार पूर्ण सिंह** ने हिन्दी में केवल छह निबंध लिखे हैं – सच्ची वीरता, कन्यादान (नयनों की गंगा), पवित्रता, आचरण की सभ्यता, मजदूरी और प्रेम तथा अमेरिका का मस्त जोगी वाल्ट व्हिटमैन। अपने इन्हीं निबंधों के कारण वे हिन्दी में अमर हो गए। इन निबंधों में उन्होंने नैतिक और सामाजिक विषयों पर कलम चलाई है। उनके इन निबंधों में उनका व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से प्रकट हुआ है। वे सरल, भावुक, आदर्शवादी, काव्यमय व्यक्तित्व के धनी थे। उनके निबंधों में किसानों, गड़रियों और साधारण लोगों के चित्र अंकित हुए हैं। उनके ये निबंध विशेष मनोदशा को व्यक्त करने वाले हैं। इन निबंधों में निबंधकार कहीं कविता करने लगता है, कहीं विश्लेषण में रत हो जाता है, कहीं कहानी सुनाने लगता है और कहीं रेखाचित्र प्रस्तुत करने लगता है। अंग्रेजी, हिन्दी, उर्द, पंजाबी के उद्धरण इन निबंधों में मोतियों की तरह पिरोए गए हैं। भावना के अतिरेक ने भाषा को लाक्षणिक वैचित्र्य, चित्रात्मकता और आलंकारिकता प्रदान की गई है।

बाबू श्यामसुंदर दास उच्च कोटि के आलोचक और सफल निबंधकार थे। उन्होंने विशेषकर आलोचनात्मक विषयों पर साहित्य की विशेषताएँ, समाज और साहित्य, कर्तव्य और सभ्यता जैसे गंभीर लेख लिखे हैं। विषय के आधार पर उनके निबंधों को तीन भागों में बाँट कर देखा जा सकता है - साहित्यिक, सांस्कृतिक और भाषा वैज्ञानिक। उनके निबंधों में विचारों का समन्वय है। उनकी शैली प्रौढ़ होते हुए भी सरल व सहज है। श्यामसुंदर दास जी अकादमीक साहित्कार थे। जिस प्रकार भारतेंदु ने हिन्दी गद्य का परिष्कार किया, उसे शैली प्रदान की, जिस प्रकार महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी भाषा को व्याकरण के संस्कार दिए, उसी प्रकार श्यामसुंदर दास ने हिन्दी को साहित्य को अनुसंधान,प्राचीन ग्रंथों की खोज, कोश-निर्माण, संपादन की कला की ओर आकर्षित किया। आचार्य शुक्ल के अनुसार आप जैसे हिन्दी के अच्छे लेखक हैं, वैसे ही बहुत अच्छे वक्ता भी। आपकी भाषा इस विशेषता के लिए बहुत दिनों से प्रसिद्ध है कि उसमें अरबी, फारसी वदेशी शब्द नहीं आते।

कहा जा सकता है कि द्विवेदी युगीन निबंधों के विषय पर्याप्त विस्तृत हैं। निबंधकारों ने जीवन से जुड़े विभिन्न विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है। गंभीर मनोभावों का सुंदर विवेचन इस युग के निबंधों की एक प्रमुख विशेषता है। इस युग में निबंध की सभी शैलियाँ, जिनका सूत्रपात भारतेंदु युग में हुआ था, उनका विकास हुआ। परिणामस्वरूप हिन्दी के निबंध भंडार में

वृद्धि हुई। इन निबंधों के माध्यम से हिन्दी प्रदेश में नवजागरण का नाय आलोक फैला और हिन्दी साहित्य में विवेकनिष्ठ वैज्ञानिक दृष्टि का विकास हुआ।

बोध प्रश्न –

- द्विवेदी युग के प्रमुख तीन निबंधकारों के नाम लिखिए ?
- महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किस पत्रिका का संपादन किया?
- द्विवेदी के निबंध में कौन-से गुण देखने को मिलते हैं?
- शिवशंभु का चिट्ठा नामक निबंध के लेखक कौन हैं?
- माधव प्रसाद मिश्र द्वारा रचिन तीन निबंधों के नामक लिखिए?
- सरदार पूर्ण सिंह हिन्दी में कितने निबंध लिखकर अमर हो गए?

2.4 पाठ सार

भारतेंदु युग को हिन्दी गद्य के लिए बहुमुखी विकास का युग कहा जाता है। इसी युग में हिन्दी निबंध की विधा का विकास हुआ। यह युग उन्नीसवीं शती के अंतिम चरण में पूर देश में सांस्कृतिक जागरण का युग रहा है। इस समय भारत अत्यंत हीनवस्था में पहुँच चुका था। भारतीयों के जीवन के सभी क्षेत्रों – सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक में परिवर्तन और सुधार की अत्यंत आवश्यकता थी। ऐसे समय में भारतेंदु प्रगतिशील चेतना के प्रतिनिधि रचनाकार के रूप में हमारे सामने आते हैं। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से ठीक समय पर उचित नेतृत्व प्रदान किया। निबंधों के माध्यम से नवजागरण का संदेश दिया। उनके मंडल के लेखक - बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, चौधरी बद्रीनारायण उपाध्याय प्रेमघन, ठाकुर जगमोहन सिंह, लाला श्रीनिवास दास आदि ने उनके द्वारा प्रशस्त पथ पर चलकर हिन्दी की जो सेवा की वह अविस्मरणीय है। इनके निबंध सामाजिक व राजनीति विषमता पर गहरी चोट करते हैं। इस युग के निबंध उस युग की चेतना को प्रतिबिंबित करते हैं। इनके निबंधों का विशेष गुण भाषा-शैली की सरलता है।

द्विवेदी युग के प्रमुख रचनाकार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी हैं। इनके अतिरिक्त इस युग के निबंधकारों में बालमुकुंद गुप्त, गोविंदनारायण मिश्र, माधव प्रसाद मिश्र, चंद्रशर्मा गुलेरी, बाबू श्यामसुंद्रदास आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। द्विवेदी जी ने सन् 1903 से सत्रह वर्ष अर्थात 1920 तक सरस्वती मासिक पत्रिका का संपादन किया। इस दौरान उन्हेने अपने समय के लेखकों की भाषा को सुधारने का महत्वपूर्ण कार्य किया। वे हिन्दी के पहले लेखक थे, जिन्होंने न केवल अपनी जातीय परंपरा का गहन अध्ययन ही कियया बल्कि उसे आलोचकीय दृष्टि भी प्रदान की। बालमुकुंद गुप्त जी द्विवेदी युग के जागरूक पत्रकार व निबंधकारों में से एक थे। उन्होंने अपने समय के साहित्यिक, राजनीतिक, भाषा संबंधी तथा राष्ट्रीय महत्व पर अपने विचार व्यक्त किए। माधव प्रसाद मिश्र के निबंधों में उनके भावुक व्यक्तित्व के साथ ही राष्ट्रीयता

की भावना भी प्रकट हुई है। कवि और वैयाकरणिक गोविंदनारायण मिश्र ने साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विषयों पर निबंध लिखे हैं। चंद्रधर शर्मा गुलेरी के निबंधों में उनकी जीवंतता और सरसता के साथ-साथ उनकी प्रगतिशील दृष्टि भी अभिव्यक्त हुई है। सरदार पूर्ण सिंह ने केवल छः निबंध लिखकर हिन्दी साहित्य में प्रसिद्धी पाई। श्यामसुंदर दास ने अपने लेखन के माध्यम से हिन्दी साहित्य को अनुसंधान, प्राचीन ग्रंथों की खोज, कोश-निर्माण, संपादन की ओर आकर्षित किया। द्विवेदी युगीन निबंधो के विषय विस्तृत हैं। निबंधकारों ने जीवन से जुड़े विभिन्न विषयों पर निबंध लिखे। गंभीर मनोभावों का सुंदर विवेचन इस युग के निबंधों में हमें देखने को मिलता है। इस युग ने हिन्दी के निबंध भंडार में वृद्धि की है। हिन्दी प्रदेश में नवजागरण के लिए इन निबंधों की भूमिका को रेखांकित किया जा सकता है। इसी युग से हिन्दी साहित्य में विवेकनिष्ठ वैज्ञानिक दृष्टि का विकास हुआ।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. हिन्दी निबंध का व्यस्थित रूप से आरंभ भारतेंदु युग से हुआ है।
2. भारतेंदु युग के निबंधों के विषय विस्तृत हैं। उनमें धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक विषय प्रकाश में आए।
3. भारतेंदु युग के निबंधों में राजनीतिक व सामाजिक सुधार एवं देश-प्रेम की प्रवृत्ति का प्रकाशन हुआ है।
4. द्विवेदी युग के निबंधों में राष्ट्रीय भावना है, देशवासियों में राष्ट्रीय चेतना जागृति हुई।
5. हिन्दी प्रदेश में नवजागरण के लिए इस युग के निबंधों की भूमिका महत्वपूर्ण है।

2.6 शब्द संपदा

1. प्रादुर्भाव : प्रकट होना, आस्तित्व में आना, विकास, उत्पत्ति
2. भावात्मकता : भावपूर्ण, भावयुक्त, जिसमें किसी भी प्रकार का मानसिक भाव हो
3. प्रस्फुटन : फूटना, विकसित होना, व्यक्त होना, प्रकट होना
4. कतिपय : कुछ, थोड़े से, जिनकी संख्या कम हो
5. चेतना : ज्ञान, बुद्धि, जीवन, सोचना, समझना
6. प्रवर्तक : किसी काम या बात का आरंभ या प्रचलन करने वाला, संचालक
7. जनक : पिता, जन्म देने वाला
8. परिमार्जित : स्वच्छ किया हुआ, धोया हुआ, सुधारा हुआ
9. ख्याति : प्रसिद्धि, लोकप्रियता, प्रशंसा, यश, कीर्ति
10. बहुमुखी : अनेक विषयों या क्षेत्रों से संबंधित, अनेक दिशाओं में लागू होने वाला

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

(1) भारतेंदु हरिश्चंद्र का संक्षिप्त परिचय लिखकर उनके निबंधों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

(2) हिन्दी साहित्य में महावीर प्रसाद द्विवेदी की भूमिका पर अपने विचार लिखिए।

(3) भारतेंदु युग के प्रमुख निबंधकारों पर विशेष टिप्पणी लिखिए।

(4) द्विवेदी युग के निबंधकारों की विशेषताएँ संक्षिप्त में लिखिए।

(5) प्रतापनारायण मिश्र तथा बालमुकुंद गुप्त के निबंधों पर अपने विचार व्यक्त करें।

खंड (ब)

(ब) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

(1) बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन का संक्षिप्त परिचय लेखकर उनके निबंधों की विशेषताओं पर टिप्पणी लिखिए।

(2) हिन्दी निबंध में बालकृष्ण भट्ट का क्या योगदान है?

(3) गोविंदनारायण मिश्र और माधव प्रसाद मिश्र ने किस तरह हिन्दी निबंध को समृद्ध किया लिखिए।

(4) सरदार पूरण सिंह और बाबू श्यामसुंदर दास के निबंधों की विशेषताएँ लिखिए?

(5) भारतेंदु युग और द्विवेदी युग के निबंधों में अंतर को स्पष्ट करें।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का पहला युग है ....

(अ) भारतेंदु युग (आ) द्विवेदी युग (इ) छायावदी युग (ई) शुक्ल युग

2. निम्नलिखित में से कौन सी पत्रिका ने हिन्दी निबंध के विकास बहुत बड़ी भूमिका निभाई –

(अ) हरिश्चन्द्र चंद्रिका (आ) सरस्वती (इ) सुरदर्शन (ई) समालोचक

3. शिवशंभु का चिट्ठा, नामक निबंध के निबंधकार हैं –

(अ) भारतेंदु (आ) द्विवेदी (इ) बालमुकुंद गुप्त (ई) बालकृष्ण भट्ट

(4) द्विवेदी द्वारा रचित निबंध है –

(अ) धोखा (आ) म्युनिसिपैलिटी के कारनामे (इ) नेशनल कांग्रेस की दुर्दशा (ई) कालचक्र

(5) द्विवेदी युग के निबंधकार हैं –

(अ) बालकृष्ण भट्ट (आ) प्रेमघन (इ) राधाचरण गोस्वामी (ई) चंद्रधर शर्मा गुलेरी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. भारतेंदु के निबंधों का क्षेत्र उनकी .... और .... की तरह ही व्यापक है।

2. द्विवेदी युग का समय सन् .... तक माना जाता है।

3. भाषा के संबंध में .... जी की नीति स्पष्ट थी।

4. प्रतापनारायण मिश्र .... के विचारों व आदर्शों से काफी प्रभावित थे।

5. ....हिन्दी के ऐसे निबंधकार व पत्रकार थे जिन्हें उर्दू में लेखन से बहुत ख्याति मिली।

III. सुमेल कीजिए –

1. भारतेंदु	(अ) सरस्वती
2. द्विवेदी	(आ) कछुआ धर्म
3. प्रतापनारायण मिश्र	(इ) कविवचन सुधा
4. माधव प्रसाद मिश्र	(ई) भौं
5. चंद्रधर शर्मा गुलेरी	(ऊ) सब मिट्टी हो गया

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचंद्र शुक्ल

2.हिन्दी साहित्य का उद्भव व विकास – आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

3. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास – डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी

4. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – डॉ. बच्चन सिंह

5. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास : द्वितीय खंड (आधुनिक काल सन् 1857 से अब तक) – डॉ. गतिपतिचंद्र गुप्त

6. हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ – डॉ. शिव कुमार शर्मा

7. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेंद्र, डॉ. हरदयाल

8. हिन्दी का गद्य साहित्य – डॉ. रामचंद्र तिवारी

इकाई 3 : हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्ल युग

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मूल पाठ : हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्ल युग
3.3.1 शुक्ल युग के निबंध और निबंधकार
3.3.2 शुक्ल युग के निबंधों की विशेषताएँ
3.4 पाठ सार
3.5 पाठ की उपलब्धियाँ
3.6 शब्द संपदा
3.7 परीक्षार्थ प्रश्न
3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

आचार्य रामचंद्र शुक्ल अपने निबंधों और विशेषकर हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन के लिए हिन्दी साहित्य के पाठकवर्ग में लोकप्रिय हैं। जिस कालवधि को हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों द्वारा कविता के क्षेत्र में छायावादी युग या स्वच्छंदतावाद कहा गया है, उसी कालावधि को निबंध के क्षेत्र में शुक्ल युग के नाम से जाना जाता है। इस अवधि को हिन्दी निबंध लेखन का तीसरा मोड़ भी कह सकते हैं। पहला भारतेंदु युग, दूसरा द्विवेदी युग। भारतेंदु युग में निबंध लेखन की शुरुआत हुई, द्विवेदी युग में उसका विस्तार हुआ और शुक्ल युग में वह ऊँचाई पर पहुँचा। शुक्ल युग की कालावधि सन् 1920 से 40 तक मानी जाती है। जैसे कि नाम से ही पता चलता है इस युग के प्रमुख निबंधकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल (1884-1941) हैं। अन्य मुख्य निबंधकारों में डॉ. गुलाबराय (1888-1963ई), डॉ. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी (1894-1971), जयशंकर प्रसाद (1889-1937ई), माखनलाल चतुर्वेदी (1889-1968ई), राहु ल सांकृत्यायन (1893-1963ई), सूर्यकांत त्रिपाठी निराला (1896-1961ई) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

3.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप–

1. शुक्ल युग के निबंधों की जानकारी प्राप्त करेंगे।
2. शुक्ल युग के मुख्य निबंधकारों का संक्षिप्त परिचय जानेंगे।
3. इस युग के निबंधों की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
4. शुक्ल युग में निबंधों के विकास को समझेंगे।

3.3 मूल पाठ : हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्ल युग

प्रिय छात्रो, इस युग के नाम से पता चलता है कि इस युग के प्रमुख निबंधकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल हैं। चलिए इनके बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं -

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का परिचय

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जन्म उत्तर प्रदेश बस्ती जिले के अगोना नामक गाँव में हुआ था। इनकी माता का नाम विभाषी था और पिता का चंद्रबली शुक्ल। पिताजी ने उन्होंने वकालत पढ़ने के लिए इलाहबाद भेजा पर उनकी रुचि तो साहित्य में थी। अतः परिणाम यह हुआ कि वे उसमें अनुत्तीर्ण रहे। शुक्ल जी के पिताजी ने उन्हें नायब तहसीलदारी का पद दिलाने का भी प्रयास किया, किंतु उनकी स्वाभिमानी प्रकृति के कारण यह संभव न हो सका।

रामचंद्र शुक्ल लंदन मिशन स्कूल में ड्राइंग के अध्यापक थे। साथ ही वे चौधरी बदरीनारायण उपाध्याय प्रेमघन के मासिक पत्र आनंद कादंबिनी के सहायक संपादक काम किया करते थे। उन्हीं दिनों उनके लेख पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगे थे। धीरे-धीरे उनके लेखन की ख्याति फैलने लगी थी। उनकी योग्यता से प्रभावित होकर 1908 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने उन्हें हिन्दी शब्दसागर के सहायक संपादक का कार्य-भार सौंपा। इस काम वे बहुत सफल रहे। श्यामसुन्दर दास के अनुसार हिन्दी शब्दसागर की उपयोगिता और सफलता का श्रेय रामचंद्र शुक्ल को जाता है। वे नागरी प्रचारिणी पत्रिका के भी संपादक रहे। 1919 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक नियुक्त हुए। श्यामसुंदर दास की मृत्यु के बाद 1937 से जीवन के अंतिम काल अर्थात 1941 तक विभागाध्यक्ष के पद पर रहे। उनके द्वारा रचित निबंध चिंतामणि भाग – 1, 2, तथा 3 में संकलित हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंधों की विशेषताएँ

हिन्दी निबंध परंपरा में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। सरस्वती के आरंभिक वर्षों में उस समय के प्रसिद्ध निबंधकारों द्वारा साहित्य और कविता के संबंध रचित निबंध प्रायः प्रकाशित हुआ करते थे। इन विषयों पर युवा शुक्ल द्वारा रचित साहित्य और कविता क्या है? नामक दो निबंध प्रकाशित हुए थे। अपनी युवावस्था के आरंभिक दिनों में उन्होंने साहित्य और कविता के संबंध में जो प्रश्न छेड़ा, वह उनके परिपक्क अवस्था में भी उनके साथ रहा। मानों वे इसी प्रश्न का उत्तर अपने विभिन्न निबंधों में खोजते रहे हों। रामचंद्र शुक्ल की बड़ी विशेषता यही रही कि वे अपने आलोचनात्मक लेखन या इतिहास लेखन में कहीं पर भी साहित्य से इतर मानदंड को स्वीकार नहीं किया।

शुक्ल जी के निबंधों को दो श्रेणियों में रखा जा सकता है – मनोविकार और आलोचनात्मक। मनोविकार श्रेणी में उनके शुद्ध निबंधों को रखा जा सकता है। ये निबंध चिंतामणि : भाग 1 में संकलित हैं। आलोचनात्म श्रेणी निबंध चिंतामणि : भाग 2 में संगृहित हैं।

चिंतामणि के निबन्धों के अतिरिक्त शुक्ल जी ने कुछ अन्य निबंध भी लिखे हैं। जैस मित्रता, अध्ययन आदि सामान्य विषयों पर लिखे उनके निबंध चिंतामणि : भाग 3 में संगृहित किए गए हैं।

शुक्ल जी के निबंधों का विषय अत्यंत सूक्ष्म एवं गंभीर, मनोविज्ञान एवं रसनाभूति रहा है। उन्होंने उनका प्रतिपादन भी प्रौढ़तम शैली में किया गया है। चिंतामणि में संकलित निबंधों में एक ओर शुक्ल जी की सूक्ष्म मनोवैज्ञानिकता का परिचय मिलता है तो दूसरी ओर उनका समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अपने निबंधों में शुक्ल जी एक मनोवैज्ञानिक, सामज शास्त्री और साहित्यकार की भूमिकाओं में दिखाई देते हैं। इन तीनों ही रूपों में शुक्ल जी सफल हुए हैं। उनके आलोचनात्मक निबंधों – कविता क्या है?, साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद, रसात्मक बोध के विविध रूप, काव्य में लोक मंगल की साधनावस्था आदि में उनकी अपूर्व प्रतिभा, उनका मौलिक चिंतन व निष्कर्ष अंकित हुए हैं। मनोविकार संबंधी निबंधों में शुक्ल जी की बुद्धि और हृदय दोनों साथ-साथ चलते हैं। उन्होंने चिंतामणि के निवेदन में लिखा है – इस पुस्तक में मेरी अंतर्यात्रा में पड़नेवाले कुछ प्रदेश हैं। यात्रा के लिए निकलती रही है बुद्धि, पर हृदय को भी साथ लेकर अपना रास्ता निकालती रही। बुद्धि जहाँ कहीं मार्मिक या भावाकर्षक स्थलों पर पहुँची है, वहाँ हृदय थोड़-बहुत रमता अपनी प्रवृत्ति के अनुसार कुछ कहता गया है। उनके मनोविकार की श्रेणी के निबंधों में भाव या मनोविकार, उत्साह, श्रद्धा-भक्ति, करुणा, लज्जा और ग्लानि, लोभ और प्रीति, घृणा और ईर्ष्या, भय और क्रोध आदि शामिल हैं। उनके पहले इसी प्रकार के विषयों पर बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र और माधवप्रसाद मिश्र ने भी निबंध लिखे थे। इस संदर्भ में भट्ट जी के आत्मनिर्भरता, मिश्र जी के मनोयोग और माध्वप्रसाद मिश्र के धृति और क्षमा निबंध उल्लेखनीय हैं।

शुक्ल जी अपने प्रत्येक विषय को कर्म से जोड़ कर देखते हैं – हमारे अंतः करण में प्रिय के आदर्श रूप का संघटन उसके शरीर या व्यक्ति मात्र के आश्रय से हो सकता है पर श्रद्धेय के आदर्श रूप का संघटन उसके फैलाये हुए कर्म तंतु के उपादान से हो सकता है। भक्ति के बारे में वे लिखते हैं – राम और कृष्ण मानव जीवन में पूर्ण रूप से सम्मिलित थे। करुणा के संबंध में उनका कथन है – सामाजिक जीवन की स्थिति और पुष्टि के लिए करुणा का प्रसार आवश्यक है। उन्होंने जिस तरह मनुष्यों के मनोविकारों को परिभाषित किया है वैस किसी अन्य निबंधकार ने नहीं किया है। इनकी परिभाषएँ अद्भुत हैं। अनुकरणीय हैं। मित्रता निंबंध जीवनोपयोगी विषय पर लिखा गया उच्चकोटि का निबंध है। इसमें शुक्ल जी की लेखन शैली गत विशेषताएँ झलकती हैं। क्रोध निबंध उन्होंने सामाजिक जीवन में क्रोध की आवश्यकता को रेखांकित किया है।
आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंधों की भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है। लेकिन दुरुहता कम ही देखने को मिलती है। उनकी सरल व व्यावहारिक रही है। उन्होंने हिन्दी के प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया है। यथा स्थान उर्दू और अंग्रेज़ी के अतिप्रचलित शब्दों का भी

प्रयोग हमें दिखाई देता है। भाषा को अधिक सरल और व्यवहारिक बनाने के लिए शुक्ल ने ग्रामीण बोलचाल के शब्दों को भी अपनाया है। उन्होंने नौ दिन चले अढ़ाई कोस, जिसकी लाठी उसकी भैंस, पेट फूलना, काटों पर चलना आदि कहावतों व मुहावरों का भी प्रयोग निस्संकोच होकर किया है। शुक्ल जी का दोनों प्रकार की भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वह अत्यंत परिमार्जित, प्रौढ़ और व्याकरण की दृष्टि से पूर्ण निर्दोष है। उनके निबंधों में शब्द मोतियों की भांति वाक्यों के सूत्र में गुंथे हुए दिखाई देते हैं। एक भी शब्द निरर्थक नहीं, प्रत्येक शब्द का अपना पूर्ण महत्व है।

शुक्ल की शैली पर उनके व्यक्तित्व की पूरी-पूरी छाप है। उनकी की शैली के मुख्यतः तीन रूप हैं: **आलोचनात्मक, गवेषणात्मक और भावात्मक।** उन्होंने **आलोचनात्मक शैली** का प्रयोग अपने आलोचनात्मक निबंधों में किया है। उनमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है। वाक्य छोटे-छोटे, संयत और मार्मिक हैं। भावों की अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है कि उनको समझने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती। **गवेषणात्मक शैली** प्रयोग शुक्ल जी के नवीन खोजपूर्ण निबंधों की मिलती है। इसमें भाषा क्लिष्ट है। वाक्य बड़े-बड़े हैं और मुहावरों का नितान्त अभाव है। **भावात्मक शैली** का प्रयोग उनके मनोवैज्ञानिक निबंध है। यह शैली गद्य-काव्य का सा आनंद देती है। इस शैली की भाषा व्यवहारिक है। भावों की आवश्यकतानुसार छोटे और बड़े दोनों ही प्रकार के वाक्यों को अपनाया गया है। बहुत से वाक्य तो सूक्ति रूप में प्रयुक्त हुए हैं। जैसे - बैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है आदि। शुक्ल की सूक्तियाँ अत्यंत अर्थगर्भी हैं। उनके विवेचनात्मक गद्य ने हिन्दी गद्य पर व्यापक प्रभाव डाला है।

कहा जा सकता है कि निबंधकार शुक्ल की शैली में भारतेंदु युग की सी मौलकिता है, किंतु उसके छिछलेपन से दूर है। द्विवेदी युग की सी विचारात्मकता है, किंतु वैसी शुष्कता का नितांत अभाव है। विचारों की गंभीरता में हास्य-व्यंग्य से भरी उक्तियाँ घुली मिली दिखाई देती हैं। लजा और ग्लानि पर विचार करते-करते वे लिखते हैं – लक्ष्मी की मूर्ति धातुमयी हो गई, उपासक सब पत्थर के हो गए।...... आजकल तो बहुत सी बातें धातु के ठीकरों पर ठहरा दी गई।.....राजधर्म, आचार्य धर्म, वीर धर्म सब पर सोने का पानी फिर गया, सब टका-धर्म हो गए।......सब की टकटकी टके की ओर लगी हुई है।

शुक्ल जी ने अपने निंबधों के विषयों को बोधगम्य बनाने के लिए भाषा की उन सभी शक्तियों का प्रयोग किया है, जिनके कारण कोई रचना या कथन काव्य की संज्ञा प्राप्त करता है। उन्होंने शब्द चयन, वाक्य रचना, सादृश्य विधान सब में अपनी काव्यात्मकत रुचि का परिचय दिया है।

बोध प्रश्न –

- शुक्ल जी ने प्रेमघन के किस मासिक पत्र के सहायक संपादक का काम किया ?
- रामचंद्र शुक्ल के निबंधों के संकलन कितने भागों में है और उसका नाम क्या है?

- शुक्ल जी के निबंधों को किन दो श्रेणियों में रखा जा सकता है ?
- शुक्ल जी का निबंध उत्साह किस श्रेणी में आता है?
- शुक्ल जी द्वारा रचित किसी एक आलोचनात्मक निबंध का नाम बताइए।

बाबू गुलाबराय का संक्षिप्त परिचय

बाबू गुलाबराय का जन्म इटावा, उत्तर प्रदेश में हुआ। उनके पिता श्री भवानी प्रसाद धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। उनकी माता कृष्ण की उपासिका थीं। सूर, कबीर के पदों को तल्लीन होकर गाया करती थीं। माता-पिता की इस धार्मिक प्रवृत्ति का प्रभाव बाबू गुलाबराय जी पर भी पड़ा। दर्शन शास्त्र में एम.ए. करने के बाद गुलाबराय ने छतरपुर के महाराज के निजी सचिव के रूप में काम किया। वहीं पर वे दीवान और चीफ़ जज भी बने। छतरपुर महाराजा के निधन के पश्चात वह नौकर छोड़कर आगरा आए और सेंट जॉन्स कॉलेज में हिन्दी विभागाध्यक्ष के पद पर कार्य किया। गुलाबराय जी ने अपने जीवन के अंतिम काल तक साहित्य-साधना की। जिससे प्रभावित होकर आगरा विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.लिट. की उपाधि से सम्मानित किया। गुलाबलाय के निबधों को चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है – (1) दार्शनिक एवं विचारात्मक- कर्तव्य शास्त्र, तर्क शास्त्र, बौद्ध धर्म, पाश्चात्य दर्शनों का इतिहास, भारतीय संस्कृति की रूपरेखा आदि। (2) साहित्यिक व समीक्षात्मक - नवरस, हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास हिन्दी, नाट्य विमर्श, आलोचना कुसुमांजलि, काव्य के रूप, सिद्धांत और अध्ययन आदि। (3) आत्मसंस्मरणात्मक- मेरी असफलताएँ, मेरे मानसिक उपादान, प्रकार प्रभाकर, ठलुआ क्लब आदि और (4) हास्य विनोदात्मक - जीवन-पशु, मेरी दैनिकी का एक पृष्ठ, मेरे नापिताचार्य आदि। इनके अतिरिक्त गुलाब राय जी की बहुत-सी स्फुट रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं जिनके विषय बहुत व्यापक हैं।

गुलाबराय के निबंधों की विशेषताएँ :

गुलाब राय साहित्य और दर्शन शास्त्र के गंभीर अध्येता थे। इसका ही परिणाम हैं उनके साहित्यिक और दार्शनिक निबंध। हिन्दी में दार्शनिक निबंध की शुरुआत का श्रेय गुलाब राय को ही जाता है। उनसे पहले हिन्दी में इस विषय का सर्वथा अभाव था। गुलाबराय जी की साहित्यिक रचनाओं के अंतर्गत उनके आलोचनात्मक निबंध आते हैं। ये आलोचनात्मक निबंध सैद्धांतिक और व्यवहारिक दोनों ही प्रकार के हैं। गुलाबराय जी ने सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक आदि विविध विषयों पर भी अपनी लेखनी चलाई।

गुलाबराय जी ने अपने निबंधों में शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली का प्रयोग किया है। उसके मुख्यतः दो रूप देखने को मिलते हैं - क्लिष्ट तथा सरल। विचारात्मक निबंधों में उनकी भाषा क्लिष्ट और परिष्कृत हो गई है। उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रधानता दिखाई देती है,

जबकि भावात्मक निबंधों की भाषा सरल है। उसमें हिन्दी के प्रचलित शब्दों के साथ-साथ उर्दू और अंग्रेज़ी के शब्दों का भी प्रयोग मिलता है। कहावतों और मुहावरों का यथास्थान प्रयोग मिलता है। संस्कृत के प्रकांड पंडित होते हुए भी गुलाबराय जी ने अपनी भाषा में कहीं भी पांडित्य-प्रदर्शन का प्रयत्न नहीं किया। उनकी की भाषा आडंबर से रहित है। उन्होंने अपने निबंधों के लिए तीन शैलियों को अपनाया – विवेचात्मक, भावात्मक और हास्य-विनोद।

बाबू गुलाबराय साधारणीकरण एवं रस निष्पत्ति जैसे शुष्क विषयों को भी सरल एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त थे। उनके निबंधों में व्यक्तित्व की सरलता, अनुभूति की तरलता, विचारों की स्पष्टता और शैली की सुबोधता दिखाई देती है। हास्य विनोद उनके निबंधों में अनेक स्थानों पर प्रकट होता है। उदाहरण देखिए – खैर, आजकल उस (भैंस) का दूध कम हो जाने पर भी और अपने मित्रों को छाछ भी नहीं पिला सकने की विवशता की झूंझल के होते हुए भी (सुरराज इंद्र की तरह मुझे भी मट्ठा दुर्लभ हो जाता है-तक्रं शक्रस्य दुर्भभम्) उसके लिए भूसा लाना अनिवार्य हो जाता है। कहाँ साधारणीरण और अभिव्यंजनावाद की चर्चा और कहाँ भूसा का भाव। भूसा खरीद कर मुझे भी गधे के पीछे ऐसी ही चलना पड़ता है, जैसे बहुत से लोग अक्ल के पीछे लाठी ले कर चलते हैं।..... लेकिन मुझे गधे के पीछे चलने में उतना ही आनंद आता है जितना कि पलायनवादी को जीवन से भगाने में। यहाँ लेखक ने स्वयं को विनोद का पात्र बनाया लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से तर्क शून्य प्रलाप करने वाले असामाजिक एवं पलायनवादी साहित्यकारों पर व्यंग्य का कटाक्ष किया है। वस्तुतः वैयक्तिक प्रसंगों के सहारे असामजिक तत्वों पर व्यंग्य के बाण चलाने में गुलाबराय की निजी विशेषता है।

गुलाब राय जी के निबंधों में नैतिकता का संदेश, समाज के लिए प्रगति, शील दृष्टिकोण, दर्शन के जटिल सिद्धातों की सरलतम व्याख्या और राष्ट्र प्रेम की उदात्त भावना है। एक मौलिक निबंधकार, उत्कृष्ट समालोचक एवं सफल संपादक के रूप में गुलाब राय जी ने हिन्दी की जो सेवा की है, वह प्रशंसनीय व अनुकरणीय है।

बोध प्रश्न –

- गुलाबराय के निबंधों को कितनी श्रेणी में रखा जा सकता है ?
- गुलाबराय किस विषय में एम.ए थे?

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का संक्षिप्त परिचय

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का जन्म राजनांदगांव के एक छोटे से कस्बे खैरागढ़ में हुआ। उनके पिता पुन्नालाल बख्शी खैरागढ़ के प्रतिष्ठित परिवार से थे। प्रारंभ से ही प्रखर पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की प्रतिभा को खैरागढ के ही इतिहासकार लाल प्रद्युम्न सिंह जी ने समझा एवं बख्शी जी को साहित्य सृजन के लिए प्रोत्साहित किया। और यहीं से साहित्य की अविरल धारा बह निकली। प्रतिभावान बख्शी जी बनारस हिंदू कॉलेज से बी.ए. किया और एल.एल.बी. करने

लगे किन्तु वे साहित्य के प्रति अपनी प्रतिबद्धता एवं समयाभाव के कारण एल.एल.बी. पूरा नहीं कर पाए। वे काफी लंबे समय तक संस्कृत, अंग्रेजी तथा हिन्दी के शिक्षक रहे। इसीलिए वे 'मास्टरजी' के नाम बहुत प्रसिद्ध हुए थे। राजनांदगांव के त्रिवेणी परिसर में उनके सम्मान में मूर्तियों की स्थापना की गई है। शिक्षकी की तरह ही बख्शी जी ने पत्र-पत्रिकाओं का संपादन कार्य भी काफी लंबे समय तक किया। वे सरस्वती के सहायक संपादक व प्रधान संपादक भी रहे।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी के निबंधों की विशेषताएँ

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी ने कविताएँ, कहानियाँ और निबंध लिखे। लेकिन उनकी ख्याति विशेष रूप से निबंधकार रूप में हुई। हिन्दी निबंध साहित्य में उनका विशिष्ट स्थान है। उनका पहला निबंध 'सोना निकालने वाली चींटियाँ' सरस्वती में प्रकाशित हुआ था। इनके निबंधों में विचारों की मौलिकता और शैली की नूतनता दिखाई देती है। उनके निबंधों में पंच पात्र, विश्व साहित्य, मकरंद बिंदु, प्रबंध पारिजात, त्रिवेणी, कुछ और कुछ, बख्शी जी के निबंध, यात्री आधि उल्लेखनीय हैं। निबंधों के विस्तृत विषयों को देखते हुए डॉ. ओंकारनाथ शर्मा ने डॉ. बख्शी के निबंधों को चार वर्गों में विभाजित किया – (1) विचारात्मक – मेरा जीवन क्रम, विज्ञान, समाज सेवा आदि। (2) आलोचनात्मक – विश्वसाहित्य में संगृहीत निबंध, (3) भावात्मक निबंध – श्रद्धांजलि के दो फूल, अतीत स्मृति आदि और (4) विवरणात्मक निबंध – एक पुरानी कथा, बंदर की शिक्षा आदि। उन्होंने कतिपय व्यक्तिगत निबंध भी लिखे जो पंचपात्र नाम से संगृहीत हैं। इसमें संकलित निबंधों – अतीत स्मृति, उत्सव, रामलाल पंडित आदि में उनकी भावुकता, आत्मीयता तथा व्यंग्यपूर्ण प्रतिक्रिया अंकित हुई है। डॉ. बख्शी के निबंधों में कुछ स्थानों पर अंतर्कथाओं का प्रयोग मिलता है। उनकी भाषा में गति की सजीवता और चित्रात्मकता पर्याप्त मात्रा में परिलक्षित होती है।

बोध प्रश्न –

- पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी किस नाम से बहुत प्रसिद्ध हुए थे?
- बख्शी जी के निबंधों को कितने वर्गों में विभाजित किया जा सकता है?

शुक्ल युग के उपर्युक्त के अलावा अन्य निबंधकारों में सियाराम शरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, शांतिप्रिय द्विवेदी, शिवपूजन सहाय, बेचैन शर्मा उग्र, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, रघुवीर सिंह, माखनलाल चतुर्वेदी के नाम उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त कई ऐसे निबंधकार भी हैं जिन्होंने अन्य साहित्यिक विधाओं के साथ-साथ हिन्दी निबंध विधा की अभिवृद्धि में अमूल्य भूमिका निभाई। जैसे – चतुरसेन शास्त्री, हरिभाऊ उपाध्याय, रामकृष्णदास, वियोगीहरि (हरिप्रसाद द्विवेदी), राहुल सांकृत्यायन, डॉ. धीरेंद्र वर्मा, पं. श्रीराम शर्मा, रामचंद्र वर्मा आदि। प्रिय छात्रो, यहाँ पर स्थान-सीम को ध्यान में रखकर कुछ निबंधकारों की विशेषताओं पर चर्चा करेंगे।

सियारामशरण गुप्त ने विचारात्मक, भावात्मक, संस्मरणात्मक, वर्णनात्मक आदि विभिन्न प्रकार
के निबंध लिखे हैं। इनके निबंधों में जीवन के विभिन्न पक्ष उद्घाटित हुए है। आत्मीयता, व्यंग्य विनोद, स्मृतिचित्र के रूप में अतित को प्रस्तुत करने की विशेष क्षमता के कारण उनके निबंध व्यक्तिनिष्ठ निबंधों के अच्छे उदाहरण हैं। गुप्त जी के निबंधों में चिंतन की गंभीरता के साथ-साथ शैली की साहित्यिकता एवं प्रभावोत्पादकता दिखाई देती है। उनके निबंधों का संग्रह 'झूठ-सच' नाम से संकलित है।

जयशंकर प्रसाद मूलतः कवि और नाटकार थे। उन्होंने कहानी और उपन्यास के साथ-साथ निबंध साहित्य में भी अपना हाथ आजमाया। उनके निबंधों का संग्रह काव्य और कला तथा अन्य निबंध शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। इसमें आठ साहित्यिक निबंध संकलित हैं। काव्यकला, रहस्यवाद, यथार्थवाद और छायावाद, रस आदि शीर्षकों से लिखे निबंधों से हमें प्रसाद की साहित्य को देखने की मौलिक अंतरदृष्टि का परिचय मिलता है। उन्होंने अपने निबंधों में भारतीय साहित्य को विवेकवादी और आनंदवादी परंपराओं में विभाजित करके भारतीय संस्कृति व दर्शन की कसौटी पर उसे परखा है।

शिवपूजन सहाय, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', और सूर्यकांत त्रिपाठी निराला तीनों ही रचनाकार मतवाला मंडल से संबद्ध हैं। **शिवपूजन सहाय** ने 'भाषा के जादूगर' के रूप में बहुत ख्याति अर्जित की थी। उनके निबंधों में उनकी मस्ती और जिंदादिली के कई नमूने देखे जा सकते हैं। उनका निबंधों का संग्रह है कुछ। इसमें उन्होंने तुच्छ से तुच्छ समझे जाने वाले विषय को भी अपने लेखन प्रतिभा से न केवल संवारा बल्कि बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। संख्या में अधिक नहीं होने पर भी सहाय जी के निबंध अपने शिष्ट हास्य व मार्मिक व्यंग्य के लिए पहचाने जाते हैं। **पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'** ने कथाकार के अलावा निबंधकार के रूप में भी ख्याति अर्जित की है। हिन्दी साहित्य में वे अपने प्रखर व्यंग्य शैली के लिए पहचाने जाते हैं। इनके संस्मरणात्मक निबंध व्यक्तिगत में संगृहीत हैं। अपनी स्पष्टता और ओजस्वी वाणी के कारण उग्र के निबंधों की शैली प्रभावीशाली बन गई है। उनके अधिकतर निबंध भावात्मक हैं। उन्होंने बुढ़ापा, गाली आदि निबंधों में सामाजिक तथा आर्थिक विषमताओं पर व्यंग्य अंकित हुआ है। वे अपने पाठकों से बिना किसी औपचारिकता के संवाद स्थापित करते हैं। हिन्दी साहित्य में **सूर्यकांत त्रिपाठी निराला** की पहचान एक कवि के रूप में है, लेकिन उनका गद्य साहित्य भी काफी प्रभावशाली है। उन्होंने प्रबंध पद्म, प्रबंध प्रतीक्षा, प्रबंध पूर्णिमा, चाबुक, चयम आदि नाम से निबंध संकलनों का प्रकाशन किया। उनकी गद्य शैली अत्यंत प्रौढ़ और व्यंग्यात्मक है। अपने निबंधों में निराला एक विचारक, विद्रोही और व्यंग्यकार के रूप में हमारे सामने प्रकट होते हैं।

शिवपूजन सहाय की भाषा में एक प्रकार का अभिजात्य मिलता है जब कि पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' और निराला की भाषा में उच्छृंखलता। उग्र ने स्वच्छंदतावादी आदर्श और आभिजात्य को तोड़ा। इसीलिए उनकी भाषा में गहरा पैनापन है।

डॉ. रघुवीर सिंह अपने ऐतिहासिक निबंधों के लिए जाने जाते हैं। मुगलकालीन इतिहास और इमारतें उनके निबंध के विषय रहे हैं। उनकी शैली चित्रात्मक, सांकेतिक और अर्थसंपन्न है। उनके निबंधों में सप्तदीप, जीवन कण, जीवन धूलि, शेष स्मृतियाँ आदि उल्लेखनीय हैं। उनके निबंध पाठकों को गद्य काव्य जैसे लगते हैं।

माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय चेतना के कवि के रूप में काफी लोक प्रिय हैं। उनके निबंध भी उनकी कविताओं की तरह ही भावप्रधआन हैं। किंतु यह नहीं समझा जाए कि उनमें चिंतन की कमी है। उनका निबंधों का संकलन साहित्य देवता नाम से प्रकाशित है। उनके निबंधों की शक्ति उनकी भाषा है जिसमें कथन का बांकपन, ओज, प्रतीकात्मकता, लाक्षणिकता और प्रवाह का सुंदर संयोजन दिखाई देता है।

बोध प्रश्न –

- सियारामशरण गुप्त ने किस प्रकार के निबंध लिखे हैं?
- जयशंकर प्रसाद के निबंध संग्रह का क्या नाम है?
- मतवाला मंडल के निबंधकारों के नाम लिखिए।
- मुगलकालीन इतिहास और इमारतों को आधार बनाकर किसने निबंध लिखे हैं?
- माखनलाल चतुर्वेदी के निबंध संकलन का क्या नाम है?

3.4 पाठ सार

हिन्दी निबंध साहित्य के तीसरे युग का नाम शुक्ल युग है। इस युग के प्रवर्तक आचार्य रामचंद्र शुक्ल हैं। उन्हें वकालत की पढ़ाई के बजाय साहित्य में रुचि अधिक थी। लंदन मिशन स्कूल में ड्राइंग के अध्यापक और पत्रकार के रूप में उनका काम करने के साथ-साथ शुक्ल ने प्रेमघन की पत्रिका आनंद कादंबिनी में सहायक संपादक का काम किया। सरस्वती में प्रकाशित निबंध के कारण उनकी लेखनी को धीरे-धीरे पहचान मिली। उन्हें 1908 में हिन्दी शब्दसागर के सहायक संपादक का पद मिला। उनके लेखन प्रतिभा और हिन्दी भाषा के ज्ञान के कारण काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक के रूप में नियुक्ति हुई। चिंतामणि शुक्ल के निबंधों का संकलन है जो तीन भागों में प्रकाशित है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंधों की भाषा-शैली और व्यक्त विचारधारा उन्हें एक अद्वितीय निबंधकार बनाती है। उनके विभिन्न निबंधों में साहित्य को देखने का मौलिक दृष्टिकोण प्रकट हुआ है, जो उन्हें हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में उन्हें अद्वितीय बनाता है। उनकी अनूठी शैली और विचारधारा उन्हें हिन्दी निबंध साहित्य के विशिष्ठ हस्ताक्षर के रूप में स्थापित करती है। उनके निबंधों को मनोवैज्ञानिक और आलोचनात्मक वर्गों में बांटा जा सकता है।

गुलाब राय के निबंध उनके व्यक्तित्व की व्यापकता को रेखांकित करते हैं। उनके निबंधों में विचारों की गहराई, भाषा की सरलता, और विविधता के दर्शन होते हैं। उन्होंने विभिन्न

विषयों पर निबंध लिखकर समाज में जागरूकता बढ़ाने का कार्य किया और अपनी स्थानीय भाषा को समृद्ध किया। उनके निबंध पाठकों को समसामयिक मुद्दों से जोड़ते हैं।

हिन्दी निबंध साहित्य में पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की महत्वपूर्ण भूमिका है। उनके निबंधों की विविधता, विचारशीलता और भाषा की सरलता उन्हें विशिष्ट बनाती है। उन्होंने विभिन्न विषयों पर अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में नवचेतना का प्रसार किया है। उनके निबंधों में विचारों की गहराई, आलोचनात्मक दृष्टिकोण और सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूकता दिखती है।

शुक्ल युग के सियाराम शरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, शिवपूजन सहाय, बेचैन शर्मा उग्र, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, रघुवीर सिंह, माखनलाल चतुर्वेदी आदि निबंधकारों ने अपनी अनूठी शैली और विषय विस्तार से इस युग के निबंधों में अभिवृद्धि की है। उनके निबंधों में विचारशीलता, अनुभव और साहित्यिक दक्षता का संगम देखने को मिलता है। इन निबंधकारों की रचनाएँ हमें समाज के विभिन्न पहलुओं की समझ में मदद करती हैं और साथ ही हमें साहित्यिक रूप से भी प्रेरित करती हैं। उनके द्वारा उठाए गए विभिन्न मुद्दे और विचार हमें समाज की विषमताओं पर गहराई से सोचने की विवश करते हैं।

शुक्ल युग में हिन्दी निबंधों के क्षेंत्र में द्विवेदी युग का विकास हुआ है। इस युग के निबंधों में अपने पूर्व के युगों से अधिक गंभीरता एवं सूक्ष्मता है। इस युग के निबंध मुख्यतः साहित्य, मनोवैज्ञान, संस्कृति, इतिहास आदि विषयों से संबंधित समस्याओं पर मौलिक चिंतन प्रस्तुत करते हैं।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. शुक्ल युग में हिन्दी निबंधों के क्षेंत्र में द्विवेदी युग का विकास दिखा देता है।
2. शुक्ल युग के निबंधों में अपने पूर्व के युगों से अधिक गंभीरता एवं सूक्ष्मता के दर्शन होते हैं।
3. इस युग के निबंध मुख्यतः साहित्य, मनोवैज्ञान, संस्कृति, इतिहास आदि विषयों से संबंधित समस्याओं पर मौलिक चिंतन प्रस्तुत करते हैं।
4. भाषा व शैली की दृष्टि से भी इस युग का निबंध साहित्य द्विवेदी युगीन निबंधों की अपेक्षा अधिक विकसित व प्रौढ़ है।

3.6 शब्द संपदा

1. प्रतिपादन : विचार, स्वीकृति या प्रस्ताव देना; उल्लिखित करना
2. परिपक्कता : परिपक्क होने की अवस्था
3. प्रौढ़ता : पूरी तरह विकसित होना
4. दुरूहता : कठिनाई
5. परिलक्षित : अच्छी तरह देखा हुआ

6. संबद्ध : लगा हुआ, संबंध रखनेवाला

7. मनोविकार : मन की अवस्था जिसमें सुखद या दुःखद भाव या विकार उत्पन्न होता है

8. उपादान : सामग्री

9. गवेषणा : अनुसंधान, जाँच

10. उपाधि : पदवी, विशेष लक्षण

11. साधारणीकरण : किसी वस्तु विशेष को सार्वजनीन वस्तु बनाना

12. पलायनवादी : वास्तविकता से बचने वाला

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

(1) आचार्य रामचंद्र शुक्ल का संक्षिप्त परिचय लिखकर उनके निबंधों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

(2) हिन्दी निबंध साहित्य में गुलाबराय की भूमिका पर अपने विचार लिखिए।

(3) शुक्ल युग के प्रमुख निबंधकारों पर विशेष टिप्पणी लिखिए।

(4) शुक्ल युग के निबंधकारों की विशेषताओं प्रकाश डालिए।

(5) पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का परिचय लिखकर उनके निबंधों की विशेषाएँ बताइए।

खंड (ब)

(ब) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

(1) शुक्ल युग के कवि निबंधकारों पर टिप्पणी लिखिए।

(2) गुलाबराय के निबंधों की क्या विशेषता है?

(3) आचार्य रामचंद्र शुक्ल को इस युक का प्रमुख निबंधकार क्यो कहा जाता है?

(4) सियाराम शरण गुप्त और पांडेय बेचैन शर्मा उग्र के निबंधों की क्या विशेषता है?

(5) शुक्ल युग के निबंधकारों की भाषा-शैली पर अपने विचार लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. शुक्ल युग की कालावधि है ....

(अ) सन् 1920 से 40 (आ) सन् 1915 से 35 (इ) सन् 1900 से 1920 (ई) सन् 1857-1900

2. निम्नलिखित में से शुक्ल युग के निबंधकार नहीं हैं–

(अ) प्रतापनारायण मिश्र (आ) गुलाब राय (इ) प्रसाद (ई) निराला

3. लज्जा और ग्लानि, नामक निबंध के निबंधकार हैं –

(अ) गुलाब राय (आ) द्विवेदी (इ) बालमुकुंद गुप्त (ई) रामचंद्र शुक्ल

(4) सियाराम शरण गुप्त द्वारा रचित निबंध है –

(अ) झूठ-सच (आ) म्युनिसिपैलिटी के कारनामे (इ) नेशनल कांग्रेस की दुर्दशा (ई) कालचक्र

(5) शुक्ल युग के निबंधकार हैं –

(अ) बालकृष्ण भट्ट (आ) प्रेमघन (इ) डॉ. रघुवीर सिंह (ई) चंद्रधर शर्मा गुलेरी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. शुक्ल जी अपने प्रत्येक विषय को ....से जोड़ कर देखते हैं ।

2. गुलाबराय ने .... के महाराज के निजी सचिव के रूप में काम किया।

3. डॉ. पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का पहला निबंध .... सरस्वती में प्रकाशित हुआ था।

4. सियारामशरण गुप्त के निबंधों में .... के विभिन्न पक्ष उद्घाटित हुए है।

5. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंधों की भाषा में ....शब्दों की अधिकता है।

III. सुमेल कीजिए –

1.	रामचंद्र शुक्ल	(अ) काव्य और कला तथा अन्य निबंध
2.	गुलाबराय	(आ) कछुआ धर्म
3.	प्रसाद	(इ) साहित्य देवता
4.	निराला	(ई) ड्राइंग के अध्यापक
5.	माखनलाल चतुर्वेदी	(ऊ) चाबुक

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचंद्र शुक्ल

2.हिन्दी साहित्य का उद्भव व विकास – आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

3. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास – डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी

4. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – डॉ. बच्चन सिंह

5. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास : द्वितीय खंड (आधुनिक काल सन् 1857 से अब तक) – डॉ. गतिपतिचंद्र गुप्त

6. हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ – डॉ. शिव कुमार शर्मा

इकाई 4 : हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्लोत्तर युग

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मूल पाठ : हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्लोत्तर युग
4.3.1 छायावादोत्तर निबंधकार
4.3.1.1 हजारी प्रसाद द्विवेदी
4.3.1.2 जैनेंद्र
4.3.1.3 रामधारी सिंह दिनकर
4.3.1.4 अज्ञेय
4.3.1.5 वासुदेव शरण अग्रवाल
4.3.1.6 अन्य निबंधकार
4.3.2 अद्यतन निबंधकार
4.3.2.1 विद्यानिवास मिश्र
4.3.2.2 कुबेरनाथ राय
4.3.2.3 निर्मल वर्मा
4.3.2.4 शिवप्रसाद सिंह
4.3.2.5 हरिशंकर परसाई
4.3.2.6 विवेकी राय
4.3.2.7 अन्य निबंधकार
4.4 पाठ सार
4.5 पाठ की उपलब्धियाँ
4.6 शब्द संपदा
4.7 परीक्षार्थ प्रश्न
4.8 पठनीय पुस्तकें

4 1.प्रस्तावना

निबंध आधुनिक हिन्दी गद्य-साहित्य की महत्वपूर्ण विधा है। जिसका उदय भारतेन्दु हरिश्चंद्र की 'हरिश्चंद्र मैगजीन' तथा 'हरिश्चंद्र-चंद्रिका' नामक पत्रिकाओं के जन्म के साथ ही हुआ। इस प्रकार से हिन्दी-निबंध का प्रारंभ सन् 1872 से मानना उचित होगा। सन् 1900 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी निबंध को व्याकरण सम्मत तथा विषयानुकूल बनाया। सन् 1920 में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी को विकसित करने के साथ ही साथ उसे दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक आदि विषयों के साथ भी जोड़ दिया। सन् 1940 से शुक्लोत्तर युग प्रारंभ होता है और इसी युग की जानकारी प्रस्तुत इकाई में दी जाएगी।

4.2 : उद्देश्य

प्रिय छात्रो ! प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

1. शुक्लोत्तर युग के प्रमुख निबंधकारों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. विवेच्य युग के निबंधों के विषय वैविध्य से परिचित हो सकेंगे।
3. विवेच्य युग के निबंधों की शैलीगत विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
4. विवेच्य युग के निबंधों की भाषिक विशेषताएँ जान सकेंगे।

4.3 : मूल पाठ : हिन्दी निबंध और निबंधकार : शुक्लोत्तर युग

प्रिय विद्यार्थियो ! हिन्दी निबंध के इतिहास में आचार्य रामचंद्र शुक्ल के महत्व और योगदान को देखते हुए छायावाद युग को निबंध के इतिहास में 'शुक्ल युग' कहा जाता है। इसी प्रकार से शुक्ल जी के बाद के युग को 'शुक्लोत्तर युग' कहा जाता है। 'शुक्लोत्तर युग' को अध्ययन की सुविधा के लिए दो खंडों में बाँटा जा सकता है-

1. छायावादोत्तर युगीन निबंधकार
2. अद्यतन निबंधकार

4.3.1 छायावादोत्तर निबंधकार---- (सन् 1940 – सन् 1950)

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने वैचारिक निबंध लेखन परंपरा को सफलता की चरम ऊँचाई पर पहुँचा दिया था- विशेष रूप से मनोविकार संबंधी निबंधों को तो नई पहचान प्राप्त हुई। छायावादोत्तर काल में हिन्दी निबंध अन्य विषयों की ओर आगे बढ़ गया। छायावादोत्तर काल में समीक्षात्मक निबंध अधिक लिखे गए। साथ ही व्यक्तित्त्व व्यंजक निबंधों की संख्या भी काफी अधिक दिखाई पड़ती है। डॉ. विद्यानिवास मिश्र के अनुसार, 'व्यक्ति-व्यंजक निबंध व्यक्ति का व्यंजक नहीं होता, वह व्यक्ति के माध्यम से व्यंजक होता है। यानि जो कुछ भी (लेखक के) अनुभव के दायरे में होता है, वह व्यक्ति व्यंजक निबंध बनता है'। अर्थात, सरल भाषा में हम यह कह सकते हैं कि छायावादोत्तर काल में निबंधकारों ने अपने अनुभव को ही निबंध के स्वरूप में ढाला। इस बहाने उन्होंने अपने अनुभवों की ही समीक्षा की। छायावादोत्तर हिन्दी निबंध की विशेषता यह भी रही कि इसमें विषय सहज व्यावहारिक और अलंकारविहीन था। उसमें भावुकतापूर्ण अभिव्यक्ति के स्थान पर चुटीली उक्तियों ने अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया। आगे छायावादोत्तर काल के निबंधकारों की निबंध लेखन से संबंधित विशेषताओं की जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

बोध प्रश्न

- आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने किस निबंध परंपरा को सफलता की चरम ऊँचाई पर पहुँचा दिया था?

4.3.1.1 हजारी प्रसाद द्विवेदी-

शुक्लोत्तर युग के सबसे प्रमुख निबंधकार हैं हजारी प्रसाद द्विवेदी। हजारी प्रसाद द्विवेदी की विशेष पहचान ललित निबंधकार के रूप में है। उन्होंने हिन्दी में 'ललित निबंध' विधा को प्रतिष्ठित किया। यहाँ आगे बढ़ने से पहले यह जानना जरूरी है कि 'ललित निबंध' किसे कहते हैं? दरअसल, विद्वानों ने निबंध के मुख्यतः दो भेद माना है- विषयनिष्ठ और व्यक्तिनिष्ठ या विषयीनिष्ठ। इस दूसरे प्रकार के अंतर्गत ही 'व्यक्तिव्यंजक निबंध' या 'ललित निबंध' का समावेश है। ललित निबंध ऐसे निबंध कहलाते हैं- जिनमें किसी प्रचलित विषय के स्थान पर व्यक्ति के मनोभावों को अधिक महत्व प्रदान किया जाता है। 'ललित' शब्द 'लल्' क्रिया से 'क्त' प्रत्यय लगकर बना है, जिसका अर्थ है- 'सुंदर'। अर्थात, सुंदर तथा मनोहारी निबंध को हम 'ललित निबंध' कह सकते हैं। ललित निबंध अपने लालित्य से पाठकों को सम्मोहित करता है। लालित्य उसकी आत्मा होती है। इसमें लेखक का व्यक्तित्व प्रधान होता है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी के ललित निबंधों में सांस्कृतिक विरासत की जानकारी के साथ ही साथ नवीन जीवन चेतना, उत्कट जिजीविषा और नई सामाजिक समस्याओं के बीच रह पाने की ललक सर्वत्र दिखाई पड़ती है। द्विवेदी जी का व्यक्तित्व लचीला और निरंतर विकासमान रहा। देश की नयी से नयी गतिशील विचारधारा से वे अपने आप को जोड़ लेते थे और अपनी ऐतिहासिक विचारधारा को भी नवीनता प्रदान करते रहते थे। विद्वता और सहृदयता का जो संगम उनके निबंधों में देखने को मिलता है वह अपने आप में अद्भुत है। अशोक के फूल, विचार और वितर्क, कल्पलता, विचार प्रवाह और कुटज उनके निबंध संग्रह है, जिनमें प्रायः समीक्षात्मक निबंधों के साथ ही ललित निबंध भी संग्रहित है। द्विवेदी जी के ललित निबंधों को देखने से यह स्पष्ट पता चलता है कि जीवन के विविध संघर्षों के कारण उनके बाद के निबंधों में जीवन के प्रति अधिक सचेतन दृष्टिकोण विकसित हुआ। 'कुटज' का एक उद्धरण देखिए, 'कुटज क्या केवल जी रहा है? वह दूसरों के द्वार पर भीख माँगने नहीं जाता- अपनी उन्नति के लिए अफसरों का जूता नहीं चाटता-आत्मोन्नति के हेतु नीलम नहीं धारण करता - दांत नहीं निपोरता-जीता है शान से। कहाँ से मिली है अकुतोभयावृत्ति, अपराजित स्वभाव, अविचल जीवन दृष्टि'! द्विवेदी जी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इतिहास, पुराण, साहित्य आदि से गंभीर से गंभीर तथ्य वे निबंधों के लिए चुनते थे और फिर उन विषयों को समसामयिकता के साथ जोड़ देते थे।

बोध प्रश्न

- हजारीप्रसाद द्विवेदी का व्यक्तित्व कैसा था?

- हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित 4 निबंध संग्रहों के नाम लिखिए।

4.3.1.2 जैनेंद्र-

छायावादोत्तर काल के निबंधकारों में जैनेंद्र का स्थान काफी महत्वपूर्ण है। उन्होंने निबंध लेखन को धर्म, राजनीति, संस्कृति, साहित्य के साथ ही साथ सेक्स, प्रेम, वासना, विवाह आदि विषयों से जोड़ा था। जैनेंद्र की दार्शनिकता बहुत व्यक्तिगत है और उनकी इस मौलिक दार्शनिकता के कारण ही उनके निबंध ऊब पैदा नहीं करते हैं। नए विषयों के प्रति जागरूक रहने के साथ ही उन्होंने यह भी ध्यान रखा कि निबंधों में समरसता बनी रहे। निबंधों में गांधीवादी एवं दार्शनिक विचारधाराओं को देखा जा सकता है। उन्होंने जीवन के सभी प्रश्नों पर अपने अनुभवों के आधार पर सोचते-समझते हुए निबंध लिखा। जैनेंद्र के निबंधों में कहीं-कहीं उलझाव भी दिखाई पड़ता है। उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं- प्रस्तुत प्रश्न, काम प्रेम और परिवार, समय और हम, पूर्वोदय आदि।

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र ने निबंध लेखन को किन विषयों के साथ जोड़ा?
- जैनेंद्र के कुछ निबंध संग्रहों के नाम बताइए।

4.3.1.3 रामधारी सिंह 'दिनकर'

रामधारी सिंह 'दिनकर' के अधिकांश निबंधों में उनका विचार पक्ष अधिक उभरकर आया है, पर कुछ ऐसे निबंध भी हैं जो उनके व्यक्तिगत अनुभवों, विचारों को पाठकों तक पहुँचाते हैं। अर्धनारीश्वर, मिट्टी की ओर, रेती के फूल, राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय साहित्य आदि उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं। उनके निबंधों में मानवीय आस्था को सबसे अधिक महत्व मिला है। जिसका मूल आधार या तो मनोवैज्ञानिक विचार है या फिर सांस्कृतिक। दिनकर जी के निबंधों को दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक प्रकार तो उन निबंधों का है जिनकी भाषा शैली काव्यात्मक है और दूसरा प्रकार उन निबंधों का है, जिनमें विचार और विश्लेषण की प्रमुखता है। दिनकर जी के निबंधों में राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद, विवेकानंद, अरविंद और महात्मा गाँधी की विचार परंपरा को देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

1. रामधारी सिंह 'दिनकर' के निबंधों में किन विद्वानों के विचारों को देखा जा सकता है?
2. रामधारी सिंह 'दिनकर' के निबंधों को कितने भागों में बाँटा जा सकता है?

4.3.1.4 अज्ञेय-

छायावादोत्तर निबंध लेखन परंपरा में अज्ञेय का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। अज्ञेय का पहला निबंध संग्रह सन् 1945 में 'त्रिशंकु' नाम से प्रकाशित हुआ। उक्त निबंध संग्रह में अज्ञेय के सभी निबंधों से संबंधित या फिर साहित्य से संबंधित विचारों को देखा जा सकता है।

अज्ञेय ने कुछ निबंध 'कुट्टीचाटन' के नाम से भी लिखे। 'कुट्टीचाटन' के नाम से उनके ललित निबंधों का एक संग्रह 'सब रंग' शीर्षक से भी प्रकाशित हुआ है। अद्यतन, जोग लिखी, स्रोत और सेतु, कहाँ है द्वारका आदि उनके प्रमुख निबंध संग्रह है। 'स्मृति छंदा' निबंध संग्रह का प्रकाशन अज्ञेय की मृत्यु के बाद हुआ। इन निबंधों में अज्ञेय ने साहित्य, भाषा, संस्कृति, जीवन मूल्य, इतिहासबोध, परंपरा, आधुनिकता, समाज, लोकतंत्र, भारतीयता आदि अनेक विषयों पर चर्चा की है। उनके निबंध केवल निबंध नहीं बल्कि उनकी मानसिक यात्रा के भी दस्तावेज़ है। अज्ञेय के निबंध पाठकों की चेतना को नवीन संस्कारों के साथ जोड़ते हैं। अज्ञेय के निबंध कहीं डायरी शैली में हैं तो कहीं कहानी के रूप में। कहीं ये निबंध भाषण-शैली की प्रवाहमयता में बंधे हुए हैं तो कहीं मनःस्थिति विशेष को ध्यान में रखकर लिखे गए निबंध रेखाचित्र समान लगते हैं। अज्ञेय के निबंधों में अनेक स्थलों पर बिना कारण तुलनात्मक विश्लेषण भी दिखाई पड़ता है जो उनकी सीमा है।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय का पहला निबंध संग्रह कब और किस नाम से प्रकाशित हुआ?
- किस निबंध संग्रह का प्रकाशन अज्ञेय की मृत्यु के बाद हुआ?

4.3.1.5 वासुदेवशरण अग्रवाल-

प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं पुरातत्व का ज्ञान रखनेवाले डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल शोध दृष्टि रखनेवाले निबंधकार थे। प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति की जानकारी इनके निबंध साहित्य के माध्यम से प्राप्त होती है। पृथ्वीपुत्र, कल्पवृक्ष, कला और संस्कृति, कल्पलता आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध संकलन है। डॉ. अग्रवाल के निबंधों में शुद्ध और परिनिष्ठित हिन्दी को देखा जा सकता है जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता मिलती है। पुरातत्व से संबंधित निबंधों में उन्होंने गवेषणात्मक शैली अपनाई है। कहीं-कहीं वाक्य लंबे हो गए हैं, अप्रचलित पारिभाषिक शब्द भी ऐसे निबंधों में दिखाई पड़ते हैं। इसके बाद भी अग्रवाल जी के निबंधों का प्रवाह कहीं भी कम नहीं हुआ है। व्याख्यात्मक शैली के निबंधों में लेखक ने कठिन से कठिन प्रसंगों को भी सरल भाषा में प्रस्तुत किया है, जिन निबंधों को लिखते समय डॉ. अग्रवाल का हृदय पक्ष प्रधान हो गया है वे निबंध भावात्मक शैली के निबंध कहलाए। इन निबंधों की भाषा भी काव्यात्मक तथा आलंकारिक हो गई है। संस्कृत के उद्धरणों को लेकर लिखे गए निबंध उद्धरण शैली के निबंध कहलाए। उनके निबंधों की मौलिकता, गंभीरता एवं विवेचन पद्धति अनुकरणीय है।

बोध प्रश्न

- डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के निबंधों की भाषा की विशेषता बताइए?
- डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के निबंध संग्रहों के नाम बताइए।

4.3.1.6 अन्य निबंधकार-

छायावादोत्तर काल के दूसरे निबंधकारों में शांतिप्रिय द्विवेदी का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। वे निबंध को सौंदर्य के साथ जोड़ने में विश्वास रखते थे। उनका मानना था कि स्वच्छ आंतरिक सुंदरता के अभाव में बाहरी दिखावट के द्वारा न तो व्यक्ति का कल्याण हो सकता है और न ही समाज का। प्रगतिशीलता के वे कभी विरोधी नहीं रहे लेकिन उनका यह भी मत था कि अगर व्यक्ति में सृजन क्षमता है तो अभाव, गरीबी, पीड़ा आदि से वह पीछे नहीं हटेगा बल्कि इन परिस्थितियों को भी अपने सृजन को शस्त्र बनाकर वह और अधिक सर्जन कार्य करेगा। भावुकता, भाषा की रागात्मकता उनके निबंधों की प्रमुख विशेषता है। युग और साहित्य, सामयिकी, साकल्य, धरातल आदि उनके प्रमुख निबंध हैं।

ललित निबंधों का लेखन भी छायावादोत्तर काल में बहुत अधिक हुआ। इस कड़ी में रामवृक्ष बेनीपुरी का नाम लेना बहुत आवश्यक है। उनका मानना था कि, 'मानवीय जीवन में भूख का जितना महत्व है, उतना ही महत्व कला और संस्कृति का भी'। 'गेहूँ और गुलाब' तथा 'वंदे वाणी विनायकौ' में उनके निबंध संग्रहित है। उनकी भाषा में कहीं भी जटिलता नहीं है।

श्रीराम शर्मा छायावादोत्तर काल के एक ऐसे निबंधकार हैं जिन्होंने शिकार वृत्तांत या जंगल वृत्तांत को निबंध साहित्य के साथ जोड़ दिया। धरती गाती है, एक युग:एक प्रतीक, रेखाएँ बोल उठी उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं। उन्होंने साहसिक वृत्तांतों को ग्रामीण पृष्ठभूमि में रखा है, प्रकृति के विभिन्न रोमांचित करनेवाले दृश्य और अछूते मानवीय जीवन के मर्मस्पर्शी आयामों को अपने निबंधों में स्थान प्रदान किया है।

छायावादोत्तर काल के अन्य निबंध लेखकों में महादेवी वर्मा का नाम लेना अवश्य ही उचित है। उनके द्वारा लिखित निबंध मूलतः विचार प्रधान हैं लेकिन संवेदनशीलता की कमी बिल्कुल नहीं दिखाई पड़ती है। स्वयं महादेवी ने अपने निबंधों के संबंध में कहा है कि निबंधों में उनके विचार, भाव, भाव की सीमा-रेखा पर स्थित हैं। क्षणदा, शृंखला की कड़ियाँ, संकल्पिता, संभाषण, भारतीय संस्कृति के स्वर आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध संग्रह हैं। इनमें से 'शृंखला की कड़ियाँ' सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इसमें भारतीय नारी की विषम परिस्थितियों को अनेक दृष्टियों से देखा गया है। इन निबंधों में महादेवी ने पहली बार भारतीय नारी को सभी अनैतिक और अशोभनीय सामाजिक बंधनों को तोड़कर आगे बढ़ने का संदेश दिया है।

छायावादोत्तर निबंध साहित्य में पंडित माखनलाल चतुर्वेदी जी अपने व्यंग्य, भाव-चित्र, विचार और कथात्मक निबंध लेखन के लिए प्रसिद्ध हैं। इनके द्वारा लिखित निबंध संग्रह 'अमीर इरादे गरीब इरादे' का प्रकाशन 1960 में हुआ। इनके द्वारा लिखित निबंध छोटे किंतु चुभने वाले होते हैं। यह उनकी निजी विशेषता है।

राजनाथ पांडेय ने गद्य की सभी विधाओं में कुछ न कुछ लिखा है। आपके तीन निबंध संग्रह हैं- सुबहे बनारस, शेष लकीरें और नया निर्माण। इन्होंने विचार प्रधान, गंभीर तथा आत्म व्यंजक और सरस दोनों ही प्रकार के निबंध लिखे हैं। आत्मव्यंजक निबंधों में पांडेय जी का मुक्त, हास्य प्रिय और प्रभावशाली व्यक्तित्व स्पष्ट झलकता है।

उपर्युक्त निबंधकारों के अतिरिक्त आधुनिक जीवन की विसंगतियों पर प्रहार करनेवाले कुछ हास्य व्यंग्य प्रधान निबंध लेखकों के नाम कृष्ण देव प्रसाद गौड़ 'बेढब', कांतानाथ पांडेय 'चोंच', मोहनलाल गुप्त, बरसाने लाल चतुर्वेदी आदि है।

बोध प्रश्न

- युग और साहित्य, सामयिकी, साकल्य, धरातल किनके द्वारा लिखित निबंध है?
- श्रीराम शर्मा ने निबंध साहित्य को किस नवीन विषय के साथ जोड़ा ?

4.3.2 अद्यतन निबंध- (सन् 1950 – से अब तक)

समकालीन हिन्दी साहित्य में विचारों का खुलापन आने के साथ-साथ आज के समय की समस्याओं, जटिलताओं, चुनौतियों आदि पर निबंध के माध्यम से तार्किक चर्चा शुरू हुई। आज के निबंध में अधिक एकाग्रता और आत्ममंथन की प्रवृत्ति दिखाई देती है। रोमांटिक भावावेग के स्थान पर गैर-रोमांटिक बौद्धिक रुझानों को अधिक महत्व मिलता हुआ दिखाई पड़ता है। आगे कुछ प्रमुख अद्यतन निबंधकारों की जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

4.3.2.1 विद्यानिवास मिश्र-

अद्यतन निबंधकारों में सबसे पहला नाम विद्यानिवास मिश्र का आता है उन्होंने हजारी प्रसाद द्विवेदी के बाद उनकी आत्मव्यंजक निबंध शैली को जारी रखा। सन् 1953 में उनका पहला निबंध संग्रह 'छितवन की छाँह' प्रकाशित हुआ था। मिश्र जी वस्तुवादी अहंकार को वैज्ञानिकता की और वैज्ञानिकता को नकली अहंकार की उपज मानते हैं। उनका मानना है कि हमारी संवेदना क्षीण होती जा रही है क्योंकि हम अपनी परंपरागत विरासत को स्वीकार नहीं कर रहे हैं। भारतीय परंपरा अपने आप में रसमय है। भारतीय मृत्यु से भी भयभीत नहीं होता है क्योंकि भारतीय मतानुसार मृत्यु जीवन का पुनरारंभ है। मिश्र जी ने अपने निबंधों के द्वारा भारत की सांस्कृतिक चेतना, उदार जीवन-पद्धति और व्यापक विश्व दृष्टि को अपने पाठकों तक पहुँचाकर निरंतर पाठकों को भारतीय परंपरा के साथ जोड़ने का प्रयास किया है। तुम चन्दन हम पानी, आँगन का पंछी, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है, नदी, नारी और संस्कृति आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध है। मिश्र जी के मतानुसार, 'भारतीय समाज परंपराबद्ध समाज रहा है, इतिहाबद्ध नहीं'। 'परंपरा' शब्द को स्पष्ट करते हुए उनका कहना है, 'परंपरा का अर्थ है, पर के भी जो परे हो, श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठतर हो, जो न कभी भूत हो न भविष्यत, जो सतत वर्तमान हो, जो कभी सिद्ध न हो, निरंतर साध्य हो, परंपरा इसलिए साधना का पर्याय है'।

बोध प्रश्न

- विद्यानिवास मिश्र जी का प्रथम निबंध संग्रह किस नाम से कब प्रकाशित हुआ?
- भारतीय किस से भयभीत नहीं होता?

4.3.2.2 कुबेरनाथ राय-

भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषताओं को आधुनिक जीवन के साथ जोड़कर उनकी व्याख्या करनेवाले प्रमुख ललित निबंधकर के रूप में कुबेरनाथ राय का नाम लिया जाता है। प्रारंभ में वे माधुरी और विशाल भारत जैसे पत्रिकाओं में वैचारिक निबंध लिखते थे। बाद में धर्मवीर भारती के प्रोत्साहन से वे ललित निबंध लिखने लगे। भारतीय संस्कृति का अध्ययन करते हुए उन्होंने पाया कि आर्य और आर्येतर जातियों की मिलीजुली भूमिका से भारतीय संस्कृति का निर्माण हुआ है। उन्होंने यह भी पाया कि वृहत्तर भारत की संस्कृति के निर्माण में निषाद, मालव, नागवंशीय जातियों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा। कुबेरनाथ राय की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि वे आधुनिक विकृतियों को देखकर भी कभी निराश नहीं हुए। वे अनुभव करते थे कि, 'जब तक भारत भूमि के प्रति हमारे मन में मातृ भाव शेष है तब तक घोर सांस्कृतिक अंधकार में भी चेतना का प्रकाश हमारे मनोजगत को आलोकित करता रहेगा क्योंकि भारत माता इस देश की पुंजीभूत सांस्कृतिक, बौद्धिक ऊर्जा का नाम है। जब तक इस नित्य जागृत शक्ति में हमारी आस्था है, हमारा पथ ज्योर्तिमय है'। सन् 1968 में 'प्रिया नीलकंठी' नामक पहला निबंध- संग्रह प्रकाशित हुआ। इसके बाद रस आखेटक, गंध मादन, पर्ण मुकुट, मन पवन की नौका, आगम की नाव आदि निबंधों के द्वारा आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के बाद उन्होंने हिन्दी निबंध तथा पाठकों को ललित निबंध के साथ जोड़कर रखा।

बोध प्रश्न

- कुबेरनाथ राय किन पत्रिकाओं के लिए वैचारिक निबंध लिखते थे?
- कुबेरनाथ राय की सबसे बड़ी विशेषता क्या रही?

4.3.2.3 निर्मल वर्मा-

अद्यतन निबंधकारों की श्रेणी में निर्मल वर्मा ने हिन्दी निबंध को नवीन स्वरूप प्रदान किया। उनके निबंधों में उनकी सृजनात्मकता तथा बौद्धिक यात्राओं के अनुपम संसार को देखा जा सकता है। उनके दो महत्वपूर्ण निबंध संग्रह हैं- शब्द और स्मृति तथा कला का जोखिम। अज्ञेय और निर्मल वर्मा की लेखनी में काफी समानता है। निर्मल वर्मा की बुनियादी चिंता यह थी कि, 'एक संपूर्ण समाज में सृजनात्मक कल्पना की भूमिका का पुनराविष्कार कैसे किया जाए'? ऐसे ही विचार अज्ञेय भी अपने निबंधों के माध्यम से सामने रखते थे। निर्मल वर्मा के व्यक्तित्व में पश्चिमी सभ्यता और भारतीय संस्कृति का सुंदर सम्मिश्रण दिखाई पड़ता है लेकिन फिर भी निर्मल वर्मा का यह मानना था कि अंग्रेजी शिक्षा पद्धति ने भारतीयों को भारतीय

संस्कृति, धर्म, ईश्वर, प्रकृति, कला, भाषा, समाज व्यवस्था से दूर किया है। उनका मानना था कि भारतीयों को विदेशी सत्ता के सांस्कृतिक अंधानुकरण से बचना होगा ऐसे पैटर्न को अपनाना होगा कि जिसमें न तो अतीत की पुनरावृत्ति हो और न ही प्राचीन मूल्यों की अवहेलना हो। प्राचीन भारतीय परंपरा के आदर्शों से प्रभावित होकर यूरोप के 'अन्य' को अपने 'आत्म' में समाहित करने का प्रयास ही श्रेयस्कर होगा। निर्मल वर्मा ने अपने निबंधों के द्वारा युवा पीढ़ी को नवीन रास्ता दिखाने का महत्वपूर्ण कार्य किया। इसी कारण से अद्यतन निबंध में निर्मल वर्मा का अपना विशिष्ट स्थान है।

बोध प्रश्न

- निर्मल वर्मा के दो महत्वपूर्ण निबंध संग्रह कौन से हैं?
- निर्मल वर्मा ने अपने निबंधों के द्वारा युवा पीढ़ी के लिए क्या किया?

4.3.2.4 शिवप्रसाद सिंह-

शिवप्रसाद सिंह अध्ययनशील निबंधकर थे। उन्होंने देश-विदेश के साहित्य का गहन अनुशीलन किया। उनके निबंधों में निबंध लेखन के सभी श्रेष्ठ गुण- विद्वत्ता, फक्कड़पन, यायावरी वृत्ति, लोक कथा प्रेम, सूक्ष्म विचार शक्ति और गद्य काव्य की शैली विद्यमान हैं। ज्ञान-विज्ञान, दर्शन, विभिन्न जीवन पद्धतियों, संस्कृतियों के बीच विचारों का संघर्ष होना तो स्वाभाविक है। शिवप्रसाद सिंह ने इन सबके बीच में से अपने निबंध लेखन के लिए रास्ता निकाला है। उनके निबंधों का विषय मनुष्य, उसकी स्वतंत्रता और मानवीय मूल्य रहे। उनकी दृष्टि में, 'असली स्वाधीनता मनुष्यता की स्वाभाविक अस्तित्व-मूलक विशेषता है। यह कभी विभाजित नहीं होती। कभी धर्म, राष्ट्र या संस्कृति आदि की मामूली सीमाओं से घेरी नहीं जा सकती। इस स्वाधीनता के सैलाब को मजहब या राष्ट्रीय एकता के नाम पर कुचला नहीं जा सकता और इसीलिए हर मनुष्य का यह स्वधर्म है कि मनुष्यता की इस अविभाज्य आत्मिक माँग को पूरा समर्थन दे'। शिखरों के सेतु, कस्तूरी मृग, चतुर्दिक, मानसी गंगा आदि निबंध उनके विचारों को अपने भीतर समाहित करने में पूर्णतया सक्षम है व्यक्ति के रूप में, निबंधकार के रूप में, शिवप्रसाद सिंह ने हमेशा उन महापुरुषों को नमन किया है। जिन्होंने मनुष्य के लिए, उसकी स्वतंत्रता के लिए, मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए अपना सब कुछ न्योच्छावर कर दिया। उनके अनुसार, 'मनुष्य का अस्तित्व दिक्कालबद्ध है। वह भौतिक जगत का ही एक प्राणी है, किंतु यह भौतिक जगत उतना ही नहीं है, जितना इंद्रियों के माध्यम से जाना जाता है। इससे परे भी बहुत कुछ रहस्यमय और अज्ञेय है। मानव जीवन की परिधि व्यक्त और गोचर तक ही सीमित नहीं है। बहुत कुछ ऐसा है जो हमारी ज्ञान साधना को चुनौती देता हुआ रहस्य लोक में झिलमिला रहा है'। शिवप्रसाद सिंह ने मानव की संपूर्ण शक्ति को जानने-समझने का प्रयास साहित्य के माध्यम

से किया है। इस समझने की प्रक्रिया में उन्होंने एक व्यक्तिगत रचना शिल्प को ही विकसित कर लिया।

बोध प्रश्न

- शिवप्रसाद सिंह ने अपने निबंधों के लिए किन विषयों का चुनाव किया?
- शिवप्रसाद सिंह के द्वारा लिखित प्रमुख निबंध कौन से हैं?

4.3.2.5 हरिशंकर परसाई-

हरिशंकर परसाई व्यंग्य साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। उन्होंने कहानी, रिपोतार्ज, संस्मरण, रेखाचित्र, पत्र, साक्षात्कार, निबंध अर्थात, साहित्य की सभी विधाओं में लेखन किया। लेकिन, उन्हें किसी भी विधा की शास्त्रीय, परंपरागत मर्यादा में सिमट जाना पसंद नहीं था। इसी कारण से उनके निबंधों में कहानी और कहानियों में ललित निबंधों का स्वाद मिलता है। उनकी समस्त रचनाएँ 6 खंडों में 'परसाई रचनावली' शीर्षक से प्रकाशित हैं। जिनमें से खंड 3 और 4 में उनके ललित निबंध संग्रहित हैं। आपने निबंधों में उन्होंने वर्तमान राजनीति और विविध सामाजिक संस्थाओं के अंतर्विरोध को उजागर किया है। उन्होंने अपने निबंधों के द्वारा देश, जाति, धर्म और स्वतंत्रता के प्रति जनता की सहज भावुकता जगाकर अपना स्वार्थ-सिद्धि करनेवाले नेताओं का पर्दाफाश किया है। डॉ. श्यामसुंदर मिश्र का कथन है, 'आप बेखटके परसाई के संपूर्ण लेखन को एक साथ सुनिश्चित क्रम में सँजोकर इस देश की ज़िंदगी का विश्वसनीय इतिहास बना सकते हैं, जहाँ जनसाधारण से लेकर बड़े से बड़े राजनीतिक नेता, प्रशासक, बुद्धिजीवी, मध्यवर्गीय अध्यापक, डॉक्टर, वकील, थानेदार, विश्व के बड़े से बड़े राष्ट्रनायक, कूटनीतिक, युद्धशास्त्री, प्रेमी, प्रेमिकाएं, अवसरवादी, पदलोलुप, राजनीतिज्ञ, साहूकार, पूँजीपति, राजनीतिक और सामाजिक घटनाएँ, अपराध, अनाचार, दिशाहीनता, शोषण के अमानवीय रूपांतर, अकाल, भुखमरी, बाढ़, युवा आक्रोश, जन-आंदोलन, सांप्रदायिक दंगे, धार्मिक अनाचार और इन सबसे बेखबर मध्यवर्गीय शालीनता से आक्रांत रचनाकार और कलाकारों के साथ धार्मिक छद्म के भीतर जकड़े हुए पंडे, पुजारी, महात्मा, भगवान, नए पंथों के संचालक और अध्यात्मवादी सभी एक साथ मिल जाएंगे'। व्यंग्यात्मक निबंध साहित्य के क्षेत्र में इसी विशेषता के कारण हरिशंकर परसाई की अपनी अलग पहचान है। पगडंडियों का जमाना, भूत के पाँव पीछे, तब की बात और थी, तुलसीदास चंदन घिसे आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध है।

बोध प्रश्न

- हरिशंकर परसाई ने अपने निबंधों के द्वारा कौन सा कार्य किया है?

- व्यंग्यात्मक निबंध साहित्य के क्षेत्र में परसाई की अलग पहचान क्यों है?

4.3.2.6 विवेकी राय-

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश के गाँवों के परिवेश को केंद्र में रखकर लिखनेवाले निबंधकारों में विवेकी राय का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। विवेकी राय ने आधुनिक व्यवस्था के अंतर्गत गाँवों की सारी स्वस्थ परंपराओं को टूटते हुए और सांस्कृतिक मूल्यों को नष्ट होते हुए बहुत पास से देखा था। उन्हें ग्रामीणों की अदम्य जिजीविषा का भी ज्ञान था इसलिए उनके निबंधों का स्वर हमेशा आशावादी रहा। गाँवों की दुनियाँ, त्रिधारा, आस्था और चिंतन, जीवन अज्ञात का गणित है, उठ जाग मुसाफिर आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध है। 'जगत तपोवन सो कियो' नामक निबंध आशावादी जीवन की विजय का नैसर्गिक दस्तावेज बनकर उभरा है। कई बार उन्हें उदासी और घुटन का भी अनुभव हुआ, किंतु मानव-जीवन और मानवीय मूल्यों के प्रति उनकी आस्था अविचल रही है। उनके निबंध उनकी मनःस्थितियों के जीवंत साक्षी हैं।

बोध प्रश्न

- स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विवेकी राय ने किस स्थान के परिवेश को लेकर निबंध लेखन का कार्य किया?
- 'जगत तपोवन सो कियो' नामक निबंध की क्या विशेषता है?

4.3.2.7 अन्य निबंधकार-

अद्यतन निबंधकारों में प्रमुख रूप से जिन निबंधकारों का नाम लिया जाता है उनमें प्रमुख है- शरद जोशी। शरद जोशी ने तिलस्म, जीप पर सवार झल्लियाँ तथा यथासंभव आदि निबंधों के द्वारा हिन्दी निबंध साहित्य में योगदान किया है। इस कड़ी में रमेशचंद्र शाह का नाम भी विशेष रूप से लिया जाता है। शाह के निबंध संग्रहों में समानांतर, वागर्थ, शैतान के बहाने आदि का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है।

4.4 : पाठ सार

शुक्लोत्तर युग के सबसे प्रमुख निबंधकार हैं हजारीप्रसाद द्विवेदी। अशोक के फूल, विचार और वितर्क, कल्पलता, विचार प्रवाह और कुटज उनके निबंध संग्रह हैं। जिनमें प्रायः समीक्षात्मक निबंधों के साथ ही साथ ललित निबंध भी संग्रहित है। छायावादोत्तर काल के निबंधकारों में जैनेंद्र का स्थान काफी महत्वपूर्ण है। उन्होंने निबंध लेखन को धर्म, राजनीति, संस्कृति, साहित्य के साथ ही साथ सेक्स, प्रेम, वासना, विवाह आदि विषयों के साथ भी जोड़ दिया था। उनके प्रमुख निबंध- प्रस्तुत प्रश्न, काम प्रेम और परिवार, समय और हम, पूर्वोदय आदि हैं। रामधारी सिंह 'दिनकर' समय-समय पर महत्वपूर्ण निबंध लिखते रहे हैं। अर्धनारीश्वर,

मिट्टी की ओर, रेती के फूल, राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय साहित्य आदि उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं। उनके निबंधों में मानवीय आस्था को सबसे अधिक महत्व मिला है। जिसका मूल आधार या तो मनोवैज्ञानिक विचार रहा या फिर सांस्कृतिक। छायावादोत्तर निबंध लेखन परंपरा में अज्ञेय का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। अज्ञेय का पहला निबंध संग्रह सन् 1945 में 'त्रिशंकु' नाम से प्रकाशित हुआ। अज्ञेय ने कुछ निबंध 'कुट्टीचाटन' के नाम से भी लिखा है। 'कुट्टीचाटन' के नाम से उनके ललित निबंधों का एक संग्रह 'सब रंग' शीर्षक के नाम से भी प्रकाशित हुआ है। अद्यतन, जोग लिखि, स्रोत और सेतु, कहाँ है द्वारका आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध संग्रह है। प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं पुरातत्व का ज्ञान रखनेवाले डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल शोध दृष्टि रखनेवाले निबंधकार रहे हैं। पृथ्वीपुत्र, कल्पवृक्ष, कला और संस्कृति, कल्पलता आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध संकलन है। भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण विशेषताओं को आधुनिक जीवन के साथ जोड़कर उनकी व्याख्या करनेवाले प्रमुख ललित निबंधकर के रूप में कुबेरनाथ राय का नाम लिया जाता है। प्रारंभ में वे माधुरी और विशाल भारत जैसे पत्रिकाओं में वैचारिक निबंध लिखते थे। बाद में धर्मवीर भारती के प्रोत्साहन से वे ललित निबंध लिखने लगे। सन् 1968 'प्रिया नीलकंठी' नामक पहला निबंध- संग्रह प्रकाशित हुआ। रस आखेटक, गंध मादन, पर्ण मुकुट, मन पवन की नौका, आगम की नाव आदि उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं।

छायावादोत्तर काल के दूसरे निबंधकारों में शांतिप्रिय द्विवेदी का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। भावुकता, भाषा की रागात्मकता उनके निबंधों की प्रमुख विशेषता है। युग और साहित्य, सामयिकी, साकल्य, धरातल आदि उनके प्रमुख निबंध हैं। इस कड़ी में रामवृक्ष बेनीपुरी का नाम लेना बहुत आवश्यक है। उनका मानना था कि, 'मानवीय जीवन में भूख का जितना महत्व है, उतना ही महत्व कला और संस्कृति का भी'। 'गेहूँ और गुलाब' तथा 'वंदे वाणी विनायकौ' में उनके द्वारा लिखित निबंध संग्रहित है। श्रीराम शर्मा छायावादोत्तर काल के एक ऐसे निबंधकार हैं जिन्होंने शिकार वृत्तांत या जंगल वृत्तांत को निबंध साहित्य के साथ जोड़ दिया। धरती गाती है, एक युग:एक प्रतीक, रेखाएँ बोल उठी उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं। छायावादोत्तर काल के अन्य निबंध लेखकों में महादेवी वर्मा का नाम लेना अवश्य ही उचित है। उनके द्वारा लिखित निबंध मूलतः विचार प्रधान है लेकिन संवेदनशीलता की कमी बिल्कुल नहीं दिखाई पड़ती है। क्षणदा,शृंखला की कड़ियाँ,संकल्पिता,संभाषण,भारतीय संस्कृति के स्वर आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध संग्रह हैं। इनमें से शृंखला की कड़ियाँ सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इन निबंधों में महादेवी ने पहली बार भारतीय नारी को सभी अनैतिक और अशोभनीय सामाजिक बंधनों को तोड़कर आगे बढ़ने का संदेश दिया है। छायावादोत्तर निबंध साहित्य में पंडित माखनलाल चतुर्वेदी जी अपने व्यंग्य, भाव-चित्र, विचार और कथात्मक निबंध लेखन के

लिए प्रसिद्ध है। इनके द्वारा लिखित निबंध संग्रह 'अमीर इरादे गरीब इरादे' का प्रकाशन 1960 में हुआ। श्री राजनाथ पांडेय ने गद्य की सभी विधाओं में कुछ न कुछ लिखा है। आपके तीन निबंध संग्रह हैं- सुबहे बनारस, शेष लकीरें और नया निर्माण।

अद्यतन निबंधकारों में सबसे पहला नाम विद्यानिवास मिश्र का आता है उन्होंने हजारी प्रसाद द्विवेदी के बाद उनकी आत्मव्यंजक निबंध शैली को उन्होंने जारी रखा। सन् 1953 में उनका पहला निबंध संग्रह 'छितवन की छाँह' प्रकाशित हुआ था। तुम चन्दन हम पानी, आँगन का पंछी, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है, नदी, नारी और संस्कृति आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध है। भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण विशेषताओं को आधुनिक जीवन के साथ जोड़कर उनकी व्याख्या करनेवाले प्रमुख ललित निबंधकर के रूप में कुबेरनाथ राय का नाम लिया जाता है। सन् 1968 में 'प्रिया नीलकंठी' नामक पहला निबंध- संग्रह प्रकाशित हुआ। अद्यतन निबंधकारों की श्रेणी में निर्मल वर्मा ने हिन्दी निबंध को नवीन स्वरूप प्रदान किया। उनके निबंधों में उनकी सृजनात्मकता बौद्धिक यात्राओं के अनुपम संसार को देखा जा सकता है। उनके दो महतावपूर्ण निबंध संग्रह हैं- शब्द और स्मृति तथा कला का जोखिम। अज्ञेय और निर्मल वर्मा की लेखनी में काफी समानता है। उनका मानना था कि भारतीयों को विदेशी सत्ता के सांस्कृतिक अंधानुकरण से बचना होगा और प्रयास यह करना होगा कि ऐसे पैटर्न को अपनाना होगा कि जिसमें न तो अतीत की पुनरावृत्ति होऔर न ही प्राचीन मूल्यों की अवहेलना हो। निर्मल वर्मा ने अपने निबंधों के द्वारा युवा पीढ़ी को नवीन रास्ता दिखने का महत्वपूर्ण कार्य किया। शिवप्रसाद सिंह अध्ययनशील निबंधकर थे। उन्होंने देश-विदेश के साहित्य का अनुशीलन किया। उनके निबंधों का विषय मनुष्य, उसकी स्वतंत्रता और मानवीय मूल्य रहे। हरिशंकर परसाई व्यंग्य साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनकी समस्त रचनाएँ 6 खंडों में 'परसाई रचनावली' शीर्षक से प्रकाशित है। जिनमें से खंड 3 और 4 में उनके ललित निबंध संग्रहित हैं। उनके निबंधों में उन्होंने वर्तमान राजनीति और विविध सामाजिक संस्थाओं के अंतर्विरोध को उजागर किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश के गाँवों के परिवेश को केंद्र में रखकर लिखनेवाले निबंधकारों में विवेकी राय का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। विवेकी राय ने आधुनिक व्यवस्था के अंतर्गत गाँवों की सारी स्वस्थ परंपराओं को टूटते हुए और सांस्कृतिक मूल्यों को नष्ट होते हुए बहुत पास से देखा था। उन्हें ग्रामीणों की अदम्य जिजीविषा का भी ज्ञान था इसलिए उनके निबंधों का स्वर हमेशा आशावादी रहा। गाँवों की दुनियाँ, त्रिधारा, आस्था और चिंतन, जीवन अज्ञात का गणित है, उठ जाग मुसाफिर आदि उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंध है।

4.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

प्रिय छात्रो! प्रस्तुत इकाई के अद्धयन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं-

1. हिन्दी निबंध साहित्य का शुक्लोत्तर युग 1940 ई. से प्रारंभ होता है।

2. शुक्लोत्तर युग में निबंध के विकास को दो भागों में बाँटा जा सकता है- 1. छायावादोत्तर निबंध, 2. अद्यतन निबंध।

3. छायावादोत्तर काल में हिन्दी निबंध साहित्य में 'ललित निबंध' का विशेष रूप से विकास होता दिखाई देता है, तो अद्यतन काल में उसमें व्यंग्य का समावेश विशेष ध्यान खींचता है।

4. छायावादोत्तर निबंधकारों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, जैनेंद्र, रामधारी सिंह 'दिनकर', अज्ञेय आदि का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है।

5. अद्यतन निबंधकारों में डॉ. विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, निर्मल वर्मा, हरिशंकर परसाई आदि का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है।

4.6 : शब्द संपदा

1. सतत = हमेशा
2. निषाद,मालव,नागवंशी= प्राचीन जातियों के नाम
3. अविच्छिन्न = अटूट/लगातार/अखंड
4. विसंगतियाँ = सामान्य न होना
5. पृष्ठभूमि = भूमिका
6. मौलिक = असली/वास्तविक
7. दर्शनिकता= चिंतनशील ढंग से सोचना
8. आत्मोन्नति = आत्मा की उन्नति
9. अद्यतन = नवीन/ताज़ा
10. रेखाचित्र= स्कैच/गद्य की एक विधा
11. पुरातत्व = प्राचीन अनुसंधान एवं अध्ययन से संबंधित ज्ञान

4.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड- (अ)

निम्न प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए-

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा जैनेंद्र की निबंध रचना की विशेषता बताइए।
2. दिनकर तथा अज्ञेय की निबंध रचना की विशेषता बताइए।
3. वासुदेव शरण अग्रवाल की निबंध रचना की विशेषता बताइए।

खंड- (ब)

निम्न प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए-

1) विद्यानिवास मिश्र तथा कुबेरनाथ राय की निबंध रचना की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

2) निर्मल वर्मा तथा शिवप्रसाद सिंह की निबंध रचना की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

3) हरिशंकर परसाई तथा विवेकी राय की निबंध रचना की विशेषताओं प्रकाश डालिए।

खंड – (स)

I. सही विकल्प चुनिए-

i) हिन्दी निबंध का प्रारंभ कब से मानना उचित होगा?

अ) सन् 1872 ब) सन् 1873 स) सन् 1949 द) सन् 1950

ii) 'छितवन की छाँह' का प्रकाशन कब हुआ?

अ) सन् 1800 ब) सन् 1953 स) सन् 1972 द) सन् 1980

iii) शुक्लोत्तर युग कब से प्रारंभ होता है?

अ) सन् 1940 ब) सन् 1941 स) सन् 1942 द) सन् 1997

iv) निम्न में से कौन सा 'दिनकर' जी का निबंध संग्रह है?

अ) रेती के फूल ब) स्मृति छंदा स) कल्पवृक्ष द) रस आखेटक

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए-

i) 'अर्द्धनारीश्वर' निबंध के रचनाकार__________ हैं।

ii) 'त्रिशंकु' निबंध संग्रह के रचनाकार __________हैं।

iii) 'पृथ्वीपुत्र' निबंध संग्रह के रचनाकार __________हैं।

iv) 'शृंखला की कड़ियाँ' रचना के रचनाकर ________हैं।

III. सुमेल कीजिए-

i) रेखाएँ बोल उठी	a) विद्यानिवास मिश्र
ii) त्रिशंकु	b) अज्ञेय
iii) छितवन की छाँह	c) कुबेरनाथ राय
iv) प्रिया नीलकंठी	d) श्रीराम शर्मा

4.8: पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, संपादक- डॉ. नगेंद्र
2. हिन्दी का गद्य साहित्य, डॉ. रामचंद्र तिवारी

इकाई 5 : निबंधकार बालकृष्ण भट्ट : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 मूलपाठ : निबंधकार बालकृष्ण भट्ट : एक परिचय

5.3.1 निबंधकार बालकृष्ण भट्ट का जीवनवृत्त

5.3.2 निबंधकार बालकृष्ण भट्ट की रचना यात्रा

5.3.3 बालकृष्ण भट्ट की वैचारिकता के विविध आयाम

5.3.4 हिन्दी साहित्य में बालकृष्ण भट्ट का स्थान

5.4 पाठ सार

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

5.6 शब्द संपदा

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! पिछली इकाइयों में आप निबंध विधा का परिचय प्राप्त कर चुके हैं। साथ ही आधुनिककाल की प्रमुख गद्य विधा के रूप में हिन्दी निबंध के उदय और विकास के इतिहास से परिचित हो चुके हैं। जैसा कि आप जानते हैं, हिन्दी निबंध का विकास हिन्दी पत्रकारिता के विमाम के साथ जुड़ा हुआ है। साथ ही स्वतंत्रता आंदोलन के साथ भी। भारतेंदु युग में हिन्दी में पत्र - पत्रिकाओं का प्रकाशन बढ़ा तो सामाजिक और राष्ट्रीय मुद्दों पर निबंध लेखन को भी प्रोत्साहन मिला। उस काल में भारतेंदु हरिश्चंद्र के साथ जिन लेखकों ने निबंध विधा को लोकप्रिय बनाने का काम किया उनमें पं.बालकृष्ण भट्ट (1844-1914) का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस इकाई में आप पं. बालकृष्ण भट्ट के व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन करेंगे।

5.2 उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप ----

1. निबंधकार बालकृष्ण भट्ट का जीवन परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

2. भट्ट जी के व्यक्तित्व की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

3. भट्ट जी की रचनायात्रा के विविध सोपानों और उनके संपूर्ण कृतित्व के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

4. समाज, राष्ट्र, साहित्य और भाषा के बारे में भट्ट जी के विचारों से परिचित हो सकेंगे।

5. साहित्य में बालकृष्ण भट्ट के महत्व और स्थान से परिचित हो सकेंगे।

5.3 मूल पाठ: निबंधकार बालकृष्ण भट्ट : एक परिचय

पं. बालकृष्ण भट्ट हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में भारतेंदु युग के एक प्रमुख निबंधकार हैं। उन्होंने निबंधों के अलावा अन्य विधाओं में भी लेखन किया। साथ ही अपने मासिक पत्र 'हिन्दी प्रदीप' के माध्यम से पत्रकारिता को भी नई दिशा प्रदान की। वे आधुनिकाल के उन आरंभिक लेखकों में से हैं जिन्होंने हिन्दी गदय की शैशव अवस्था में खड़ी बोली को साहित्यिक भाषा बनाने में अविस्मरणीय योगदान दिया। आपको ध्यान रखना चाहिए कि उस समय भारत में अंग्रेजी राज था। इसलिए उस काल के लेखकों पर यह जिम्मेदारी भी गई थी कि वे राष्ट्र के रूप में भारतीय समाज को जगाने का काम करें। पं. बालकृष्ण भट्ट ने यह जिम्मेदारी अपने निबंधों के माध्यम से बखूबी निभाई। इसके लिए उन्होंने ऐसी चोट करने वाली भाषा का इस्तेमाल किया जिसके बारे में आचार्य रामचंद्र शुक्ल को 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में यह कहना पडा कि "पं. बालकृष्ण भट्ट की भाषा अधिकतर वैसी ही होती थी जैमी खरी-खरी सुनाने में काम में लाई जाती है। जिन लेखों में उनकी चिडचिडाहट झलकती है वे विशेष मनोरंजक हैं। नूतन पुरातन का वह संघर्ष काल था।इसमें भट्ट जी को चिढ़ाने की पर्याप्त सामग्री मिल जाया करती थी। समय के प्रतिकूल पुराने बद्धमूलक विचारों को उखाड़ने और परिस्थितियों के अनुकूल नए विचारों को जमाने में उनकी लेखनी सदा एकतत्पर रहती थी। भाषा उनकी चरपरी, तीखी और चमत्कार पूर्ण होती थी।" आगे विस्तार से हम उनके व्यक्तित्व और कृतित्व की चर्चा करेंगे।

5.3.1 निबंधकार बालकृष्ण भट्ट का जीवनवृत्त

बालकृष्ण भट्ट का जन्म अहियापुर, इलाहाबाद (अब प्रयागराज) में 23 जून 1844 को हुआ। उनके पिताजी का नाम पं. बेनी प्रसाद भट्ट और माताजी का नाम श्रीमती पार्वती देवी था। बालकृष्ण भट्ट का बचपन प्राय: अपने ननिहाल में बीता। ननिहाल के लोग प्यार से उन्हें फ़ुशुन कह कर पुकारते थे। भट्ट जी की माताजी का स्वर्गवास 1861 में हो गया। उस समय केवल 18 वर्ष के थे। इसके बाद का उनका जीवन कष्ट,करुणा और आर्थिक संकट और कठिनाइयों की एक लंबी गाथा है। लेकिन ये तमाम विपरीत परिस्थितियाँ उन्हें तोड़ नहीं सकीं। बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि अभावों और संघर्षों ने भट्ट जी के व्यक्तित्व में स्वाभिमान और दृढ़ता का विकास किया।

बोध प्रश्न

- बालकृष्ण भट्ट का बचपन कैसा था?

घर पर संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा के बाद 1861-62 में बालकृष्ण भट्ट को यमुना मिशन स्कूल, प्रयाग में भर्ती कराया गया। उन्होंने वहाँ से 1868 में एन्ट्रेंस की परीक्षा पास की। इसके बाद उन्होंने स्वतंत्र रूप से हिन्दी, संस्कृत, फारसी और बंगला की भी पढ़ाई की। आगे 1869 में वे मिशन स्कूल में लग गए। अपने स्वभाव की दृढ़ता के कारण वहाँ भट्ट जी को काफ़ी विरोध का सामना करना पड़ा जिससे तंग आकर उन्होंने 1874-75 में उस नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। याद रहे कि इससे पहले 12 वर्ष की अवस्था में ही उनका विवाह हो गया था। उनकी पत्नी रमा देवी एक सीधी -सादी सुशील पति परायण महिला थी। लेकिन गृहकलह के कारण बालकृष्ण भट्ट और रमा देवी को भट्ट जी का पैतृक परिवार त्यागना पड़ा। सम्पन्न पैतृक परिवार की संपत्ति का त्याग करने के कारण उनका सारा जीवन भयंकर आर्थिक अभाव से जूझते हुए बीता। संयुक्त परिवार की विडंबनाओं और विसंगतियों के भुक्तभोगी होने के कारण भट्ट जी के व्यक्तित्व में जड़ सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह का जो बीज पड़ा, वह उसी के फलफूल आगे चलकर उनके सामाजिक निबंधों में प्रकट हुए। अपने अनुभवों के फलस्वरूप भट्ट जी बाल विवाह के विरोधी, विधवा विवाह के समर्थक, स्त्री शिक्षा के समर्थक,धार्मिक अविश्वास और रूढ़ियों के विरोधी तथा सामाजिक परिवर्तन के प्रबल पक्षधर बनते चले गए। सामाजिक जड़ताओं के प्रति उनका आक्रोश उनके इन शब्दों में देखा जा सकता है — "हिंदुस्तान के माँ-बाप गोली मार देने लायक हैं जो अपने लड़कों की शिक्षा का ख्याल न करके उनकी शादी बचपन में ही कर देते हैं, मानो लड़कों की शादी कर देना ही उनके जीवन का मुख्य उद्देश्य है।"

बोध प्रश्न

- पंडित बालकृष्ण भट्ट को किस विधा में मुख्य रूप से ख्याति प्राप्त है?

मिशन स्कूल से त्यागपत्र और गृह त्याग के बाद भट्ट जी ने कुछ समय तक कवि वचनसुधा, काशी पत्रिका, बिहार बंधु और सुदर्शन समाचार में नियमित लेख लिखे। 1877 में हिन्दी वर्धनी सभा की स्थापना होने के बाद भारतेन्दु हरिश्चंद्र की प्रेरणा से जब 'हिन्दी प्रदीप' नामक पत्र निकला तो बालकृष्ण भट्ट को उसका संपादक नियुक्त किया गया। बस इसके बाद तो भट्ट जी और 'हिन्दी प्रदीप'एक दूसरे के पर्याय बन गए। 'हिन्दी प्रदीप'के लिए भट्ट जी के अनन्य समर्पण

का पता इस तथ्य से चलता है कि उन्होंने खुद भूखे रहकर और अपने बच्चों को भूखा रख कर भी अर्थभाव में प्रदीप के दीप को बुझने नहीं दिया। आर्थिक अभाव में भट्ट जी ने 1885 से 1888 तक शिवराख्रन स्कूल (इलाहाबाद) में अध्यापकी की। बाद में वे कायस्थ पाठशाला में संस्कृत के प्रधानाध्यापक नियुक्त हुए आगे चलकर जब वहाँ कालेज कक्षाएं खुल गई तब भट्ट जी का पद भी कॉलेज प्रोफेसर का हो गया। वे एक सफल और लोकप्रिय अध्यापकों में खूब चर्चित रहे। साथ ही 1888-1908 के बीच उनकी गृहस्थी भी पटरी पर आ गई। क्योंकि अब उन्हें पचास रुपये मासिक वेतन मिलने लगा था।

बोध प्रश्न

- भट्ट जी और 'हिन्दी प्रदीप' के बारे में लिखिए।

सन 1908 की बात है लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को अपने राजनैतिक लेखन के कारण छः साल की सजा दी गई थी। इसके विरोध में बलवाघाट इलाहाबाद में एक सभा आयोजित की गई, संयोजक थे पं. सुंदरलाल और अध्यक्ष पं. बालकृष्ण भट्ट। वहाँ भट्ट जी ने अत्यंत उग्र अध्यक्षीय भाषण दिया। जिसका परिणाम नौकरी छूटने के रूप में सामने आया। इसके बाद गरीबी और अभाव का दौर वापस आ गया। और अंतत: 33 वर्ष तक प्रकाशित होने के बाद ब्रिटिश शासन के दमन चक्र के कारण फरवरी 1910 में 'हिन्दी प्रदीप' बंद हो गया।

'हिन्दी प्रदीप'के बंद होने के बाद भट्ट जी को कई स्थानों पर नौकरी के लिए जाना पड़ा। काशी नागरी प्रचारणी सभा ने वृहत हिन्दी कोष में काम करने के लिए उन्हें काशी बुला लिया। बाद में इसी सिलसिले में उन्हें जम्मू भी जाना पड़ा। वहाँ आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साथ उनके अच्छे दिन बीत रहे थे लेकिन पाँच महीने बाद एक दिन सीढ़ी से पैर फिसलने से उनका कूल्हा उखड़ गया। " वहाँ कोई देख रेख करने वाला भी नहीं था। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने बहुत सेवा की पर जब भट्ट जी का कष्ट बढ़ता ही गया तो शुक्ल जी उन्हें अक्टूबर 1910 में प्रयाग पहुँचा गए ... बालकृष्ण भट्ट का निधन हो गया ... यह समाचर समूचे इलाहाबाद में बिजली की तरह फैल गया 21 जुलाई 1914 (मंगलवार) की शव यात्रा में लगभग 200 लोग शामिल थे। जिनमें पं. मदन मोहन मालवीय, महावीर प्रसाद द्विवेदी, कृष्णकांत मालवीय, पुरुषोत्तम दस टंडन, ब्रज मोहन व्यास और पं . सुंदरलाल भी थे।" (डॉ। समीर कुमार पाठक की पुस्तक बालकृष्ण भट्ट से उद्धृत)

बोध प्रश्न

- भट्ट जी की नौकरी छूटने का क्या कारण था?

5.3. 2 निबंधकार बालकृष्ण भट्ट की रचना यात्रा

पं. बालकृष्ण भट्ट हिन्दी के गद्य रचनाकारों में अग्रणी हैं। भट्ट जी भारतेंद्र युग के प्रमुख साहित्यकारों में शामिल हैं। वे मूलत: श्रेष्ठ पत्रकार, निबंधकार हैं तथा उन्हें आधुनिक आलोचना के प्रवर्तकों में अग्रगण्य माना जाता है। पं. बालकृष्ण भट्ट को मुख्यत: निबंधकार के रूप में ख्याति प्राप्त है। लेकिन यह जानना रोचक है कि उन्होंने निबंधों के अतिरिक्त उपन्यास, नाटक और प्रहसन जैसी विधाओं को भी अपने लेखन से समृद्ध किया।

प्रिय छात्रो! यह जानना भी आपको रोचक लगेगा कि भट्ट जी की ज्यादातर रचनाएँ उनके अपने पत्र 'हिन्दी प्रदीप' में ही प्रकाशित हुईं। साथ ही कवि वचन सुधा, विश्वबंधु, सुदर्शन समाचार, मर्यादा और सरस्वती में भी उनकी कुछ रचनाएँ प्रकाशित हुईं। हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास देखने पर पता चलता है कि 'हिन्दी प्रदीप' तैंतीस वर्षों तक निकलता रहा। इस अवधि में भट्ट जी सहित उस काल के लगभग सभी महत्वपूर्ण लिखकों के उत्कृष्ट उपन्यास, नाटक और निबंध आदि इसमें प्रकाशित हुए। इसके आधार पर भट्ट जी के समग्र साहित्य का पुनः प्रकाशन होना अभी बाकी है। जैसा कि डॉ. समीर कुमार पाठक ने लिखा है "बालकृष्ण भट्ट भारतेंदु युग के अकेले ऐसे महत्वपूर्ण साहित्यकार हैं जो केवल गद्यकार हैं। निबंध, नाटक, प्रहसन, आलोचना उपन्यास, कहानी जैसी अनेक शैलियों और विधाओं में उनका लेखन फैला हुआ है।

बोध प्रश्न

- पंडित बालकृष्ण भट्ट के लेखन की विविधता पर प्रकाश डालते हुए बताएँ कि उन्होंने किन विभिन्न शैलियों और विद्याओं में योगदान दिया है।

बालकृष्ण भट्ट के उपन्यास

प्रिय विद्यार्थियो! पं. बालकृष्ण भट्ट ने एक अनूदित और आठ मौलिक उपन्यासों की रचना की। वृहत कथा उनका संस्कृत से अनुदित उपन्यास है। उनके मौलिक उपन्यासों के नाम हैं -- रहस्य कथा (1879), गुप्त वैरी (1882), उचित दक्षिणा (1884), नूतन ब्रह्मचारी (1886), सद्भाव का अभाव (1889), सौ अजान एक सुजान (1890), हमारी घड़ी (1892), तथा रसातल यात्रा (1892)।

भट्ट जी के इन आठ मौलिक उपन्यासों में से केवल दो ही पूर्ण हैं – 'नूतन ब्रमहचारी' और 'सौ अजान एक सुजान'। बाकी सब अधूरे हैं। दरअसल ये सभी उपन्यास अलग-अलग समय पर 'हिन्दी प्रदीप' के विभिन्न अंकों में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुए थे।

प्रिय छात्रो! आपके मन में यह जिज्ञासा हो रही होगी कि हिन्दी उपन्यास उस आरंभिक काल में बालकृष्ण भट्ट ने अपने उपन्यासों के लिए क्या-क्या विषय चुनें होंगे और कैसे-कैसे कथानक बुने होंगे? तो आइए उनके उपन्यासों की एक झलक देखते हैं। 1886 में प्रकाशित 'नूतन ब्रमहचारी'एक ग्रामीण व्यक्ति की कहानी पर आधारित है। इसकी चर्चा करते हुए डॉ. समीर कुमार पाठक ने लिखा है – "

"विठ्ठल राव नामक वह महाराष्ट्रीय ब्राह्मण अपनी पत्नी राधाबाई के साथ रहता है। एक दिन वह जमींदार के बुलावे पर जाता है और उसका पुत्र घर पर रह जाता है। उसका पुत्र तीन डाकुओं को अपना घर दिखाता है, डाकू उससे इतने प्रभावित होते हैं कि बिना चोरी किये ही चले जाते हैं। यहाँ भट्ट जी सरलता और सज्जनता के गुणों की सराहना करते हैं। यहाँ विनायक की धर्मनिष्ठा, स्वाभिमान, सदाचार, नैतिकता और विनय के गुणों का वर्णन ही लेखक का उद्देश्य है। भट्ट जी यह दिखाना चाहते हैं कि क्रूर चरित्र भी सज्जनता से प्रभावित होते हैं। यह बालोपयोगी शिक्षाप्रद उपन्यास है। उपन्यास के चरित्र नायक विनायक राव के माध्यम से भट्ट जी विद्यार्थियों को चरित्र निर्माण की प्रेरणा देते हैं।

दूसरा पूर्ण उपन्यास है – 'सौ अजान एक सुजान'। कहा जाता है कि हिन्दी समाज में इस उपन्यास का जबरदस्त स्वागत हुआ था। इसमें अवध में गोमती नदी के किनारे अनंतपुर गाँव में रहने वाले एक सेठ की कहानी कही गई है। सेठ हरिचंद अपने बेटे रूपचंद और दो पोतों ऋद्धिनाथ और सिद्धिनाथ के साथ रहता है। बड़े होकर दोनों पोते शराबी,जुआरी और वेश्यागामी बन जाते हैं। लेकिन अंत में परिवार के गुरु पं. चंद्रशेखर मिश्र अपने मित्रों की सहायता से इस नष्ट होते परिवार को बचा लेते हैं। याद रखिए कि इस उपन्यास का प्रकाशन 1890 में हुआ था। समय तक हिन्दी में उपन्यासों की कोई परंपरा निर्मित नहीं हुई थी। इस दृष्टि से भट्ट जी के उपन्यास हिन्दी के 'आरंभिक' उपन्यास हैं। तब भी यह देखा जा सकता है कि भट्ट जी ने मनोरंजन के लिए उपन्यास नहीं लिखे, बल्कि मानवीय गुणों की प्रतिष्ठा और समाज सुधार पर उनका विशेष ध्यान था।

इसलिए चरित्र प्रधानता और वातावरण के प्रभावशाली वर्णन से युक्त इस उपन्यास की सामाजिक चेतना पाठकों को प्रेरित करने में सफल रही।

अपने अन्य उपन्यासों में भी भट्ट जी ने सामाजिक दृष्टिकोण को ही सबसे आगे रखा। जैसे उन्होंने रहस्य कथा में बाल विवाह की समस्या, गुप्त वैरी में सांप्रदायिकता , उचित दक्षिणा में पुरातनता, सद्भाव का अभाव में धार्मिक आडंबर, हमारी घड़ी में जनता में व्याप्त आलस और फूट तथा रसातल यात्रा में भारत में आए विदेशी चरित्रों की विसंगति का पर्दाफाश किया गया है। इस तरह उनके सभी उपन्यास शिक्षामूलक और सुधारवादी हैं। कहा जा सकता है कि भट्ट जी

के उपन्यास कला की दृष्टि से कमजोर हैं, लेकिन तत्कालीन समाज का वास्तविक रूप प्रस्तुत करने में पूरी तरह सफल हैं।

बोध प्रश्न

- वृहत कथा' उपन्यास का मूल किस भाषा से अनुवादित है और यह किस प्रकार का उपन्यास है?

भट्ट जी के नाटक और प्रहसन

विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में भट्ट जी के 18 नाटक और प्रहसन प्रकाशित हुए जिनका विवरण इस प्रकार है---

1.भारतवर्ष और कलि (प्रहसन) - सितंबर 1877 'हिन्दी प्रदीप'

2. चंद्रसेन (नाटक) - मार्च 1878 'हिन्दी प्रदीप'

3. इंग्लैण्डेश्वरी और भारत - मई 1878 'हिन्दी प्रदीप'

4. दो दूर देशी (प्रहसन) - मई 1878 'हिन्दी प्रदीप'

5. हिंदुस्तान और अफगानिस्तान (प्रहसन)- जनवरी 1879 'हिन्दी प्रदीप'

6. रोगी और वैद्य (प्रहसन) - मार्च 1879 'हिन्दी प्रदीप'

7. पद्मावती – अननूदित (नाटक) - दिसंबर 1879 'हिन्दी प्रदीप'

8. वृहन्नला (नाटक) - सितंबर 1881 'हिन्दी प्रदीप'

9. सीतावनवास (नाटक) - सितंबर 1882 'हिन्दी प्रदीप'

10. नई रोशनी का विष (नाटक) - अक्टूबर 1884 'हिन्दी प्रदीप'

11. पतित पंचम (प्रहसन) - अगस्त 1888 'हिन्दी प्रदीप'

12. दमयंती स्वयंवर (नाटक) - जुलाई -अगस्त 1892 'हिन्दी प्रदीप'

13. मेघनाद वध (नाटक) - नवंबर-दिसंबर 1884 'हिन्दी प्रदीप'

14. शिक्षादान अर्थात (जैसा काम वैसा परिणाम) (प्रहसन) सितंबर-दिसंबर 1896'हिन्दी प्रदीप'

15. आचार विडंबन (प्रहसन) - अक्टूबर दिसंबर 1898 'हिन्दी प्रदीप'

16. किरातार्जुनीय (नाटक) - अक्टूबर दिसंबर 1898 'हिन्दी प्रदीप'

बालकृष्ण भट्ट के नाटकों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है ---

(1) **राजनीतिक प्रहसन --** भारतवर्ष और कलि, इंगलैडएशवरी और भारती जननी, दो दूर देशी, हिंदुस्तान और अफगानिस्तान,एक रोगी और बैद्य, जैसा काम वैसा परिणाम। इन प्रहसनों में भारत की तत्कालीन परिस्थितियों का सांकेतिक शैली में बड़ा मार्मिक वर्णन किया गया है। इनमें देश दशा का यथार्थ अंग्रेजी राज़ की अंधेरगर्दी के साथ उभारते हुए ब्रिटिश विरोध का संदेश दिया गया है।

(2) **पौराणिक नाटक ----** वृहन्नला, सीता वनवास, दमयंती स्वयंवर, मेघनाद वध, किरातार्जुनीय, शिशुपाल वध, पृथुया वेणु संहार। इनमें लेखक ने भारतवासियों को अपने प्राचीन गौरव की याद दिलाकर, अपने सांस्कृतिक गौरव में गहरी आस्था रखते हुए जागरण का संदेश दिया है।

(3) **सामाजिक नाटक --** नई रोशनी के विष, पतित पंचम, आचर्य विडंबना। इन सामाजिक नाटकों में नाटककार ने अपने युग की पुरानी विसंगतियों पर चोट की है। भट्ट जी अपने समाज में फैली कुरीतियों के खिलाफ जनता को लामबंद करने का आह्वान करते हैं और पर्दा प्रथा, बालविवाह, अशिक्षा,पाखंड अविश्वास, वेश्यावृत्ति और फैशन परस्ती की आलोचना करते हैं।

(4) **ऐतिहासिक नाटक ---** चंद्रनसेन भट्ट जी का एकमात्र ऐतिहासिक नाटक है। इसका संबंध अलाउद्दीन खिलजी से है। इस तरह अपने नाटकों के द्वारा पंडित बालकृष्ण भट्ट ने हिन्दी साहित्य को आधुनिक काल के अनुरूप गतिशीलता और सामाजिक उद्देश्य के साथ जोड़ा।

बालकृष्ण भट्ट के निबंध ---

विद्यार्थियो! जैसा कि पहले भी बताया गया है, बालकृष्ण भट्ट मूलतः निबंधकार थे डॉक्टर सत्य प्रकाश मिश्र ने 'हिन्दी नवजागरण के अवधूत बालकृष्ण भट्ट' में लिखा है कि बालकृष्ण भट्ट अपने समय के सबसे अधिक सजग, सक्रिय सोउद्देश्य प्रधान और भविष्यदृष्टा लेखक थे। दरअसल बालकृष्ण भट्ट ने हिन्दी गद्य काल में ऐसे रोचक निबंध लिख कर साहित्य को समृद्ध किया जिनमें विचार ,तत्व के साथ साथ कथा तत्व शब्द विनोद और उपहास का छौंक लगाया गया है और इस तरह निबंध की थाली से सामाजिक दायित्व का पौष्टिक भोजन परोसा गया है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में 'भट्ट जी के हादसे विनोद की विशेषता है कि वह कुछ चिड़चिड़ा पन लिए हुए है इसी कारण उन्हें भारतेन्दु युगीन गद्दे का कबीर कहा जा सकता है वे प्रमाद में पड़े हुए समाज की मरम्मत में कोई कोर कसर नहीं छोड़ते थे।' उनके साहित्य में देश को विषम स्थिति से उबारने की जो छटपटाहट दिखाई देती है वह निबंधों में अधिक मुखर है। भट्ट जी ने दर्शन, समाज, राजनीति, साहित्य और मनोविज्ञान आदि अनेक विषयों पर निबंध रचे उनके ये निबंध मानवता लोक मंगल ओर मानव स्वतंत्रता के लिए जागरूकता का संदेश देते हैं।

भट्ट जी के कुछ निबंध कथात्मक कहे जा सकते हैं, जैसे एक अनोखा स्वप्न एक अशरफी का आत्म वृतांत दबा व्याख्यान नई सभ्यता की बानगी श्री शंकराचार्य और गुरु नानक देव की कल्पना।

उनके निबंधों की दूसरी कोटि है भावात्मक निबंध – जैसे आँसू ईश्वर भी क्या ठठोल है, चरित्र पालन, चलन की गुलामी, जवान,,नए तरह का जुल्म, पुरुष अहेरी की स्त्रियाँ अहेर हैं।

तीसरी कोटि है --- राजनीतिक निबंध जैसे भारत का भावी परिणाम क्या होगा, व्यवस्था का कानून, सरकारी दफ्तरों में नौकरी, प्रेस एक्ट, हिन्दुस्तानी राजा, छोटी सरकार और बड़ी सरकार, काबुल युद्ध का विचार, मुल्क की तरक्की क्या चीज़ है, बेदखली और इजाफ़ा लगाना।

याद रहे कि भट्ट जी के निबंधों में राजनीतिक निबंधों की सबसे अधिक है। “उनका साहित्य मानवतामंगल और मानव की स्वतंत्रता के लिए आप मतलनी वाला जागरूक दस्तावेज है। देश की आजादी, कौमियत या जातीयता, आत्मनिर्भरता, स्वावलंबन, स्वाभिमान और देश की तरक्की तथा ‘मूर्खतादि’ और ‘भारत तम हरने’ शाश्वत प्रयत्न उनके साहित्य कर्म की महत्वपूर्ण विशेषता है उनके राजनीतिक-सामाजिक निबंधों में निपट स्पष्टवादिता है जो हास-परिहास को त्याज्य समझती है।“

चौथी कोटि है - सामाजिक निबंध जैसे, बाल विवाह समाज की नवीन अवस्था, भोजन की कुप्रथाएँ , समाज बंधन और स्त्रियाँ, सूदखोरी, दरिद्र की गृहस्थी आदि। यहाँ आपको बताते चलें कि भट्ट जी सामाजिक कुरीतियों के प्रबल विरोधी और स्त्री उत्थान के प्रबल समर्थक थे। आपको यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में लिखित भट्ट जी के सामाजिक निबंधों में स्त्री विमर्श से संबंधित निबंधों की संख्या सबसे अधिक है।वे मानते थे कि जब तक घर में स्त्रियाँ अशिक्षित रहेंगी, अंधविश्वास और धार्मिक प्रपंच का बोलबाला रहेगा।

बालकृष्ण भट्ट का आलोचना कर्म ----

पं बालकृष्ण भट्ट बहुश्रुत और बहुपठ तो थे ही, नीर क्षीर विवेकी भी थे। यही कारण है कि उन्होंने हिन्दी गद्य के उस आरंभिक युग में आलोचना का भी सूत्रपात करने का गौरव प्राप्त किया। डॉ। रामविलास शर्मा का यह कथन बहुत महत्वपूर्ण है कि – “उन्हें आधुनिक युग में हिन्दी आलोचना का जन्मदाता कहना अनुचित न होगा। भारत और यूरोप के साहित्य की तुलना पहले उन्होंने ही लेखों में की है।” वेदों की कणाद और कपिल के शास्त्रों तथा कालिदास और भवभूति के काव्यों से तुलना करते हुए उन्होंने कुछ लिखा है कि धर्म से हमारा प्रयोजन यह नहीं है कि हम किसी एक खास धर्म की प्रशंसा करें और यह दिखायें कि अमुक धर्म की बातें बड़ी उत्तम हैं। धर्म जितने हैं उनकी नींव विश्वास पर है तर्क पर नहीं।

रामविलास शर्मा के शब्दों में " उनमें विद्वत्ता के साथ-साथ सहज गांभीर्य था। साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर वह गंभीरतापूर्वक विचार करते थे इसलिए उनकी शैली बहुधा आचार्य शुक्ल की याद दिलाती हैं।" भट्ट जी की साहित्य समीक्षा का मूलाधार उनकी यह मान्यता है कि "साहित्य जन समूह के हृदय का विकास है।"

आचर्य शुक्ल की भांति भट्ट जी ने बहुत से मनोवैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक निबंध भी लिखे - जैसे माधुर्य,आशा। व्यावहारिक आलोचना के क्षेत्र में उनकी 'संयोगिता स्वयंवर' की 'सच्ची समालोचना' एक सर्वथा नई राह का आविष्कार किया । इस प्रकार पं. बालकृष्ण भट्ट ने उपन्यास, नाटक, निबंध और समालोचना के क्षेत्र में अत्यंत व्यापक लेखन द्वारा भारतेंदु युगीन हिन्दी गद्य साहित्य को मजबूती और विस्तार देकर परिपुष्ट किया ।

'हिन्दी प्रदीप' का महत्व --

पं. बालकृष्ण भट्ट ने पत्रकारिता के क्षेत्र में नई जनचेतना का आरंभ किया । इन्हें आलोचना के साथ -साथ राष्ट्रीय पत्रकारिता के जनक होने का भी गौरव प्राप्त है । डॉ. रामविलास शर्मा ने उनके महत्व को रेखांकित करते हुए लिखा है कि "बालकृष्ण भट्ट का 33 वर्ष तक 'हिन्दी प्रदीप' चलाना एक ऐतिहासिक घटना है। धुन और लगन का इससे बड़ा उदाहरण हिन्दी साहित्य के इतिहास में दूसरा नहीं है। उनके पास कार्तिकप्रसाद खत्री के साधन नहीं थे, न वह भारतेन्दु की भांति सोने के पालने में झुलाए गए थे, जो समाज उन्हें हाथों-हाथ लेता। वह एक साधारण परिवार में उत्पन्न हुए थे और कुछ दिन के लिये प्रयाग के एक कॉलेज में संस्कृत के अध्यापक रहे थे।"

विषय विविधता की दृष्टि से 'हिन्दी प्रदीप' की तुलना में अन्य मासिक को रखना मुश्किल है। बालकृष्ण भट्ट ने विषम आर्थिक परिस्थियों के बावजूद हिन्दी प्रदीप को चलाए रखा। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' में 'हिन्दी प्रदीप' के जन्म की घटना का उल्लेख करते हुए उसे अपने समय का सर्वश्रेष्ठ पत्र घोषित किया था —"इस समय हिन्दी जगत में जितने समाचार पत्र निकल रहे हैं । दो एक को छोड़कर 'हिन्दी प्रदीप' सबसे पुराना है । मासिक पत्रों में तो यही सबसे यही श्रेष्ठ है। इसे निकलते सत्ताइस वर्ष हो चुके। जब से यह निकलने लगा, तब से कितने ही आप मासिक और साप्ताहिक पत्र निकलते और अस्त होते गए । पर 'हिन्दी प्रदीप' जारी है।

हिन्दी प्रदीप के बारे में पं अंबिका प्रसाद वाजपेयी ने लिखा है कि तब का “सर्वाधिक उल्लेखनीय पत्र हिन्दी प्रदीप था। यदि सरकार इसे बंद न कर देती तो शायद भट्ट जी के जीते जी यह पत्र बंद नहीं होता।“

बोध प्रश्न

- बालकृष्ण भट्ट के नाटकों को कितने वर्गों में विभाजित किया गया है और वे कौन-कौन से हैं?
- बालकृष्ण भट्ट द्वारा साहित्यिक समीक्षा की गई थी; उनके अनुसार साहित्य का मुख्य उद्देश्य क्या है

5.3.3 बालकृष्ण भट्ट की वैचारिकता के विविध आयाम

बालकृष्ण भट्ट के का समय भारत में नवजागरण आंदोलन के उभार का समय है। उस समय भारतीय समाज अंग्रेजी राज के खिलाफ लड़ने के लिए आत्मशक्ति का संचय कर रहा था। कहना गलत न होगा कि भट्ट जी का साहित्य भी इसी उपक्रम का एक हिस्सा है। उनके निबंधों को पढ़ने से यह बात समझ में आती है, कि उन्हें अंग्रेजी राज के स्वरूप की भली प्रकार पहचान थी।

साथ ही उन्हें भारत की गुलामी के कारणों का भी पता था। इसलिए उन्होंने भारतीय समाज की कमजोरियों और भारतीय संस्कृतियों की शक्तियों को अपने लेखन से उजागर किया। इस क्रम में उनके निबंध उनकी वैचारिकता का आईना बन गए। आगे हम भट्ट जी की वैचारिकताओं के विविध आयामों पर चर्चा करेंगे।

1. राजनैतिक चेतना और राष्ट्रीयता –

बालकृष्ण भट्ट की राष्ट्रीय और राजनीतिक चेतना अत्यंत प्रखर थी। वे यह मानते थे कि अंग्रेजों ने पुरानी भारतीय सामंती व्यवस्था की जगह एक अधिक शोषक जहरीली और महीन सामंती व्यवस्था को स्थापित करने का काम किया था। इस अंग्रेजी सामंती व्यवस्था को उखाड़ने के लिए वे ‘राष्ट्रीयता’ को ‘सबसे बड़ा धर्म मानते थे। उन्होंने अपने पाठकों को यह समझाने का प्रयास किया कि जिस काम को करने से हमारे भीतर राष्ट्रीयता आए और अपनी स्वत्व रक्षा का ज्ञान हो, वही मूल धर्म है। इसके लिए उन्होंने जनता को देश दशा से परिचित कराने और सरकार की आलोचना करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। वे मानते थे कि अंग्रेज भारत का शोषण दो प्रकार से कर रहे हैं – वाणिज्य व्यापार द्वारा और निरंकुश नौकरशाही द्वारा। इसीलिए उन्होंने अपने साहित्य में विदेशी सत्ता का तीव्र विरोध किया। दरअसल वे एक सिद्धहस्त कुशल पत्रकार थे। उन्होंने साहित्य को जनता में राजनीतिक चेतना जगाने का सफल माध्यम बनाया। उनकी मान्यता थी कि -

"विलायत वालों ने जो हमें दासत्व की अवस्था में छोड़ दिया है, हमारा शिल्प, वाणिज्य सब हमसे छीन विलायत के अपने भाइयों का हर तरह से पेट भर रहे हैं। हमारी मेहनत का फल' मुल्क की पैदावार का सुख आप उठा रहे हैं सब हमारे कुलक्षणों से।"

इस प्रकार स्पष्ट है कि भट्ट जी भारत की गुलामी का मूल भारतीयों की अपनी कमजोरियों को मानते थे। वे चाहते थे कि भारत की युवा पीढ़ी स्वराज के लिए उठ खड़ी हो। इसके लिए उनका सुझाव था कि भारतीय नौजवानों को ब्रिटिश पूंजीवाद के ताने-बाने का अध्ययन करना चाहिए और इस आर्थिक नाकेबंदी का विरोध भी करना चाहिए।

उनके अनुसार भारत की दुर्दशा से बचने का एक ही मार्ग है – राष्ट्रीय एकता, देशी उद्योग धंधों को विकास और संगठित संघर्ष।

बोध प्रश्न

- भट्ट जी ने युवा पीढ़ी को स्वराज के लिए किस प्रकार से प्रेरित किया और उनसे क्या अपेक्षाएं रखीं?

2. प्रगतिशील सामाजिकता -

बालकृष भट्ट मानते थे कि भारतीयों की सारी समस्याओं की जड़ में दकियाननुसी, पिछड़े, गलत विचार हैं और उनसे बने रीति रिवाज हैं जो हजारों साल से चले आ रहे हैं। वे इन रूढ़ियों को आमूलछुल बदलना चाह रहे थे इस लिहाज से भट्ट जी प्रगतिशील सामाजिक चेतना के सच्चे पुरोधा प्रतीत होते हैं। उन्होंने एक सितंबर 1879 को ''हिन्दी प्रदीप'में लिखा था –

"जाति भेद,वर्ण भेद संप्रदाय भेद ने समाज को महारोगी,निर्बल और क्षीण कर डाला किंतु, पराधीनता पिचासी चंगुल में पड़े हुए इन अनर्थों को कभी उद्यम नहीं किया ... अनेक कुसंस्कारों की नींव जातिभेद,वर्णभेद,संप्रदाय भेद के कारण बढ़ी है।"

भट्ट जी अपने युग की दृष्टि से पहले व्यक्ति थे जिन्होंने संयुक्त परिवार, बहुपत्नी विवाह,बालविवाह और दहेज जैसी कुप्रथाओं के खिलाफ लंबा संघर्ष किया। बालकृष्ण भट्ट स्त्री शिक्षा के जबरदस्त समर्थक थे। वे मानते थे कि केवल पुरुषों को शिक्षित करके प्रगतिशील समाज का निर्माण नहीं किया जा सकता। क्योंकि जब तक स्त्रियाँ अशिक्षित हैं तब तक हमारे घरों में पाखंड और अविश्वास का बोलबाला कायम रहेगा। अपने 'स्त्रियाँ और उनकी शिक्षा, 'पुरुष अहेरी की स्त्रियाँ अहेर हैं', 'स्त्रियाँ', 'हमारी भारतीय ललनाएं' 'महिला स्वातंत्र्य जैसे अनेक लेखों में भट्ट जी ने स्त्री मुक्ति और शिक्षा के सवाल पर जोर दिया और समाज की प्रचलित धारणा को बदलने का प्रयास किया।

बोध प्रश्न

- बालकृष्ण भट्ट के स्त्री शिक्षा के प्रति कैसे विचार थे?

3. साहित्य और भाषा –

बालकृष्ण भट्ट साहित्य की समकालीन उपयोगिता को सबसे अधिक महत्व देते थे। शाश्वत साहित्य के नाम पर अपने युग की समस्याओं से आँखें फिरना उन्हें कतई बर्दाश्त नहीं था। प्रिय विद्यार्थियों! अगर आप भट्ट जी के ' साहित्य जन समूह के हृदय का विकास है'शीर्षक निबंध को पढ़ें तो आपको पता चलेगा कि भट्ट जी साहित्य को मनोरंजन तक सीमित करने के पक्षधर नहीं थे। वे उसे सामाजिक चेतना फैलाने का माध्यम मानते थे। उनका कथन है कि — प्रत्येक देश का साहिय उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है। यहाँ यह भी ध्यान रखने की बात है कि अपने युग में भट्ट जी संभवत: पहले साहित्यिक हैं जिन्होंने न केवल लोक-कविता का समर्थन किया बल्कि उसे साहित्यिक कविता के बराबर का स्थान भी दिया। इससे पता चलता है कि वे भावों की स्वाभाविकता और भाषा की सहजता के समर्थक थे। और इसीलिए लोक साहित्य को पिछड़ा हुआ नहीं मानते थे। क्योंकि लोक साहित्य में भाव और भाषा दोनों की सहजता सर्वाधिक होती है। कहना न होगा कि इसकी तुलना में शिष्ट साहित्य बनावटी ही प्रतीत होता है। प्रिय छात्रों! आपको यह जानना रोचक लगेगा कि लोक साहित्य और सरल साहित्य भाषा की वकालत करने वाले बालकृष्ण भट्ट संस्कृत भाषा और साहित्य के प्रकांड पंडित थे। परंतु वे हिन्दी भाषा पर संस्कृत को लादने के प्रबल विरोधी थे। उनकी दृष्टि में भाषा का सबसे बड़ा गुण है– संप्रेषणीयता। इस बारे में 'हिन्दी प्रदीप' के अक्टूबर 1888 अंक में वे लिखते हैं – " भाषा चाहे खड़ी हो,दौड़ती हो,निहुरी हो,बैठी हो,लेटी हो,औंधी हो,सीधी हो, अकड़ी हो,जकड़ी हो, कुछ प्रयोजन नहीं सर्वेरुपाय फल सेवा साध्यम। इस साध्य की सिद्धि में अगर क्लिष्ट संस्कृत बाधक होती है, तो क्लिष्ट अरबी फारसी भी बाधक है। इस दोनों तरह की क्लिष्टता से बचने के लिए साहित्य में सहज भाषा को अपनाने में जोर दिया। उमम,नकी भाषा नीति बड़ी व्यापक और उदार है। उनके अनुसार –

"   जो हिन्दी हम आजकल बोलते हैं यह पहिले क्या थी और अब क्या है? अब इसमें फारसी और उर्दू शब्द मिलते जाते हैं, क्योंकि अब आपके बड़े-बड़े प्रामाणिक हिन्दी कवियों ने फारसी अरबी के शब्द ग्रहण किए तो हमारे और आपके निकाले यह शब्द हमारी भाषा की नस -नस में प्रविष्ट हो रहे हैं। पढ़े लिखे लोग या सर्वसाधारण उन शब्दों को अपना लें तो भाषा और भी स्फुट हो जाएगी।" ('हिन्दी प्रदीप'अक्टूबर 1898)

दरअसल भट्ट जी भाषा में देशज और विदेशी शब्दों के सहज प्रयोग को भाषा के विकास के लिए जरूरी मानते थे। उनकी मान्यता थी कि वह भाषा जो ग्राम वाले बोलते हैं, यद्यपि परिष्कृत न हो तो भी शुद्ध हिन्दी कहलाई जाएगी यहाँ तक कि उन्होंने ऐसी भाषा को ही 'पवित्र भाषा' माना है।

बोध प्रश्न

- भट्ट जी के अनुसार साहित्य का मुख्य उद्देश्य क्या था?

5.3.4 हिन्दी साहित्य में बालकृष्ण भट्ट का स्थान

हिन्दी साहित्य के स्थान में पं. बालकृष्ण भट्ट को भारतेन्दु मण्डल के सर्वाधिक तेजस्वी लेखक के रूप में जाना जाता है। उन्होंने अपने लेखन द्वारा हिन्दी गद्य की विविध विधाओं को आधार ही प्रदान नहीं किया बल्कि खड़ी बोली को साहित्यिक भाषा का रूप देने में अनन्य योगदान किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उनकी शैली के निरालेपन को विशेष रूप से रेखांकित किया है। यही नहीं वे यह भी मानते हैं कि लाला श्री निवासदास के नाटक 'संयोगिता स्वयंवर' की 'सच्ची समालोचना' लिख कर हिन्दी में सम्यक आलोचना का सूत्रपात किया।

बोध प्रश्न

- पंडित बालकृष्ण भट्ट को भारतेन्दु मंडल का सर्वाधिक तेजस्वी लेखक क्यों माना जाता है?

5.4 पाठ सार

हिन्दी साहित्य के आधुनिककाल को गद्यकाल भी कहा जाता है क्योंकि इस काल में पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के साथ हिन्दी गद्य की विभिन्न विआधाओं का जन्म और विकास हुआ। इसके प्रथम उत्थान को भारतेन्दु युग कहा जाता है । भारतेन्दु युग के रचनाकारों में बालकृष्ण भट्ट का प्रमुख स्थान है। भट्ट जी का जन्म 23 जून 1844 को तथा निधन 20 जुलाई 1914 को हुआ। उनका जीवन अभावों और संघर्षों से भरा हुआ था। इसके बावजूद उन्होंने कभी भी न तो दीनता प्रकट की और न ही कोई समझौता किया। वे एक संघर्षशील,स्वाभिमानी देशभक्त थे। उनकी सामाजिक ,राष्ट्रीय और राजनीतिक चेतना बहुत प्रबल थी। 'हिन्दी प्रदीप'के संपादक के रूप में उन्होंने हिन्दी पत्रकारिता को तो दिशा दी ही सामाजिक परिवर्तन और नव जागरण को भी अपनी राष्ट्रीय चेतना से नई दिशा दिखाई। उन्होंने निबंध, नाटक, कहानी,उपन्यास और अनेक प्रहसनों की तो रचना की ही हिन्दी में व्यावहारिक आलोचना का भी सूत्रपात किया।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ –

भारतेंदु युग के शीर्षस्थ निबंधकार पंडित बालकृष्ण भट्ट उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर आधारित इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं-

1. पंडित बालकृष्ण भट्ट उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध मे सक्रिय भारतेन्दु मंडल के प्रखर प्रतिभाशाली स्तंभ थे।

2. भट्ट जी के व्यक्तित्व में स्वाभिमान विद्वता और निर्भरता के साथ हास परिहास और व्यंग्यप्रियता का अद्भुत मिश्रण दिखाई देता है।

3. भट्ट जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने हिन्दी गद्य की निबंध, नाटक समालोचना जैसी विधाओं और पत्र -पत्रकारिता के क्षेत्र में विशेष कार्य किया।

4. भट्ट जी का जीवन अनेक संघर्षों से भरा था। लेकिन निजी समस्याओं से ऊपर उठकर उन्होंने तीस वर्ष तक 'हिन्दी प्रदीप' के माध्यम से हिन्दी भाषी समाज में राष्ट्रीय चेतना और समाज सुधार की अलख जगाने का कार्य किया।

5. पीड़ित बालकृष्ण भट्ट ने अपने लेखन द्वारा जहाँ एक ओर हिन्दी गद्य को पैरों पर खड़ा होना सिखाया वहीं भाषा परिष्कार की भी नींव रखी। हिन्दी गद्य का जो भव्य भवन आज हमें इक्कसवीं शताब्दी में अत्यंत विस्तृत और ऊँचा दिखाई देता है। उसकी मजबूती का श्रेय भारतेन्दु मण्डल के भट्ट जी सरीखे अनन्य हिन्दी साधकों को जाता है।

5.6 शब्द संपदा

1. सामंत – ज़मींदार
2. उत्कृष्ट -- श्रेष्ठता
3. समग्र -- सब, पूरा
4. विसंगति -- असंगति
5. अंधेरगर्दी -- बदइंतजामी
7. क्लिष्टता – कठिन
8. परिष्कृत – साफ, सुधार किया हुआ
9. प्रहसन -- दिल्लगी
10. अहेरी -- शिकारी
11 दृष्टिकोण -- सोचने-समझने का पहलू
12. प्रतिष्ठा -- ठहराव,

14. सिद्धस्थ -- कुशल

15. प्रयोजन -- अभिप्राय

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए –

1. पं. बालकृष्ण भट्ट के जीवन और उनके साहित्यिक योगदान का वर्णन कीजिए।
2. भट्ट जी की भाषा शैली और उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा की विशेषताएं क्या थीं?
3. 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका के संपादन में पं. बालकृष्ण भट्ट की भूमिका का वर्णन कीजिए। साथ ही, उनके द्वारा पत्रिका के लिए किए गए त्याग की चर्चा कीजिए।
4. पंडित बालकृष्ण भट्ट के साहित्यिक कृतित्व का विश्लेषण उनके द्वारा लिखित विभिन्न विधाओं के संदर्भ में करें।
5. पंडित बालकृष्ण भट्ट की भाषा शैली और उनकी साहित्यिक उपलब्धियों का मूल्यांकन कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए –

1. बालकृष्ण भट्ट के बचपन और शिक्षा-दीक्षा पर प्रकाश डालिए।
2. 'हिन्दी प्रदीप' के संपादक के रूप में बालकृष्ण भट्ट के योगदान की चर्चा कीजिए।
3. सौ अजान एक सुजान' उपन्यास की मुख्य कथा क्या है?
4. बालकृष्ण भट्ट के स्त्री शिक्षा के प्रति विचारों पर प्रकाश डालिए। ?
5. बालकृष्ण भट्ट की राजनीतिक और सामाजिक चेतना पर विचार कीजिए?

खंड (स)

(I) सही विकल्प चुनिए –

1. पं. बालकृष्ण भट्ट का जन्म कहाँ हुआ था?

अ) प्रयागराज आ) वाराणसी (इ) दिल्ली (ई) मुंबई

2. पं. बालकृष्ण भट्ट की भाषा शैली की विशेषता क्या थी?

अ) मधुर आ) चिड़चिड़ी इ) शांत ई) उदासीन

3. पं. बालकृष्ण भट्ट के पूर्ण उपन्यास का नाम है?

(अ) रहस्य कथा (आ) गुप्त वैरी (इ) नूतन ब्रह्मचारी (ई) रोशनी का अभाव

4. पं. बालकृष्ण भट्ट ने किस पत्रिका का संपादन किया था?

(अ) हिन्दी प्रदीप (आ) कवि वचन सुधा (इ) सरस्वती (ई) मर्यादा

(II) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए –

1. पं. बालकृष्ण भट्ट ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा ______ में प्राप्त की।
2. पं. बालकृष्ण भट्ट ने अपने लेखन के माध्यम से ______ को साहित्यिक भाषा का रूप देने में अनन्य योगदान दिया।
3. बालकृष्ण भट्ट के सम्पादन में 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका ने ________ वर्षों तक सेवा की।

(III) सुमेल कीजिए

(A) भारतवर्ष और कलि पौराणिक नाटक

(B) वृहन्नला सामाजिक प्रहसन

(C) पतित पंचम ऐतिहासिक नाटक

(D) चंद्रसेन राजनीतिक प्रहसन

5.8 पठनीय पुस्तकें

(1) बालकृष्ण भट्ट: समीर कुमार पाठक

(2)बालकृष्ण भट्ट की जीवनी: लक्ष्मीकांत भट्ट

(3) हिन्दी साहित्य का इतिहास: रामचंद्र शुक्ल

इकाई 6 : बालकृष्ण भट्ट के निबंध 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मूल पाठ: बालकृष्ण भट्ट के निबंध 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है' की विवेचना

6.3.1 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध की विषय वस्तु

6.3.2 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध का प्रयोजन

6.3.3 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध में व्यक्त वैचारिकता

6.3.4 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध का भाषा सौष्ठव

6.3.5 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध का शैली सौन्दर्य़

6.4 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध का सार

6.5 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध की उपलब्धियाँ

6.6 शब्द संपदा

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 : प्रस्तावना

आधुनिक हिन्दी काल के भारतेंदु युग को नवजागरण काल भी कहा जाता है। यह एक नई शुरुआत थी जहाँ पर हिन्दी साहित्य में गद्य का आरंभ हुआ। भारतेंदु युग में कई कवियों तथा लेखकों ने योगदान दिया जिनमें से एक बालकृष्ण भट्ट जी है। बालकृष्ण भट्ट जी प्रमुख रूप से एक निबंधकार के रूप में सामने आए। इन्होंने 300 से भी अधिक निबंध लिखे हैं। यह निबंध सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक कई विचारधाराओं पर गहन चिंतन प्रस्तुत करते हैं। प्रस्तुत निबंध साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास काफी प्रसिद्ध निबन्ध है। इस निबंध में इन्होंने हिन्दी साहित्य के आदिकाल, भक्ति काल से भी पहले लिखे गए साहित्य की बात की है। आर्य जाति द्वारा लिखित साहित्य और उसके पीछे कारणों का विश्लेषण हमें इस निबंध में देखने को मिलेगा। इस निबंध की भाषा अत्यंत साधारण और प्रभावपूर्ण है। एक गहरे विषय को बालकृष्ण भट्ट बड़ी ही सादगी से हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। किसी भी देश का साहित्य उस देश में रहने वाले नागरिकों की मानसिकता को व्यक्त करता है। उनका सोचना, रहन-सहन, खान-पान आदि सब उनके साहित्य के द्वारा ही पता चलता है। जब हम इतिहास पढ़ते हैं तो हमें

केवल ऐतिहासिक परिस्थितियों के बारे में जानकारी मिलती है लेकिन जब हम साहित्य पढ़ते हैं तो हमें उन लोगों की मानसिकता और वैचारिकता का भी पता चलता है। लोगों के अंदर क्रोध, स्नेह, अंहकार आदि में से कौन सी भावना अधिक है उसका भी पता चलता है। इस निबंध के माध्यम से लेखक हमें भारत में किस तरह से समय के अनुसार लोगों के विचारों में अंतर आया की जानकारी देते हैं।

6.2 : उद्देश्य

- बालकृष्ण भट्ट द्वारा रचित निबंध 'साहित्य जन समूह के हृदय का विकास है' में वैदिक साहित्य की विशेषताओं के बारे में जानेंगे।
- वेद निर्माण के पीछे उद्देश्य क्या था, साथ ही साथ वेदों के निर्माता समाज को किन कुरीतियों से बचाना चाहते थे।
- आर्य जाति का समाज तथा साहित्य में योगदान।
- उपनिषदों का समाज पर प्रभाव।
- रामायण और महाभारत में अंतर।
- समय के साथ-साथ समाज में होने वाले परिवर्तनों, विचारधाराओं में होने वाले परिवर्तनों का साहित्य पर असर।
- पुराणों का विकास पुराणों के निर्माण से वेदों पर क्या असर हुआ।
- संस्कृत भाषा का विकास और उसके उत्कृष्ठ काल की जानकारी कालिदास, भैरवी आदि संस्कृत कवियों का योगदान।
- भक्तिकालीन साहित्य में भक्ति के नाम पर होने वाला बंटवारा।
- ब्रजभाषा, अवधी, मैथिली, मरहठी, बंगाली आदि भाषाओं की संक्षिप्त विशेषताएँ।

6.3 : मूल पाठ : बालकृष्ण भट्ट के निबंध 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है' की विवेचना

प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है। जो जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिप्लुत रहती है। वे सब उसके भाव उस समय के साहित्य की समालोचना से अच्छी तरह प्रगट हो सकते हैं। मनुष्य का मन जब शोक-संकुल, क्रोध से उद्दीप्त या किसी प्रकार की चिंता से दोचित्ता रहता है तब उसकी मुखच्छवि तमसाच्छन्न, उदासीन और मलिन रहती है; उस समय उसके कंठ से जो ध्वनि निकलती है वह भी या तो फुटही ढोल सामान बेसुरी, बेताल, बेलय या करुणापूर्ण, गदगद तथा विकृत-स्वर-संयुक्त होती है। वही जब चित्त आनंद की लहरी से उद्वेलित हो नृत्य करता है और सुख की परंपरा में मग्न रहता है उस समय मुख विकसित कमल सा प्रफुल्लित नेत्र मानो हँसता-सा और अंग-अंग चुस्ती और चालाकी से फिरहरी की तरह फरका करते हैं। कंठ-ध्वनि

भी तब बसंत मदमत्त कोकिला के कंठ-रव से भी अधिक मीठी और सोहावनी मन को भाती है। मनुष्य के संबंध में इस अनुल्लंघनिय प्राकृतिक नियम का अनुसरण प्रत्येक देश का साहित्य भी करता है, जिसमें कभी को क्रोधपूर्ण भयंकर गर्जन, कभी को प्रेम का उच्छ्वास, कभी को शोक और परितापजनित हृदय-विदारी करुणा-निस्वन, कभी को वीरता गर्व से बाहुबल के दर्प में भरा हुआ सिंहनाद कभी को भक्ति के उन्मेष से चित्त की द्रवता का परिणाम अश्रुपात आदि अनेक प्रकार के प्राकृतिक भावों का उद्गार देखा जाता है। इसलिए साहित्य यदि जनसमूह(Nation) के चित्त को चित्रपट कहा जाए तो संगत है। किसी देश का इतिहास पढ़ने से केवल बाहरी हाल हम उस देश का जान सकते हैं पर साहित्य के अनुशीलन से कौम के सब समय-समय के आभ्यंतरिक भाव हमें परिस्फुट हो सकते हैं।

हमारे पुराने आर्यों का साहित्य वेद है। उस समय आर्यों की शैशवावस्था थी, बालकों के समान जिनका भाव, भोलापन, उदार भाव, निष्कपट व्यवहार, वेद के साहित्य को एक विलक्षण तथा पवित्र माधुर्य प्रदान करते हैं। वेद जिन महापुरुषों के हृदय का विकास था। वे लोग मनु और याज्ञवल्क्य के समान समाज के आभ्यंतरिक भेद, वर्ण-विवेक आदि के झगड़ों में पड़ समाज की उन्नति या अवनति की तरह-तरह की चिंता में नहीं पड़े थे। कणाद या कपिल के समान अपने-अपने शास्त्र के मूलभूत बीजसूत्रों को आगे कर प्राकृतिक पदार्थों के तत्वों की छान में दिन-रात नहीं डूबे रहते थे; न कालिदास, भवभूति, श्रीहर्ष आदि कवियों के संप्रदाय के अनुसार वे लोग कामिनी के विभ्रम-विलास और लावण्य-लीला-लहरी में गोते मार मार प्रमत्त हुए थे। प्रातः काल उदयोन्मुख सूर्य की प्रतिभा देख उनके सीधे-साधे चित्त ने बिना किसी विशेष छानबीन किए इसे अज्ञात और अजय शक्ति समझ लिया। इसके द्वारा वे अनेक प्रकार का लाभ देख कानन-स्थित-विहंग-कूजन समान कलकल रव से प्रकृति की प्रभात वंदना का साम गाने लगे; जल-भर-नत-श्यामला मेघमाला का नवीन सौंदर्य देख पुलकित गात्र हो कृतज्ञता-सूचक उपहार की भाँति स्त्रोत का पाठ करने लगे; वायु जब प्रबल वेग से बहने लगी तो उसे भी एक ईश्वरीय शक्ति समझ उसको शांत करने को वायु की स्तुति करने लगे इत्यादि। वे ही सब ऋक और साम की पावन ऋचाएँ हो गईं। उस समय अब के समान राजनीतिक अत्याचार कुछ न था इसी से उनका साहित्य राजनीति की कुटिल उक्ति युक्ति से मालिन नहीं हुआ था। नए आए हुए आर्यों की नूतन ग्रथित समाज के संस्थापन में सब तरह की अपूर्णता थी सही पर सबका निर्वाह अच्छी तरह होता जाता था; किसी को किसी कारण से किसी प्रकार का अस्वास्थ्य न था; आपस में एक दूसरे के साथ अब का सा बनावट का कुटिल बर्ताव न था। इसलिए उस समय के उनके साहित्य वेद में भी कृत्रिम भक्ति, कृत्रिम सौहार्द, कपटवृति, बनावट और चुना-चुनी ने स्थान नहीं पाया। उन आर्यों का धर्म अबके समान गला घोटने वाला न था। सबके साथ सबकी खान-पान द्वारा सहानुभूति रहती थी। उनके बीच धार्मिक मनुष्य अबके धर्मध्वजियों समान दांभिक बन महाव्याधि सदृश लोगों के लिए गलग्रह न थे। सिधाई, भोलापन और उदार भाव उनके साहित्य के एक-एक अक्षर से टपक रहा है। एक बार महात्मा ईसा एक सुकुमारमति बालक को अपने गोद में बैठाकर अपने शिष्यों की ओर इशारा करके बोले कि जो कोई छोटे बालकों के समान भोला ना बने

उसका स्वर्ग के राज्य में कुछ अधिकार नहीं है। हम भी कहते हैं जो सुकुमार चित्त वेद-भाषी इन आर्यों की तरह पद-पद में ईश्वर का भय रख, प्राकृतिक पदार्थों के सौंदर्य पर मोहित हो, बालकों के समान सरलमति न हो उसका स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करना अति दुष्कर है।

इन्हीं प्राकृतिक पदार्थों का अनुशीलन करते-करते इन आर्यों को ईश्वर के विषय में जो जो भाव उदय हुए वे ही सब एक नए प्रकार का साहित्य उपनिषद के नाम से कहलाए। जब इन आर्यों की समाज अधिक बढ़ी और लोगों की रीति-नीति और बर्ताव में विभिन्नता होती गई तब सबों को एकता के सूत्र में बद्ध रखने के लिए और अपने-अपने गुण कर्म से लोग चल विचल हो सामाजिक नियमों को जिसमें किसी प्रकार की हानि न पहुँचाएँ इसलिए स्मृतियों के साहित्य का जन्म हुआ। मनु, अत्री, हारित, याज्ञवल्क्य आदि ने अपने-अपने नाम की संहिता बना विविध प्रकार के राजनीतिक, सामाजिक और धर्म संबंधी विषयों का सूत्रपात किया। इन्हीं के समकालीन गौतम, कणाद, कपिल, जैमिनी, पतंजलि आदि हुए जिन्होंने अपने-अपने सोचने का परिणाम रूप दर्शन शास्त्रों की बुनियाद डाली। यहाँ तक जो साहित्य हुए यद्यपि वेद की भाषा का अनुकरण उनमें होता गया परंतु नित्य नित्य उनकी भाषा अधिक अधिक सरल, कोमल और परिष्कृत होती गई, तथापि उनकी गणना वैदिक भाषा में ही की जाती है। इन स्मृतियों और आर्य ग्रन्थों की भाषा को हम वैदिक और आधुनिक संस्कृत के बीच की भाषा कह सकते हैं। अब से संस्कृत के दो खंड होते चले जो वेद तथा लोक के नाम से कह जाते हैं। पाणिनि के सूत्रों में, जो संस्कृत पाठियों के लिए कामधेनु का काम दे रहे हैं और जिनसे वैदिक और लौकिक सब प्रयोग सिद्ध होते हैं, लोक और वेद की निरख अच्छी तरह की गई है। और इसी वेद और लोक के अलग-अलग भेद से साबित होता है कि संस्कृत किसी समय प्रचलित भाषा थी जो लोगों के बोलचाल के बर्ताव में लाई जाती थी।

वेद के उपरांत रामायण और महाभारत साहित्य के बड़े-बड़े अंग समझ गए। रामायण के समय भारतीय सभ्यता का प्रेमोच्छ्वास- परिप्लावित नूतन यौवन था, किंतु महाभारत के समय भारतीय सभ्यता क्षतिग्रस्त हो वार्द्धक्य भाव को पहुँच गई थी। रामायण के प्रधान पुरुष रघुकुलावतंस श्रीरामचंद्र थे और भारत के प्रधान पुरुष बुद्धि की तीक्ष्णता के रूप, कूट युद्ध विशारद, भगवान् वासुदेव श्रीकृष्ण या उनके हाथ की कठपुतली युधिष्ठिर थे। रामायण के समय से भारत के समय में लोगों के हृद्गत भाव में कितना अंतर हो गया था कि रामायण में दो प्रतिद्वंद्वी भाई इस बात के लिए विवाद कर रहे थे कि यह समस्त राज्य और राज्य सिंहासन हमारा नहीं है यह सब तुम्हारे हाथ में रहे, अंत में रामचंद्र ने भरत को विवाद में पराभूत कर समस्त साम्राज्य उनके हस्तगत कर आप आनंद निर्भर-चित्त हो सस्त्रीक बनवासी हुए। वही महाभारत में दो दायाद भाई इस बात के लिए कलह करने पर सन्नद्ध हुए कि जितने में सूई का अग्रभाग ढंक जाए इतनी पृथ्वी भी बिना युद्ध के हम ना देंगे| "सूच्यग्रं नैव दास्यामि बिना युद्धेन केशव"| परिणाम में एक भाई दूसरे पर जय लाभ कर तथा जंघा में गदाघात और मस्तक पर पदाघात से उसे बध कर भाई के राज्य सिंहासन पर आरूढ़ हो सुख में फूल अनेक तरह के यज्ञ और दान में प्रवृत्त हुआ। रामायण और महाभारत के आचार्य क्रम से कवि कुलगुरू वाल्मीकि और व्यास थे। पृथ्वी के और-और देशों में इनके समान या इनसे बढ़कर कवि नहीं हुए ऐसा नहीं है। यूनान देश में होमर, रूम देश में वरजिल, इटली में डेंटी, इंग्लैंड में चासर और मिल्टन अपनी-अपनी असाधारण प्रतिभा से मनुष्य जाति का गौरव बढ़ाने में

कुछ कम न थे। परंतु विचित्र कल्पना और प्रकृति के यथार्थ अनुकरण में चिरंतन वृद्ध वाल्मीकि के समान होमर तथा मिल्टन किसी अंश में नहीं बढ़ने पाए, जिनकी कविता के प्रधान नायक श्रीरामचंद्र आर्य जाति के प्राण, दया के अमृतसागर, गांभीर्य और पौरुष दर्प की मानों सजीव प्रतिकृति थे। वे प्रीति और समभाव से महा नीच जाति चांडाल तक को गले से लगाते थे। उन्होंने लंकेश्वर से प्रबल प्रतिद्वंदी शत्रु को भी कभी तृण के बराबर भी नहीं समझा। स्वर्णमंडित सिंहासन और तपोवन में पर्णकुटी उन्हें एक-सी सूखकारी हुई। उनके स्मितपूर्वाभिभाषित्व और उनकी बोलचाल की मुग्ध माधुरी पर मोहित हो दंड कारण्य की असभ्य-जाति ने भी अपने को उनका दास माना। अहा ! धन्य श्रीरामचंद्र का अलौकिक माहात्म्य, धन्य वाल्मीकि की कल्पना-सरसी जिसमें ऐसे-ऐसे स्वर्ण कमल प्रस्फुटित हुए।

काल के परिवर्तन की कैसी महिमा है जो अपने साथ ही साथ मानुषी प्रकृति के परिवर्तन पर भी बहुत कुछ असर पैदा कर देता है। वाल्मीकि ने जिन-जिन बातों को अवगुण समझ अपनी कल्पना के प्रधान नायक रामचंद्र में बरकाया था वे ही सब व्यास के समय गुण हो गई, जिनकी कविता का मुख्य लक्ष्य यही था कि अपना मान, अपना गौरव, अपना प्रभुत्व जहाँ तक हो सके न जाने पावे। भारत के हर एक प्रसंग का तोड़ अंत में इसी बात पर है। शत्रु-संहार और निज कार्य-साधन निमित्त व्यास ने महाभारत में जो-जो उपदेश दिए हैं और राजनीति की काट-ब्यौंत जैसी-जैसी दिखाई है उसे सुन बिस्मार्क सरीखे इस समय के राजनीति के मर्म में कुशल राजपुरुषों की अकिल भी चलने चली जाती होगी। इससे निश्चय होता है कि प्रभुत्व और स्वार्थ-साधन तथा प्रवंचना परवश भारतवर्ष उस समय कहाँ तक उदार भाव, संवेदना आदि उत्तम गुणों से विमुख हो गया था। युधिष्ठिर धर्म के अवतर और सत्यवादी प्रसिद्ध है, पर उनकी सत्यवादिता निज कार्य-साधन के समय सब खुल गई।"अश्वत्थामा हतः नरो वा कुंजरो वा" इत्यादि कितने उदाहरण इस बात के हैं विस्तार भय से नहीं लिखते।

महाभारत के उपरांत भारत और का और ही हो गया। इसकी दशा के परिवर्तन के साथ ही साथ इसके साहित्य में भी बड़ा परिवर्तन हो गया। उपरांत बौद्धों का जोर हुआ। ये सब वेद और ब्राह्मणों के बड़े विरोधी थे। वेद की भाषा संस्कृत थी इसलिए इन्होंने संस्कृत को बिगाड़ प्राकृत भाषा जारी की। तब से संस्कृत सर्वसाधारण के बोलचाल की भाषा न रही। फिर भी संस्कृत-भाषी उस समय बहुत से लोग थे, जिन्होंने इस नई भाषा को प्राकृत नाम दिया जिसका अर्थ ही यह है कि प्राकृत अर्थात नीचों की भाषा। अतएव संस्कृत नाटकों में नीच पात्र की भाषा प्राकृत और उत्तम पात्र ब्राह्मण या राजा आदि की भाषा संस्कृत रखी गई है। कुछ काल उपरांत यह भाषा भी बहुत उन्नति को पहुंची। शोरसैनी, महाराष्ट्री, मागधी, अर्धमागधी, पैशाची आदि इसके अनेक भेद हैं इसमें भी बहुत से साहित्य के ग्रंथ बने। गुणाढय कवि का आर्यावध्द लक्षश्लोक का ग्रंथ बृहत्कथा प्राकृत ही में है। सिवा इसके शालीवाहन, सप्तशती आदि कई एक उत्तम प्राकृत के ग्रंथ और भी मिलते हैं। नंद और चंद्रगुप्त के समय इस भाषा की बड़ी उन्नति की गई। जैनियों के सब ग्रंथ प्राकृत ही में हैं। उनके स्रोत पाठ आदि भी सब इसी में है। इससे मालूम होता है कि प्राकृत किसी समय वेद की भाषा के समान पवित्र समझी गई थी।

संस्कृत यद्यपि बोलचाल की भाषा इस समय न रह गई थी, पर हर एक विषय के ग्रंथ इसमें एक से एक बढ़-चढ़कर बनते गए। और साहित्य की तो यहाँ तक तरक्की हुई कि कालिदास आदि कवियों की उक्ति युक्ति से मुकाबिले वेद के भद्दा और रुखा साहित्य अत्यंत फीका मालूम होने लगा। कालिदास की एक-एक उपमा पर और भवभूति, भारवी, श्रीहर्ष, बाण की एक-एक छटा पर वेद का उमदा से उमदा सूक्त, जिनमें हमारे पुराने आर्यों ने मरपच साहित्य की बड़ी भारी कारीगरी दिखलाई है, न्यौछावर है। संस्कृत के साहित्य के लिए विक्रमादित्य का समय "अगस्टिन पीरियड" कहलाता है अर्थात उस समय संस्कृत, जहाँ तक उसके लिए परिष्कृत होना संभव था, अपनी पूर्ण सीमा तक पहुँच गई थी। यद्यपि भारवी, माघ, मयूर, प्रभृति कई एक उत्तम कवि धाराधिपति भोजराज के समय तक और उनके उपरांत भी जगन्नाथ पंडितराज तक बराबर होते ही गए किंतु संस्कृत की परिष्कृत होने की सामग्री उस समय तक पूरी हो चुकी थी। भोज का समय तो यहाँ तक कविता की उन्नति का था कि एक-एक श्लोक के लिए असंख्य इनाम राजा भोज कवियों को देते थे। वेद का साहित्य उस समय यहां तक दब गया था कि छांदस मूर्ख की एक पदवी रक्खी गई थी। केवल पाठ मात्र वेद जानने वाले छांदस कहलाते थे और वे अब तक भी निरे मूर्ख होते आए हैं|

बौद्धों के उच्छेद के उपरांत एक ज़माना पुराण के साहित्य का भी हिंदुस्तान में हुआ। उस समय बहुत से पुराण, उप-पुराण और संहिताएँ दो ही चार सौ वर्ष के हेर-फेर में रची गई। अब हम लोगों में जो धर्म-शिक्षा, समाज-शिक्षा और रीति-नीति प्रचलित है वह सब शुद्ध वैदिक एक भी नहीं है। थोड़े से ऐसे लोग हैं जो अपने को स्मार्त मानते हैं, उनमें तो अलबत्ता अधिकांश वेदोक्त कर्म का यत्किंचित् प्रचार पाया जाता है। सो भी केवल नाम मात्र को, पुराण उसमें भी बीच-बीच आ घुसा है। हमारी विद्यमान छिन्न-भिन्न दशा, जिसके कारण हज़ार-हज़ार चेष्टा करने पर भी जातीयता हमारे में आती ही नहीं, सब पुराण की ही कृपा है। जब तक शुद्ध वैदिक साहित्य हम लोगों में प्रचलित था तब तक जातीयता के दृढ़ नियमों में जरा भी अंतर नहीं होने पाया था। पुराणों के साहित्य के प्रचार से एक बड़ा लाभ भी हुआ कि वेद के समय की बहुत सी घिनौनी ऋतियों और रस्मों को, जिनके नाम लेने से भी हम घिना उठते हैं और उन सब महाघोर हिंसाओं को, जिनके सबब से अपने अहिंसा धर्म के प्रचार करने में बौद्धों को सुविधा हुई थी, पुराणकर्ताओं ने उठाकर शुद्ध सात्विकी धर्म को विशेष स्थापित किया। अनेक मतमतांतरों का प्रचार भी पुराणों ही की करतूत है। पुराणवाले तो पंचायतन पूजन ही तक से संतोष करके रह गए। तंत्रों ने बड़ा संहार किया उन्होंने अनेक शुद्र देवता भैरों, काली, डाकिनी, शाकिनी, भूत, प्रेत तक के पूजन को फैला दिया। मद-मांस के प्रचार को, जिसे बौद्धों ने तमोगुणी और मलिन समझ उठा दिया था, तांत्रिकों ने फिर बहाल किया। पर बलवीर्य की पुष्टता से, जो मांसाहार का प्रधान लाभ था, ये लोग फिर भी वंचित ही रहे। निःसन्देह तांत्रिकों की कृपा न होती तो हिंदुस्तान ऐसा जल्द न डूबता। वेद के अधिकारी शुद्ध ब्राह्मण के लिए तांत्रिक दीक्षा या तंत्र मंत्र अति निषिद्ध है। ब्राह्मण तंत्र के पठन-पाठन से बहुत जल्द पतित हो सकता है यह जो किसी स्मृतिकार का मत है हमें भी कुछ-कुछ सयुक्तिक मालूम होता है। बहुत से पुराण तंत्रों के बाद बने। उनमें भी तांत्रिकों का सिद्धांत पुष्ट किया गया है।

हम ऊपर लिख आए हैं कि हिंदू जाति में कौमियत के छिन्न-भिन्न होने का सूत्रपात पुराणों के द्वारा हुआ और तंत्रों ने उसे बहुत ही बहुत पुष्ट किया। शैव,शाक्त, वैष्णव, जैन, बौद्ध इत्यादि अनेक जुदे-जुदे फिरके हो गए जिनमें इतना दृढ़ विरोध कायम हुआ कि एक दूसरे के मुँह देखने के रवादार ना हुए तब परस्पर का एका और सहानुभूति कहाँ रही। जब समस्त हिंदू जाति की एक वैदिक संप्रदाय न रही तो वही मसल चरितार्थ हुई कि "एक नारी जब दो से फँसी जैसे सत्तर वैसे अस्सी"। हमारी एक हिंदू जाति के असंख्य टुकड़े होते-होते यहाँ तक खंड हुए कि अब तक नए-नए धर्म और मत-प्रवर्तक होते ही जाते हैं। ये टुकड़े जितना वैष्णों में अधिक है उतना शैव-शाक्तों में नहीं और आपस में एक दूसरे के साथ मेल और खानपान जितना कम इनमें है उतना औरों में नहीं। राम के उपासक कृष्ण के उपासक से लड़ते हैं कृष्ण के उपासक रामोपास्कों से इत्तिफाक नहीं रखते। कृष्णोपासको में भी सत्यानाशी अनन्यता ऐसी आड़े आई है कि यह इनके आपस ही में बड़ा खटपट लगाए रहती है।

प्राकृत के उपरांत हमारे देश के साहित्य के दो नमूने और मिलते हैः एक पद्मावत, और दूसरा पृथ्वीराज रायसा। पद्मावत की कविता में तो किसी कदर कुछ थोड़ा-सा रस है भी पर पृथ्वीराज रायसा में तारीफ के लायक कौन-सी बात है यह हमारी समझ में बिल्कुल नहीं आती। प्राकृत से उतरते-उतरते हमारी विद्यमान हिन्दी इस शक्ल में कैसे आई, इस बात का पता अलबत्ता रायसा से लगता है। मतमतांतर के साथ ही साथ हमारी भाषा भी गुजराती, मरहठी, बंगाली इत्यादि के भेद से प्रत्येक प्रांत की जुदी-जुदी भाषा हो गई। इन एकदेशी भाषाओं में बंगाली सबसे अधिक कोमल, मधुर और सरस है। मरहठी महाकठोर और कर्णकटु, तथा पंजाबी निहायत भद्दी, कठोर और रूखापन में उर्दू की छोटी बहन है। अब अपनी हिन्दी की ओर आइये। इसमें संदेह नहीं विस्तार में हिन्दी अपनी बहिनों में सबसे बड़ी है। ब्रजभाषा, बुंदेलखंडी, बैसवारे की तथा भोजपुरी इत्यादि इसके कई एक अवांतर भेद है। ब्रजभाषा में यद्यपि कुछ मिठास है पर यह इतनी जनानी बोली है कि इसमें शिवाय श्रृंगार के दूसरा रस आ ही नहीं सकता। जिस बोली को कवियों ने अपने लिए चुन रक्खा है वह बुंदेलखंड की बोली है। इसमें सब प्रकार के काव्य और सब रस समा सकते हैं। अपनी-अपनी पसंद निराली होती है, 'भिन्नरुचिर्हि लोकः'। हमें बैसवारे की मर्दानी बोली सबसे अधिक भली मालूम होती है। दूसरी भाषाएं जैसे मरहठी, गुजराती, बंगला की अपेक्षा कविता के अंश में हिन्दी का साहित्य बहुत चढ़ा हुआ है तथा संस्कृत से कुछ ही न्यून है। किंतु गद्य-रचना 'प्रोज़' हिन्दी का बहुत ही कम और पौछ है। सिवाय एक प्रेमसागर-सी दरिद्र रचना के इसमें और कुछ हई नहीं। जिसे हम इसके साहित्य के भंडार में शामिल करते। दूसरे उर्दू इसकी ऐसी रेढ़ मारे हुए हैं कि शुद्ध हिन्दी तुलसी, सूर इत्यादि कवियों की पद्य-रचना के अतिरिक्त और कहीं मिलती ही नहीं। प्रसंग प्राप्त अब हमें यहाँ उर्दू के साहित्य की समालोचना का भी अवसर प्राप्त हुआ है किंतु यह विषय अत्यंत ऊब पैदा करने वाला हो गया इससे इसे यहीं समाप्त करते हैं। उर्दू की समालोचना फिर कभी करेंगे।

6.3.1 विवेच्य निबन्ध की विषय वस्तु

बालकृष्ण भट्ट जी कहते हैं कि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ पर रहने वाले नागरिकों के हृदय का स्वच्छ और आदर्श रूप होता है। वहाँ की कोई भी जाति जिस समय, जिस भाव से परिपूर्ण है या वह उस समय जिन भावों को अधिक महत्व देती है वे सभी भाव उस समय के साहित्य की (छिद्रान्वेशष) समालोचना से अच्छी तरह प्रकट हो सकते हैं। अर्थात प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ पर रहने वाले नागरिकों के हृदय की स्पष्ट झलक दिखाता है। जब मनुष्य का मन दुख की संवेदना से भरा होता है। क्रोध से प्रदीप्त(जलना) या किसी चिंता से घिरा होता है तब उसके चेहरे की आकृति और छवि दूषित हो जाती है। वह उदासी से भरा और कांतिहीन लगने लगता है। ऐसी अवस्था में उसकी कंठ ध्वनि भी उसका साथ छोड़ देती है क्योंकि उसके कंठ से फटे हुए ढोल के समान बेसुरी, बिना ताल, बिना लय की या करुणा से भरी गद्गद विकृत आवाज निकलती है। दूसरी तरफ जब आनंद से भरा मन उत्तेजित होकर नृत्य करता है और सुख के संसार में डूब जाता है। उस समय उसका चेहरा विकसित होकर कमल के समान खिल जाता है। उसके नेत्र मानो हँसने लगते हैं। उसका प्रत्येक अंग चुस्ती और चालाकी से भर फिरहरि की तरह फड़कता है। उसकी आवाज में बसंत ऋतु में मदमस्त हुई कोयल की आवाज से भी अधिक मिठास होती है। उसकी आवाज मधुर और सुहानी हो उठती है और मन को बहाने लगती है। सुख में खुश और दुख में दुखी होना यह मनुष्य व्यवहार का अपरिवर्तनीय प्राकृतिक नियम है। इस नियम को संसार के सभी देशों का साहित्य स्वीकार करता है। तभी तो प्रत्येक देश के साहित्य में कभी क्रोध से पूर्ण भयंकर गर्जना होती है, कभी प्रेम के दर्द से भरी लम्बी गहरी सासें, कभी शोक संताप और पश्चाताप से भरे हृदय की करुण पुकार, कभी वीरता के दर्प में भरा बाहुबल के अहंकार से भरा हुआ सिंहनाद, कभी भक्ति के आलोक से मन की द्रवता पवित्रता प्राप्त होती है। जिसके कारण हृदय शुद्ध हो जाता है लेकिन आँखों से आँसू निकलने लगते हैं या अन्य प्रकार के प्राकृतिक भावों का उद्गार हमारे भीतर दिखाई देता है। इसलिए साहित्य को जनता के मन की फिल्म (चित्रपट) कहना तर्कसंगत ही है। जब हम किसी देश के इतिहास का अध्ययन करते हैं तो हम उस देश के भौतिक या बाहरी हाल को ही जान सकते हैं। दूसरी तरफ साहित्य के अध्ययन से उस देश में समय-समय पर परिवर्तित होनेवाले भावों का ज्ञान हमें होता है।

बोध प्रश्न

- साहित्य को जनसमूह के चित्त का चित्रपट क्यों गया है?
- दुख और सुख की परिस्थितियों में मानव का व्यवहार किस प्रकार बदलता है?

किसी देश के इतिहास का अध्ययन करने से केवल उसकी राजनीतिक सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का ही पता चलता है। हमारा अति प्राचीन वेद साहित्य आर्यों द्वारा रचित साहित्य है। यह आर्यों की बाल्यावस्था थी क्योंकि उनके साहित्य में किसी प्रकार की बनावट या

आडंबर नहीं था। बालक मन के भाव, मासूमियत, उदार भाव, छल-कपट रहित व्यवहार जैसे गुण वेद साहित्य को एक विशिष्ट पवित्रता तथा मधुरता प्रदान करते हैं। जिन विद्वानों ने वेद का निर्माण किया वे लोग ऋषि याज्ञवल्क्य और मनु की भाँति नहीं थे। इन दोनों के समान उन लोगों ने समाज के आंतरिक भेद, वर्ण-विवेक जैसे झगड़ों में न पड़कर समाज की उन्नति या अवन्नति की चिंता नहीं की थी। यह विद्वान कणाद और कपिल की तरह भी नहीं थे क्योंकि कणाद और कपिल स्वयं द्वारा रचित शास्त्रों के बीज सूत्रों की मदद से रात दिन प्राकृतिक पदार्थ की छानबीन में डूबे रहते थे। उन्हें समाज को लेकर कई सारी शंकाएं थी। बालकृष्ण भट्ट जी अन्य कवियों का वर्णन करते हुए लिखते हैं कालिदास, भभूति, श्रीहर्ष, आदि कवियों की भाँति ये (वेद लिखने वाले) लोग कामिनी के विभ्रमविलास और लावण्य लीला लहरी (नारी के श्रंगारिक वर्णन) में डुबकियाँ मार कर आनंदित नहीं होते थे। इन्होंने अपने साहित्य को मानव जाति के विकास के लिए समर्पित किया था। प्रकृति में उपलब्ध साधनों सूर्य, वायु आदि के महत्व को जानकर उन पर साहित्य की रचना की। जैसे रोज सुबह सूर्य का उदय होना और मानव जाति पर उसका प्रभाव और आवश्यकता को जानकर इसकी प्रशंसा में उसकी वंदना करते हुए साहित्य लिखने लगे। इसी प्रकार जल से भरे मेघों का सौंदर्य देख उनका हृदय गद्गद हो जाता और उसे प्रकृति का उपहार समझ धन्यवाद स्वरूप स्त्रोत के रूप में उसका पाठ करने लगे। इसी प्रकार वायु के प्रबल प्रवाह को ईश्वरीय शक्ति समझकर उसे शांत करने के लिए वायु की स्तुति करने लगे। यही सब भविष्य में ऋगवेद और सामवेद की पवित्र ऋचाएँ बन गई। जब इतना सीधा और सरल साहित्य लिखा जा रहा था तब वर्तमान समय की तरह राजनीतिक अत्याचार नहीं होते थे। इसलिए उनका साहित्य राजनीति के टेढ़े-मेढ़े विचारों से दूषित नहीं हुआ था। आगे निबंधकार आर्यों के आगमन और उनके नवीन समाज की स्थापना के अधूरेपन का जिक्र करते हैं। जहाँ पर सबका निर्वाह अच्छी तरह से हो रहा था। किसी को किसी से कोई शिकायत नहीं थी। सभी का व्यवहार निष्कपट था। आज लोगों के व्यवहार में स्वार्थ, बनावट और कुटिलता होती है वैसी उस समय नहीं थी। यही कारण था कि उनके रचित वेद साहित्य में भी बनावटी भक्ति, झूठा सौहार्द(बन्धुत्व), छल-कपट आडंबर और दिखावटी चुनाव का स्थान नहीं था। उनका धर्म वर्तमान धर्म के समान गला घोटनेवाला नहीं था। सबके साथ खानपान रहन-सहन आदि में सहानुभूति रहती थी अर्थात् सब मिलजुलकर रहते थे। उनमें अब के धार्मिक पाखंडियों के जैसा अहंकार नहीं था। न ही उनमें धर्म के नाम पर आपस में लड़ने का कोई विचार पनपा होगा। भोलापन और उदारता का भाव उनके एक-एक अक्षर से टपकता था। लेखक यहाँ उदाहरण देते हुए लिखते हैं कि एक बार एक बालक को अपनी गोद में बैठा कर महात्मा ईसा अपने शिष्यों को कहते हैं कि जो व्यक्ति छोटे बालकों के समान भोला नहीं होता उसे स्वर्ग में स्थान नहीं मिलता। लेखक कहते हैं ऐसा कोमल मन जो वेद भाषी आर्यों की भांति कदम-कदम पर ईश्वर से डरता हो, प्राकृतिक पदार्थ के सौंदर्य पर आकर्षित हो तथा उसका मस्तिष्क बालकों की तरह सरल न हो उसका स्वर्ग के राज्य में प्रवेश पाना बहुत दुःसाध्य है।

बोध प्रश्न:

- आर्यों के साहित्य की क्या विशेषता बताते हैं।

- “उनका साहित्य राजनीति की कुटिल उक्ति युक्ति से मालिन नहीं हुआ था”। पंक्ति से लेखक का क्या तात्पर्य है?

आर्यों ने प्राकृतिक पदार्थों का अनुशीलन करते-करते ईश्वर के विषय में उदित भावों को अपने साहित्य में लिखा। इसे ही उपनिषद कहा गया। जैसे-जैसे समाज में आर्यों की संख्या बढ़ने लगी और लोगों की रीति-नीति व्यवहार में भिन्नता आने लगी। तब सभी को एक सूत्रता में बाँधे रखने के लिए और उनके गुण तथा कर्मों को व्यवस्थित दिशा प्रदान करने के लिए कुछ सामाजिक नियम बनाए गए। जिससे समाज में शान्ति बनी रहे और किसी को किसी प्रकार की हानि न हो। इसलिए स्मृतियों के साहित्य का जन्म हुआ। मनु, अत्रि, हारित, याज्ञवल्क्य आदि ने अपने नाम की संहिता बनाई है। जिनमें कई प्रकार के राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक विषयों के ऊपर लिखा गया है। इन्हीं के समय में गौतम बुद्ध कणाद, कपिल, जैमिनि, पतंजलि जैसे महापुरुषों ने दर्शन शास्त्रों की बुनियाद डाली। इस समय तक जो साहित्य लिखे गए उनमें वेदों की भाषा का अनुकरण किया गया परंतु समय के साथ साथ उनकी भाषा अधिक सरल, कोमल और शुद्ध होती गई। इसके पश्चात् भी इस भाषा की गणना वैदिक भाषा से ही की जाती है। इन स्मृतियों और आर्य ग्रन्थों की भाषा को हम वैदिक और आधुनिक संस्कृत के बीच की भाषा कह सकते हैं| कुछ और समयोपरांत संस्कृत के दो खण्ड हो गए जिन्हें वैद और लोक के नाम से जाना जाने लगा। जिन्हें संस्कृत भाषा में विशेज्ञता प्राप्त है उनके लिए पाणिनि के सूत्र कामधेनु के समान है। जिससे लौकिक और वैदिक सब प्रकार के प्रयोग (योजनाएं /कार्य) सिद्ध हो रहे हैं। जिसके कारण लोग और वेद की पहचान अच्छी तरह से हो रही है। इसी लोक और वेद की भिन्नता के कारण हमें यह भी ज्ञात होता है कि संस्कृत किसी समय बहुत प्रचलित भाषा थी जिसका प्रयोग आम लोग अपनी आम बोलचाल की भाषा के रूप में करते थे।

बोध प्रश्नः

- समाज में लोगों की संख्या अधिक बढ़ने पर आर्यों ने अपने साहित्य में क्या परिवर्तन किया|
- स्मृतियों के साहित्य से लेखक का क्या अभिप्राय है?

वेद के पश्चात रामायण और महाभारत साहित्य के बड़े-बड़े अंग समझ गए। रामायण के समय भारतीय सभ्यता का प्रमोच्छ्वास से भरपूर पलवित नव यौवन था किंतु वहीं महाभारत के समय भारतीय सभ्यता क्षतिग्रस्त होकर वार्ध्दक्य (वृद्धावस्था) भाव में पहुँच गई थी। अर्थात अब के साहित्यकारों की सोचने की शैली में परिवर्तन आने लगा था। रामायण के प्रमुख पात्र जहाँ रघुकुलवंशज श्री रामचंद्र थे वहीं महाभारत के प्रमुख पात्र कुशाग्रबुद्धि के रूप, युद्ध विशेषज्ञ, कूटनीतिज्ञ, वासुदेव के पुत्र श्री कृष्ण थे या उनकी हर बात मानने वाले (हाथों की कठपुतली) युधिष्ठिर थे। रामायण के समय से भारत के समय में लोगों के हृदयगत भावों में बहुत अंतर आ गया था क्योंकि रामायण में दो विरोधी प्रतिद्वंदी भाई दशरथ के पुत्र राम और भरत

आपस में इस बात पर विवाद कर रहे थे कि समस्त राज्य और राज्य सिंहासन हमारा नहीं है। यह सब तुम्हारे हाथों में रहे और अंत में रामचंद्र जी भरत को इस विवाद (बहस, तर्क-वितर्क) में हरा देते हैं। संपूर्ण अयोध्या साम्राज्य उनके हाथों में सौंपकर खुद अपनी पत्नी सीता के साथ आनंदित मन से पिता को दिए हुए वचन को पूरा करने के लिए वनवास चले जाते हैं। दूसरी तरफ महाभारत में एक ही खानदान के दो भाई इस बात को लेकर झगड़ने के लिए आतुर है कि जितने में सूई के आगे का भाग ढक जाए उतनी भूमि भी बिना युद्ध के हम नहीं देंगे। जब दोनों पक्ष नहीं मानते तो परिणाम स्वरुप महाभारत का युद्ध होता है। जिसमें एक भाई दूसरे भाई पर विजय प्राप्त करने के लिए उसकी जंघा पर गदा से वार करता है और उसे पूरी तरह से परास्त करने के लिए उसके मस्तक पर भी पदाघात कर उसका वध कर देता है। जीत के पश्चात् अपने भाई के राज्य सिंहासन पर बैठता है और जीत की खुशी में फुल कर कई प्रकार के यज्ञ, हवन, दान, दक्षिणा और पूजा आदि में प्रवृत हो जाता है अर्थात अपने आप को एक सफल और आदर्श राजा साबित करने में कोई कमी नहीं छोड़ता है। बालकृष्ण भट्ट आगे लिखते हैं कि केवल भारत में ही नहीं पृथ्वी के और देश में भी इन्हीं के समान विद्वान कवि और लेखक हुए हैं जैसे यूनान में होमर, रूम में वरजिल, इटली में डेंटी, इंग्लैंड में चासर और मिल्टन। यह सभी विद्वान अपनी विलक्षण प्रतिभा के कारण मनुष्य जाति का गौरव बढ़ाने में किसी से भी कम नहीं थे। इन्होंने उत्तम साहित्य की रचना की सभी महान साहित्यकार थे किंतु इनमें वाल्मीकि सी विचित्र कल्पनाशीलता और प्रकृति की वास्तविकता को विभिन्न भावों में प्रस्तुत करने की क्षमता नहीं थी। होमर तथा मिल्टन को इस विषय में अधिक उन्नति नहीं मिली थी। उनकी कविता के प्रधान नायक श्री रामचंद्र जी जो आर्यजाति के प्राण दया अमृतसागर, गंभीरता और पौरुषत्व के तेज से परिपूर्ण थे। वे प्रेम, स्नेह, आदर और समानता के भाव से सबसे छोटी समझी जानेवाली चांडाल जाति को भी गले से लगाते थे। श्री रामचंद्रजी विष्णु के अवतार थे फिर भी उन्होंने अपने सबसे शक्तिशाली शत्रु लंकेश्वर को कभी कम नहीं समझा। अयोध्या का सोने से जड़ा सिंहासन हो या तपोवन की पर्णकुटी दोनों को रामचंद्र ने एक ही समझा। दोनों उन्हें समान सुखदायक लगती थी (केवल राम ही ऐसे राजा है जिन्हें तपस्वी राजा कहा जाता है)। उनकी आत्मीयता और प्रेम से पूर्ण व्यवहार और मधुर बोली के कारण जंगल की आदिवासी असभ्य जनजातियाँ उनकी गुलाम बन गई थी। धन्य है श्री रामचंद्र के महात्मयी और अलौकिक रूप को। धन्य है वाल्मीकि की कल्पना शक्ति को जिसमें ऐसे आदर्श पुरुष सोने के कमल के समान उदित हुए।

बोध प्रश्नः

- रामायण और महाभारत की कथावस्तु में क्या अंतर है?
- होमर, मिल्टन जैसे महान लेखक वाल्मीकि के समान रचना क्यों नहीं कर पाए?

समय सदा एक समान नहीं होता है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है। यह काल की महिमा ही है कि समय के साथ-साथ मनुष्य की प्रकृति में भी परिवर्तन होता रहता है। इसमें केवल भौतिक परिवर्तन ही नहीं मानसिक परिवर्तन भी शामिल है। वाल्मीकि ने जिन बातों को अवगुण, दोष,

बुराइयाँ समझकर अपनी कल्पना के प्रमुख नायक राम को उन सब से दूर रखा था, वही सब महर्षि व्यास के समय में गुण हो गई। अपना मान, गौरव, प्रभुत्व जहाँ तक हो सके जाना नहीं चाहिए यही उनकी कविता का मुख्य लक्ष्य था। अर्थात मान-सम्मान, गौरव और सत्ता को इन्होंने अधिक महत्व दिया। धयान से देखने पर महाभारत के प्रत्येक प्रसंग (घटना) के अंत में निष्कर्ष स्वरूप यही वास्तविकता दिखाई देती है। अपने शत्रुओं के संहार और व्यक्तिगत स्वार्थ को पूरा करने के लिए व्यास ने महाभारत में न जाने कितने ही उपदेश दिए हैं। दूसरी तरफ राजनीति की भी जो काट-छांट की है उसे देख सुनकर बिस्मार्क जैसे कूटनीतिज्ञ, राजनीतिज्ञ की अकल भी धोखा खा जाएगी और इस समय के राजनीतिज्ञों, विशेषज्ञों, राजपुरुषों की अकल भी घास चरने चली जाएगी अर्थात वे गलत को गलत और सही को सही नहीं कह पाएंगे। सच्च जानते हुए भी अपनी आँखें बंद कर लेंगे। इससे यह निश्चित होता है कि सत्ता, स्वामित्व और स्वार्थ साधन तथा प्रवचन के वश में भारत सरीखे आदर्श देश, उदार-भाव, संवेदना आदि उत्तम गुणों से विमुख हो गया था। युधिष्ठिर को धर्मराज का अवतार माना गया और वे अपनी सत्यवादिता के लिए जगत प्रसिद्ध थे लेकिन उनकी सत्यवादिता अपाहिज हो जाती है। जब वह अपने निज स्वार्थ के लिए अपने गुरु के सामने झूठ बोल जाते हैं कि “अश्वत्थामा हतः नरो वा कुंजरो वा”। महाभारत में न जाने कितने ही ऐसे उदाहरण है जिन्हें निबंधकार ने निबंध को अति विस्तार से बचने के लिए नहीं लिखा है। यदि बालकृष्ण भट्ट उनका वर्णन करते तो यह निबंध और अधिक लंबा हो सकता था।

बोध प्रश्नः

- लेखक वाल्मीकि की कल्पना शक्ति को धन्यवाद क्यों देते हैं|
- वाल्मीकि जी और व्यास के लेखन में क्या विभिन्नता थी|
- राजनीति के कौन सी विशेषताएं विकास की महाभारत में देखने को मिलती हैं|

जैसे-जैसे परिस्थितियाँ परिवर्तित होती है शासको के साथ-साथ उनकी मानसिकता भी बदलती है। ठीक ऐसे ही महाभारत के उपरांत भारत और का और ही हो गया अर्थात न केवल इसकी दशाओं में और परिस्थितियों में परिवर्तन आया बल्कि इसके साहित्य में भी काफी बड़ा बदलाव आया। अब यहाँ बौद्धों का प्रभुत्व था। ये जाति से क्षत्रिय थे। शायद इसलिए ये वेद और ब्राह्मणों के बड़े विरोधी थे। पहले वेद की भाषा संस्कृत थी बौद्धों ने संस्कृत को विकृत कर प्राकृत भाषा को अधिक महत्व दिया। इसके पश्चात आम लोगों के बोलचाल की भाषा के रूप में संस्कृत का प्रचलन कम होने लगा तथापि काफी लोग संस्कृत भाषा का ज्ञान रखते थे और अपने दैनिक जीवन में उसका उपयोग कर रहे थे। इन्हीं लोगों ने इस नई भाषा को प्राकृत भाषा का नाम दिया। जिसका अर्थ होता था नीचों की भाषा अर्थात् छोटी जाति के लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा। नाटकों में भी दास नौकर या नीच जाति के पात्रों की भाषा प्राकृत ही होती थी और ब्राह्मणों, राजाओं आदि द्वारा बोले जानेवाले संवाद संस्कृत में होते थे। कुछ समय पश्चात

प्राकृत भाषा भी विकसित होकर साहित्य की भाषा बन गई। शोरसैनी, महाराष्ट्री, मागधी, अर्धमागधी, पैशाची आदि इसी के भेद है। इसमें भी कई साहित्यिक ग्रन्थों की रचना हुई। गुणाढय कवि का आर्यावद्ध, लक्षक्ष्लोक का ग्रन्थ वृहतकथा प्राकृत भाषा में है। इसके अतिरिक्त शालिवाहन सप्तशती आदि प्राकृत भाषा के सफल और प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। प्राकृत भाषा की उन्नति का वास्तविक काल राजा नंद और चंद्रगुप्त का शासन काल था। जैन साहित्य के अधिकतर ग्रंथ प्राकृत में लिखे गए। उनके स्रोत पाठ आदि इसी में लिखे गए हैं। जिससे यह तो स्पष्ट हो जाता है की प्राकृत एक समय वेद की भाषा के समान पवित्र समझी जाती थी।

बोध प्रश्नः

- "महाभारत के उपरांत भारत और का और ही हो गया"। कथन से निबन्धकार का क्या अभिप्राय है?
- बौद्धों के साहित्य की विशेषताओं पर टिप्पणी लिखिए।

इस समय संस्कृत भले ही आम बोलचाल की भाषा नहीं रही थी फिर भी उसमें नित नए-नए विषयों पर साहित्य की रचना हो रही थी। प्रत्येक विषय में ग्रन्थों का निर्माण हो रहा था। जिससे संस्कृत साहित्य की काफी तरक्की हुई। यहाँ तक की कालिदास आदि कवियों की उक्ति युक्ति के सामने वेद का साहित्य बेरंग, बेरूप, रुखा और अत्यंत हल्का लगने लगा। सस्कृत कवि कालिदास अपनी उपमाओं के लिए काफी प्रसिद्ध थे। भवभूति, भारवि, श्रीहर्ष बाण जैसे कवियों की रचनाओं के सामने वेद के बढ़िया से बढ़िया सूक्त न्यौछावर है। इन्हीं सूत्रों के निर्माण में आर्यों को बहुत मेहनत और माथापच्ची (मगजमारी) करनी पड़ी थी। संस्कृत साहित्य के लिए कवि विक्रमादित्य का समय 'अगस्टिन पीरियड" कहलाता है क्योंकि यह संस्कृत के सर्वांग विकास का समय था। संस्कृत अपने विकास की पूर्ण सीमा तक पहुँच गई थी। इसके पश्चात् भारवि, माध, मयूर प्रभृति जैसे श्रेष्ठ कवि धाराधिपति भोजराज के समय तक और उनके पश्चात जगन्नाथ पंडितराज के समय में भी हुए लेकिन संस्कृत की परिष्कृत होने की सामग्री उस समय तक पूरी हो चुकी थी। राजा भोजराज का समय कविताओं के लिए काफी उन्नति का समय था क्योंकि राजा भोज एक-एक श्लोक के लिए कवियों को असंख्य इनाम देते थे। दूसरी तरफ वेद का साहित्य कमजोर होता जा रहा था। यहाँ तक की छांदस मूर्ख की एक पदवी रखी गई थी। जिन्हें केवल वेद पढ़ने का ज्ञान था उन्हें छांदस कहा जाता था। और अब उनकी गणना निरे मूर्खों में हो रही थी।

बोध प्रश्नः

- संस्कृत के साहित्य के लिए विक्रमादित्य का समय "अगस्टिन पीरियड" क्यों कहलाता है?
- संस्कृत भाषा की उन्नति में राजा भोज के योगदान पर टिप्पणी लिखिए।

बौद्धों के उच्छेदों पश्चात् पुराण साहित्य भी हिंदुस्तान में प्रचलित हुआ। उस समय से बहुत से पुराण, उपपुराण और संहिताएँ दो चार सौ वर्ष के हेर फेर में रची गई। वर्तमान समय में लोगों में जो धर्म-शिक्षा, समाज-शिक्षा और रीति-नीति प्रचलित है, उनमें से शुद्ध वैदिक एक भी नहीं है। कुछ लोग ऐसे हैं जो स्वयं को स्मार्त मानते हैं। दरअसल उनमें से अधिकतर में वेदोक्त कर्म का थोड़ा बहुत प्रचार पाया जाता है। यह ज्ञान अत्यंत गंभीर न होकर केवल नाम मात्र ही होता है। जिसमें पुराण का भी समावेश होता है। अथार्त जिसे वेदों का ज्ञान होता है वह उसमें थोड़ा बहुत पुराण के ज्ञान को जोड़ लेता है। निबन्धकार एक गंभीर विषय की ओर भी संकेत करते हैं कि वर्तमान में हमारी विद्यमान छिन्न-भिन्न दशा जिसके कारण हजार कोशिश करने पर भी जातीयता हमारे भीतर आती ही नहीं यह सब पुराण की कृपा है। जब तक शुद्ध वैदिक साहित्य आम लोगों में प्रचलित था, तब तक जातीयता के दृढ़ नियमों में कोई अंतर नहीं आया था। लेकिन पुराण के साहित्य का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि वेद के समय में कई घिनौनी ऋतियाँ और रस्मों को जिनका नाम लेने से भी हम में घृणा उत्पन्न होती थी उन सब अत्यंत क्रूर हिंसाओं का विरोध कर बौद्धों ने अपने अहिंसावादी धर्म का प्रचार प्रसार किया। इन्हीं कुरीतियों रस्मों और हिंसाओं के विरुद्ध उन्होंने धर्म में अहिंसा को विशेष स्थान दिया। पुराणकर्ताओं ने शुद्ध सात्विकी धर्म की स्थापना की। अनेक मतमतांतरों का प्रचार हुआ जो की पुराण की ही हरकत है। पुराणों में पंचायतन पूजा करते थे अर्थात में पंचायतन पूजन में के समर्थक थे।

पुराण के पश्चात तन्त्रों की बारी आई। यहाँ पर तन्त्र बड़े संहारक थे। इन्होंने कई शुद्र देवी-देवताओं जैसे भैरव, काली, डाकिनी, शाकिनी, भूत-प्रेत तक के पूजन को लोगों के बीच में फैला दिया था। शराब और मांसाहार का प्रचार किया जिसे बौद्धों द्वारा तामसी प्रवृति को श्रेय देनेवाला और गंदा समझ गया था। उसका प्रयोग सभी के लिए वर्जित था। इन्होंने इसका पूरे मन से उपयोग किया किंतु इस प्रकार बलवीर्य की पुष्टता से जो मांसाहार का प्रमुख लाभ था यह लोग उससे वंचित रहे। इसमें कोई शक नहीं कि जैसे-जैसे संसार में तांत्रिकों की ऐसी रचनाओं का प्रचार प्रसार होने लगा हमारी सात्विकता और बौद्धिकता विकृत होने लगी। तांत्रिकों की ऐसी रचनाओं की कृपा के कारण हिंदुस्तान कुरीतियों और अंधविश्वास की गर्त में डूबता चला गया। वेद के ज्ञाता शुद्ध ब्राह्मणों के लिए तांत्रिक दीक्षा या तंत्र मंत्रों की मनाही है। ब्राह्मण तंत्रों के अध्ययन से बहुत जल्दी दूषित हो सकता है। अगर यह मत किसी स्मृतिकार का है तो निबंधकार उससे सहमत है और उन्हें यह युक्ति संगत भी लगता है। कई पुराणों का निर्माण तंत्रो के बाद हुआ है। उनमें भी तांत्रिकों के सिद्धांतों की पुष्टि मिलती है।

बोध प्रश्नः

- पुराण साहित्य क्या है|
- पुराण साहित्य वैदिक साहित्य पर हावी कैसे हुआ|

ऊपर के अनुच्छेदों में लेखक यह स्पष्ट करते हैं कि कैसे हिंदू जाति में कौमियत के कमजोर और क्षीण होने का प्रमुख कारण पुराण ही थे। और तंत्रों ने इन्हें और अधिक क्षीण करने का काम किया।

शैव, वैष्णव, जैन, बौद्ध धर्म सभी एक दूसरे से अलग-अलग हो गए। समय के चलते यह एक दूसरे के मजबूत विरोधी बन गए जो एक दूसरे का चेहरा तक देखने को तैयार नहीं थे। ये सभी अपने आप को श्रेष्ठ साबित करने में लगे हुए थे। ऐसे में एक दूसरे के प्रति एकता और सहानुभूति की भावना किसी में नहीं थी। हिंदू जाति अब एक न रहकर कई भागों में बिखर गई थी। अब वह वैदिक संप्रदाय ना रही। इस स्थिति पर लेखक एक मिसाल देते हैं एक औरत जब दो आदमियों के द्वारा फसाई जाती है तो उसकी अपनी पहचान छीन जाती है। हिंदू जाति के भी कई टुकड़े हुए और उन टुकड़ों के कई खंड होते चले गए। जिसके परिणामस्वरुप अभी भी नए-नए धर्म, मत-प्रवर्तक बनते ही जा रहे हैं। वैष्णव संप्रदाय में शिव और शाक्त मत की अपेक्षा अधिक टुकड़े होते जा रहे हैं। इनमें वैष्णव संप्रदाय के खंड एक दूसरे के साथ मेल-जोल और खान-पान बहुत काम करते हैं। इतना भेद या विरोध शैव और शाक्त सम्प्रदाय में नहीं है। वैष्णव सम्प्रदाय में राम के उपासक कृष्ण के उपासकों से लड़ते हैं। कृष्ण के उपासक राम के अनुयायियों से कोई सरोकार नहीं रखते। यहाँ तक तो भी ठीक है। राम और कृष्ण को छोड़िए अब तो कृष्ण के उपासकों में भी अलग-अलग भक्ति की लहरें प्रचलित हो रही है। उन में भेद आते जा रहे हैं। जिससे इनमें आपस में ही कुछ ना कुछ खटपट चलती ही रहती है अर्थात् कहासुनी चलती रहती है।

बोध प्रश्नः

- समय के साथ साथ हिन्दू जाति में किस तरह खण्डों में विभाजित होती चली गई।
- नए धर्मों और मत प्रवर्तकों के बीच में किस प्रकार के भेद बढ़ रहे थे।

प्राकृत के उपरांत हमारे साहित्य में दो और उदाहरण मिलते हैं एक जायसी द्वारा रचित पद्मावत और दूसरी चन्दवरदाई द्वारा रचित पृथ्वीराज रासो। पद्मावत प्रबंधात्मक काव्य है जिसमें थोड़ा बहुत रस है अर्थात इसे किसी उद्देश्य प्राप्ति के लिए लिखा गया है। यह प्रेम मार्ग की काव्यधारा का प्रतिनिधि ग्रंथ है। जिसमें रहस्यवाद की झलक मिलती है। लेकिन पृथ्वीराज रायसा की कथावस्तु उतनी महान नहीं है और उसको लिखने का उद्देश्य भी स्पष्ट नहीं है। कुल मिलाकर निबंधकार पृथ्वीराज रायसा से संतुष्ट नहीं है। समय के साथ साथ प्राकृत भाषा का स्तर गिरने लगा। आज की हमारी हिन्दी को यह रूप कैसे मिला इसका पता रायसा से लगता है। आगे चलकर समय के साथ-साथ हमारी भाषा भी गुजराती, मराठी, बंगाली इत्यादि के अंतर से प्रत्येक प्रांत की अलग-अलग भाषा हो गई। भारतवर्ष में कई स्थानीय भाषाओं में उत्तम साहित्य लिखा जा रहा था। इन भारतवर्ष भाषाओं में कई गुण थे जैसे बंगाली को कोमल मधुर और रस से परिपूर्ण माना गया। मरहठी को अत्यधिक कठोर और कर्णकुट भाषा, पंजाबी को एकदम भद्दी भाषा जो कठिन और रूखेपन में उर्दू की छोटी बहन लगती है। हिन्दी की बात करें तो इसमें कोई शक नहीं की हिन्दी बाकी भारतीय भाषाओं की तुलना में अधिक विस्तृत भाषा है। ब्रजभाषा, बुंदेलखंडी, बैसवारे और भोजपुरी हिन्दी के अंतर्गत आने वाली कुछ भाषाएँ हैं। निबंधकार के अनुसार ब्रजभाषा अत्यंत मधुर भाषा है जिसमें अधिकतर श्रृंगार की कविताएँ ही लिखी जाती हैं। यद्यपि ब्रजभाषा में मिठास है किंतु यह एक जनानी बोली के समान है। उन्हें

लगता है कि इसमें श्रृंगार का आनंद ही आता है। जिस बोली को कवियों ने अपने लिए चुना वह बुंदेलखंड की बोली है अर्थात जिसमें गद्य साहित्य लिखा जा सकता है। जिसमें ओजपूर्ण कविताएँ लिखी गई वह बुंदेलखंड की बोली है। इसमें सब प्रकार के काव्य और सब रस समा सकते हैं। हर किसी की पसंद अलग-अलग होती है 'भिन्नरुचिर्हि लोकः' इसीलिए कहा जाता है कि लोगों की पसंद अलग-अलग होती है और हर किसी को अपनी पसंद अच्छी लगती है। इसी तरह से बैसवारे की मर्दानी बोली ही सबको बहुत अच्छी लगती है। दूसरी भाषाएं जैसे गुजराती, मराठी, बंगाल आदि भाषाओं की अपेक्षा हिन्दी के साहित्य में कविताओं का बहुत अधिक बाहुल्य दिखाई देता है। कविताओं में श्रेष्ठता दिखाई देती है जो कि संस्कृत से थोड़ी सी कम है। संस्कृत काव्यशास्त्र के सभी नियमों का पालन करता है किंतु हिन्दी साहित्य में थोड़ी सी छूट दी जाती है। दूसरी तरफ लेखक यह भी कहते हैं कि हिन्दी साहित्य में गद्य की रचना का आरंभ हो रहा था। उस समय तक केवल प्रेम सागर जैसी कुछ रचनाएँ ही लिखी गई थी। दूसरी तरफ उर्दू हिन्दी के समानान्तर में बढ़ रही थी। लोगों में हिन्दी के साथ-साथ उर्दू का भी प्रचलन बढ़ रहा था। जिस पर लेखक कहते हैं की शुद्ध हिन्दी तुलसीदास और सूरदास जैसे कवियों की पद्य रचना के अतिरिक्त कहीं और देखने को नहीं मिलती। अपने निबंध में उर्दू का प्रसंग आने पर लेखक व्यंग्य रूप में रहते हैं कि यहाँ उर्दू साहित्य की समालोचना करने का अवसर प्राप्त हुआ लेकिन ऐसा करने से यह निबंध अधिक ऊबाउपन पैदा करने वाला हो जाएगा। इस कारण इस निबंध को यहीं समाप्त करते हैं और उर्दू की समालोचना भविष्य में करने की बात कहते हैं।

बोध प्रश्नः

- बंगाली भाषा मरहठी और पंजाबी कैसे भिन्न है।
- खड़ीबोली कैसे गद्य के लिए उपयुक्त भाषा है?

6.3.2 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध का प्रयोजन

भारतेंदु युग के महान लेखकों में एक प्रसिद्ध नाम बालकृष्ण भट्ट जी का है। बालकृष्ण भट्ट जी अपने निबंधों के कारण चर्चा में आते है। प्रस्तुत निबंध 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है' में बालकृष्ण भट्ट जी ने भारत में उपलब्ध वेद साहित्य, उपनिषद, रामायण, महाभारत, पुराण, तंत्रों और उसके पश्चात लिखे गए साहित्य पर प्रकाश डाला है। विभिन्न समयावधियों में भिन्न प्रकार का साहित्य हमें उपलब्ध होता है। वेद लिखे गए तब की स्थितियाँ और उपनिषद के समय की स्थितियों मे थोड़ा सा ही अन्तर था। रामायण महाभारत के आते आते परिस्थितियाँ पूरी तरह बदल चुकीं थी। लोगों की सोच में भी अन्तर आने लगा था। बौद्धों ने अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए साहित्य का निर्माण किया। आगे चलकर बौद्ध धर्म विभाजित हुआ। उन शाखों ने भी अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए साहित्य लिखा। समय परिवर्तन के साथ-साथ पुराण और तंत्रों का भी भारत में बोलबाला हुआ। आरम्भ से ही भारत में कई धर्मों का पालन होता रहा है। यही हमें इसके साहित्य में भी दिखाई देता है। नाथ साहित्य, सिद्ध साहित्य आदि ने अपने धार्मिक साहित्य का प्रचार-प्रसार किया। इसके बाद में

जैन धर्म का विकास भारत में होता है हमें जैन साहित्य दिखाई देता है। जैन साहित्य में प्राकृत भाषा को साहित्य के प्रचार का माध्यम बनाया। अपभ्रंश के बाद भारत में अवधी, ब्रजभाषा, खड़ी बोली, मैथिली जैसी कई भाषाओं में साहित्य लिखा जाने लगा। बालकृष्ण भट्ट जी का अपने निबंध में संस्कृत भाषा की संपन्नता पर भी प्रकाश डालते हैं|

6.3.3 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध में व्यक्त वैचारिकता

भारत विभिन्नता में भिन्नता और अनेकता में एकता वाला देश है। इसका परिचय हमें इस निबंध में लग जाता है। प्रवाहपूर्ण, संयत गंभीर किन्तु साधारण भाषा में लिखा गया यह निबंध हमें वैदिक साहित्य से लेकर वर्तमान भारतेंदु युग में लिखे गए साहित्य की जानकारी उपलब्ध कराता है। वैदिक साहित्य कितना शांत और सरल था। उसमें केवल मानव कल्याण की चिंताएँ थीं और जैसे-जैसे मानव सभ्यता का विकास होता गया उनके लिए उसमें नियम कायदे कानून बनाए गए। जिसमें किसी तरह का आड़म्बर, अश्लीलता, वासना और श्रंगार नहीं था। उसके पश्चात् उपनिषदों का समय आया जो आध्यात्मिक ज्ञान और दर्शन पर आधारित थे। उपनिषदों के बाद में पुराण और पुराण के बाद में तंत्रों की बारी आई। दूसरी तरफ कालिदास, जैसे कवि भी हुए। बालकृष्ण भट्ट जी ने अपने इस निबंध में उस समय के काव्य से सम्बन्धित सभी क्षेत्रों को पकड़ने की कोशिश की है। यहाँ तक कि वह यह बात भी लिखने से पीछे नहीं रहते कि रामायण और महाभारत के बाद बौद्ध समय में किस तरह से समय परिवर्तन होने लगा। परिस्थितियों में ही नहीं सोच में परिवर्तन आने लगा इसका भी जिक्र बालकृष्ण भट्ट करते हैं। बौद्धों के नाथ साहित्य, सिद्ध साहित्य का वर्णन मिलता है। तंत्रों ने किस प्रकार से पुराणों को प्रभावित किया और साथ ही साथ मनुष्यों के विचारों पर इसका क्या असर हुआ। बालकृष्ण जी यह कहने से भी पीछे नहीं रहते कि तंत्रों के कारण भारत का बेड़ा गर्ग हो गया। जिस गति से हम उन्नति कर रहें थे वह लगभग खत्म हो गयी। आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल लगभग सभी के साहित्य पर प्रकाश डाला है।

6.3.4 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध का भाषा सौष्ठव

बालकृष्ण भट्ट की हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ निबंधकार है। उनके निबंधों में गंभीर विवेचन और विचारात्मकता देखने को मिलती है। साहित्य, समाज, राजनीति, धर्म, दर्शन, नैतिकता, सामयिक आदि उनके निबंधों के प्रमुख विषय रहे हैं। इन्होंने तीन सौ से भी अधिक निबंध लिखे हैं। भट्ट जी भारतेंदु मंडली के प्रधान सदस्यों में से एक थे। साहित्य सुमन और भट्ट निबंधावली इनके निबंध संग्रह है| निबंधकार के साथ-साथ आप उपन्यासकार, नाटककार तथा अनुवादक भी है| भावों के अनुकूल वे भाषा का प्रयोग करते हैं। प्रस्तुत निबन्ध एक गंभार विषय पर है किन्तु इसे पढ़ते समय उबाऊपन महसूस नहीं होता यही बालकृष्ण भट्ट जी की भाषा की विशेषता है। अपनी बात को सीधे सहज रूप में प्रस्तुत करते हैं। तत्सम शब्दों का प्रयोग होता है, संस्कृत निष्ठ होते हुए भी उसमें साधारण जन से जुड़ने की क्षमता होती है। महावरों और कहावतों के कारण इनकी भाषा में जीवितता आ जाती है। उदाहरणः "एक नारी जब दो से फँसी

जैसे सत्तर वैसे अस्सी"। इस निबन्ध में वे महाभारत से उदाहरण भी देते हैः "सूच्यग्रं नैव दास्यामि बिना युद्धेन केशव" आदि। भट्ट जी ने शुद्ध हिन्दी का प्रयोग किया। संस्कृत के साथ-साथ तत्कालीन उर्दू, फ़ारसी, अरबी तथा अन्य भाषा के शब्दों का प्रयोग यत्र तत्र करते रहते हैं। उनकी भाषा जीवंत तथा चित्ताकर्षक, विषय एवं प्रसंग के अनुसार प्रचलित हिन्दीतर शब्दों से भी समन्वित है। यह अत्यन्त प्रवाहमयी भाषा है।

6.3.5 "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" निबन्ध शैली सौन्दर्यः

बालकृष्ण भट्ट जी केवल निबन्धकार ही नहीं अपितु नाटककार, उपन्यासकार आदि थे। उनके निबन्धों में एक अनूठापन होता है जो विचारों की गहराई को दर्शाता है। विषय की विस्तुत विवेचना के साथ उस पर गंभीर चिन्तन भी किया जाता है। कहीं कहीं पर व्यंग्य के द्वारा वे अपने गंभीर विषय को भी मनोरंजक बना देते हैं। वर्णनात्मकता, विचारात्मकता और भावात्मकता तीनों इनके लेखन की जान हैं। निबन्ध सभी को आसानी से समझ में आए इसके लिए वे अपने विचारों को विस्तार से समझाते हैं। जैसे इस निबन्ध में रामायण और महाभारत के रचनाकारों की तीक्ष्ण विचारधारा की तुलना वे निष्पक्ष भाव से करते हैं। उनके वाक्य कई बार बहुत लम्बे तो कई जगहों पर छोटे हो जाते हैं। कई गम्भीर विषयों पर निबन्ध लिखते समय आपकी भाषा अत्यन्त विचारात्मक हो जाती है। जिसे समझाने के लिए वे तर्क-वितर्क, आलोचना, भक्ति-ज्ञान, आस्था विश्वास आदि का सहारा लेते हैं। जिसमें उनकी भाषा संस्कृत निष्ठ हो जाती है। साहित्यिक निबन्धों में भट्ट जी भावात्मक शैली को महत्व देते हैं। यह भट्ट जी की प्रतिनिधि शैली थी। शुद्ध हिन्दी में अपने भावों और विचारों को प्रस्तुत करते हैं। अपने निबन्धों को बोझिल, उबाऊ और निरस होने से बचाने के लिए भट्ट जी हास्य व्यंग्य का सहारा भी लेते हैं। इनके निबन्धों में उर्दू शेरो शायरी भी कहीं कहीं दिखाई देती है।

6.4 : पाठ सार

साहित्य जन समुदाय के हृदय का विकास है निबन्ध में लेखक यह बताने का प्रयास करते हैं कि प्रत्येक जाति द्वारा लिखा गया साहित्य उस जाति में रहने वाले लोगों की भावनाओं को इंगित करता है। वेदों का प्रमुख उद्देश्य केवल जनता का कल्याण था। यहाँ पर रीति नीति तथा आदर्श इसीलिए स्थापित किए गए थे ताकि जनता में किसी तरह की कोई अनैतिकता और अराजकता उत्पन्न न हो। वैदिक साहित्य श्रंगारिकता और राजनीति के कुट विचारों से एकदम अलग था। वहाँ पर केवल जनता के बारे में बात की गई है। किसी तरह का छल कपट और बनावट उसमें नहीं दिखाई देती। आर्य जाति की विशेषताओं का पता चलता है। जैसे जब जनसंख्या बढ़ने लगी तो उन्होंने सभी के लिए नियम बनाये जिससे लोगों में आपसी समझ और साझेदारी बनी रहे।

रामायण में राम की कल्पना एक सफल तपस्वी शासक के रूप में की है। जो अपने मधुर भाषण तथा आदर्श व्यवहार से आदिवासी जनजातियों का हृदय जीत लेता है। राम स्वयं भगवान थे

लेकिन रावण जैसे शत्रु को भी तुच्छ नहीं समझते हैं। व्यास द्वारा रचित महाभारत में राजनीति के कई रूप दिखाई देते हैं। एक तरफ दुर्योधन अपने भाइयों से लड़ने के लिए तैयार है। दूसरी तरफ श्री कृष्ण सत्य की विजय के लिए और असत्य को हराने के लिए सारा महाभारत रचते हैं। हर कोई अपने को सही साबित करने के लिए इसमें छल करता है।

बौद्ध धर्म की प्रचलित धाराओं के साहित्य की विशेषताओं का अध्ययन किया। वेदों की प्रमुखता जातिवाद थी। उन्होंने इसका अच्छे तरीके से निर्वाह किया था। वेदों द्वारा निर्धारित की गई कई कुरीतियां अत्यंत घिनौनी थी। जिसके विरोध में बौद्धों ने अहिंसा को अपने साहित्य का केन्द्रबिन्दु बनाया। संस्कृत साहित्य की भी अच्छे से उन्नति हो रही थी। कालिदास भवभूति, भारवी, श्रीहर्ष, बाण कई संस्कृत के कवि थे। जिन्होंने संस्कृत को उन्नति के शिखर पर पहुँचा दिया और संस्कृत साहित्य को विकसित किया। पुराण समय के साथ साहित्य में बदलाव लेकर आए। ये वेदों से अलग आधुनिक विचारों को श्रेय देते थे। पुराणों के बाद तन्त्रों का समय आता है । तंत्र हिंदू सभ्यता के लिए बहुत ज्यादा हानिकारक सिद्ध हुए क्योंकि इन्होंने शुद्र देवी देवताओ भैरों, काली, डाकिनी, शाकिनी, भूत, प्रेत तक के पूजन को फैला दिया। मद-मांस का प्रचार किया। इनका असर पुराणों के साथ साथ आने वाले साहित्य पर भी पड़ा।

आदिकालीन साहित्य के रासों और भक्तिकालीन साहित्य में प्रेममार्गी पदमावत् पर प्रकाश ड़ाला है। भक्तिकालीन साहित्य कई भागों में बटा और यह भाग उप-भागों में बटते चले गए। विशेष कर वैष्णव संप्रदाय राम कृष्ण से होते-होते यह कृष्ण में ही कई उपखंडों में विभाजित होने लग गया। यह लोग आपस में ही अलग-अलग विचारधारा का निर्वाह करते हुए एक दूसरे से परहेज करने लगे। संस्कृत, वैदिक संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश जैसी भाषाओं के पश्चात ब्रजभाषा, अवधी, खड़ी बोली, मैथिली आदि साहित्य की भाषाएं बनने लगी। लेखक इन सभी भाषाओं के गुणों से अवगत कराते हैं जैसे कुछ भाषाएँ बोलने में कर्कश है और कुछ मधुर हैं।

6.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- आर्यों द्वारा रचित साहित्य केवल समाज में एकता और शांति बनाये रखने के लिए था। इसमें किसी तरह का आड़म्बर नहीं था। न तो आज के राजनीतिज्ञों की कपटधर्मी बाते थी न ही संस्कृत के महान कवियों की भाँति श्रंगारप्रियता थी। आर्यों की जाति व्यवस्था के पीछे समाज कल्याण की भावना निहित थी।
- वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण के नायक राम अपनी कर्तव्यपरायणता और त्याग के कारण आजीवन सम्मान, प्रेम के अधिकारी बने। दुसरी तरफ महाभारत के युधिष्ठिर जो सत्यवादी थे किंतु अपने स्वार्थ के चलते हुए द्रोणाचार्य से झूठ कहते हैं और पाप के भागीदार बनते हैं। रामायण और महाभारत दोनों के लेखन काल में अंतर आ गया था जो उनके लेखकों की सोच में दिखाई देता है। वेदों की कुरीतियों का फायदा बौद्ध

साहित्य के निर्माताओं ने उठाया उन्होंने इन्हीं कुरीतियों का विरोध कर अपने धर्म का प्रचार किया।

- संस्कृत भाषा के विकास और उत्कर्ष की जानकारी मिलती है। संस्कृत और प्राकृत भाषा में उस समय भेद किया जाता था।
- पुराणों की रचना होने लगी, पुराण लोगों में अत्यधिक प्रिय होने लगे। दूसरी तरफ तन्त्रों का भी विकास हुआ इन तन्त्रों ने सभी को आकर्षित किया। यही कारण था कि पुराण में भी तन्त्रों का जिक्र किया जाने लगा।
- भक्तिकाल में रचित साहित्य एक समय के बाद कई खण्डों में विभाजित हो गया विशेषकर वैष्णव सम्प्रदाय के राम और कृष्ण। कृष्ण धारा कई उपखण्डों में बिखर गई और ये लोग आपस में ही भेद भाव करने लगे।
- पाली प्राकृत, अपभ्रंश के पश्चात भारत में ब्रजभाषा, अवधी, खड़ी बोली, मैथिली आदि भाषाओं में साहित्य की रचना हो रही थी। इनकी विशेषताओं की जानकारी मिलती है। गद्य साहित्य के लिए खड़ीबोली को स्वीकृति मिली।

6.6 : शब्द संपदा

1. मुखच्छवि – चेहरे की छवि
2. विकृत - बिगाड़ा हुआ रूप, टेढ़ा किया हुआ
3. प्रफुल्लित - फुर्तीला, तेजमान, प्रफुल्लित,
4. अनुल्लंघनिय - भ्रष्ट न करने योग्य, सत्ताशील, धृष्ट
5. परितापजनित - पाश्चाताप उत्पन्न होना
6. अश्रुपात - अश्रुप्रवाह, आँसू बहाना
7. आभ्यंतरिक - घर के भीतर होनेवाला, अन्दर होने वाला
8. परिस्फुट - प्रकट होना, फूटना, विकसित होना
9. कानन - बड़ा जंगल, घना वन
10. विहंग - पंछी, पक्षी
11. कुजन – पक्षियों की कलरव क्रिया
12. कृत्रिम सौहार्द - आडम्बर से भरा सद्भाव या मैत्री
13. परिप्लावित - जलसिक्त; गीला; सराबोर; जलार्द्र
14. सस्त्रीक - पत्नी सहित
15. अग्रभाग - आगे का हिस्सा

16. पौरुष - पुरुष में सामान्य रूप से होनेवाले गुण जैसे(शौर्य तो पौरुष का प्रतीक है)
17. दर्प - घमंड, अभिमान
18. स्मित - मंद हास्य, धीमी हँसी
19. बरकाया - कोई अनिष्ट अथवा अप्रिय घटना या बात न होने देना।
20. उक्ति - कथन
21. युक्ति - मिलन, योग ढंग, तरक़ीब।
22. मुकाबिले - बराबरी, समानता
23. परिष्कृत - शुद्ध, साफ़, स्वच्छ, परिमार्जित, प्रांजल
24. संहिताएँ - वह सबसे बड़ी परम और नित्य चेतन सत्ता जो जगत का मूल कारण और सत्, चित्त, आनन्दस्वरूप मानी गयी है।

6.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खण्ड (अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में लिखिए।

1. 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है' निबन्ध का सारांश लिखिए।
2. 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है' निबन्ध की विवेचना कीजिए।
3. महाभारत के युधिष्ठिर रामायण के राम से किस प्रकार अलग थे|
4. आर्यों के साहित्य और वर्तमान साहित्य साहित्य की तुलनात्मक विवेचना कीजिए।

खण्ड (ब)

लघु प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में लिखिए।

1. इतिहास अध्ययन और साहित्य अध्ययन में क्या अंतर है?
2. वैदिक और आधुनिक संस्कृत के विकसित रूप को लेखक ने किस प्रकार प्रस्तुत किया है|
3. आदर्श समाज की स्थापना के लिए आर्यों ने क्या कदम उठाए।
4. राम के किन गुणों की चर्चा निबन्ध में की गई है (जो सभी को अपना दास बना लेती है) ?
5. महाभारत के संदर्भ में "सूच्यग्रं नैव दास्यामि बिना युद्धेन केशव" पंक्तियाँ की व्याख्या कीजिए।

6. व्यास द्वारा रचित महाभारत में क्या-क्या गुण थे?

7. रामायण से महाभारत तक आते-आते भारतीय साहित्य में क्या बदलाव दिखाई दिया?

8. संस्कृत नाटकों में संस्कृत और प्राकृत भाषा का प्रयोग किस प्रकार किया जाता था?

9. पुराण साहित्य की विशेषताएं बताएं|

10. पुराण साहित्य को तंत्रों ने कैसे प्रभावित किया?

11. भक्तिकालीन साहित्य की किन विशेषताओं पर लेखक ने प्रकाश डाला है?

12. वैष्णव संप्रदाय में ज्यादा भिन्नता की वजह क्या है?

13. बज्रभाषा की विशेषता क्या है?

14. पृथ्वीराज रायसा और पदमावत की कथावस्तु लिखिए|

खण्ड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. कौन से राजा संस्कृत के एक-एक श्लोक के लिए असंख्य इनाम कवियों को देते थे?

   अ) राजा भोज आ) विक्रमादित्य इ) अशोक ई) जगन्नाथ पंडित

2. “सूच्यग्रं नैव दास्यामि बिना युद्धेन केशव” पंक्तियाँ किसने कही है?

   अ) अर्जुन आ) दुशासन इ) दुर्योधन ई) नकुल

3. पृथ्वीराज रासो कौन से काल की रचना है?

   अ) आधुनिक काल इ)भक्तिकाल
   आ)रीतिकाल ई) आदिकाल

4. पंचायतन पूजा में किसका विश्वास था?

   अ) वेदों आ) पुराणों इ) उपनिषदों ई) तन्त्रों

5. लेखक कौन सी भाषा को जनानी बोली कहते हैं?

   अ) भोजपुरी आ) ब्रजभाषा इ) मरहठी ई) बंगाली

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. संस्कृत के साहित्य के लिए विक्रमादित्य का समय .... कहलाता है।
2. ....ने शुद्र देवता भैरों, काली, डाकिनी, शाकिनी, भूत, प्रेतों के पूजन को फैला दिया।
3. वेद के अधिकारी शुद्ध ब्राह्मण के लिए .... या .... अति निषिद्ध है।
4. अतः एव संस्कृत नाटकों में नीच पात्र की भाषा .... और उत्तम पात्र ब्राह्मण या राजा आदि की भाषा .... रखी गई है।

5. यूनान देश में ...., रूम देश में ...., इटली में ...., इंग्लैंड में चासर और मिल्टन अपनीअपनी असाधारण प्रतिभा से मनुष्य जाति का गौरव बढ़ाने में कुछ कम न थे-।

III. सुमेल कीजिए।

1. नाथ	अ) 84
2. सिद्ध	आ) पाली
3. पृथ्वीराज रासो	इ) 9
4. भाषा	इ) चंद बरदाई

6.8 : पठनीय पुस्तकें

1. बालकृष्ण भट्ट रचनावली, समीर कुमार पाठक
2. बालकृष्ण भट्ट निबन्धों की दुनिया, निर्मल जैन
3. बालकृष्ण भट्ट, बृजमोहन व्यास
4. भट्ट निबन्धावली, हिन्दी साहित्य सम्मेलन
5. बालकृष्ण भट्ट रचना संचयन, गंगा सहाय मीणा

इकाई 7 : निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी: एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 मूल पाठ: निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी: एक परिचय

7.3.1 निबंधकार का जीवन वृत्त

7.3.2 निबंधकार की रचना यात्रा

7.3.3 निबंधकार की वैचारिकता के विविध आयाम

7.3.4 निबंधकार का हिन्दी साहित्य में स्थान

7.4 पाठ सार

7.5 पाठ की उपलब्धियां

7.6 शब्द संपदा

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

7.8 पठनीय पुस्तकें

7 1.प्रस्तावना

निबंध ऐसी गद्य रचना है जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी एक विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता और सजगता के साथ किया जाता है। 19 वी सदी में गद्य की एक नई विधा का विकास हुआ जिसे निबंध के नाम से जाना गया। निबंध गद्य लेखन की एक प्रसिद्ध विधा है। निबंध का उद्देश्य उपदेश देना और मनोरंजन करना ही नहीं बल्कि अपने आसपास की घटनाओं के प्रति सचेत करना तथा विषम परिस्थितियों से संघर्ष करने के लिए विचार उत्पन्न करना माना जाता है। वर्तमान समय में इसका लक्ष्य मानव जीवन की विभिन्न समस्याओं और संवेदना को व्यक्त करना है। हिन्दी साहित्य को आधुनिक और विवेकसम्मत बनाने के जो नवजागरणकालीन सांस्कृतिक उद्यम हुए, उनमें निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी जी की महत्वपूर्ण भूमिका रही। बदलाव का साहस उन्हें परंपरा से मिला। गुलेरी जी आधुनिक हिन्दी साहित्य में द्विवेदी युग के महान साहित्यकार माने जाते हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी गुलेरी जी को अनेक भाषाओं का ज्ञान था। वह संपूर्ण जीवन साहित्य साधना में लगे रहे। मात्र 39 वर्ष की अल्प आयु में ही उनका देहावसान हो गया। साहित्य जगत में उनके सृजन के

लिए हमेशा स्मरण किया जाएगा। चंद्रधर शर्मा गुलेरी के जीवन परिचय तथा रचना यात्रा इस पाठ के माध्यम से व्यक्त हुए हैं। पाठक इसका लाभ उठा पाएंगे।

निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी की इस परिचयात्मक इकाई में उनके जीवन वृत्त के अंतर्गत जन्म, परिवार, शिक्षा-दीक्षा, उनके जीवन की उपलब्धियां और सम्मान के साथ-साथ उन्हें जीवन में कितना संघर्ष करना पड़ा;इसकी अभिव्यक्ति के साथ-साथ उनकी रचना यात्रा तथा वैचारिकता के विविध आयामों की चर्चा है। उन्होंने जो हिन्दी साहित्य को दिया,उनकी वह रचनाएं कितनी प्रासंगिक हैं? इन्हीं को ध्यान में रखते हुए हिन्दी साहित्य में उनका स्थान कितना महत्वपूर्ण है? इसकी भी चर्चा इस इकाई में विस्तार से हुई है। हम सभी जानते हैं कि रचनाकार के जीवन का संघर्ष और उसके आसपास की परिस्थितियाँ जो उसे प्रभावित करती हैं, वही उसकी रचनाओं के केंद्र में रहते हैं और उसकी वैचारिक दृष्टि को प्रकट करते हैं।

7.2 : उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में विद्यार्थी गुलेरी जी और उनकी निबंध लेखन कला को पढ़ेंगे तथा विद्यार्थी -

- निबंध साहित्य के साथ-साथ गुलेरी जी की लेखन प्रक्रिया तथा विशेषताओं को जान और समझ पाएंगे।
- निबंध के उद्भव और विकास को समझ कर अनुभव साझा कर पाएँगे ।
- गुलेरी जी की लेखन कला और अभिव्यक्ति शैली को जान पाएंगे।
- मानव और समाज के लिए निबंधों का क्या महत्व है यह जान सकेंगे।
- विद्यार्थी लेखकीय उद्देश्य को समझ पाएंगे।
- विद्यार्थी निबंध लेखन कला को समझ पाएंगे।

7.3 : मूल पाठ : निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी : एक परिचय

7.3.1 निबंधकार का जीवन वृत्त

चंद्रधर शर्मा गुलेरी का जन्म राजस्थान की वर्तमान राजधानी जयपुर में हुआ था। उनके पिता पंडित शिवराम शास्त्री मूलत: हिमाचल प्रदेश के गुलेर गांव के निवासी थे। पंडित शिवराम शास्त्री राज सम्मान पाकर जयपुर राजस्थान में बस गए थे। उनकी तीसरी पत्नी लक्ष्मी देवी ने 7 जुलाई सन् 1883 में चंद्रधर को जन्म दिया। इनका घर में ही संस्कृत भाषा, वेद, पुराण आदि के अध्ययन, पूजा-पाठ, संध्या वंदन तथा धार्मिक कर्मकांड का वातावरण मिला। आगे चलकर उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा भी प्राप्त की और आगे की पढ़ाई के लिए इलाहाबाद आ गये

जहां प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. और कोलकाता विश्वविद्यालय से एम.ए. किया। चाहते हुए भी पारिवारिक समस्याओं के कारण वह आगे की पढ़ाई जारी नहीं रख पाए; हालांकि उनका स्वाध्याय और लेखन कार्यक्रम निर्बाध गति से चलता रहा। 22 वर्ष की अवस्था में गुलेरी जी का विवाह पद्मावती से हुआ। बीस वर्ष की उम्र के पहले ही उन्हें जयपुर की वेधशाला के जीर्णोद्धार और उससे संबंधित शोध कार्य के लिए गठित मंडल में चुन लिया गया, जिसके अपूर्व और अतुलनीय योगदान के लिए उन्हें जाना जाता है। उन्होंने कैप्टन गैरेट के साथ मिलकर 'दी जयपुर ऑब्जर्वेटरी एंड इट्स बिल्डर्स' शीर्षक से अंग्रेजी ग्रंथ की रचना की। प्राचीन इतिहास और पुरातत्व उनके प्रिय विषय रहे। उनकी गहरी रुचि भाषा विज्ञान में थी।है एक पत्रकार होने के साथ-साथ लेखक और अध्यापक भी थे। उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन साहित्य की साधना में लगा दिया।

अपने अध्ययन काल में उन्होंने सन 1900 में जयपुर में नागरी मंच की स्थापना में योग दिया और सन 1902 में मासिक पत्र 'समालोचक' के संपादन का भार भी संभाला। इसके साथ ही उन्हे कुछ वर्ष काशी की नगरी प्रचारिणी सभा के संपादक मंडल में भी सम्मिलित किया गया। उन्होंने देवी प्रसाद ऐतिहासिक पुस्तक माला और सूर्य कुमारी पुस्तक माला का संपादन किया, साथ ही नागरी प्रचारिणी सभा के सभापति भी रहे। जयपुर के राज पंडित कुल में जन्म लेने वाले गुलेरी जी का राजवंशों से घनिष्ठ संबंध रहा। वे पहले खेतड़ी नरेश जय सिंह के और फिर जयपुर राज्य के सामंत पुत्रों के अजमेर के मेयो कॉलेज में अध्ययन के दौरान उनके अभिभावक रहे। सन 1916 में उन्होंने मेयो कॉलेज में ही संस्कृत विभाग के अध्यक्ष का पद संभाला और सन 1920 में पंडित मदन मोहन मालवीय के आग्रह के कारण उन्होंने काशी जाकर काशी हिंदू विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास और धर्म से संबंधित महेंद्र चंद्र नंदी पीठ के प्रोफेसर का कार्यभार ग्रहण किया। इसी बीच परिवार में अनेक दुखद घटनाओं के आघात भी उन्हें झेलने पड़े। गुलेरी जी की विद्वता का ही प्रमाण और प्रभाव था कि उन्होंने सन् 1904 से 1922 तक अनेक महत्वपूर्ण संस्थानों में अध्यापन कार्य किया। 'इतिहास दिवाकर' की उपाधि से सम्मानित हुए और पंडित मदन मोहन मालवीय के आग्रह पर 11 फरवरी 1922 ई को काशी हिंदू विश्वविद्यालय के प्राच्य विभाग के प्राचार्य बने। सन 1922 में 12 सितंबर को पीलिया के बाद मात्र 39 वर्ष की अल्पायु में ही उनका देहावसान हो गया।

बोध प्रश्न -

- निबंध लेखन का उद्देश्य क्या होता है?
- निबंध कैसी विधा है?
- चंद्रधर शर्मा गुलेरी का जन्म कहां हुआ था?

- चंद्रधर शर्मा गुलेरी के माता-पिता का नाम क्या था?

7.3.2 निबंधकार की रचना यात्रा

हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले गुलेरी जी हिन्दी के कथाकार, व्यंग्यकार तथा निबंधकार थे। गुलेरी जी ने अपना संपूर्ण जीवन साहित्य की साधना में लगा दिया। वहीं हिन्दी साहित्य की सभी विधाओं में उन्होंने साहित्य का सृजन किया। 'उसने कहा था' कहानी हिन्दी साहित्य में मील का पत्थर मानी जाती है। उनकी विभिन्न रचनाओं को विद्यालय एवं महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में पढ़ाया जाता है। इसके साथ ही अनेक विद्यार्थियों ने उनके साहित्य पर पीएचडी की डिग्री भी प्राप्त की है। उन्होंने कुछ कविताएं भी लिखी हैं जिनके बारे में कम ही जानकारी मिलती है। 'भारत की जय', 'झुकी कमान', 'एशिया की विजय दशमी', 'स्वागत' आदि उनकी कविताएं हैं। निबंध अत्यंत परिष्कृत और प्रौढ़ गद्य के प्रतीक हैं। इनमें एक विशेष प्रकार की चेतना और जीवंतता है। इसमें भावना के साथ विचारों को एक साथ बुन दिया गया है। चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने उत्तरी अपभ्रंश को नगरी प्रचारिणी पत्रिका में 'पुरानी हिन्दी' नाम दिया। थोड़ी सी ही आयु में गुलेरी जी ने अध्ययन और स्वाध्याय के द्वारा हिन्दी और अंग्रेजी के अतिरिक्त संस्कृत, प्राकृत, बंगला, मराठी आदि के साथ-साथ जर्मन और फ्रेंच भाषा का ज्ञान हासिल किया। उनकी रुचि का क्षेत्र बहुत विस्तृत था। धर्म, ज्योतिष, इतिहास, पुरातत्व दर्शन, भाषा विज्ञान, शिक्षा शास्त्र और साहित्य से लेकर संगीत, चित्रकला, लोककला, विज्ञान, राजनीति तथा समसामयिक सामाजिक स्थितियां तथा रीति नीति तक उनकी दृष्टि जाती थी। उनकी अभिरुचि और सोच को गढ़ने में स्पष्ट ही इस विस्तृत पृष्ठभूमि का प्रमुख हाथ रहा और इसका परिचय उनके लेखन की विषय वस्तु तथा उनके दृष्टिकोण में बराबर मिलता रहता है। गुलेरी जी की सृजनशीलता के मुख्य चार पड़ाव देखे जा सकते हैं- समालोचक सन् 1903 से लेकर 1906 तक,मर्यादा सन् 1911 से 1912 तक,प्रतिभा सन् 1918 से 1920 तक और नागरिक प्रचारिणी पत्रिका सन् 1920 से लेकर 1922 तक। इन पत्रिकाओं में गुलेरी जी का रचनाकार व्यक्तित्व बहु विध उभर कर सामने आया है। उन्होंने उत्कृष्ट निबंधों के अतिरिक्त तीन कहानियां लिखीं।

उनतालीस वर्ष की जीवन अवधि में उन्होंने कहानी, लघु कथाएं, आख्यान,ललित निबंध, गंभीर विषयों पर विवेचनात्मक निबंध, शोध पत्र, समीक्षाएं, संपादकीय टिप्पणियां, पत्र विधा में लिखी टिप्पणियां, समकालीन साहित्य, समाज, राजनीतिक, धर्म, विज्ञान, कला आदि पर लेख तथा वक्तव्य; वैदिक-पौराणिक साहित्य, पुरातत्व,भाषा आदि पर प्रबंध, लेख तथा टिप्पणियां लिखीं। उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' का प्रकाशन सरस्वती में सन्

1915 ईस्वी में हुआ। वह तीन कहानी लिखकर अमर हो गए। उन्होंने 'कछुआ धर्म' और 'मारेसि मोहि कुठाऊँ' नामक निबंध और पुरानी हिन्दी नामक लेखमाला भी लिखी। महर्षि च्यवन की रामायण' उनकी शोध पर पुस्तक थी।

गुलेरी जी की प्रसिद्ध रचनाओं में कहानियाँ ,निबंध,आलोचनाआदि आते हैं। इन्होंने तीन ही कहानी लिखकर प्रसिद्धि पाई। 'सुखमय जीवन' 1911 में, 'बुद्धू का कांटा' 1914 में, 'उसने कहा था, 1915 में। प्रसिद्ध निबंधों में 'मारेसि मोहि कुठाऊँ, 'कछुआ धरम'। आलोचना - 'पुरानी हिन्दी'आदि । 'सुमिरिनी के मनके' नाम से तीन लघु निबंध- 'बालक बच गया', 'घड़ी के पुर्जे' और 'ढेले चुन लो' पाठ पुस्तक में दिए गए हैं। बालक बच गया निबंध का मूल प्रतिपाद्य है शिक्षा ग्रहण की यही सही उम्र है । लेखक मानते हैं कि हमें व्यक्ति के मानस के विकास के लिए शिक्षा को प्रस्तुत करना चाहिए न कि शिक्षा के लिए मनुष्य को। हमारा लक्ष्य है मनुष्य और मनुष्यता को बचाए रखना। मनुष्य बचा रहेगा तो समय आने पर शिक्षित किया जा सकेगा। लेखक ने अपने समय की शिक्षा प्रणाली और शिक्षकों की मानसिकता को प्रकट करने के लिए अपने जीवन के अनुभव को पाठकों के समक्ष अत्यंत व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया है और इस उदाहरण से यह बताने की कोशिश की है कि शिक्षा हमें बच्चों पर लादनी नहीं चाहिए बल्कि उसके मानस में शिक्षा की रुचि पैदा करने वाले बीज डाले जाएँ।

निबंध - शैशुनाक की मूर्तियां, आंख,कछुआ धर्म,संगीत,पुरानी हिन्दी, देवकुल, मारेसि मोहिं कुठाऊँ ।

कहानी - उसने कहा था, सुखमय जीवन, बुद्धू का कांटा

कवितायें - भारत की जय, एशिया की विजयदशमी, आहितागिन, स्वागत,झुकी कमान, ईश्वर से प्रार्थना, वेनॉक बर्न।

लघु निबंध - बालक बच गया, घड़ी के पुर्जे, ढेले चुन लो।

उनके लेखन की रोचकता, उसकी प्रासंगिकता के अतिरिक्त प्रस्तुति की अनोखी भंगिमा में भी निहित है। उस युग के कई अन्य निबंधकारों की तरह गुलेरी जी के लेखन में भी मस्ती तथा विनोद भाव की एक अंतरधारा लगातार प्रवाहित होती रहती है। धर्म सिद्धांत, अध्यात्म जैसे कुछ गंभीर विषयों को छोड़कर लगभग हर विषय के लेखन में यह विनोद भाव प्रसंग के चुनाव में, भाषा के मुहावरों में, उद्धरणों और उक्तियों में बराबर झंकृत होता रहता है। जहां

आलोचना कुछ अधिक भेदक होती है, वहां यह विनोद व्यंग्य में बदल जाता है, जैसे शिक्षा, सामाजिक रूढ़ियों आदि संबंधों को लेकर जो लेख लिखे गए वह कभी गुदगुदा कर कभी झकझोर कर पाठकों को रुचि के साथ बाँधे रहती हैं।

बोध प्रश्न:

- निबंध किसका प्रतीक है?
- चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने उत्तरी अपभ्रंश को क्या नाम दिया है?
- निबंध लेखन के तीन मुख्य उद्देश्य क्या है?

7.3.3 निबंधकार की वैचारिकता के विविध आयाम

किसी भी रचनाकार को उसकी अभिव्यक्ति शैली और भाषिक सौंदर्य के कारण अलग ही पहचाना जाता है। रचनाकार कितना लिखता है?यह अधिक मायने नहीं रखता बल्कि वह क्या लिखता है? इसका ज्यादा महत्व होता है क्योंकि, वह जो कुछ लिखता है वह समाज के लिए कितना मंगलकारी होता है और उसी से उसकी पहचान बनती है। गुलेरी जी ने सदैव अपनी दृष्टि समाज, धर्म, राजनीति, दर्शन पर रखी और वहां जो कुछ भी उन्होंने देखा-समझा;उन्ही भावनाओं को अपनी शैली के द्वारा व्यक्त किया। यही कारण है कि केवल तीन कहानियाँ लिखकर अमर हो जाने वाले रचनाकार की एक कहानी 'उसने कहा था'हिन्दी साहित्य जगत में मील का पत्थर मानी जाती है। यही नहीं उनके निबंधों में भी एक अलग प्रकार का सौंदर्य झांकता दिखाई देता है जो विभिन्न आयामों से जुड़ा हुआ है। निबंध अत्यंत परिष्कृत और प्रौढ़ गद्य का प्रतीक है। निबंध का शाब्दिक अर्थ है- सूत्रों में आबद्ध गठी हुई रचना। इसमें लघु और अत्यधिक संगठित तथा समास शैली में लिखे गए विचार होते हैं और प्रबंध बड़े आकार का तथा व्याख्यात्मक होता है। निबंध की सहजता प्रबंध में नहीं मिलती। निबंधकार ने अनुच्छेद बनाकर निबंध लिखे हैं जिसमें वाक्य छोटे-छोटे हैं और निबंधों की भाषा सरल तथा अर्थ को स्पष्ट करती है। निबंधकार ने वाक्य सुगठित और विषय के अनुकूल लिए हैं। वह जो भी व्यक्त करना चाहते हैं उनके सभी विचार परस्पर संबंद्ध दिखाई देते हैं। उन्होंनेअपने भावों और विचारों को सुसंगठित, व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध तरीके से प्रस्तुत किया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने यह माना है कि- गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है।.... आधुनिक पाश्चात्य लक्षणों के अनुसार निबंध उसी को कहना चाहिए जिसमें व्यक्तित्व अर्थात व्यक्तिगत विशेषता हो।" उनके अनुसार भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है, इसीलिए गद्य शैली के लिए अधिकतर निबंध को ही चुना जाता है।

विचारात्मक निबंधों में बुद्धि की प्रधानता होती है और विचार का अधिकार अन्य तत्वों पर रहता है। लेखक ने ऐसे निबंधों में समाज, परंपरा, साहित्यिक आस्था, एक नवीन वैचारिक दृष्टि और नवीन संदेश दिया है। विचारात्मक निबंधों में लेखक ने अपने सीमित दायरे में चिंतन की अधिक से अधिक बातों को समेट लिया है। वैचारिक पृष्ठभूमि में लिखे गए निबंध सुगठित और नियंत्रित होते हैं। इन निबंधों में विषय की अनेकरूपता मिलती है। राजनीति से लेकर संस्कृति, समाज, परंपरा, नैतिकता, रस, भाव या साहित्य के किसी भी विषय को लेकर निबंध लिखे गए हैं। इन निबंधों में बुद्धि तत्व प्रमुख है। भावना और कल्पना को इन निबंधों में अधिक प्राधान्य नहीं मिला है, इसलिए ऐसे निबंधों में कभी-कभी नीरसता भी आ जाती है, लेकिन भावना और कल्पना के सहयोग से लेखक ने उन्हें रंजन बनाने का प्रयास किया है। इन निबंधों में विचारों का ज्ञान रस भरा है। भाषा सांकेतिक, संक्षिप्त है। प्रसाद शैली इन निबंधों की विशेषता है।

उन्होंने सबसे मन की संकीर्णता त्याग कर उस भव्य कर्मक्षेत्र में आने का आह्वान किया जहां सामाजिक जाति भेद नहीं, मानसिक जाति भेद नहीं। उनकी वैचारिक पृष्ठभूमि की अभिव्यक्ति में भाषा और शैली का विशेष योगदान रहा है। अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए मुख्यतः वार्तालाप शैली और किस्सा बयानी का लहजा अपनाया है। यह साहित्यिक भाषा के रूप में खड़ी बोली को सँवरने का काल था, अतः शब्दावली और प्रयोग के स्तर पर सामरस्य और परिमार्जन की कहीं-कहीं कमी भी दिखाई देती है। इन्होंने अपने लेखन में उद्धरण और उदाहरण बहुत दिए हैं। इससे आमतौर पर उनका तथ्य और अधिक स्पष्ट तथा रोचक बन पड़ा है। कई स्थानों पर यह पाठक से उदाहरण की पृष्ठभूमि और प्रसंग के ज्ञान की मांग भी करता है। हिन्दी भाषा और शब्दावली के विकास में उनके सकारात्मक योगदान की उपेक्षा कभी नहीं की जा सकती। वह खड़ी बोली का प्रयोग अनेक विषयों और प्रसंगों में कर रहे थे; शायद किसी भी अन्य समकालीन विद्वानों से बढ़कर कर रहे थे,चाहे साहित्य हो, पुराण प्रसंग हो, इतिहास हो, विज्ञान, भाषा विज्ञान, पुरातत्व, धर्म, दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र कितने भी विषय हों; इन विषयों की वाहक उनकी भाषा स्वाभाविक रूप से ही अनेक प्रवृत्तियों और शैलियों के लिए गुंजाइश बना रही थी। हर संदर्भ में उनकी भाषा आत्मीय तथा सजीव रहती थी, भले ही वह कहीं-कहीं जटिल दिखाई देती हो। गुलेरी जी की वैचारिकता उनकी भाषा और शैली पर ही टिकी हुई नहीं थी बल्कि युग- संधि पर खड़े एक विवेकी मानस का और उस युग के मानसिकता का भी प्रमाणिक दस्तावेज उनकी रचनाएं हैं। प्रोफेसर नामवर सिंह जी कहते हैं- “गुलेरी की हिन्दी में सिर्फ एक नया गद्य या नयी शैली नहीं गढ़ रहे थे बल्कि वे वस्तुतः एक नई चेतना का

निर्माण कर रहे थे और यह नया गद्य नई चेतना का सर्जनात्मक साधन है।" निबंधकार के निबंधों में वैचारिकता के विविध आयाम देखे जा सकते हैं।

बोध प्रश्न -

- निबंध में विचारों को कैसे पिरोया जाता है?
- हिन्दी निबंध किस युग की देन है?

7.3.4 निबंधकार का हिन्दी साहित्य में स्थान

बदलते हुए समय में यदि हम अपने चारों ओर दृष्टि घुमाएं तो यह देखने में आता है कि हमारे चारों ओर आज जो स्थितियां हैं इन स्थितियों में भी गुलेरी जी की रचनाएं अत्यंत प्रासंगिक हैं और यही कारण है कि निबंधकार का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान है और उनकी रचनाएं तथा विशेषकर निबंध तथा कहानी हिन्दी साहित्य में मील के पत्थर माने जाते हैं। गुलेरी जी के अमूल्य योगदान से आज निबंध विधा विषय, कथ्य, शिल्प की दृष्टि से नए-नए आयामों को आत्मसात करती हुई संतोषजनक पड़ाव को तय कर चुकी है। निबंधकार के भावपक्ष की विविधता और गहनता इसकी कलात्मकता व साहित्यिक महत्ता की द्योतक है। विषय की व्यापकता, सूक्ष्मता, भाषा की गंभीरता, प्रवाहमयी शैली और लोक संग्रह की भावना की दृष्टि से गुलेरी जी के निबंध अद्वितीय हैं। चाहे निबंध हों या कहानियाँ विश्व की श्रेष्ठ रचनाओं की पंक्ति में आगे खड़ी होती हैं। गुलेरी जी की लेखन कला को कई आयामों में देखा जा सकता है। इनकी लेखन कला में मानवीय धरातल पर आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना दिखाई देती है। जीवन में जो कुछ सत्य शिव और सुंदर है उसी को दर्शाना लेखक का मुख्य उद्देश्य रहा परंतु यथार्थ चित्रण के लिए साहित्य की उपयोगिता को तिरस्कृत नहीं किया।

निबंधकार की लेखन कला में विषय वस्तु या कथ्य का सौंदर्य अलग से दिखाई देता है। गुलेरी जी के निबंध कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट दिखाई देते हैं। संवाद, मनोविज्ञान, भाषा-शैली, उद्देश्य, मानवतावाद आदि ऐसे अनेक आयाम हैं जो गुलेरी जी के निबंधों में विशेष रूप से दिखाई देते हैं। समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक स्थितियों से उनके गंभीर जुड़ाव और इनसे संबद्ध उनके चिंतन तथा प्रतिक्रियाओं में उनकी आधुनिकता प्रकट होती है। अनेक प्रसंगों में गुलेरी जी अपने समय से इतना आगे थे कि उनकी टिप्पणियां आज भी हमें अपने चारों ओर दिखाई दे जाती हैं और कुछ सोचने को मजबूत करती हैं। आज से सौ वर्ष पहले उन्होंने बालक-बालिकाओं के स्वस्थ्य चारित्रिक विकास के लिए सह शिक्षा को आवश्यक माना जो आज भी प्रासंगिक ही नहीं अपितु हमारे आसपास दिखाई भी दे जाता है। यह सब आज शहरी जनों को इतिहास के रोचक प्रसंग लग सकते हैं किंतु पूरे देश में यहां-वहां फैले शिक्षा और अंधविश्वास

के माहौल में गुलेरी जी की यह बातें आज भी संगत और विचारणीय हैं। भारतवासियों की कमजोरी का उन्होंने लगातार जिक्र किया, विशेष कर सामाजिक, राजनीतिक संदर्भ में उन्होंने आपसी कलह और फूट को इसका कारण माना। अपने निबंधों में उन्होंने इसी का वर्णन किया है। उन्होंने छुआछूत को सनातन धर्म के विरुद्ध माना। अर्थहीन कर्मकांडों और ज्योतिष से जुड़े अंधविश्वासों का उन्होंने जगह-जगह पर खंडन किया है। उन्होंने केवल शास्त्रमूलक धर्म को बाह्य धर्म माना और धर्म को कर्मकांड से ना जोड़कर इतिहास तथा समाजशास्त्र से जोड़ा। धर्म का अर्थ उनके लिए सार्वजनिक प्रीति भाव है जो सांप्रदायिक ईर्ष्या -द्वेष को खराब मानता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में उदारता, सौहार्द्र और मानवतावाद को ही धर्म का प्राण तत्व माना है तथा इसी तत्व की पहचान बेहद जरूरी मानी है। उन्होंने धर्म को कर्मकांड नहीं बल्कि आचार-विचार, लोक कल्याण और जन सेवा से जोड़ा है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण निबंधकार का हिन्दी साहित्य में योगदान अविस्मरणीय है।

बोध प्रश्न -

- गुलेरी जी की लेखन कला की क्या विशेषताएं हैं?
- निबंधकार ने धर्म को किस जोड़ा है?
- निबंधकार ने अपनी रचनाओं में धर्म का प्राण तत्व किसे माना है?

7.4 : पाठ सार

निबंध में कम शब्दों में बहुत कुछ कहा जा सकता है, इसीलिए जन-जीवन में यह लोकप्रिय है। जब हम सीधे कोई बात कहते हैं तो वह ज्यादा प्रभावी नहीं होती अथवा मन दुखाती है, इसीलिए निबंध इस उद्देश्य को सरल बना देता है। निबंध में सदैव उत्सुकता का गुण होता है। गुलेरी जी की निबंध लेखन कला में अनेकों गुण समाहित हैं। निबंधकार ने समकालीन घटनाओं को अपने निबंधों का विषय बनाया है। उन्होंने यथार्थवाद, मानवतावाद, मार्मिक संवेदना और मनोविज्ञान का दामन पकड़ कर जनता के मर्म को गहराई से स्पर्श किया है। गुलेरी जी का प्रारंभिक जीवन ठीक रहा। उनके पिता शिवराम शास्त्री राज सम्मान पाकर जयपुर में ही बस गए थे। उनकी माता का नाम लक्ष्मी देवी था, जो ग्रहणी थीं। गुलेरी जी ने घर पर रहकर ही बचपन में संस्कृत भाषा, वेद- पुराण आदि का अध्ययन किया। उन्हें घर से ही पूजा पाठ का वातावरण मिला। मात्र 10 वर्ष की अल्प आयु में ही वह संस्कृत भाषा के ज्ञान और भाषण में निपुण हो गए थे। वह बहुमुखी प्रतिभा के धनी रहे। उन्होंने सन् 1893 में जयपुर के महाराजा कॉलेज में दाखिला लिया और प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। उसके पश्चात कोलकाता चले गए और कोलकाता विश्वविद्यालय से सन् 1899 में मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। स्कूली शिक्षा के साथ-साथ उन्होंने अनेक भाषाओं का अध्ययन किया और साथ ही कुछ विदेशी

भाषाओं जैसे अंग्रेजी, फ्रेंच, लैटिन आदि भी सीखीं। उन्होंने पत्रकार के रूप में अपने करियर की शुरुआत की; वहीं दूसरी ओर उन्हें प्रोफेसर बनने का प्रस्ताव भी मिला। कुछ समय तक उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय में प्राचीन इतिहास विभाग में प्रोफेसर के रूप में कार्यभार भी संभाला। उनकी साहित्यिक यात्रा अनवरत चलती रही। उनकी एक कहानी 'उसने कहा था' ने उन्हें हमेशा के लिए हिन्दी साहित्य में अमर कर दिया। जब भी किसी रचनाकार की रचनाओं को जानना समझना हो तो उनके व्यक्तित्व और कृतित्व को जानना और समझना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी मात्र निबंधकार ही नहीं थे बल्कि कविता, कहानी,पत्रकारिता, निबंध, बाल रचना,लघु निबंध अर्थात सभी विधाओं पर उनकी लेखनी चली जो हिन्दी साहित्य में उनके स्थान को अजर-अमर बनाता है। एक अच्छा निबंधकार पाँच गुणों को अपने निबंधों में समाहित करता है- फोकस ,विकास, एकता, सुसंगतता और शुद्धता। निबंधकार ने अपने निबंधों में कविता की तरह भावुकता,नाटक की तरह प्रभावशीलता और गतिशीलता, रेखाचित्र की तरह चित्रात्मक शैली और संस्मरण की तरह विवरणात्मकता का समावेश किया है।

7.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

- यह पाठ गुलेरी जी की लेखन कला तथा उनके संधर्ष को समझने मे सहायक सिद्ध होगा।
- पाठ को सही ढंग से समझने तथा विद्यार्थियों में विचार उत्पन्न करने की दिशा में यह पाठ एक सही कदम है।
- पाठ लिखते समय उद्देश्य को सही ढंग से संगठित कर अभिव्यक्त किया गया।
- इस इस पाठ में निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी का विस्तार से परिचय,उनकी उपलब्धियां, रचना यात्रा को पाठोपयोगी बनाया गया है।
- यह पाठ विद्यार्थियों के मन में विचार मंथन की प्रक्रिया को और तेज करने में सहायक होगा
- इस पाठ की उपलब्धि यह है कि प्रस्तुत पाठ विद्यार्थियों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति में सहायक होगा।

7.6 : शब्द संपदा

1. प्रासंगिकता - संगत या अनुरूप
2. अपूर्व - योगदान-सहयोग
3. इर्द -गिर्द - आसपास
4. प्राचीन - पुराना

5. उत्पत्ति - उद्गम
6. उद्भव - मूल या स्रोत
7. निधन - मृत्यु
8. तत्कालीन - उस समय के
9. जेहन में - दिमाग में
10. स्मृतियां - यादें
11. खंदक - खाई
12. व्यक्तिगत - स्वयं का
13. घटना के दौरान- घटना के समय
14. स्वयंभू - अपने आप प्रकट होना
15. प्रेरणा - उत्साहवर्धन
16. निबंध के जरिए - निबंध के द्वारा
17. मान्यता दिलाना - प्रत्यायन
18. वैश्विक स्तर पर - विश्व के स्तर पर
19. एक सूत्र में बांधना - एकजुट करना
20. जनमत की भाषा - आम आदमी की भाषा

7.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड – (अ)

दीर्घ क्षेणी के प्रश्नः

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में लिखिए ।

1. निबंध का उद्भव और विकास बताते हुए उसके प्रकारों की चर्चा कीजिए।
2. निबंध की विभिन्न परिभाषाएं देते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
3. हिन्दी साहित्य परंपरा में गुलेरी का स्थान निर्धारित कीजिए।
4. निबंध का महत्व बताते हुए हिन्दी साहित्य में उसका स्थान निर्धारित कीजिए ।
5. गुलेरी जी की निबंध लेखन कला का विस्तार से विवेचन कीजिए।
6. गुलेरी जी के निबंधों की वैचारिकता के विविध आयामों को रेखांकित कीजिए।

खंड – (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्नः

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 200 शब्दों में लिखिए।

1. चंद्रधर शर्मा गुलेरी की रचना यात्रा का वर्णन कीजिए।
2. निबंध की विशेषताएं लिखिए।
3. निबंधकार का जीवन वृत्त संक्षिप्त में लिखिए।
4. निबंध लेखन की विधियों की चर्चा कीजिए।
5 चंद्रधरशर्मा गुलेरी युग के निबंधकारों का परिचय दीजिए।

खंड – (स)

I. बहु विकल्पीय प्रश्नः

(1) सही विकल्प चुनिए-

(क) प्रथम कलात्मक कथाकार माने जाते हैं-

(अ) जयशंकर प्रसाद (ब) चंद्रधर शर्मा गुलेरी (स) इंशा अल्लाह खान

(ख) कछुआ -धरम के लेखक हैं-

(अ) चंद्रधर शर्मा गुलेरी (ब) प्रेमचंद (स) बालकृष्ण भट्ट

(ग) निबंध के जनक माने जाते हैं -

(अ) पंडित बालकृष्ण भट्ट (ब) आचार्य रामचंद्र शुक्ल (स) भारतेन्दु

(घ) निबंध के अंग हैं -

(अ) चार (ब) दो (स) तीन

II. रिक्त स्थानों की पूति करें -

(क) चंद्रधर शर्मा गुलेरी के.......एवं........प्रिय विषय थे।

(ख) गुलेरी जी का निधन ....में हुआ।

(ग) मारेसि मोहि कुठाँव निबंध........... द्वारा लिखित है।

(घ) साहित्य का............ मानव जीवन है।

(च) चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने.........कहानियाँ लिखी हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. चंद्रधर शर्मा गुलेरी थे	(अ) चार माने जाते हैं
2. चंद्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा संपादित पत्र	(ब) 1915 सरस्वती पत्रिका

3. गुलेरी जी की सृजनशीलता के मुख्य पड़ाव (स) समालोचक पत्र

4. 'उसने कहा था' कहानी का प्रकाशन (द) बहुभाषाविद्

5 विचारात्मक निबंध में प्रधानता रहती है (ट) बुद्धि की

7.8 : पठनीय पुस्तकें

(1) वस्तुनिष्ठ हिन्दी निबंध-डॉ प्रभात कुमार

(2) हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- रामकुमार वर्मा

(3) साहित्यिक निबंध- गणपति चंद्र गुप्त

(4) हिन्दी साहित्य का इतिहास- रामचन्द्र शुक्ल

(5) निबंध-दृष्टि- डॉ. विकास दिव्यकीर्ति एवं निशांत जैन

(6) हिन्दी साहित्य: उद्भव और विकास- हजारी प्रसाद द्विवेदी

(7) गुलेरी रचनावली (चयनित रचनाएं) डॉ. मनोहरलाल (सं)

इकाई 8 :चंद्रधर शर्मा गुलेरी के निबंध 'कछुआ धरम' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मूल पाठ: कछुआ धरम निबंध की विवेचना
8.3.1 कछुआ धरम निबंध की विषय वस्तु (सारांश)
8.3.2 कछुआ धरम निबंध का प्रयोजन
8.3.3 कछुआ धरम निबंध में व्यक्त वैचारिकता
8.3.4 कछुआ धरम निबंध का भाषा सौष्ठव \
8.3.5 कछुआ धरम निबंध का शैली सौंदर्य
8.4 पाठ सार
8.5 पाठ की उपलब्धियां
8.6 शब्द संपदा
8.7 परीक्षार्थ प्रश्न
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 : प्रस्तावना

निबंध गद्य साहित्य की प्रमुख विधा है। इसे 'गद्य की कसौटी' कहा गया है। निबंध का शाब्दिक अर्थ होता है अच्छी प्रकार से बंधा हुआ अर्थात वह गद्य रचना जिसमें सीमित आकार के भीतर स्वच्छता, सजीवता और निजीपन की संगति से किसी विषय का वर्णन किया जाता है।भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है। सच्चाई तो यह है कि हिन्दी में खड़ी बोली गद्य का निखार निबंधों के माध्यम से हुआ। निबंध विधा का आरंभ भारतेंदु से ही माना जाता है। प्रस्तावना किसी भी पढ़ाए जाने वाले विषय तक पहुंचने का माध्यम होती है। जब गुलेरी जी के प्रसिद्ध निबंध 'कछुआ धरम' की विवेचना का संदर्भ हो तो इसकी प्रस्तावना अपने आप में महत्वपूर्ण हो जाती है। कछुआ धरम एक ऐसा निबंध है जिसकी विषयवस्तु निबंधकार ने परंपरा से उठाई है और इस निबंध का प्रयोजन सिद्ध किया है। इस निबंध में लेखक की व्यक्त वैचारिकता के विविध पहलू विद्यार्थी को दिखाई देते हैं। इस निबंध को सफल और संप्रेषणीय बनाने के लिए भाषा प्रयोग और शैली सौंदर्य का विशेष प्रयोग दिखाई देता है। कछुआ धर्म का अर्थ मनुष्य के उस व्यवहार से होता है जिसमें वह समस्या का सामना नहीं करना चाहता और जब कोई विपत्ति - संकट अथवा समस्या आती है तो वह उसका सामना

करने के स्थान पर उससे बचने या भागने का प्रयास करता है। निबंधकार ने इस निबंध में आर्य जनों का संदर्भ लेते हुए यह संदेश दिया है कि आर्य जन आई हुई समस्याओं का सामना ना करके सदैव उनसे बचाव का रास्ता ही ढूंढते रहे जिसका परिणाम यह हुआ कि भारत अनेक वर्षों तक गुलाम रहा। प्रस्तुत इकाई में निबंध कला की दृष्टि से लेखक ने कछुआ धरम की वैचारिक पृष्ठभूमि देते हुए अपने प्रयोजन को सिद्ध किया है।

8.2 : उद्देश्य

किसी निबंध को लिखा जाता है तब उसका उद्देश्य यही होता है कि निबंधकार जिस विषय-वस्तु को उस निबंध में ले रहा है उसे तर्क और तथ्यों के ढांचे में फिट कर दे और व्यवस्थित करते हुए अपने संदेश को गहराई के साथ प्रस्तुत करे। प्रस्तुत इकाई लेखन का उद्देश्य यह है कि इसको पढ़ने के पश्चात विद्यार्थी यह समझ पाएगा कि -

- निबंध गद्य लेखन की एक स्वतंत्र और सर्वश्रेष्ठ विधा है , इस इकाई को पढ़ने के पश्चात विद्यार्थी इसे जान और समझ पाएंगे।
- इस इकाई को पढ़ने के पश्चात विद्यार्थी यह जान और समझ सकेंगे कि मानव और समाज में निबंध का क्या महत्व है?
- निबंध के उद्भव-विकास और स्वरूप को समझ कर अनुभव साझा कर पाएँगे।
- विद्यार्थी निबंधों के तत्व, प्रकार और विशेषताओं को जान पाएंगे ।
- कछुआ धरम निबंध का कथ्य समझ पाएंगे।
- विद्यार्थी कछुआ धरम में लेखकीय उद्देश्य को जान और समझ पाएंगे।
- कछुआ धरम निबंध के शैली सौंदर्य और भाषा सौष्ठव को समझ पाएंगे।

8.3 : मूल पाठ : 'कछुआ धरम' निबंध की विवेचना

कछुए को प्रतीक के रूप में लेते हुए निबंधकार ने एक मनुष्य के अंदर व्याप्त वैचारिकता को अभिव्यक्ति दी है। हम अपने आसपास नजर दौड़ाएं तो यह देख पाते हैं कि बहुत से लोग ऐसे होते हैं जब उनके सामने कोई विपत्ति या समस्या आती है तो वह उस समस्या का सामना करने के स्थान पर बचकर भागने का प्रयास करते हैं। जिस प्रकार कछुआ सामने किसी समस्या के आने पर अपने मुख को अपने खोल में छुपा कर चुपचाप एक स्थान पर बैठ जाता है और उसे ऐसा लगता है कि उसे समस्या से मुक्ति मिल गई है, जबकि ऐसा नहीं होता है। भारत के आर्यजन सामने आई हुई समस्याओं का सामना ना करके उससे बचाव का रास्ता ही ढूंढते रहे। लेखक ने कछुए का उदाहरण देते हुए इन्हीं समस्याओं को व्यक्त किया है। आर्यजन कछुए जैसी प्रवृत्ति को अपनाते हुए यह समझते रहे कि वह अपने देश में सुरक्षित हैं जबकि ऐसा नहीं था।

8.3.1 कछुआ धरम निबंध की विषय वस्तु (सारांश)

मनुस्मृति में कहा गया है कि जहां गुरु की निंदा या असत्य कथा हो रही हो, वहां पर भले आदमी को चाहिए कि वह अपने कान बंद कर ले या उठकर चला जाए। यह हिंदुओं के या हिंदुस्तानी सभ्यता के कछुआ धरम का आदर्श है। निबंध की विवेचना करते समय उसे कई बिंदुओं में देखा जा सकता है, जैसे कछुआ धरम की विषय वस्तु किस प्रकार से चुनी गई है और उसकी प्रस्तुति किस प्रकार हुई है? इसी तरह इस निबंध को लिखने का प्रयोजन क्या है और इसमें लेखक ने अपनी वैचारिकता को किस प्रकार विकास दिया है? किसी भी निबंध लेखन में भाषा सौष्ठव और निबंध लेखन शैली का विशेष महत्व होता है जो कछुआ धरम निबंध के भाषा सौष्ठव और शैली सौंदर्य के बिंदु के रूप में अलग से दर्शाया गया है। मनु महाराज ने ना सुनने के योग्य गुरु की कलंक कथा के सुनने के पाप से बचने के दो ही उपाय बताए- या तो सुनने वाला कान ढक कर बैठ जाए या वहां से चला जाए। एक तीसरा उपाय भी है जो बहुत से लोगों को ऐसे अवसर पर सूझ जाता है लेकिन मनु ने नहीं बताया कि जूता लेकर या मुक्का तान कर सामने खड़े हो जाना और निंदा करने वाले का जबड़ा तोड़ देना ताकि वह दोबारा ऐसी हरकत ना करे; किंतु भारतीय सभ्यता के विरुद्ध इस भाव को लोग अपनाते नहीं हैं जैसे कछुआ खोल में घुस जाता है, आगे बढ़कर किसी को मारता नहीं, वैसे ही लोगों की प्रवृत्ति होती है। अनार्य देश पर चढ़ाई करते हैं और धर्म भागा जा रहा है। उसके पीछे-पीछे महर्षि भी चले जा रहे हैं। सक्षम होते हुए भी आर्य अनार्यों के सामने डटकर नहीं खड़े होते और ना ही उन्हें रोकते हैं। आर्यों की अपने भाई असुरों से अनबन हुई। असुरअपनी प्रवृत्ति छोड़ने को तैयार नहीं थे और आर्य सप्तसिंधु को आर्यावर्त बनाना चाहते थे। वह आगे चल पड़े। विष्णु ने अग्नि और यजपात्र तथा अरणि रखने के लिए तीन गाड़ियां बनाईं। यह कारवां खैबर दर्रे से होकर सिंधु घाटी में उतरा। कई विदेशियों ने आक्रमण किया। आर्य आगे बढ़ते रहे। डाके मारने वाले वाहीक आ बसे। संस्कृतियाँ बदलती रहीं । तब भी किसी को यह न सूझी कि सब प्रकार के जलवायु की इस उर्वरा भूमि में कहीं सोम की खेती कर ली जाए। भारत एक उर्वर देश है जहां के पत्ते-पत्ते में मधु है और बिना खेती के फसलें पक जाती हैं किंतु यहां के लोगों में इतना वैराग्य क्यों?यहां के लोगों को किवाड़ बंद करने की आदत है। यह कछुआ धर्म का भाई शुतुरमुर्ग धर्म है। कहते हैं शुतुरमुर्ग का पीछा कीजिए तो वह बालू में सर छुपा लेता है और समझता है कि मेरी आंखों से पीछा करने वाला नहीं दिखता तो उसे मैं भी नहीं दिखता। लंबा चौड़ा शरीर चाहे बाहर रहे ,आंखें और सर तो छुपा लिया। कछुए ने हाथ-पांव-सिर भीतर डाल लिया। इस लड़ाई में कम से कम 5 लाख हिंदू आगे पीछे समुद्र पार जा आए हैं, पर आज कोई पढ़ने के लिए विलायत जाने लगे तो क्या किया जा सकता है?अब भी बहुत से लोग ऐसे हैं जो अपने सर को रेत में छुपा कर जीते हैं।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा लिखित निबंध कछुआ धरम एक ऐसा निबंध है जिसके माध्यम से उन्होंने आर्य तथा अनार्य के आपसी विवाद को विषय के रूप में लेते हुए तथ्यों का उद्घाटन किया है। इसमें उन्होंने व्यक्त किया है कि किस प्रकार आर्यों की अपने भाई अनार्यों से अनबन हो जाती है। आर्य सप्तसिंधुओं को आर्यावर्त बनाना चाहते थे जबकि अनार्य असुर ही बने रहना चाहते थे। आर्य आई हुई समस्याओं का सामना ना करके उससे बचाव का रास्ता ही ढूंढते रहते थे। लेखक ने कछुए का उदाहरण देते हुए यह स्पष्ट किया है कि जिस प्रकार कछुआ किसी भी समस्या का समाधान नहीं करता अर्थात अपने सामने आई हुई समस्याओं का सामना ना करके अपने ही खोल में अपने अंगों को छुपा लेता है और यह महसूस करता है कि वह उन समस्याओं से बच गया है; इसी तरह आर्य भी यही प्रवृत्ति अपनाया करते थे। वह समस्याओं को समझते नहीं थे और उनसे मुकाबला करने के बजाय उनसे बचाव का रास्ता ढूंढते रहते थे। लेखक का यह मानना है कि जब विदेशी हमारे यहां व्यापार करने के उद्देश्य से आए और उन्होंने व्यापार के साथ अपने धर्म का प्रचार शुरू कर दिया तथा अपनी लुभावनी बातों में भारतीयों को फंसा लिया, तब लोग अपने धर्म को त्याग कर ईसाई बनते गए। इसका कारण हमारे भारतीयों की कछुआ पालन संस्कृति थी, जिसमें वह केवल अपने बचाव का रास्ता ढूंढते थे और समस्याओं का मुकाबला नहीं करना चाहते थे। लेखक मानते हैं कि हमारी हिंदुस्तानी सभ्यता भी कछुआ धर्म की तरह है जो केवल समस्याओं से बचाव करना जानती है,उसका मुकाबला करना नहीं। भारतीय संस्कृति में कछुआ का बुद्धिमान,लंबे जीवन,धीमी गतिऔर पृथ्वी को धारण करने के प्रतीक के रूप में वर्णित किया जाता रहा है। इन सब विशेषताओं के अतिरिक्त कछुए का एक दूसरा रूप भी वर्णित होता है जहां दिखाया जाता है कि समस्याओं के आने पर वह समस्याओं का सामना करने के स्थान परअपने खोल में अपने अंगों को समेट कर बैठ जाता है और उसे ऐसा लगता है कि समस्याओं से उसका बचाव हो गया है। इसी को लेखक ने आधार बनाकर उसे भारतीय संस्कृति और सभ्यता से जोड़ते हुए मानव स्थिति से पाठकों को अवगत कराया है।

हमेशा यह देखा जाता है कि निबंध में विषय और आकार में एकरूपता होनी चाहिए और यह निबंधकार के व्यक्तित्व पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार के विषय का चयन करता है। यदि कछुआ धर्म निबंध को देखा जाए तो इसमें जो विषय लिया गया है, उस विषय की प्रस्तुति के लिए बहुत ही सधे हुए शब्दों, भाषा और शैली में लेखक ने अपनी बात व्यक्त की है। इस निबंध पर उनके व्यक्तित्व का प्रभाव दिखाई देता है और सभी जगह पर उनकी वैचारिकता के दर्शन होते हैं। यह निबंध ना तो बहुत ही छोटा और ना ही बहुत बड़ा है; इसमें क्रमबद्धता है और यह सुव्यवस्थित है। भाषा और शैली के सुंदर और सटीक प्रयोग ने निबंध को प्रभावी बना दिया है। जब निबंध के अंगों की दृष्टि से इस निबंध को देखा जाता है तो- भूमिका, विस्तार और उपसंहार। इन तीन अंगों के परिप्रेक्ष्य में यह निबंध पूरी तरह से संप्रेषणीय है। निबंध का प्रारंभ अत्यंत रोचक रूप में होता है, जहां पर निबंधकार ने मुख्य विषय का परिचय

दिया है इसी प्रकार आगे चलकर निबंध का पूर्ण विस्तार है, जहां पर व्यापक रूप में निबंधकार ने भारतीय संस्कृति के कछुआ धर्म का वर्णन किया है। इसके साथ ही उन्होंने विषय का विवेचन और विश्लेषण भी किया है कि कछुआ धर्म संस्कृति की प्रवृत्ति अपनाने के कारण आर्य जनों को क्या-क्या मुसीबतों का सामना करना पड़ा? इसी प्रकार उपसंहार में लेखक ने अपने उद्देश्य की पूर्ति की है और अपने प्रयोजन को सिद्ध किया है।

बोधप्रश्न -

- निबंध क्या है?
- निबंध कैसी विधा है?
- लेखक निबंध में भारत के महात्म्य का वर्णन किस प्रकार करते हैं?
- कछुआ धरम निबंध में लेखकीय संदेश बताएं?

8.3.2 कछुआ धरम निबंध का प्रयोजन

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि ना मनोरथैः। न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।। अर्थात उद्यम करने से ही कार्य सफल होते हैं, केवल मनोरथ करने से नहीं। ठीक उसी प्रकार जैसे सोए हुए शेर के मुख में अपने आप हिरण का प्रवेश नहीं हो जाता। इस निबंध को लिखकर लेखक ने अपने प्रयोजन को सिद्ध किया है। भारत की प्राचीन आर्य संस्कृति की कार्य- प्रणाली पर हास्य और व्यंग्य शैली में तथा सरल-सहज भाषा में 'कछुआ धरम' निबंध लिखकर कठोर प्रहार किया है। समस्याएं और परेशानियां आने पर उनका सामना ना करके मुंह छुपा लेना और यह समझना कि उन्हें समस्याओं से छुटकारा मिल गया है, उनकी सबसे बड़ी भूल और नादानी थी; जिसका खामियाजा कई वर्षों तक गुलामी झेलकर भारत को भुगतना पड़ा।

निबंध अत्यंत परिष्कृत और प्रौढ़ गद्य का प्रतीक है। निबंधों में एक विशेष प्रकार की चेतना और जीवंतता होती है। इसमें भावना के साथ विचारों को एक साथ संकलित किया जाता है। यह अंग्रेजी के essay का पर्याय है। कछुआ धरम निबंध गुलेरी जी द्वारा लिखा गया एक विवेचनात्मक निबंध है, जिसमें लेखक ने आर्यों और अनार्यों की पारस्परिक अनबन के माध्यम से भारतीय सभ्यता के द्योतक मनु धर्म की आड़ में छिपी मानसिक वृति का कसक भारत विवेचन किया है। यही इस निबंध का प्रयोजन है। इस वृत्ति को लेखक ने कछुआ धर्म की संज्ञा दी है क्योंकि, कछुआ किसी भी प्रकार की समस्या के आने पर अपने अंगों को कवच में समेट लेता है कारण कि वह उस समस्या का सामना नहीं करना चाहता। इस वृत्ति को अपनाने से धर्म और उसका मर्म किसी भी काल या परिस्थितियों को कैसे और किस प्रकार प्रभावित करता है? इसका कटाक्ष युक्त वर्णन गुलेरी जी ने इस निबंध में प्रस्तुत किया है। कह सकते हैं कि निबंध लघु

आकार की एक गद्य विधा रूपी कला है जिसमें जन्य-जगत, घटना, वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, भाव विचार आदि का अनुसरण होता है।

बोध प्रश्न:

- कछुआ धर्म के विषय में लेखक क्या कहते हैं?
- कछुआ धरम निबंध कैसा निबंध है?

8.3.3 कछुआ धरम निबंध में व्यक्त वैचारिकता

कछुआ धर्म कायरता का प्रतीक है जो समस्याओं का सामना करने के स्थान पर समस्याओं से बचने की प्रवृत्ति पैदा करता है। आर्य जन आई हुई समस्याओं का सामना ना करके उनसे बचाव का रास्ता ही खोजते थे। वैचारिक निबंधों में विचारों की प्रधानता होती है। समाचार पत्रों के संपादकीय लेख, पत्र, टिप्पणियां आदि भी वैचारिक लेखन के अंतर्गत आते हैं। इस निबंध में लेखक का उद्देश्य अपनी भावनाओं, विचारों और तथ्यों को व्यक्त करना रहा है। लेखक पूरी दुनिया से लेकर अपने आसपास घटित होने वाली घटनाओं, समाज और पर्यावरण पर गहरी निगाह रखते हैं और उसे इस तरह से देखा कि उससे अपने लेखन के लिए विचार बिंदु निकाल सके। गुलेरी जी हिंदुस्तानी सभ्यता से काफी नाराज रहते थे और उन्हें ऐसा लगता था कि जब विदेशी भारत में व्यापार करने के उद्देश्य से आए तो उन्होंने व्यापार के साथ-साथ धर्म का प्रचार भी करना शुरू किया और भारतीयों को अपने जाल में फंसा लिया। यहां के भारतीय हिंदू धर्म को त्याग कर ईसाई बनते गए। कहीं भी उन्होंने विदेशी संस्कृति का विरोध नहीं किया। अपने इसी आक्रोश को उन्होंने कछुआ पालन संस्कृति से जोड़ा और यह संदेश देने का प्रयास किया कि यदि भविष्य में भी भारतीय इसी प्रकार कछुए की तरह अपने खोल में सिमटे रहेंगे या शुतुरमुर्ग की तरह अपनी टांगों में मुंह छुपा लेंगे तो उससे उनकी रक्षा नहीं होगी, बल्कि आगे बढ़कर उन्हें आने वाली समस्याओं का सामना करना पड़ेगा और उनका समाधान खोजना पड़ेगा। अपनी मंशा को व्यक्त करने के लिए उन्होंने हास्य और व्यंग्य शैली के सहारे मुहावरेदार भाषा में अनेक उपमायें देते हुए और भारत के माहात्म्य का गान करते हुए व्यक्त किया है।

विचारिकता- 'मा देहि राम! जननीजठरे निवासम' .... और यह उस देश में जहां कि सूर्य का उदय होना इतना मनोहर था कि ऋषियों का यह कहते तालू सूखता था कि सौ बरस इसे हम उगता देखें,सौ बरस सुने,सौ बरस से भी अधिक। भला जिस देश में बरस में दो ही महीने घूम फिर सकते हों और समुद्र की मछलियां मारकर नमक लगाकर सुखा कर रखना पड़े कि दस महीने के शीत और अंधियारे में क्या खाएंगे, वहां जीवन में इतनी ग्लानि हो तो समझ में आ सकती है पर जहां राम के राज में पटके पटकेअर्थात पत्ते पत्ते में मधु हो और बिना खेती के फसलें पक जाएं वहां इतना वैराग्य क्यों?

बोध प्रश्न -

- निबंध का स्वरूप क्या है?
- कछुआ धरम निबंध में कछुआ किसका प्रतीक है?

8.3.4 कछुआ धरम निबंध का भाषा सौष्ठव -

संचार की एक संरक्षित प्रणाली है जिसमें व्याकरण और शब्दावली शामिल होते हैं। मौखिक ध्वनियों या पारंपरिक प्रतीकों के प्रयोग द्वारा विचारों, भावनाओं आदि की अभिव्यक्ति की एक प्रणाली भाषा कहलाती है। ध्वनि,रूप अर्थात शब्द,वाक्य,अर्थ-यह चार भाषा के अंग कहलाते हैं। हम सभी जानते हैं कि भाषा की उत्पत्ति समाज से होती है और उसका विकास भी समाज में ही होता है,भले ही जीवन का पहला पाठ उसे माता ही पढ़ाती है किंतु उसके बाद मनुष्य का संबंध समाज के साथ जुड़ जाता है। अपने आसपास वह जिन स्थितियों से रूबरू होता है, जिन स्थितियों को देखता और भोगता है, उन्हीं अनुभूतियों को भाषा द्वारा अभिव्यक्ति देता है। अभिव्यक्ति देने का माध्यम लिखित भाषा, मौखिक भाषा और सांकेतिक भाषा कोई भी हो सकती है। निबंध लेखन का उद्देश्य यही होता है कि वह अपनी अभिव्यक्ति में पूर्णत: सफल हो और भाषा इसमें बड़ी भूमिका निभाती है क्योंकि,हर स्थान पर संवाद करने के लिए, विवादों को सुलझाने के लिए, नए विचारों पर मंथन करने के लिए या अपना दृष्टिकोण व्यक्त करने के लिए भाषा का ही उपयोग होता है। कछुआ धर्म निबंध एक ऐसा निबंध है जिसकी भाषा विभिन्न विशेषताओं से भरी हुई है। इस निबंध में एक तरफ प्रतीक शब्दों का प्रयोग किया गया है, वहीं भाषा की लक्षणिकता पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती है। हास्य और व्यंग्य शैली के लिए शब्दों का सटीक चुनाव किया गया है। कई स्थानों पर चित्रात्मक भाषा के दर्शन होते हैं। साथ ही मुहावरे और लोकोक्तियां का भाषा में प्रयोग करते हुए उसे सुंदर रूप दिया गया है और अपनी अभिव्यक्ति को रोचक बनाया गया है। रोचकता, प्रभाव तथा वक्ता एवं श्रोता या निबंधकार एवं पाठक के बीच यथोचित सम्बद्धता बनाये रखने के लिये इस निबंध के भाषा सौष्ठव के निम्नलिखित गुण देखे जा सकते हैं। प्रस्तुतीकरण के ढंग में कलात्मकता लाने के लिए उसको अलग-अलग भाषा व शैली से सजाया जाता है। भाषा की चित्रात्मकता, लोकोक्तियों और मुहावरों के उपयोग तथा हिन्दी-उर्दू के साझा रूप एवं बोलचाल की भाषा के लिहाज से यह निबंध अद्भुतहै। कुछ उदाहरण - तत्सम शब्दावली –देशा दनार्येरभिभू यमानांहं हर्षयो, आर्य, अनार्य, आर्यावर्त, अग्नि, हस्त, स्वान द्विज, जननी जठरे निवासम आदि ।

<u>मुहावरेदार भाषा -</u> कछुए ने हाथ-पांव- सिर भीतर डाल लिया, ऋषियों का यह कहते तालू सूखता था कि सौ बरस इसे हम उगता देखें,वहां जीवन में इतनी ग्लानि हो तो समझ में आ

सकती है,किसी बात का टोटा होने पर,उनसे भी मन ना भरा,कच्ची दलीलों की सीवन उधेड़ने में ही परम पुरुषार्थ है,ना रहे बांस ना बजे बांसुरी।

भाषा का लाक्षणिक प्रयोग- मानो अमरावती ने आंखें बंद कर लीं ,आकृष्टपच्या पृथिवी पुटके पुटके मधु, वही कछुआ धर्म ढाल के अंदर बैठे रहो।

प्रतीकात्मक भाषा - उपमन्यु को उसकी मां ने और अश्वत्थामा को उसके बाप ने जैसे जल में आटा घोलकर दूध कहकर पतिया लिया था, वैसे पूतिक की सीखों से देवता पतियाए जाने लगे।

बोध प्रश्न -

- कछुआ धरम निबंध की भाषा कैसी है ?
- कछुआ धरम निबंध में भाषा सौष्ठव का क्या महत्व है?

8.3.5 कछुआ धरम निबंध का शैली सौंदर्य

सौंदर्य मनुष्य की आत्मा से जुड़ा हुआ शब्द है, जिसका अर्थ बहुत ही व्यापक है। इसे किसी सीमा में बाँधना कठिन है। किसी वस्तु का अच्छा लगा हमारे मन को संतुष्टि अवश्य पहुंचाता है किंतु वह वस्तु हमारे मन में सौंदर्य की अनुभूति जगाए यह आवश्यक नहीं है। समय बदलने के साथ-साथ सौंदर्य के मापदंड भी बदलते जा रहे हैं। कछुआ धरम निबंध में शैली सौंदर्य का रूप देखा जा सकता है। लेखक ने अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए एक अलग प्रकार की शैली अपनाई है और वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक शैली प्रयोग द्वारानिबंध में सौंदर्य उत्पन्न किया है। लेखन शैली, शब्द चयन, साहित्य उपकरण, संरचना,स्वर और आवाज से जुड़ी होती है। शब्दों का उपयोग रचना को एक अलग स्थान दिलाता है और जब निबंध की बात होती हो तब शब्दों का उपयोग और संयोजन का महत्व और बढ़ जाता है। साहित्य में पांच अलग-अलग प्रकार की लेखन शैलियों का प्रयोग होता हैं - प्रेरक लेखन, कथात्मक लेखन, वर्णनात्मक लेखन, व्याख्यात्मक लेखन और विश्लेषणात्मक लेखन। प्रस्तुत निबंध में निबंधकार ने कठिन शब्दों का प्रयोग ना करते हुए सरल शब्दों का प्रयोग किया है। विद्यार्थी लेखकीय संदेश को अच्छी तरह से समझ पाए, इसके लिए उन्होंने अलग-अलग शैलियों का प्रयोग करते हुए अपने उद्देश्य की पूर्ति की है। इस निबंध में भाषा और शैली में स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। भाषा में मानक शब्दावली होती है किंतु निबंधकार ने विषयानुसार अलग शब्दों का प्रयोग भी किया है। भाषा में मानक शब्दावली होती है और शैली में मानक भाषा का वह प्रकार होता है जिसके जरिए व्यक्ति अपनी भावनाओं को प्रकट करता है।

प्रस्तुत निबंध में मानक शब्दावली के साथ-साथ भाषा का आधुनिक रूप दिखाई देता है और अपने मन की भावनाओं को व्यक्त करने के लिए लेखक ने संवाद शैली, वर्णनात्मक शैली,व्याख्यात्मक शैली, विश्लेषणात्मक शैली,हास्य एवं व्यंग्य शैली तथा अन्य शैलियों का प्रयोग किया है। जैसे हास्य शैली- “मनु ने नहीं बताया कि जूता लेकर या मुक्का तानकर सामने

खड़े हो जाओ और निंदा करने वाले का जबड़ा तोड़ दो या मुंह पिचका दो कि फिर ऐसी हरकत ना करे। यह हमारी सभ्यता के भाव के विरुद्ध है।"

निबंध में कई स्थानों पर निबंधकार स्थितियों का विश्लेषण करते चलते हैं, इन स्थानों पर विश्लेषणात्मक शैली दिखाई देती है।शैलियों की विविधता निबंध को सौंदर्य प्रदान करती है।

व्यंग्य शैली - "उसका कछुआपन कछुआ-भगवान की तरह पीठ पर मंदराचल की मथनी चलाकर समुद्र से नए-नए रत्न निकालने के लिए नहीं है। उसका कछुआपन ढाल के भीतर और भी सिकुड़कर घुस जाने के लिए है।"

पूर्वदीप्ति शैली- "बहुत वर्ष पीछे की बात है। समुद्र पार के देशों में और धर्म पक्के हो चले। वे लूटते- मारते तो सही, बेधर्म भी कर देते। बस, समुद्र यात्रा बंद! कहां तो राम के बनाए सेतु का दर्शन करके ब्रह्महत्या मिटती थी और कहां नाव में जाने वाले द्विज का प्रायश्चित कराकर भी संग्रह बंद। वही कछुआ धर्म! ढाल के अंदर बैठे रहो।"

बोध प्रश्न -

- मानव जीवन में निबंध का क्या महत्व है?
- कछुआ धरम निबंध में किस शैली का प्रयोग हुआ है?

8.4 : पाठ सार

चंद्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा लिखित निबंध कछुआ धरम एक ऐसा निबंध है जो निबंध साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस निबंध के माध्यम से निश्चित रूप से हिंदुस्तानी सभ्यता और संस्कृति को नए विचारणीय आयाम प्रदान किए गए हैं। यह एक विचारात्मक निबंध है। गुलेरी जी ने यह स्पष्ट रूप से समझाने का प्रयास किया है कि मर्यादा और सीमा में रहकर संयोजित रूप से कार्य करते हुए मानवीय मूल्यों का संरक्षण करना हर मानव का धर्म होना चाहिए। नैतिकता, समन्वयता,सौहार्द्र जैसे गुणों को सर्वव्यापी बनाना हमारा कर्म होना चाहिए, लेकिन इसका आशय यह कदापि नहीं है कि हम अन्याय और अत्याचार को सहन करते जाएं क्योंकि, जब तक हम कछुआ धर्म त्याग कर अन्य के विरुद्ध आवाज नहीं उठाएंगे तब तक एक स्वच्छ समाज की कल्पना करना व्यर्थ है। कछुआ धरम निबंध एक व्यंग्यात्मक निबंध है जिसके माध्यम से लेखक ने कछुआ धरम का उदाहरण देते हुए मनुष्य के व्यवहार की उससे तुलना की है। इस धर्म से तात्पर्य मनुष्य के उसे व्यवहार से है,जिसमें वह समस्या का सामना नहीं करना चाहता और कोई भी विपत्ति या संकट अथवा समस्या आने पर इस तरह की प्रतिक्रिया करता है जैसे उसने समस्या का समाधान कर लिया है; लेकिन वास्तव में समस्या से बचकर भागना ही उसका उद्देश्य होता है। कछुआ कायरता का प्रतीक है जो समस्याओं का सामना करने के स्थान पर समस्याओं से बचने की प्रवृत्ति पैदा करता है।

भारतवर्ष की जो दुर्दशा हुई और उसे कई वर्षों तक गुलामी झेलनी पड़ी उसका कारण भारत के आर्य जनों की कायरता थी क्योंकि, वे इन समस्याओं का समाधान और सामना ना करके, उनसे बचाव का ही रास्ता ढूंढते थे। निबंधकार ने इसी समस्या को अपने निबंध का विषय बनाया है और उसे छोटे-छोटे खंडों में बाँटते हुए अपने प्रयोजन को सिद्ध किया है। उनके इस निबंध में उनकी वैचारिकता के स्पष्ट दर्शन होते हैं और उस वैचारिकता को अभिव्यक्त करने के लिए उन्होंने भाषा और शैली का सुंदर समायोजन किया है;तथा अपने उद्देश्य की सिद्धि में पूरी तरह से सफलता पाई है। हिन्दी साहित्यकी 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक चरण का युग युगांतरकारी परिवर्तनों और नवउत्थानात्मक दृष्टि से सदा याद किया जाता रहेगा। इस कालखंड में भाषा, साहित्य और रचना शिल्प की दृष्टि से समृद्धि के साथ-साथ साहित्य की विभिन्न विधाओं का पदार्पण हुआ; जिससे हिन्दी साहित्य संपन्न हुआ। 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक साहित्योत्थान में पंडित चंद्रधर शर्मा गुलेरी का नाम प्रथम पंक्ति के साहित्य सेवियों में लिया जाता है और सदैव लिया जाता रहेगा। वह एक ऐसे हिन्दी प्रेमी हैं जिन्होंने स्वभाषा की संगठनात्मक, प्रचारात्मक और रचनात्मक दृष्टि से भरपूर सेवा की। उनका अवदान हिन्दी साहित्य में मील का पत्थर माना जाता है।

8.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

- किसी विद्यार्थी में जब तक किसी भी विषय को ग्रहण करने की योग्यता ना हो तब तक उस विषय का वर्णन उपयोगी नहीं होता है। जब पाठ का लेखन किया जाता है तब सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होता है कि उस पाठ से विद्यार्थी की क्या उपलब्धि रही अर्थात उस पाठ से विद्यार्थी ने क्या प्राप्त किया? जब कड़ी मेहनत व योग्यता के बल पर किसी विषय को जाना और समझा जाता है तब उपलब्धि का सही अर्थ सामने आता है। चंद्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा लिखित कछुआ धरम निबंध के पाठ लेखन से विद्यार्थी जहां एक ओर भारतीय प्राचीन संस्कृति को जान पाता है वहीं दूसरी ओर यह भी समझ पाता है कि व्यक्ति को कछुए की तरह समस्याओं के आने पर स्वयं को खोल में नहीं छुपा लेना है बल्कि उनका डटकर सामना करना है। समस्याओं के आने पर उससे मुकाबला करने के स्थान पर उनसे बचाव का रास्ता ढूंढना बहुत ही गलत है। हिंदुस्तानी सभ्यता भी कछुआ धर्म की तरह है, जो केवल समस्याओं से बचाव करना जानती है; उसका मुकाबला करना नहीं। यही कारण है कि भारत पर अनेक वर्षों तक विदेशियों ने शासन किया, जिससे लेखक मर्माहत हैं और अपने इसी भाव को इस निबंध द्वारा अभिव्यक्ति दी है। जब किसी इकाई के अंतर्गत पाठ का लेखन किया जाता है तब उद्देश्य यही होता है कि पाठ को पढ़ने वाला विद्यार्थी उस पाठ से क्या लाभ उठा पाता है तथा क्या सीख पाता है? इस

दृष्टि से देखा जाए तो यह पाठ विद्यार्थी के मन में जहां एक ओर विचारों का मंथन उत्पन्न करेगा, वहीं दूसरी ओर पाठ को सही ढंग से समझने में सहायक होगा।

- विद्यार्थियों में विचार उत्पन्न करने की दिशा में निबंध का यह पाठ एक सही कदम है।
- पाठ लिखते समय संदेश को सही व सर्वोत्तम ढंग से संगठित करने का प्रयास है।
- रोचक तथा तर्कसंगत ढंग से पाठ की सटीक प्रस्तुति जिसके कारण विद्यार्थी के मन में पाठ को पढ़ने की दिलचस्पी पैदा होगी।
- यह पाठ छात्रों के उद्देश्य की पूर्ति करता है।
- इस पाठ की उपलब्धि यह है कि प्रस्तुत पाठ विद्यार्थियों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति में सहायक सिद्ध होगा।

8.6: शब्द संपदा

1. अनबन - मनमुटाव
2. विवाद - झगड़ा
3. लुभावनी - आकर्षक
4. त्यागकर - छोड़कर
5. योगदान - भूमिका या अवदान
6. लक्षण - चिन्ह
7. विचार मंथन - विचारों का मंथन
8. मंथन - मथना
9. रोचक - रुचिकर
10. मूर्धन्य - श्रेष्ठ
11. विल क्षण प्रतिभा - असाधारण या अपूर्व मेधा
12. परिवर्धन - बदलना
13. पदार्पण - आगमन
14. प्रवत्ति - आदत
15. उपसंहार - समापन
16. वृत्ति - स्वभाव या आदत
17. कटाक्ष - व्यंग्य
18. आँज दिया - लगा दिया
19. जमकर मैदान लेना - मुकाबला करना

20. सोमलता - एक औसधीय पौधा

21. अभक्ष्य - ना खाने योग्य

22. देसी खांड - राब

8.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड – (अ)

दीर्घ प्रश्नः

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में दीजिए।

1. निबंध के अर्थ-स्वरूप की चर्चा करते हुए उसके प्रकारों की विस्तार सेचर्चा कीजिए।
2. निबंध कला की दृष्टि से कछुआ धरम की विशेषताएं बताइए।
3. कछुआ धरम निबंध का तात्विक विश्लेषण कीजिए|
4. कछुआ धरमनिध में उठाई गई समस्याओं का चित्रण कीजिए|
5. कछुआ धरम निबंध का शैली सौन्दर्य लिखिए?

खंड – (ब)

लघु श्रे प्रश्नः

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 200 शब्दों में दीजिए।

1. कछुआ धरम निबंध किस शैली में लिखा गया है?
2. कछुआ धरम के लेखक का परिचय दें?
3. कछुआ धरम से क्या अभिप्राय है?
4. कछुआ धरम में व्यक्त लेखकीय वैचारिकता का प्रतिपादन कीजिए?
5. कछुआ धरम निबंध का उद्देश्य लिखिए?
6. कछुआ स्वदेशी संस्कृति में क्या दर्शाता है?

खंड – (स)

I. सही विकल्प चुनिए-

1. आर्यों की अनबन किससे हुई-

(अ) विदेशियों से (ब) देवताओं से (स) अनार्यों से

2. कछुआ धरम के लेखक हैं-

(अ) चंद्रधर शर्मा गुलेरी (ब) हजारी प्रसाद द्विवेदी (स) बालकृष्ण भट्ट

3. हिन्दी के प्रथम निबंधकार -

(अ) भारतेन्दु (ब) बालकृष्ण भट्ट (स) प्रताप नारायण मिश्र

4. बुद्धू का कांटा के लेखक कौन हैं -

(अ) जयशंकर प्रसाद (ब) प्रेमचंद (स) चंद्रधर शर्मा गुलेरी

II. रिक्त स्थानों की पूति करें -

1. निबंध .... गद्य लेखन की एक विधा है।
2. समस्याओं सेबचकर भागना.........कहलाता है।
3. हिन्दी निबंध लिखने की परंपरा का आरंभ.........से होता है।
4. हिन्दी का मांतेन कहा जाता है......... को।

III. सुमेल कीजिए -

1. निबंध के अंग होते हैं	(अ) बालकृष्ण भट्ट
2. हिन्दी के पहले निबंधकार	(ब) पाँच
3. निबंध के जनक	(स) माइकेल डि मांतेन
4. निबंध के तत्व	(द) तीन
5 निबंध के अंत में लिखा जाता है	(न) उपसंहार

8.8 : पठनीय पुस्तकें -

(1) हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- रामकुमार वर्मा

(2) साहित्यिक निबंध-गणपति चंद्रगुप्त

(3) हिन्दी साहित्य का इतिहास- रामचन्द्र शुक्ल

(4) हिन्दी साहित्य की भूमिका- हजारी प्रसाद द्विवेदी

(5) हिन्दी साहित्य के बहुआयामी कोण - प्रो. निर्मला एस मौर्य

(6) साहित्य में गुलेरी जी का योगदान-डॉक्टर अदिति गुलेरी

इकाई 9 : निबंधकार रामचंद्र शुक्ल : एक परिचय

रुपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 मूल पाठ : निबंधकार रामचंद्र शुक्ल : एक परिचय
9.3.1 निबंधकार रामचंद्र शुक्ल का जीवनवृत्त
9.3.2 निबंधकार रामचंद्र शुक्ल की रचनायात्रा
9.3.3 निबंधकार रामचंद्र शुक्ल की वैचारिकता के विविध आयाम
9.3.4 निबंधकार रामचंद्र शुक्ल का हिन्दी साहित्य में स्थान
9.4 पाठ सार
9.5 पाठ की उपलब्धियाँ
9.6 शब्द संपदा
9.7 परीक्षार्थ प्रश्न
9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

छायावाद युग के प्रमुख आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध लेखन का आरंभ द्विवेदी युग से होता है। 'साहित्य' इनका प्रथम निबंध है जो 1904ई. में सरस्वती में छपा था। 1909ई. में इसी पत्रिका में 'कविता क्या है' निबंध प्रकाशित हुआ। निबंध से पहले इनकी कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903ई.) इसी पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन की 'आनंद कादंबिनी' पत्रिका में इनकी संवादात्मक कविता 'भारत और वसंत' का प्रकाशन हुआ। बदरीनारायण चौधरी को भारतेंदु मंडल के संस्कारों को बीसवीं सदी तक ले जाने का श्रेय दिया जाता है। भारतेंदु युग के निबंधों में व्यक्तित्व की व्यंजना महत्वपूर्ण मानी गई। निबंध का यह तत्व द्विवेदी युग में क्षीण होता गया और ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित सामग्री के संचय पर ध्यान केंद्रित रहा। "शुक्ल जी निश्चय ही हिन्दी निबंध साहित्य के क्षेत्र में नवीन युग प्रवर्तक हैं। गंभीर विचार-सूत्रों को आदि से अंत तक अटूट रखकर भी उन्होंने व्यक्तित्व-व्यंजना के लिए अवसर निकाल लिया है। सामान्यतः व्यक्तित्व व्यंजक निबंधों में वर्ण्य विषय या प्रतिपाद्य विषय की उपेक्षा हो जाती है, किंतु शुक्ल जी के निबंधों में ऐसा नहीं हुआ है। उन्होंने प्रतिपाद्य विषय से संबद्ध आनुषंगिक विषयों की चर्चा करके विचारों के कसाव को थोड़ा हल्का कर दिया है और व्यक्तित्व की झलक दिखा दी है" (डॉ. नगेंद्र)। इन्होंने भूमिका लेखन भी किया है। ओमप्रकाश सिंह ने आचार्य रामचंद्र शुक्ल ग्रंथावली का संपादन किया है। इस ग्रंथावली के छह भाग हैं- मलिक मुहम्मद जायसी, रस मीमांसा, साहित्यशास्त्र सिद्धांत और व्यवहार पक्ष, भाषा साहित्य और समाज विमर्श, हिन्दी साहित्य का इतिहास और विश्व प्रपंच।

9.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- निबंधकार रामचंद्र शुक्ल के जीवन वृत्त से अवगत हो सकेंगे।
- उनकी उपलब्धियों के बारे में जान सकेंगे।
- उनकी रचनायात्रा का कालक्रमानुसार विधागत अध्ययन कर सकेंगे।
- उनकी वैचारिकता के विविध आयामों का अवलोकन कर सकेंगे।
- हिन्दी साहित्य में रामचंद्र शुक्ल के योगदान को समझ सकेंगे।

9.3 मूल पाठ : निबंधकार रामचंद्र शुक्ल एक परिचय

9.3.1 रामचंद्र शुक्ल का जीवनवृत्त

हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित इतिहासकार रामचंद्र शुक्ल (1884-1941ई.) निबंध सम्राट होने के साथ कवि, कहानीकार, संपादक, जीवनचरित लेखक, भूमिका लेखक, अनुवादक, शब्द कोश निर्माता और प्रखर आलोचक भी हैं। पं. चंद्रबली शुक्ल एवं श्रीमती निवासी देवी के पुत्र के रूप में इनका जन्म 1884ई. को उत्तरप्रदेश के बस्ती जिले के अगौना नामक गाँव में हुआ था। प्रेमघन की छाया स्मृति में अपने पिता के बारे में आचार्य शुक्ल का कथन है, “मेरे पिताजी फ़ारसी के अच्छे ज्ञाता और पुरानी हिन्दी कविता के बड़े प्रेमी थे। फ़ारसी कवियों की उक्तियों को हिन्दी कवियों की उक्तियों के साथ मिलाने में उन्हें बड़ा आनंद आता था। वे रात को प्रायः रामचरितमानस और रामचंद्रिका, घर के सब लोगों को एकत्र करके, बड़े चित्ताकर्षक ढंग से पढ़ा करते थे। आधुनिक हिन्दी साहित्य में भारतेंदुजी के नाटक उन्हें बहुत प्रिय थे। उन्हें भी वे कभी-कभी सुनाया करते थे। जब उनकी बदली हमीरपुर जिले की राठ तहसील से मिर्जापुर हुई तब मेरी अवस्था आठ वर्ष की थी। उसके पहले ही से भारतेंदु के संबंध में एक अपूर्व मधुर भावना मेरे मन में जगी रहती थी। सत्यहरिश्चंद्र नाटक के नायक राजा हरिश्चंद्र और कवि हरिश्चंद्र में मेरी बाल बुद्धि कोई भेद नहीं कर पाती थी। हरिश्चंद्र शब्द से दोनों की एक मिली-जुली भावना अपूर्व माधुर्य का संचार मेरे मन में करती थी। ” कहा जा सकता है कि यह भाषिक और साहित्यिक संस्कार आचार्य रामचंद्र शुक्ल को अपने पिता और परिवार से विरासत में मिली।

इनके बाल्यकाल का आरंभिक समय अगौना में ही सुखपूर्वक व्यतीत हुआ। जब इनके पिता की नियुक्ति हमीरपुर जिले की राठ तहसील में कानूनगो के पद पर हुई। नियुक्ति के पश्चात 1892ई. तक पूरा परिवार वहीं रहा। इनकी अल्पायु में माता का देहांत हो गया। इसके बाद का समय थोड़ा कष्टकर रहा। दुख व्यक्ति को माँजता है। 1893ई. से पं. चंद्रबली शुक्ल सपरिवार मिर्जापुर में रहने लगे। वहाँ इनकी बस्ती में वकील-मुख़्तार, कचहरी के अमला-अफसर, सब-जज इत्यादि लोग भी रहते थे। यहीं के एंग्लो संस्कृत जुबली स्कूल से उन्होंने दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। दसवीं तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद ये क्वींस कॉलेज में अध्ययन करने लगे। इनके हिन्दी प्रेम से इनके पिता अच्छी तरह परिचित थे। घर में भारत जीवन प्रेस से आनेवाली पुस्तकों को बड़े चाव से पढ़ते थे। जब पिताजी द्वारा इस गतिविधि पर रोक लगा दी गई तब वे केदारनाथ पाठक के हिन्दी पुस्तकालय से पुस्तक लाकर पढने लगे। 16 वर्ष की अवस्था में इनकी

हिन्दी प्रेमियों की बेहतरीन मंडली बन गई थी। इस मंडली के सदस्य थे- श्रीयुत काशीप्रसादजी जायसवाल, बा. भगवानदासजी हालना, पं. बदरीनाथ गौड़ और पं. उमाशंकर द्विवेदी। इनलोगों की पढ़ाई से संबंधित बातचीत हिन्दी में होती थी जिसमें 'निस्संदेह' शब्द का प्रयोग होता था। वहाँ रहनेवाले लोग अधिकतर उर्दू जबान वाले थे सो उनलोगों ने इस मंडली का नाम 'निस्संदेह लोग' रख दिया। बाबू लक्ष्मीनारायण चौबे इनके सहपाठी थे। इनके एक अन्य सहपाठी बाबू भगवानदास मास्टर ने 'उर्दू बेगम' नामक पुस्तक लिखी।

इन्होंने स्वाध्याय से विविध भाषाओं (हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत और बंगला) का ज्ञान अर्जित किया। इनकी भाषिक दक्षता इनके साहित्य में दृष्टिगोचर होती है। जीवन यापन के लिए इन्होंने अध्यापन कार्य को चुना। जीवन संघर्ष के आरंभिक दौर में आचार्य रामचंद्र शुक्ल चित्रकला के अध्यापक के पद पर 'लंदन मिशन स्कूल' में कार्यरत रहे। 1919ई. में इनकी नियुक्ति काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिन्दी अध्यापन हेतु हुई। वहीं 1937ई. से इन्होंने हिन्दी विभागाध्यक्ष का पदभार भी सँभाला। अध्यापन के समानांतर ही इनका लेखन कार्य भी सतत चलता रहा। संपादन का कार्य इन्होंने बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन की 'आनंद कादंबिनी' से विद्यार्थी जीवन में ही आरंभ किया। बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन से इनका संपर्क 1896ई. में हुआ। अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद-कार्य का आरंभ भी इन्होंने विद्यार्थी जीवन से ही किया। यही उनके निबंध लेखन की पृष्ठभूमि भी बनी। इनके लेखन में सभी शास्त्रों की प्रतिच्छाया नजर आती है। विविध भाषाओँ के साहित्य के साथ लेखन में कला, मनोविज्ञान, दर्शन, अध्यात्म, धर्म, न्याय इत्यादि विषयों का समावेश इनके व्यापक और जन सरोकारी दृष्टिकोण का परिचय देता है। साहित्य, समाज और भाषा को एक साथ रखकर उसका विवेचन-विश्लेषण करने में सिद्धहस्त रामचंद्र शुक्ल की विद्वता का सारस्वत सम्मान उनके समकालीन, पूर्ववर्ती और परवर्ती सभी ने किया है। उनका साहित्य और समीक्षा हिन्दी साहित्य के पठन-पाठन का अनिवार्य अंग है। 2 फरवरी 1941ई. को इनकी मृत्यु हो गई। आचार्य शुक्ल के स्वर्गप्रयाण के पश्चात उनके सैद्धांतिक निबंधों के संग्रह के रूप में 'रस मीमांसा' पुस्तक 1949ई.में प्रकाशित हुई। इन दोनों खंडों से शेष आचार्य शुक्ल के असंकलित निबंधों को संगृहीत कर नामवर सिंह ने चिंतामणि भाग-3 के रूप में उन्हें पुस्तकाकार कर, उनका संपादन किया। यह निबंध संग्रह पहले 1983ई. में प्रकाशित हुआ। चिंतामणि के इस तीसरे खंड में 21 निबंध हैं। क्षात्र धर्म का सौंदर्य, प्रेम आनंद स्वरूप है, प्रेमघन की छाया स्मृति, कविता क्या है, साहित्य, उपन्यास, कल्पना का आनंद, विश्व प्रपंच की भूमिका, शेष स्मृतियाँ की प्रवेशिका, बुद्धचरित की भूमिका इत्यादि इस संकलन के कुछ विशिष्ट निबंध हैं। चिंतामणि भाग-4 का संपादन कुसुम चतुर्वेदी और ओम प्रकाश सिंह ने किया है। इसमें विभिन्न पुस्तकों की भूमिकाएँ और विभिन्न साहित्यिक समारोहों एवं गोष्ठियों में रामचंद्र शुक्ल द्वारा दिए गए वक्तव्यों को संकलित किया गया हैं।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल की पारिवारिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालें।
- रामचंद्र शुक्ल के हिन्दी प्रेम को उजागर करें।

9.3.2 निबंधकार रामचंद्र शुक्ल की रचनायात्रा

निबंधकार रामचंद्र शुक्ल में हिन्दी साहित्य के प्रति रूचि बाल्यकाल से ही थी। ब्राह्मण परिवार में जहाँ रामचरितमानस और रामचंद्रिका का नित्य श्रवण दिनचर्या में शामिल था वहीं पुरानी हिन्दी कविता और भारतेंदु के नाटकों के प्रति पिता की अनन्य रूचि थी। तरुणाई में ही बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन और केदारनाथ पाठक सरीखे हिन्दी प्रेमियों का सामीप्य मिला। इस साहित्यिक परिवेश में रामचंद्र शुक्ल की रचनायात्रा का पथ तैयार हो रहा था। एक बालक जिसके लिए भारतेंदु हरिश्चंद्र और सत्यवादी हरिश्चंद्र एक ही थे; वह बालक भविष्य का अद्वितीय और प्रतिद्वंद्वीविहीन आलोचक सिद्ध हुआ। यह सब साहित्य निष्ठा और सारस्वत प्रतिभा के बल पर संभव हुआ। यह सुखद संयोग ही कहा जाएगा कि लगभग 1-2 वर्षों के अंतराल में ही इन्होंने संपादन और लेखन दोनों ही क्षेत्र में अपना योगदान दिया। सरस्वती और नागरी प्रचारिणी पत्रिका में इनकी आरंभिक रचनाएँ छपीं। हिन्दी के साथ अंग्रेजी, बंगला और संस्कृत भाषा पर इनके अधिकार ने अनुवाद के क्षेत्र में इनका पथ प्रशस्त किया। अपने क्षेत्र में सक्रिय विदेशी चिंतकों, आलोचकों और कवियों का भी इन्होंने गहन अध्ययन किया। हैकेल (प्राणीतत्ववेत्ता), फ्रॉयड, शापनहावर (दार्शनिक), क्रोचे, डंटन, रिचर्ड्स (आलोचक) तथा एलियट और कंमिग्ज (कवि) इत्यादि विद्वानों के विचारों का गंभीर विवेचन रामचंद्र शुक्ल के निबंधों में देखने को मिल जाता है। इनके संदर्भ में रामस्वरूप चतुर्वेदी का कथन उल्लेखनीय है, देखें- "रामचंद्र शुक्ल न संस्कृत के पंडित थे और न उनके पास अंग्रेजी की डिग्री थी। अपनी मानसिकता बनाने में उन पर कोई दबाव न था, यों इन दोनों प्रतिष्ठित भाषाओं का ज्ञान उन्हें ऐसा था कि उनसे काम-भर की सामग्री वे बराबर ले सकते थे। अंग्रेजी में तो वे तत्कालीन प्रसिद्ध पत्रों में लिखते भी थे, और उससे अनुवाद भी कई प्रकार के किए थे। अंग्रेजी के अलावा कुछ थोड़ा सा अनुवाद बँगला से किया था, पर संस्कृत-ज्ञान उनका शायद ऐसा व्यवस्थित न था कि वहाँ से कुछ अनुवाद करते। " आगे रामचंद्र शुक्ल की रचनायात्रा का विधागत अनुशीलन प्रस्तुत है-

अनुवाद:

रामचंद्र शुक्ल के उल्लेखनीय अनुवाद कार्य हैं। सर टी. माधवराव की पुस्तक माइनर हिंट्स का अनुवाद 'राज्य प्रबंध शिक्षा'के नाम से किया। 'प्लेन लीविंग हाई थिंकिंग', हेनरी न्यूमैन के 'लिटरेचर', एडिसन के 'एसेज ऑन इमेजिनेशन' का अनुवाद क्रमशः 'आदर्श जीवन' (1914ई.), साहित्य (1904ई.), कल्पना का आनंद (1905ई.) इत्यादि शीर्षकों से किया। उन्होंने एडविन अर्नाल्ड के काव्य 'लाइट ऑफ एशिया' का 'बुद्धचरित' शीर्षक से ब्रजभाषा में पद्यानुवाद किया। प्राणीतत्ववेत्ता हैकेल की पुस्तक 'रिडल ऑफ़ द यूनिवर्स' का अनुवाद 'विश्व प्रपंच दर्शन' (1920ई.) के नाम से किया। राखालदास वंद्योपाध्याय के उपन्यास का अनुवाद 'शशांक' शीर्षक से 1922ई. में किया। यह उपन्यास अपने मूलरूप में दुखांत है जिसे अनुवाद करते हुए अनुवादक ने सुखांत बनाकर प्रस्तुत किया है। इस संदर्भ में उनका आत्मकथ्य देखें, "मैंने इस उपन्यास के अंतिम भाग में कुछ परिवर्तन किया है। मूल लेखक ने हर्षवर्द्धन की चढ़ाई में शशांक की मृत्यु दिखाकर इस उपन्यास को दुखांत बनाया है। पर जैसा कि सैन्यमिति के

शिलालेख से स्पष्ट है कि शशांक मारे नहीं गए वे हर्ष की चढ़ाई के बहुत दिनों पीछे तक राज्य करते रहे। अतः मैंने शशांक को गुप्तवंश के गौरव रक्षक के रूप में दक्षिण में पहुँचाकर उनके निःस्वार्थ रूप का दिग्दर्शन कराया है। मूल पुस्तक में करुण रस की पुष्टि के लिए यशोधबल की कन्या लतिका का शशांक पर प्रेम दिखाकर शशांक के जीवन के साथ ही उस बालू के मैदान में उसके जीवन का भी अंत कर दिया गया है। कथा का प्रवाह फेरने के लिए मुझे इस उपन्यास में दो और व्यक्ति लाने पड़े हैं- सैन्यभीति और उसकी बहन मालती। लतिका का प्रेम सैन्यभीति पर दिखाकर मैंने उसके प्रेम को सफल किया है। शशांक के निःस्वार्थ जीवन के अनुरूप मैंने मालती का अद्भुत और अलौकिक प्रेम प्रदर्शित किया है। कलिंग और दक्षिण कोशल में बौद्ध तांत्रिकों के अत्याचार का अनुमान मैंने उस समय की स्थिति के अनुसार किया है। बंग और कलिंग में बौद्ध मत की महायान शाखा ही प्रबल थी। शशांक के मुख से माधवगुप्त के पुत्र आदित्यसेन को जो आशीर्वाद दिलाया गया है वह भी आदित्यसेन के भावी प्रताप का द्योतक है। " अनुवाद कार्य में अक्षरशः अनुवाद को इन्होंने महत्व नहीं दिया। विश्वप्रपंच के प्रथम संस्करण के वक्तव्य में इन्होंने लिखा है कि भाषा के संबंध में इतना कह देना अनुचित न होगा कि उसे केवल संस्कृत या हिन्दी जाननेवाले भी अपनी विचारपद्धति के अनुरूप पाएँगे। कौन सा वाक्य किस अंग्रेजी वाक्य का अक्षरशः अनुवाद है इसका पता लगाने की जरुरत किसी को न होगी।

संपादन:

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा 11 खंडों में प्रकाशित 'हिन्दी शब्दसागर' के निर्माण में सहायक संपादक के रूप में इन्होंने अपनी वैतनिक सेवा दी। नागरी प्रचारिणी पत्रिका के संपादन का कार्यभार भी संभाला। आनंद कादंबिनी के सहायक संपादक (1903-1908ई.) के रूप में कार्य किया। रामचंद्र शुक्ल ने कुछ काव्य ग्रंथों का भी संपादन किया है जो अपनी प्रकृति में आलोचनात्मक हैं- तुलसी ग्रंथावली (भाग-1,2,3 और 4), जायसी ग्रंथावली (1925ई.), भ्रमरगीत सार (1926ई.)। इन्होंने इन ग्रंथों की भूमिका भी लिखी है। नंददुलारे वाजपेयी द्वारा संपादित 'सूरसागर' में सूरसमिति के सदस्य के रूप में रहे हैं।

भूमिका:

अन्य लेखकों की पुस्तकों के अतिरिक्त इन्होंने अपने द्वारा अनूदित, संपादित व लिखित ग्रंथों की भी विस्तृत भूमिका लिखी है। भूमिका के लिए प्रस्तावना और प्रवेशिका जैसे शब्दों का उपयोग किया है। 'शेष स्मृतियाँ' की प्रवेशिका रामचंद्र शुक्ल ने लिखी है। इसमें महाराजकुमार रघुवीर सिंह के पाँच निबंध संकलित हैं। ताजमहल, फतेहपुर सीकरी, आगरे का किला, लाहौर की तीन (जहाँगीर, नूरजहाँ और अनारकली की) कब्रें और दिल्ली का किला। ये निबंध भावात्मक हैं। "कहने की आवश्यकता नहीं कि ये पाँचो स्थान जिस प्रकार मुगल सम्राटों के ऐश्वर्य, विभूति, प्रताप, आमोद-प्रमोद, और भोग विलास के स्मारक हैं उसी प्रकार उनके अवसाद, विषाद और नैराश्य और घोर पतन के। मनुष्य की ऐश्वर्य, विभूति, सुख और सौंदर्य की वासना अभिव्यक्त होकर जगत के किसी छोटे या बड़े खंड को अपने रंग में रंगकर मानुषी सजीवता प्रदान करता है। देखते-देखते काल उस वासना के आश्रय मनुष्य को हटाकर किनारे कर देता है। धीरे-धीरे ऐश्वर्य विभूति का वह रंग भी मिटता जाता है। जो कुछ शेष रह जाता है

वह बहुत दिनों तक ईंट-पत्थर की भाषा में एक पुरानी कहानी कहता रहता है। संसार का पथिक मनुष्य उसे अपनी कहानी समझ कर सुनता है क्योंकि उसके भीतर झलकता है नित्य और प्रकृत स्वरूप। ”

इतिहास :

‘हिन्दी साहित्य का इतिहास’ इनका प्रमुख ग्रंथ है। यह ग्रंथ अपने मूल रूप में ‘हिन्दी शब्द सागर की प्रस्तावना’ है, जिसका समय 1929ई. ठहरता है। बाद में 1940ई. में इसे संशोधित और संवर्धित करके प्रस्तुत किया गया।

कहानी:

इनके द्वारा रचित कहानी है ‘ग्यारह वर्ष का समय’। यह हिन्दी की आरंभिक मौलिक कहानियों में से एक है। यह कहानी में कहानीकार स्वयं उपस्थित है। अपने मित्र के अनमने मन को बहलाने के लिए साथ टहलने निकल पड़ते हैं। इस भ्रमण में प्रकृति का सुंदर सामीप्य उन्हें मिलता है। इसका चित्रात्मक वर्णन लेखक ने किया है। अँधेरे में खंडहर के पास पहुँचने के बाद सफ़ेद छाया को देखकर दोनों मित्रों में कौतुहल बढ़ता है। शीघ्र ही यह चरम पर पहुँचता है। और उनके सामने सफ़ेद वस्त्रों में एक स्त्री आती है जो इस खंडहर में वर्षों से गुप्त रूप से रह रही है। चुड़ैल संबंधी अंधविश्वास के कारण ग्रामीण इधर नहीं आते हैं और आते भी हैं तो डर जाते हैं। कहानी में स्थान, परिवेश का विवरण सजीवता भरा है और मनोभाव और हृदयदशा का चित्रण मनोविश्लेष्णात्मक रीति से किया गया है। कहानी का अंत सुखांत है। वह खंडहर वाली स्त्री कहानीकार के मित्र की वर्षों से बिछुड़ी हुई धर्मपत्नी है।

कविता:

‘मधुस्त्रोत’ इनका काव्य संग्रह है। यह 1971ई. में प्रकाशित हुआ। भारत और वसंत के पारस्परिक संवाद कवि ने रूपायित किया है। एक प्राचीन राजभवन के अवशेष में भारत निश्चेष्ट पड़ा है तभी झूमते पल्लवित कुसुमित वसंत का प्रवेश होता है। अपनी विक्षिप्तावस्था में भारत कहता है, “देखि तुमारो वेष रंगीलो। रुकै हँसी नहीं मेरी। मारी गई अवसि मति,भैया। मेरी अथवा तेरी। । / हाँफत हौ जब बाय बाय। मुँह देती महक बताए। आवत हौ भर पेट मलय के। कोमल काठ चबाए। । ” यही भारत जब चैतन्य अवस्था में आता है तब वह वसंत से कहता है, “आवत सुनै तुम्हें जब, भाई/ लज्जा आइ दबावै। । तन में रुधिर नहीं इतना जो/ तुमसों धाइ मिलावै। । ” कविता में भी मनोविश्लेषण की झलक मिल रही है। चित्त की दशा बुद्धि और वाणी को किस प्रकार प्रभावित करती है, आप देख सकते हैं।

कविताओं में भी रामचंद्र शुक्ल का आलोचनात्मक पक्ष उभर कर आया है। अपनी आलोचना के माध्यम से जिन तथ्यों को वे न प्रकट कर सके उन तथ्यों को व्यंग्यात्मक शैली में कविता के माध्यम से कहा है। रामस्वरूप चतुर्वेदी कहते हैं कि कविता से उनकी आलोचना नरम है। उदाहरण के लिए कुछ कवित्तों के अंश प्रस्तुत हैं-

‘खलेगा ‘प्रकाशवाद’ जिनको हमारा यह/ कहेंगे कुवाद वे जो लेंगे सह सारे हम।’ या
काव्य में ‘रहस्य’ कोई ‘वाद’ है न ऐसा, जिसे/ लेकर निराला कोई पंथ ही खड़ा करे;

साहित्य संबंधी विवाद एवं कविता की रचना प्रक्रिया जैसे विषय पर इनके विचार काव्यात्मक लहजे में उपलब्ध हैं। अधिकतर प्रतिक्रिया छायावाद से संबंधित है।

निबंध:

इनकी पहली आलोचनात्मक पुस्तक 'काव्य में रहस्यवाद' (1929ई.) है। उसके बाद 'विचार वीथी' (1930ई.) निबंध संग्रह प्रकाशित हुआ। इसमें प्रकाशित निबंध ही बाद में चिंतामणि के प्रथम दो खंडों के रूप में क्रमशः 1939 और 1945ई. में प्रकाशित हुए। इन दोनों खंडों में संकलित निबंध 1912 से 1919ई. की कालावधि में लिखे गए थे।

चिंतामणि के प्रथम खंड का संपादन रामचंद्र शुक्ल ने स्वयं किया। यह पुस्तक उनके विचारात्मक, साहित्य सिद्धांत विषयक और साहित्यिक समीक्षा संबंधी निबंधों का संग्रह है। चिंतामणि भाग-2 में संकलित निबंध- काव्य में प्रकृति दृश्य (1922ई.), काव्य में रहस्यवाद (1929ई.), काव्य में अभिव्यंजनावाद (1935ई.)। चिंतामणि भाग-3 में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित असंकलित निबंधों को संकलित किया गया है। इसकी विशिष्टता यह है कि इसमें रामचंद्र शुक्ल के सुप्रसिद्ध निबंध 'कविता क्या है' के प्रथम स्वरूप यानी इस लेख के पहले ड्राफ्ट को शामिल किया गया है। 'कविता क्या है' निबंध का जो स्वरूप आज हमारे सामने है वह उस निबंध का परिवर्तित, परिमार्जित और प्रौढ़ स्वरूप है। यह निबंध पहली बार 1909ई. में सरस्वती में प्रकाशित हुआ। उसके बाद कई बार इस निबंध को सुधारा गया। इस प्रक्रिया में विषय का स्वरूप विस्तृत हुआ और विवेचन-विश्लेषण की सूक्ष्मता अधिक सूक्ष्म हुई। आज इसका जो स्वरूप हमारे सामने है, इस रूप में यह निबंध 1922ई. में स्थिर हुआ ऐसा माना जाता है। यह पूर्ण परिवर्धित निबंध चिंतामणि भाग-1 में संकलित है। यहाँ इस निबंध का खंड विभाजन इस प्रकार है- सभ्यता के आवरण और कविता, कविता और सृष्टि-प्रसार, मार्मिक तथ्य, काव्य और व्यवहार, मनुष्यता की उच्च भूमि, भावना और कल्पना, मनोरंजन, सौंदर्य, चमत्कारवाद, कविता की भाषा, अलंकार, कविता पर अत्याचार, कविता की आवश्यकता। इस निबंध का आरंभिक स्वरूप जो सरस्वती में प्रकाशित हुआ था, उसके खंड इस प्रकार हैं- कार्य में प्रवृत्ति, मनोरंजन और स्वभाव-संशोधन, कविता की आवश्यकता, सृष्टि और सौंदर्य, कविता की भाषा, श्रुतिसुखदता और अलंकार। रामचंद्र शुक्ल की निबंध दृष्टि के विकास को समझने के लिए इस एक निबंध 'कविता क्या है' की महत्ता अन्यतम है। इसका आरंभिक स्वरूप जिसे चिंतामणि भाग-3 में सम्मिलित किया गया है उसकी महत्ता भी अन्यतम है। यह रामचंद्र शुक्ल की निबंध यात्रा का आरंभिक बिंदु है। अपने लेखन के प्रथम चरण में इतने गंभीर विषय का चयन और उसका गहन विश्लेषण करना निबंधकार की अप्रतिम प्रतिभा और उनकी साहित्य निष्ठा का परिचायक है। इस निबंध में उन्होंने कविता संबंधी अपनी मौलिक मान्यताओं का प्रतिपादन किया है। अपनी साहित्य यात्रा की गति और साहित्यिक रूचि के सामानांतर उन्होंने इस निबंध के विषय को विस्तृत किया है। चलते रहने की यह मानसिक वृत्ति वाला साहित्य ही जीवंत साहित्य होता है। मनुष्य के जीवन में स्थिरता केवल प्राणांत के एक क्षण के लिए ही ग्राह्य है क्योंकि अगले ही क्षण वहाँ भी गति है। साहित्य का संस्कार व्यक्ति को गतिवान करता है। उसकी समझ को निरंतर परिष्कृत करता है। इसका प्रमाण है आचार्य शुक्ल और उनके निबंध।

इनमें भी विशेष रूप से निबंध 'कविता क्या है'। इस संदर्भ में 'हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास' पुस्तक में रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं, "काव्य-शास्त्र की बड़ी समृद्ध परंपरा भारत और पश्चिम दोनों जगह रही है, जिसका अच्छा और सुलझा हुआ परिचय आचार्य शुक्ल को था। पर दोनों परंपराओं से जरा भी आक्रांत हुए बिना लेखक यहाँ कविता के सामान्य और व्यापक रूप की अपने ढंग से व्याख्या करता है। यह निबंध साहित्य के क्षेत्र में लेखक के वैचारिक आत्मविश्वास का पहला सबल प्रमाण है, जैसे कि भाव और मनोविकार संबंधी निबंध मनोविज्ञान के क्षेत्र में। कुल मिलाकर आचार्य शुक्ल का यह गद्य लेखन सही अर्थों में ललित निबंध का रूप है, उसकी शैली में लालित्य है, जबकि अपने व्यवस्थित प्रस्तुतिकरण में वे निबंध हैं। द्विवेदी युग के बाद, छायावादी काव्य में जीवनानुभव का जैसा संश्लिष्ट चित्रण है, उसका समानांतर रूप प्रेमचंद में विशेषतः उत्तरकालीन कथा-साहित्य में मिलता है। मानव स्वभाव का वैसा ही संश्लिष्ट चित्रण रामचंद्र शुक्ल के मनोविकार संबंधी निबंधों में हुआ है। " इतिहास में शशांक कट्टर शैव, घोर बौद्धविद्वेषी और विश्वासघाती प्रसिद्ध हैं। यह इतिहास बाणभट्ट की आख्यायिका और कट्टर बौद्ध्यात्री ह्वेनसांग का यात्रा विवरण मात्र है। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार उपन्यासकार का काम यही है कि इतिहास ने जहाँ छोड़ा है वहाँ से अपनी कल्पना द्वारा आरोप करके सजीव चित्र खड़ा करे।

आलोचनात्मक ग्रंथ :

उन्होंने कई आलोचनात्मक ग्रंथों का लेखन और संपादन किया, देखें- , गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास, त्रिवेणी, काव्य में रहस्यवाद इत्यादि। आचार्य शुक्ल की पुस्तक सूरदास का संपादन विश्वनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा किया गया है। 'त्रिवेणी' में जायसी, सूरदास और तुलसीदास से संबंधित तीन आलोचनात्मक निबंध संकलित हैं। 'गोस्वामी तुलसीदास' पुस्तक के प्रथम संस्करण में तुलसीदास का जीवन चरित भी गौण रूप में सम्मिलित किया गया था। आगामी संशोधित संस्करण में पूर्ण आलोचनात्मक प्रस्तुति के लक्ष्य से इस जीवन-चरित वाले अंश को हटा दिया गया तथा तुलसी की भक्ति और काव्य पद्धति को विशेष रूप से स्पष्ट करने की चेष्टा की गई। इस हेतु इसमें तुलसीदास की भक्ति और काव्य से संबंधित कुछ अंशों को जोड़ा गया है। समग्र विवेचन से प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर हिन्दी साहित्य में तुलसीदास का स्थान निर्धारित करते हुए लेखक का कथन है, "काव्य के प्रत्येक क्षेत्र में हमने उन्हें उस स्थान पर देखा, जिस स्थान पर उस क्षेत्र का बड़े से बड़ा कवि है। मानव अंतःकरण की सूक्ष्म से सूक्ष्म वृत्तियों तक हमने उनकी पहुँच देखी। बाह्य जगत के नाना रूपों के प्रत्यक्षीकरण में भी हमने उन्हें तत्पर पाया। काव्य के बहिरंग विधान की सुंदर-प्रणाली का परिचय भी हमें मिला। ....सबसे बड़ी विशेषता है उनकी प्रबंधपटुता जिसके बल से आज 'रामचरितमानस' हिंदू जनता के जीवन का साथी हो रहा है। तुलसी की वाणी मनुष्य जीवन की प्रत्येक दशा तक पहुँचनेवाली है; क्योंकि उसने रामचरित का आश्रय लिया है। .....केवल एक ही महात्मा और हैं जिनका नाम गोस्वामीजी के साथ लिया जा सकता है। वे हैं प्रेमस्रोत-स्वरूप भक्तवर सूरदासजी। ..पर भाव और भाषा दोनों के विचार से गोस्वामीजी का अधिकार अधिक विस्तृत है। "

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल ने किस-किस विधा में रचना की?

9.3.3 निबंधकार रामचंद्र शुक्ल की वैचारिकता के विविध आयाम

साहित्य और मनोविज्ञान के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल की वैचारिकता के विभिन्न बिंदु दिखाई देते हैं, जो उनकी परिपक्वता और विद्वता का परिचय देते हैं। भारतीय और पाश्चात्य काव्यशास्त्र से पूर्ण परिचित होते हुए अपने निबंधों में इन्होंने मौलिक व्याख्या दी है। विद्वानों ने 'कविता क्या है' निबंध में कविता संबंधी इनकी मौलिक व्याख्यायों को देखकर; इसे 'निबंध साहित्य के क्षेत्र में लेखक के वैचारिक आत्मविश्वास का पहला सबल प्रमाण माना है'। मनोविज्ञान के क्षेत्र में इनके भाव और मनोविकार संबंधी निबंधों की वैचारिकता से आप (रामचंद्र शुक्ल और उनके निबंध संबंधी इकाई में) भलीभाँति परिचित हो चुके हैं। साहित्य संबंधी वैचारिकता का अध्ययन यहाँ अभीष्ट है। 'कविता क्या है' निबंध की भी संक्षिप्त चर्चा पहले की जा चुकी है। अब आगे-

कविता सृष्टि के कण-कण में है। हरे-भरे खेत, जंगल, नदी, झरने, पर्वत, पक्षियों के कलरव, फूलों-फलों से लदे वृक्ष, बाग़ और मनुष्य के जीवन के विविध भावों में कविता बसती है। जिस व्यक्ति के भीतर का रागात्मक सत्व भाव जागृत है, वह इस कविता में निमग्न हो पाता है। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार "इस विश्वकाव्य की रसधारा में जो थोड़ी देर के लिए निमग्न न हुआ उसके जीवन को मरुस्थल की यात्रा ही समझनी चाहिए। " मनुष्य प्रकृति प्रेमी है। अपने उन्नत जीवन में ईंट-कंक्रीट के बीच भी वह प्रकृति के लिए जगह बनाता है। मनुष्य की दृष्टि में जो जगह है वह उस प्रकृति के लिए बंदीगृह है। लेखक ने इस जगह को 'घेरा' कहा है। मनुष्य और प्रकृति के साहचर्य में जीवन की सफलता है और इसके बिंबग्रहण में कविता की सार्थकता।

'काव्य में अर्थग्रहण मात्र से काम नहीं चलता; बिंबग्रहण अपेक्षित होता है। काव्यदृष्टि नरक्षेत्र के भीतर रहती है कहीं मनुष्येतर बाह्य सृष्टि के और कहीं समस्त चराचरके। ' काव्य का अनुशीलन मनुष्य को कर्मण्य बनाता है। इससे मनुष्य का कर्मक्षेत्र विस्तार पाता है। यह सब सहृदय के भीतर के भावोद्रेक से संभव होता है। अतः कविता भाव के प्रसार द्वारा कर्मपथ का निर्माण करती है और मनुष्य के भीतर मनुष्यता को जिलाए रखती है। कविता जीवन की मार्मिकता से साक्षात कराती है। इसका आधार सौंदर्य है। रसात्मकता के साथ उक्तिवैचित्र्य भी काव्य का अनन्य अंग है। रस-चिंतन से ही संबंधित है साधारणीकरण का व्यापार जिसे पाश्चात्य समीक्षा पद्धति में 'अहं का विसर्जन और निःसंगता' (Impersonality and Detachment) कहा जाता है। भारतीय काव्यशास्त्र में यही 'रस का लोकोत्तरत्व' या 'ब्रह्मानंद सहोदरत्व' है। पाठक या श्रोता या दर्शक आश्रय के आलंबन के साथ तदाकार हो जाते हैं। इस दशा को रस-दशा कहते हैं जब पात्र और भावक की मनोदशा एक-सी हो जाती है। भारतीय श्रव्य और दृश्य काव्य रस प्रधान हैं। इनका लक्ष्य साधारणीकरण है। पश्चिम के दृश्य काव्यों का लक्ष्य रसानुभूति न होकर 'आश्चर्य और कौतूहल' होता है। इसीसे उनका लक्ष्य शील वैचित्र्य या अंतःप्रकृति या वैचित्र्य के साक्षात्कार पर केंद्रित रहता है। "वैचित्र्य साक्षात्कार से केवल तीन बातें हो सकती हैं- (१) आश्चर्यपूर्ण प्रसादन, (२) आश्चर्यपूर्ण अवसादन या (३) कुतूहल मात्र। आश्चर्यपूर्ण प्रसादन शील के चरम उत्कर्ष अर्थात सात्विक आलोक के साक्षात्कार से होता है। भरत का राम की पादुका लेकर

विरक्त रूप में बैठना। ....ऐसे दृश्य हैं जिनसे स्रोता या दर्शक के हृदय में आश्चर्य मिश्रित श्रद्धा या भक्ति का संचार होता है। आश्चर्यपूर्ण अवसादन शील के अत्यंत पतन अर्थात तामसी घोरता के साक्षात्कार से होता है। यदि किसी काव्य या नाटक में हूण सम्राट मिहिरकुल पहाड़ की चोटी पर से गिराए जाते हुए मनुष्य के तड़फने, चिल्लाने आदि की भिन्न-भिन्न चेष्टाओं पर भिन्न-भिन्न ढंग से आह्लाद की व्यंजना करे तो उसके आह्लाद में किसी श्रोता या दर्शक का हृदय योग न देगा...कुपित होगा। " कह सकते हैं कि भरत की प्रकृति शीलवान है और मिहिरकुल की क्रूर। शीलवान होना और क्रूर होना दो अलग वर्ग की स्पष्ट प्रकृति हैं। कुछ प्रकृति ऐसी होती है जिसका संबंध किसी वर्ग विशेष से नहीं होता है; इस संदर्भ में स्पष्ट प्रसादन या अवसादन नहीं होता है। इस प्रकृति के साक्षात्कार से केवल कौतुहल और मनोरंजन होता है। 'ऐसी अद्वितीय प्रकृति के चित्रण को डंटन ने कवि की नाटकीय या निरपेक्ष दृष्टि का सूचक और काव्यकला का चरम उत्कर्ष कहा है। ...निरपेक्ष दृष्टिवाले नाटककार एक नवीन नर-प्रकृति की सृष्टि करते हैं। ' इनके अनुसार शेक्सपियर इस अद्वितीय प्रकृति वाले कवि थे। डंटन के इस कथन का खंडन करते हुए रामचंद्र शुक्ल का कथन है कि विचारपूर्वक देखा जाय तो हैमलेट की मनोवृत्ति भी ऐसे व्यक्ति की मनोवृत्ति है जो अपनी माता का घोर विश्वासघात और जघन्य शीलच्युति देख अर्द्धविक्षिप्त-सा हो गया। परिस्थिति के साथ उसके वचनों का सामंजस्य उसकी बुद्धि की अव्यवस्था का द्योतक है अतः उसका चरित्र भी एक वर्ग-विशेष के चरित्र के भीतर आता जाता है।

काव्य के क्षेत्र में किसी वाद का प्रचार धीरे-धीरे उसकी सारसत्ता को ही चर जाता है। ..योरोप में इधर पचास वर्ष के भीतर 'रहस्यवाद', 'कलावाद', 'व्यक्तिवाद' इत्यादि जो अनेक वाद चले थे, वे अब वहाँ मरे हुए आंदोलन समझे जाते हैं। " इन वादों से कविता के प्रति स्वाभाविक उमंग नष्ट होती है और नयापन के हवस का मात्र प्रसार होता है। इनके विचार में जैन, सिद्ध और नाथ का साहित्य धार्मिक और सांप्रदायिक काव्य है। आदिकालीन वीरगाथा काव्य में ही साहित्य की प्रकृति दृष्टिगोचर होती है। गद्य साहित्य पर विचार करते हुए इन्होंने स्पष्ट कह कि साहित्य को राजनीति से हमेशा ऊपर रहना चाहिए।

साहित्यिक वैचारिकी के अतिरिक्त मनुष्य के जीवन और समाज केंद्रित अपनी वैचारिकता में वे अतीत की स्मृति को सँजो कर रखने में ही जीवन की अखंडता और व्यापकता का दर्शन करते हैं, देखें- "हृदय के लिए अतीत मुक्तिलोक है। जहाँ वह अनेक बंधनों से छूटा रहता है और अपने शुद्ध रूप में विचरता है। वर्तमान हमें अंधा बनाए रहता है; अतीत बीच-बीच में हमारी आँखें खोलता रहता है। मैं तो समझता हूँ कि जीवन का नित्य स्वरूप दिखानेवाला दर्पण मनुष्य के पीछे रहता है; आगे तो बराबर खिसकता हुआ परदा रहता है। बीती बिसारनेवाले 'आगे की सुध' रखने का दावा किया करें, परिणाम अशांति के अतिरिक्त और कुछ नहीं। वर्तमान को संभालने और आगे की सुध रखने का डंका पीटने वाले संसार में जितने ही अधिक होते जाते हैं संघशक्ति के प्रभाव से जीवन की उलझनें उतनी ही बढ़ती जाती है। बीती बिसारने का अभिप्राय है जीवन की अखंडता और व्यापकता की अनुभूति का विसर्जन, सहृदयता और भावुकता का भंग- केवल अर्थ की निष्ठुर क्रीड़ा।

कुशल यही है कि जिनका दिल सही सलामत है, जिनका हृदय मारा नहीं गया है, उनकी दृष्टि अतीत की ओर जाती है। ....पर मेरी समझ में अतीत की ओर मुड़-मुड़ कर देखने की प्रवृत्ति सुख-दुख की भावना से परे है। स्मृतियाँ मुझे केवल सुख-पूर्ण दिनों के भग्नावशेष नहीं समझ पड़ती। वे हमें लीन करती है, हमारा मर्म स्पर्श करती है, बस हम इतना ही कह सकते हैं। ” मनुष्य का बीता हुआ कल उसे उसके जीवन पथ में आगे बढ़ने में सहायक होता है। अतीत के अनुभव से आगे की राह आसान होती है। अपने अतीत में झांकते समय मनुष्य का हृदय मुक्तावस्था में रहता है। इस मुक्तावस्था में विचरण वही कर सकते हैं जो भावुक और हृदयवान हैं।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल की वैचारिकता पर प्रकाश डालें।

9.3.4 निबंधकार रामचंद्र शुक्ल का हिन्दी साहित्य में स्थान

साहित्य और मनोविज्ञान के जटिल विषयों पर ललित शैली में निबंध लिखना, अपनेआप में चुनौतीपूर्ण है। साहित्यिक रूचि, प्रौढ़ चिंतन और अध्ययन के समन्वय वाले इस व्यक्तित्व ने इस चुनौती का सफलतापूर्वक निर्वाह किया। विषय के अनुसार कहीं जीवन के मार्मिक प्रसंगों की चर्चा की तो कहीं व्यंग्य और विनोद के प्रसंग को शामिल करके गूढ़ विवेचन को रोचक साहित्यिक कलेवर में पेश किया। मनोविज्ञान और साहित्य विषयक इनके निबंध और आलोचना ने हिन्दी साहित्य को एक सुदृढ़ आधार दिया। यहीं निबंध साहित्य का चरमोत्कर्ष भी दिखाई देता है। इनकी आलोचकीय टिप्पणियाँ स्वतंत्र और निर्भीक हैं। मौलिक कहानी और कविता भी इन्होंने लिखा है। अंग्रेजी, बंगला इत्यादि भाषाओँ से हिन्दी में अनुवाद कर इन्होंने भाषिक समृद्धि की अभिवृद्धि की। पाश्चात्य साहित्य और चिंतन का अध्ययन कर उनसे परिचित हुए तथा उनके सिद्धांतों और विचारों पर भी अपनी बेबाक सार्थक और व्यावहारिक टिपण्णी की। यह अंधानुकरण की प्रवृत्ति को रोकने में सहायक रहा। आलोचना कार्य में इन्होंने तटस्थता का निर्वाह किया। ‘जायसी’ और ‘तुलसी’ की आलोचना करते हुए उन्होंने स्पष्ट संकेत किया कि तुलसी को समझने के लिए जायसी की भाषा का अध्ययन आवश्यक है। हिन्दी साहित्य में इनका स्थान निर्धारण करने वाले तथ्यों का उल्लेख निम्नवत है-

- हिन्दी शब्द सागर, जिसकी प्रस्तावना रूप में हिन्दी साहित्य का इतिहास संक्षिप्त रूप में लिखा गया, और हिन्दी भाषा का व्याकरण- ये तीनों योजनाएँ नागरी प्रचारिणी सभा की थी, जिनके पीछे श्यामसुंदरदास का प्रमुख हाथ कहा जा सकता है। कोश, इतिहास और व्याकरण लेखन ने हिन्दी को उसके स्वरूप का अभिज्ञान दिया, जिस प्रक्रिया में तीन अपने ढंग के विशिष्ट व्यक्तियों का उदय हुआ- कोशकार रामचंद्र वर्मा, इतिहासकार रामचंद्र शुक्ल और वैयाकरण कामताप्रसाद गुरु। (रामस्वरूप चतुर्वेदी)
- छायावाद युग के समानांतर निबंध क्षेत्र में विशिष्ट लेखन रामचंद्र शुक्ल का है। उनके विषय वैदुषिक ढंग के हैं, पर शैली में निबंध-लेखन का लालित्य है। (रामस्वरूप चतुर्वेदी)
- ....आधुनिक युग की समालोचना को पं. रामचंद्र शुक्ल ने एक नवीन रूप दिया। उन्होंने इस क्षेत्र में आलोचक के उत्तरदायित्व का अनुभव करते हुए गंभीरतायुक्त और

गवेषनापूर्ण कार्य किया। शुक्ल जी ने अपनी आलोचना में केवल गुण-दोष ही नहीं निकाले। प्रत्युत उन्होंने पूर्वीय और पश्चिमीय समालोचनों सिद्धांतों का अच्छा समन्वय किया। उन्होंने काव्य की गहराई में पैठकर कवि की अंतर्दृष्टि की प्रवृत्ति और प्रेरणा का सहानुभूति से अनुशीलन किया। (साहित्य के इतिहास ग्रंथ से)

- भाव क्षेत्र की असम्बद्ध बातों को एक सूत्र में गुंफित करके लड़ी के रूप में रखने की विशेषता शुक्ल जी को ही प्राप्त है। ....अंग्रेजी साहित्य में आज जो स्थान रस्किन और बेकन को प्राप्त है वही स्थान हिन्दी साहित्य में शुक्ल जी को प्राप्त है। 'चिंतामणि' पर आपको मंगलाप्रसाद पारितोषिक पुरस्कार भी मिला है। वास्तव में आपके हाथों में आकर हिन्दी भाषा गौरवान्वित ही हुई है। (साहित्य के इतिहास ग्रंथ से)
- आचार्य शुक्ल और बाबू श्यामसुंदरदास ने हिन्दी की वैज्ञानिक आलोचना का भव्य भवन निर्मित किया। भारत में समालोचना काव्य-सिद्धांत-निरूपण के रूप में प्रचलित थी। कवियों की निजी विशेषताओं को या तो सूक्तियों और प्रशस्तियों के माध्यम से प्रकट किया जाता था अथवा टीकाओं के अंतर्गत कभी-कभी काव्य-सौंदर्य-विधायक सूक्ष्म तत्वों का संकेत कर दिया जाता था। पाश्चात्य साहित्य से परिचित होने और उसका स्वस्थ प्रभाव ग्रहण करने का परिणाम यह हुआ कि आलोचना एक स्वतंत्र विषय के रूप में मान्य हुई। (नगेन्द्र)
- कवि विशेष के सामान्य गुण-दोष प्रकट करने के साथ ही उसके काव्य प्रवृत्तियों की छानबीन करके उसमे निहित देश-काल सापेक्ष्य और शाश्वत तत्वों का उद्घाटन करने तथा मानवीय मूल्यों की दृष्टि से उसका महत्व-प्रतिपादन करने की नयी परिपाटी का विकास आगे चलकर आचार्य शुक्ल की आलोचनाओं द्वारा हुआ।

रामचंद्र शुक्ल ने अपनी रचना प्रक्रिया को 'विरुद्धों का सामंजस्य' कहा है। इन्होंने साहित्य के पुराने और नए मानदंडों में सामंजस्य बिठाते हुए साहित्य विवेचन के अंतर्गत रचना को केंद्र में रखा तथा काव्यभाषा एवं बिंबधर्मिता के महत्व पर प्रकाश डाला। हिन्दी साहित्य जगत में इनका स्थान अद्वितीय है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इन्हें प्रतिद्वंद्वीरहित आलोचक कहा।

9.4 पाठ सार

रामचंद्र शुक्ल का जन्म उत्तरप्रदेश के बस्ती जिले के अगौना गाँव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम पं. चंद्रबली पांडे और माता का नाम निवासी देवी था। रामचरितमानस का नित्य श्रवण परिवार का दैनिक नियम था। बाल्यकाल से ही हिन्दी के प्रति इनकी निष्ठा थी और भारतेंदु हरिश्चंद्र के प्रति अपूर्व राग व माधुर्य था। बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन, महावीर प्रसाद द्विवेदी एवं नागरी प्रचारिणी सभा के संपर्क में इनका साहित्य लेखन आरंभ हुआ और निरंतर गतिमान रहा। एक प्रबुद्ध आलोचक, प्रखर निबंधकार, खोजी चिंतक, मौलिक कहानीकार, कवि, इतिहासकार और भूमिका लेखक के रूप में इन्होंने लगातार हिन्दी साहित्य को समृद्ध और गौरवान्वित किया। साहित्य और आलोचना के मानदंडों को स्थापित किया। चित्रकला विषय में शोध निर्देशक के रूप में भी इन्होंने अपनी सेवा दी। इन्होंने साहित्य

में वाद के प्रसार को साहित्य की उन्नति में बाधक माना। अंग्रेजी साहित्य में आज जो स्थान रस्किन और बेकन को प्राप्त है वही स्थान हिन्दी साहित्य में शुक्ल जी को प्राप्त है। 'चिंतामणि' पर इन्हें मंगलाप्रसाद पारितोषिक पुरस्कार भी मिला है। 'काव्य में रहस्यवाद' पर हिंदुस्तानी अकादमी द्वारा इनका सम्मान किया गया।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

1. निबंधकार रामचंद्र शुक्ल ने रचना को विवेचन का केंद्र बिंदु बनाया। इन्होंने आलोचना को आधुनिक बनाया। रचना को उन्होंने स्वायत्त माना पर रचना, रचनाकार और समाज से स्वतंत्र नहीं होती है।
2. स्वाध्याय के बल पर विविध भाषाओँ का ज्ञान अर्जित किया।
3. इन्होंने भारतीय और पाश्चात्य काव्यशास्त्र का गहन अध्ययन किया। इसका स्वतंत्र प्रयोग उन्होंने अपने आलोचना व निबंध लेखन में किया। इन सिद्धांतों पर भी खुलकर अभिव्यक्ति दी परिणामस्वरूप आलोचना एक स्वतंत्र विधा के रूप में स्थिर हुआ।
4. इतिहास या आलोचना के लेखन में इन्होंने साहित्येतर मानदंड स्वीकार नहीं किया।
5. रामचंद्र शुक्ल के अनुसार उपन्यासकार का काम यही है कि इतिहास ने जहाँ छोड़ा है वहाँ से अपनी कल्पना द्वारा आरोप करके सजीव चित्र खड़ा करे। इन्होंने अपने काव्य मूल्य रामचरितमानस से विकसित किए।
6. उपयोगितावाद और अध्यात्म की काव्य और कला के क्षेत्र में कोई जरुरत नहीं है।
7. काव्य के केवल दो पक्ष होते हैं-सुंदर और कुरूप। भल-बुरा, शुभ-अशुभ, पाप-पुण्य, मंगल-अमंगल, अनुपयोगी-उपयोगी ये शब्द काव्य क्षेत्र के शब्द नही हैं।
8. उन्होंने अपने लेखन में मार्क्स का उल्लेख नही किया है। उनका विचार है कि साहित्य को राजनीति से ऊपर होना चाहिए।

9.6 शब्द संपदा

1. छायावाद- प्रस्तुत के स्थान पर उसकी व्यंजना करनेवाली छाया के रूप में अप्रस्तुत का कथन, हिन्दी कविता की एक प्रवृत्ति। इसमें रहस्यवाद की भावना का समावेश होता है।
2. रहस्यवाद- मनुष्य के संस्कार की एक प्रवृत्ति जिसमें धर्म, दर्शन, कर्मकांड,कला, कविता इत्यादि की अभिव्यक्ति देश-काल के अनुरूप होती है।
3. साहित्येतर- साहित्य से अलग या भिन्न या इतर
4. प्रतिद्वंद्वीरहित- किसी विरोधी का न होना

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. रामचंद्र शुक्ल की पारिवारिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालें।
2. रामचंद्र शुक्ल की रचनायात्रा के विविध सोपानों का विस्तृत वर्णन करें।
3. रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य में लेखन का आरंभ कैसे किया?
4. रामचंद्र शुक्ल की आलोचना दृष्टि के बारे में बताएँ।
5. निबंधकार के रूप में रामचंद्र शुक्ल की उपलब्धियों का विवरण दें।
6. हिन्दी साहित्य में रामचंद्र शुक्ल का स्थान निर्धारित करें।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. रामचंद्र शुक्ल की वैचारिकता को विश्लेषित करें।
2. एक कवि और कहानीकार के रूप में रामचंद्र शुक्ल का मूल्यांकन करें।
3. रामचंद्र शुक्ल के अनुसार अतीत की स्मृति का महत्व क्या है?
4. साधारणीकरण और व्यक्ति-वैचित्र्यवाद से आप क्या समझते हैं?
5. रामचंद्र शुक्ल के अनुवाद की विशिष्टता बताते हुए उनके अनुवाद कार्यों का उल्लेख करें।
6. शशांक उपन्यास को सुखांत बनाने के लिए आचार्य शुक्ल ने उसमें क्या परिवर्तन किए हैं?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए-

1. रामचंद्र शुक्ल का जन्म ....ई. में हुआ। ( )

   (अ) 1884 (आ) 1984 (इ) 1885 (ई) 1883
2. रामचंद्र शुक्ल की मृत्यु ....ई. में हुई। ( )

   (अ) 1943 (आ) 1941 (इ) 1940 (ई) कोई नहीं
3. रामचंद्र शुक्ल किस विश्वविद्यालय के हिन्दी प्राध्यापक नियुक्त हुए? ( )

   (अ) इलाहाबाद विश्वविद्यालय (आ) प्रयाग वि. (इ) काशी हिंदू वि. (ई) सभी
4. रामचंद्र शुक्ल के पिता का ....नाम था? ( )

   (अ) पं. चंद्रबली पांडे (आ) पं.चंद्रबली शुक्ल (इ) अ और ई (ई) निवासी देवी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. इनके विचार में जैन, सिद्ध और नाथ का साहित्य .... और .... काव्य है।
2. हृदय के लिए ....मुक्तिलोक है।
3. शेष स्मृतियाँ की ....रामचंद्र शुक्ल ने लिखी है।
4. गोस्वामी तुलसीदास ....ग्रंथ है।
5. इन्होंने .... और .... काव्यशास्त्र का गहन अध्ययन किया।
6. रामचंद्र शुक्ल ने अपनी ....को 'विरुद्धों का सामंजस्य' कहा है।
7. साहित्य को .... से ऊपर होना चाहिए।
8. छायावाद युग के समानांतर निबंध क्षेत्र में विशिष्ट लेखन .... का है।
9. .... और .... की काव्य और कला के क्षेत्र में कोई जरुरत नहीं है।
10. काव्य के केवल दो पक्ष होते हैं- सुंदर और ....।

III. सुमेल कीजिए-

1. हैकेल (अ) कहानी
2. शशांक (आ) कविता
3. ग्यारह वर्ष का समय (इ) उपन्यास
4. भारत और वसंत (ई) आलोचना
5. मधुस्रोत (उ) कविता
6. काव्य में रहस्यवाद (ऊ) कविता संकलन

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. चिंतामणि भाग-1 - रामचंद्र शुक्ल
2. त्रिवेणी- रामचंद्र शुक्ल
3. चिंतामणि भाग -2 - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
4. चिंतामणि भाग -3 - नामवर सिंह
5. चिंतामणि भाग - 4 - कुसुम चतुर्वेदी, ओम प्रकाश सिंह
6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना - रामविलास शर्मा

इकाई 10 : रामचंद्र शुक्ल के निबंध 'कविता क्या है' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

10.1- प्रस्तावना

10.2- उद्देश्य

10.3- मूल पाठ- रामचंद्र शुक्ल के निबंध 'कविता क्या है' की विवेचना

10.3.1- 'कविता क्या है' निबंध की विषय वस्तु।

10.3.2- 'कविता क्या है' निबंध का प्रयोजन।

10.3.3- 'कविता क्या है' निबंध में व्यक्त वैचारिकता।

10.3.4- 'कविता क्या है' निबंध का भाषा सौष्ठव।

10.3.5- 'कविता क्या है' निबंध का शैली सौंदर्य।

10.4- पाठसार

10.5- पाठ की उपलब्धियां

10.6- शब्द संपदा

10.7- परीक्षार्थ प्रश्न

10.8- पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

आचार्य रामचंद्र शुक्ल (1884-1941 ई०) हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ निबंधकार माने जाते हैं। उनके निबंध 'चिंतामणि' निबंध संग्रह में संकलित हैं, जो चार भागों में प्रकाशित है। चिंतामणि भाग एक आचार्य रामचंद्र शुक्ल का निबंध संग्रह प्रथमत: 'विचार वीथी' नाम से प्रकाशित हुआ। चिंतामणि भाग एक में कुल 17 निबंध संकलित हैं, जिनमें ग्यारहवां निबंध 'कविता क्या है' है, जो लगभग 36 पेज का है। 'कविता क्या है' निबंध सर्वप्रथम सरस्वती पत्रिका में सन् 1909 ई० में प्रकाशित हुआ। उसके बाद कुछ वैचारिक परिवर्तनों के साथ 1939 ई० में चिंतामणि भाग-एक निबंध संग्रह में प्रकाशित हुआ। यह आलोचनात्मक निबंध है, इस निबंध का प्रारंभ शुक्ल जी ने समास शैली/सूत्र शैली से किया है। इस निबंध के माध्यम से शुक्ल जी ने अपनी काव्यशास्त्रीय मान्यताएं प्रस्तुत की है ।काव्यशास्त्रीय मान्यताओं में रसवाद और लोकमंगल का जो संलयन शुक्ल जी ने किया है उसी को यह निबंध मूर्त रूप देता है । इस निबंध में शुक्ल जी ने कविता की परिभाषा देते हुए ,कविता की आवश्यकता, उपयोगिता ,काव्य विषय, काव्य भाषा, कविता

और प्रकृति, कविता में भावना, अलंकार का स्थान, काव्य और सौंदर्य, कविता और चमत्कारवाद तथा कविता पर होने वाले अत्याचार पर विस्तार से प्रकाश डाला है।अब आप इस इकाई में आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा लिखित 'कविता क्या है' निबंध का अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

अब आप इस इकाई में आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा लिखित 'कविता क्या है' निबंध का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप-

1- कविता के स्वरूप को स्पष्ट कर सकेंगे ।
2- 'कविता क्या है' निबंध का महत्त्व बता सकेंगे।
3- कविता की भाषा एवं अलंकार की उपयोगिता को समझ सकेंगे।
4- 'कविता क्या है' निबंध की भाषा शैली को बता सकेंगे।
5- 'कविता क्या है' निबंध के प्रयोजन को बता सकेंगे।
6- 'कविता क्या है' निबंध में व्यक्त निबंधकार के विचारों को समझ सकेंगे।
7- कविता क्या है' निबंध के भाषा सौष्ठव को व्यक्त कर सकेंगे।

10.3 मूल पाठ :कविता क्या है निबंध

10.3.1- 'कविता क्या है' निबंध की विषय वस्तु

'कविता क्या है' आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी का लंबा निबंध है जो चिंतामणि भाग एक का 11वां निबंध है, जो लगभग 36 पेज का है। इस निबंध में शुक्ल जी ने कविता की परिभाषा देते हुए, कविता की आवश्यकता, उपयोगिता, काव्य विषय, काव्य भाषा, कविता और प्रकृति, कविता में भावना, अलंकार का स्थान, काव्य और सौंदर्य, कविता और चमत्कारवाद तथा कविता पर होने वाले अत्याचार पर विस्तार से प्रकाश डाला है। इस निबंध का सारांश निम्न शीर्षकों में प्रस्तुत किया जा सकता है-

1-कविता की परिभाषा

आचार्य शुक्ल का यह निबंध सैद्धांतिक कोटि का है ।इसमें उन्होंने कविता संबंधी विविध पक्षों का उद्घाटन करते हुए उन पर अपना मत व्यक्त किया है, उन्होंने कविता को एक प्रकार की योग साधन माना है। कर्म योग और ज्ञान योग के समकक्ष ही उन्होंने भावयोग की इस साधना को स्थान प्रदान किया है। कविता की परिभाषा देने से पूर्व आचार्य ने जीना, जगत, मुक्त हृदय,

आत्मा की मुक्तावस्था, हृदय की मुक्तावस्था आदि का वर्णन किया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कविता की परिभाषा देते हुए लिखा है-" जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है। उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रस दशा कहलाती है ।हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।"

कविता हृदय को स्वार्थ के संकुचित घेरे से ऊपर उठकर लोक सामान्य की भाव-भूमि पर प्रतिष्ठित करती है। इस भूमि पर पहुंचे हुए मनुष्य को कुछ काल के लिए अपना पता नहीं रहता क्योंकि वह अपनी सत्ता को लोकसत्ता में लीन किए रहता है। इस अवस्था में पहुंचे व्यक्ति की अनुभूति सबकी होती है या हो सकती है । इस अनुभूति योग के अभ्यास से हमारे मनोविकारों का परिष्कार होता है और शेष सृष्टि के साथ हमारे रागात्मक संबंधों की रक्षा और निर्वाह होता है । शुक्ल जी ने कविता को भावयोग कहा है और उसे ज्ञान योग एवं कर्मयोग के समकक्ष माना है।

बोध प्रश्न-

- रामचंद्र शुक्ल ने कविता की क्या परिभाषा दी है स्पष्ट कीजिए?
- प्रस्तुत पाठ्यांस की भाषा शैली के विषय में बताइए।

2- सभ्यता का आवरण और कविता

इस शीर्षक के अंतर्गत शुक्ल जी ने यह प्रतिपादित किया है कि जैसे- जैसे सभ्यता के आवरण मानव के हृदय पर चढ़ते जाएंगे, वैसे -वैसे कविता की आवश्यकता बढ़ती जाएगी और कवि कर्म कठिन होता जाएगा। सभ्यता की वृद्धि के साथ-साथ मनुष्य अपने भावों को छुपाना सीख गया है। जैसे-जैसे मनुष्य के व्यापार बहुरूपी एवं जटिल होते गए वैसे-वैसे उसके मूल रूप प्रच्छन्न होते गए । प्रच्छनता का उद्घाटन कवि कर्म का एक मुख्य अंग बन गया है ।काव्य में अर्थग्रहण मात्र से काम नहीं चलता बिम्बग्रहण अपेक्षित होता है यह बिम्बग्रहण निर्दिष्ट गुर्जर और मूर्त विषय का ही हो सकता है। कवि का प्रयास यह रहता है कि वह कविता में इन बिम्बों को उपस्थित कर प्रछन्नता को उजागर करे और वस्तु स्थिति से पाठकों को अवगत कराये। शुक्ल जी का निष्कर्ष यह है कि सभ्यता के प्रसार के साथ-साथ कविता की आवश्यकता इसलिए बढ़ेगी क्योंकि कविता ही हमारी मनुष्यता को जगाती है। काव्य में अर्थ ग्रहण नहीं बिम्ब ग्रहण होना चाहिए जो मूर्त, गोचर और निर्दिष्ट रूप का हो सकता है।

बोध प्रश्न-

- रामचंद्र शुक्ल ने कवि कर्म का मुख्य अंग किसे माना है।
- प्रस्तुत पाठ्यांश की विषय वस्तु के बारे में बताइए।

3-कविता और सृष्टि प्रसार

इस शीर्षक के अंतर्गत शुक्ल जी ने काव्य की विषय-वस्तु एवं उसकी व्यापकता पर प्रकाश डाला है। कविता का एक अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वह आदिम रूपों और व्यापारों को पुनः उभार कर उसे हमें परिचित करवाये। इसके परिणामस्वरुप बाह्य प्रकृति के साथ मानव की अंत: प्रकृति का सामंजस्य होता है और उसकी भावात्मक सत्ता का प्रसार होता है। शेष सृष्टि से अपने आपको विलग करने पर मनुष्य में मनुष्यता ना रहेगी । यदि शेष सृष्टि के नित्य-प्रति के विभिन्न व्यापारों ने मनुष्य को प्रभावित नहीं किया होता तो उसके जीवन में क्या रह जाता। काव्य दृष्टि निम्न क्षेत्र तक सीमित होती है । (1) नर-क्षेत्र (2)मनुष्येतर बाह्य सृष्टि (3) समस्त चराचर। (1) नर-क्षेत्र - यह कविता का सर्वाधिक व्यापक क्षेत्र है। नरत्व की बाह्य प्रकृति और अंत:प्रकृति के नाना संबंधों और पारस्परिक विधानों का संकलन या उद्भावना ही काव्यों में मुक्तक या प्रबंध में पाई जाती है। कहीं-कहीं इनमें दोनों रूप भी पाये जाते हैं। वाल्मीकि रामायण तथा तुलसी के रामचरितमानस आदि सभी प्रबंध काव्यों में प्रधान विषय लोक चरित्र है। सहित्यशास्त्र की रस निरूपण पद्धति में बाह्य रूप में प्रकृति चित्रण उद्दीपन रूप में आया है या इसमें केवल नाम गिनाए गए हैं ।तात्पर्य यह है कि कविता अधिकांशत: नरक्षेत्र के भीतर ही हुई है।

4- मनुष्येतर बाह्य सृष्टि

बाह्य प्रकृति को आलम्बन रूप में संस्कृत कवियों ने ग्रहण किया और यही कारण है कि उनके वर्णनों में अपूर्व माधुर्य सजीवता और सौंदर्य है । मन में आई वस्तुओं का ग्रहण दो प्रकार से हो सकता है -बिम्ब ग्रहण और अर्थ ग्रहण । बिम्ब ग्रहण वहां होता है, जहां कवि अपने सूक्ष्म निरीक्षण द्वारा वस्तुओं के अंग,प्रत्यंग ,वर्ण,आकृति तथा उसके आस-पास की परिस्थिति का परस्पर संश्लिष्ट विवरण देता है ।जहां भी इस प्रकार के वर्णन मिलें उन्हें बाह्य प्रकृति के आलंबन रूप का समझ लेना चाहिए। कालिदास का मेघदूत प्रकृति के आलंबन रूप में किए गए वर्णनों का जीवित उदाहरण है । प्रकृति विविध रूपों में हमारे सम्मुख आती है- विकराल रूप में भी, सुंदर रूप में भी, उसके कुछ चित्र साधारण होते हैं, कुछ भीषण और कुछ असाधारण। सच्चा कवि प्रकृति के इन सभी रूपों का चित्रण समान रूप से करता है। मशीनी युग ने मानव को बाह्य प्रकृति से बहुत दूर कर दिया है, किंतु मानव प्रकृति को भुला नहीं सका है। जिन कवियों में रागात्मक तत्त्व की कमी होती है, वे ही प्रकृति में अपने विलास या सुख की सामग्री ढूंढते हैं।

5-समस्त चराचर पूर्ण काव्य दृष्टि

समस्त चराचर क्षेत्र के भीतर घूमने वाली काव्य दृष्टि सर्वाधिक व्यापक और गंभीर होती है पहली से दूसरी और दूसरी से तीसरी की व्यापकता और गंभीरता बढ़ती जाती है। ।समस्त व्यक्त जगत के बीच जिसकी दृष्टि घूमेगी उसका हृदय अत्यंत विशाल हो जाएगा, उसकी पार्थक्य बुद्धि का परिहार हो जाएगा और उसकी वृत्ति अत्यधिक प्रशांत व गंभीर हो जाएगी। जो तथ्य हमारे किसी भाव को उत्पन्न करते हैं वे उस भाव का आलम्बन बन जाते हैं और रसात्मक तथ्यों को ज्ञानेंद्रियां उपस्थित करती हैं । शुक्ल जी का कहना है कि ज्ञान क्षेत्र की वृद्धि व्यवसायात्मक विस्तार होने के कारण हमें अपने हृदय का भी विस्तार करना होगा।

बोध प्रश्न-

- प्रस्तुत पाठ्यांस के आधार पर बताइए कि कविता का महत्त्वपूर्ण कार्य क्या है?
- प्रस्तुत पाठ्यांस के आधार पर काव्य दृष्टि के विषय में बताइए।

6- काव्य और व्यवहार-

कुछ लोग कविता पर यह आरोप लगाते हैं कि काव्य व्यवहार का बाधक है, उसके अनुशीलन से अकर्मण्यता आती है। मनुष्य को कर्म क्षेत्र में प्रवृत्त करने वाली मूल वृत्ति भावात्मिका है । केवल बुद्धि और ज्ञान द्वारा कुछ नहीं हो सकता । कर्म की ओर मानव को प्रवृत्त कराने के लिए मन में कुछ वेग का आना आवश्यक है। शुद्ध कविता को छोड़कर शुद्ध ज्ञान या विवेक में यह वेग नहीं होता । सीधे ढंग से कहा जाए कि देश का शोषण हो रहा है तो यह कथन प्रभावशाली न होगा पर यदि इस शोषण के चित्र दिखाये जाएं तो वे इतने प्रभावशाली होंगे कि तुरंत प्रभाव डालेंगे। कविता से मन की वृत्तियों का परिष्कार होता है। जो दूसरों के सुख-दुख से प्रभावित होते हैं, उनके लिए कविता अत्यंत आवश्यक एवं प्रयोजनीय वस्तु है जो मानव मात्र को सत्कर्म के लिए प्रेरित करती है।

बोध प्रश्न-

- भावात्मिका के विषय में बताइए।
- प्रस्तुत पाठ्यांश की विषय वस्तु के बारे में बताइए।

7-मनुष्यता की उच्च भूमि और कविता

शुक्ल जी का मत है कि कविता के द्वारा मनुष्य की क्रियाओं और भाव तथा मनोविकारों का विस्तार होता है । सृष्टि का सौंदर्य हमें अह्लादित करने लगता है, निष्ठुर कार्यों के प्रति हमें घृणा होने लगती है, हम अपने जीवन को कई गुने रूप में संसार में व्याप्त देखने लगते हैं। हमारी

दृष्टि व्यक्तिगत सुख-दुख तथा स्वार्थ से ऊपर उठकर संसार के सुख-दुख की ओर हो जाती है ।यहीं पर मनुष्यता की उच्च भूमि की प्रतिष्ठा हो जाती है ।जो लोग संसार के सुख-दुख आदि से मुख मोड़कर अपने में ही लीन होकर रह गए हों, वह जिन्हें किसी प्रकार के दुख से कोई लेना-देना ना हो ,हृदयहीन व्यक्तियों की दवा कविता है। इसतरह कविता व्यक्ति को स्वार्थ के संकुचित घेरे से ऊपर उठाकर मनुष्यता की उच्च भूमि पर प्रतिष्ठित करती है।

बोध प्रश्न-

- भावों एवं मनोविकारों का विस्तार कैसे होता है? स्पष्ट कीजिए।
- प्रस्तुत पाठ्यांस की भाषा शैली के विषय में बताइए।

8-भावना या कल्पना

रामचंद्र शुक्ल कहते हैं कि काव्यानुशीलन भावयोग है और कर्मयोग तथा ज्ञान योग के समकक्ष है। उपासना भावयोग का ही एक अंग है, जिसका अर्थ पूजा या ध्यान ही नहीं है । इसका वास्तविक अर्थ है-अपने से अलग वस्तु की मूर्ति लाकर उसके सामीप्य का अनुभव करना। यही भावना या कल्पना कहलाती है ।कल्पना दो प्रकार की होती है-(1) विधायक (2) ग्राहक ।कवि में विधायक तथा पाठक या श्रोता में ग्राहक कल्पना का रूप होता है। जहां कवि पूर्ण चित्रण नहीं करता, वहां पाठक को मूर्ति विधान करना पड़ता है।

बोध प्रश्न-

- कल्पना कितने प्रकार की होती है स्पष्ट कीजिए।
- काव्यानुशीलन को रामचंद्र शुक्ल ने क्या कहा है?

9-कविता और मनोरंजन

रामचंद्र शुक्ल का मत है कि कविता का ध्येय मनोरंजन करना नहीं है ।उसका अंतिम लक्ष्य जीवन और जगत् के मार्मिक पक्षों का उद्घाटन करके उनके साथ मनुष्य के हृदय का सामंजस्य स्थापित करना है। कविता में मनोरंजन का गुण है इसीकारण से यह मनुष्य की चित्त की अस्थिरता को रोक देती है तथा पाठक अथवा श्रोता के मन को बांधकर अपने गंभीर उद्देश्य अवगत कराती है। पंडित राज जगन्नाथ ने कविता को रमणीयता की सृष्टि करने वाली कहा है तथा यही काव्य का साध्य है ।किसी भी कौतूहलपूर्ण घटनाओं से युक्त आख्यान या कहानी से भी मनोरंजन होता है कविता का लक्ष्य भी यही मान लिया जाए तो वह भोग-विलास की सामग्री बन जाएगी रीतिकालीन कविता से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि कविता का लक्ष्य भाव का प्रसार करना है विलास की सामग्री बढ़ाना नहीं है।

बोध प्रश्न-

- रामचंद्र शुक्ल के अनुसार कविता का उद्देश्य क्या है?
- प्रस्तुत पाठ्यांश की विषय वस्तु के बारे में बताइए।

10-काव्य और सौंदर्य

कविता हर प्रकार के सौंदर्य को अभिव्यक्त करती है ।सौंदर्य बाहर की कोई वस्तु नहीं है अपितु मन के भीतर की वस्तु है। कुछ वस्तुओं का रूप- रंग ऐसा होता है कि हमारे मन में आते ही हमारी सत्ता पर इतना अधिकार कर लेती है कि हमें उसका ध्यान ही नहीं रहता। हमारी अंतःसत्ता की यही तदाकार परिणति सौंदर्य की अनुभूति है । यह परिणति जिस वस्तु में जितनी अधिक होगी वह उतनी ही अधिक सुंदर कहीं जाएगी। किसी वस्तु के प्रत्यक्ष ज्ञान या भावना से हमारी अपनी सत्ता का बोध जितना तिरोभाव होकर कम होगा वह वस्तु उतनी ही सुंदर कही जायेगी। सौंदर्य का दर्शन मानव में ही कवि नहीं करता अपितु प्रकृति के विभिन्न व्यापारों में भी सौंदर्य की झलक देखता है। मनुष्यता की सामान्य भूमि पर पहुंची हुई संसार की सब सभ्य जातियों में सौंदर्य के समान्य आदर्श प्रतिष्ठित हैं। भेद अधिकार अनुभूति की मात्रा में पाया जाता है। किसी पुष्प को देखकर कोई उसे कुरूप नहीं कहेगा क्योंकि उसकी सुंदरता की अनुभूति किसी को कम किसी को अधिक होती है। जिस सौंदर्य की भावना में मग्न होकर मनुष्य अपनी पृथक सत्ता की प्रकृति का विसर्जन करता है वह अवश्य एक दिव्य विभूति होती है ।भक्त लोग अपनी उपासना अथवा ध्यान में इसी विभूति का अवलंबन करते हैं । तुलसी और सूर ने राम और कृष्ण की सौंदर्य भावना में मग्न होकर ऐसी मंगल दशा का अनुभव किया है ।कविता वस्तुओं के रूप रंग की छटा नहीं प्रत्युत कर्म और मनोवृत्ति के अत्यंत मार्मिक दृश्य सामने रखती है यहां तक कि जिन मनोवृतियों में संसार को कुरूपता देखा करता है उनमें निहित सुंदरता को कविता ही ढूंढ निकलती है और हमें मुग्ध करती है। यदि किसी अत्यंत सुंदर पुरुष की सत्यप्रियता, वीरता, धीरता आदि अथवा किसी अत्यंत रूपवती स्त्री की सुशीलाता, कोमलता और प्रेम परायणता आदि सामने रख दी जाएं तो सौंदर्य की भावना सर्वांगपूर्ण हो सकती है ।कार्य के दो पक्ष सुंदर-असुंदर होते हैं ,इसे ही धार्मिक शुभ या मंगल कहता है और कभी उसके सौंदर्य पक्ष का उद्घाटन करता है।

बोध प्रश्न-

- सौंदर्य बाहर की कोई वस्तु नहीं है मन के भीतर की वस्तु है। स्पष्ट कीजिए।
- कविता में सौंदर्य की स्थिति को स्पष्ट कीजिए।

11-कविता और चमत्कारवाद

चमत्कार मनोरंजन की सामग्री है अत: जो लोग मनोरंजन को काव्य का उद्देश्य मानते हैं ,वे कविता में चमत्कार का समावेश भी करते हैं और उसे खोजते भी हैं। चमत्कार से शुक्ल जी

का तात्पर्य उक्ति के चमत्कार से है जिसके अंतर्गत अनुप्रास, यमक, श्लेष आदि शब्दालंकारों के साथ-साथ वचन-वक्रता से जुड़े अर्थालंकार भी आते हैं। यद्यपि भावुक कवि भी काव्य में चमत्कार का विधान करते हैं किंतु उसी सीमा तक जहां तक वह भाव-व्यंजना के लिए आवश्यक हो तथापि जिन लोगों के लिए चमत्कार ही काव्य का साध्य बन गया है ,वहां काव्यत्व तो नष्ट हो जाता है और कवि की दृष्टि चमत्कार पर ही टिकी रहती है। इस प्रकार का चमत्कार हिन्दी के रीतिकालन काव्य में प्रचुरता से देखा जाता है, जिसका शुक्ला जी समर्थन नहीं करते हैं। काव्य और सूक्ति में अंतर यह है कि यदि कोई उक्ति हृदय में भाव जाग्रत कर दे या प्रस्तुत वस्तु या तथ्य की मार्मिक भावना में लीन कर दे, तो वह काव्य है और जो उक्ति कथन के अनोखे ढंग, रचना विचित्र्य, चमत्कार, कवि की निपुणता या श्रम की ओर ध्यान खींचे, वह सूक्ति है।

बोध प्रश्न-

- रामचंद्र शुक्ल ने चमत्कार के विषय में क्या बताया है?
- काव्य और सूक्ति में क्या अंतर है बताइए?

12- कविता की भाषा

काव्य की सफलता तथा सार्थकता उसकी भाषा पर निर्भर करती है। कविता की भाषा सामान्य भाषा से अलग होती है। कविता में कही गयी बात चित्र रूप में हमारे सामने आनी चाहिए। 'समय बिता जाता है' कहने के स्थान पर कविता भाषा की लक्षणा शक्ति से काम लेकर रहेगी- समय भागा जाता है । काव्य भाषा में भावना को मूर्त रूप में रखने की आवश्यकता होती है, इसलिए उसमें जाति संकेत वाले शब्दों की अपेक्षा विशेष रूप व्यापार सूचक शब्द अधिक रहते हैं । कविता की भाषा में तीसरी विशेषता वर्ण-विन्यास की है । 'सामने सूखा वृक्ष खड़ा है' इस वाक्य को शुष्कोवृक्षस्तिष्ठत्यग्रे और नीरसतरूरिह विलसित पुरत: इन दो रूपों में व्यक्त किया जा सकता है ।स्पष्ट है वर्ण विन्यास की विशिष्टता के कारण द्वितीय कथन में काव्यत्व है, प्रथम कथन में नहीं ।काव्यभाषा में नाद सौंदर्य का विधान होने से उसकी आयु बढ़ती है । अन्त्यानुप्रास ,वृत्ति विधान, लय आदि नाद सौंदर्य में सहायक होते हैं । काव्य भाषा की चौथी विशेषता है- उपयुक्त शब्द चयन ।शब्द प्रकरण विरुद्ध नहीं होने चाहिए। अत्याचारी से छुटकारा पाने के लिए कोई कृष्ण को पुकार रहा है तो उसे मुरलीधर, राधिका रमण की अपेक्षा उसमें कंसनिकंदन जैसे शब्द प्रयुक्त करने चाहिए।

बोध प्रश्न-

- कविता की भाषा कैसी होती है।
- लक्षणा शक्ति का एक उदाहरण बताइए।

13- काव्य और अलंकार

कविता में भाषा की सब शक्तियों से कार्य लेना पड़ता है। कविता में भावोत्कर्ष दिखाने के लिए अलंकारों की आवश्यकता बराबर पड़ती है । कहीं-कहीं तो अलंकारों के बिना कवि का काम ही नहीं चलता है, किंतु हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि अलंकार कविता के साधन हैं, साध्य नहीं। जिन कवियों ने इस बात को भुलाकर अलंकारों को ही कविता का साध्य मान लिया उन्होंने अलंकारों का सायास प्रयोग करके कविता के रूप को विकृत कर दिया। उपमानों का ऐसा प्रयोग नहीं करना चाहिए जो प्रस्तुत भाव के विरोधी हों ,केशव अलंकारवादी कवि के पच्चीसों पद्य अलंकार बहुल होते हुए भी प्रभावहीन हैं क्योंकि उसमें मार्मिकता नहीं है। जिस प्रकार कोई सुंदर स्त्री आभूषण धारण करके अपनी शोभा बढ़ाती है । उसी प्रकार कविता भी अलंकारों से अपनी शोभा में वृद्धि करती है किंतु कुरूप स्त्री अलंकार धारण करके सुंदर नहीं बन सकती ।इस प्रकार रमणीयता के अभाव में कोई कविता केवल अलंकारों के बल पर श्रेष्ठ नहीं कहीं जा सकती।

बोध प्रश्न-

- काव्य में अलंकार की क्या आवश्यकता है स्पष्ट कीजिए?
- प्रस्तुत पाठ्यांश की भाषा शैली के विषय में बताइए।

14- कविता पर अत्याचार

कुछ कवि, जो लोभी, स्वार्थी तथा खुशामद करते थे, उन्होंने अनेक अपात्रों की स्तुति कर कविता का गला ही घोंट दिया और उन्होंने कविता पर अत्याचार किया है । शुक्ल जी का कहना है कि तुच्छ वृत्ति वालों का अपवित्र हृदय कविता के निवास के योग्य नहीं है। कवि का काम श्रीमानों के आगमन पर पद्य बनाना या बधाई देना नहीं अपितु तो उसका कार्य है रूप कर्म कलाप जगत और जीवन के बीच में जो उसे सुंदर लगते हैं उन्हीं के वर्णन में स्वान्त: सुखाय प्रवृत होना।

बोध प्रश्न-

- रामचंद्र शुक्ल ने कविता पर किस प्रकार के अत्याचार की बात कही है।
- कविता में स्वान्त: सुखाय कब प्रवृत्त होता है?

15- कविता की आवश्यकता

शुक्ल जी का विचार है कि कविता मानव के लिए अत्यंत प्रयोजनीय वस्तु है इसीलिए संसार की सभी सभ्य-असभ्य जातियों में किसी न किसी रूप में कविता पाई जाती है। चाहे इतिहास और दर्शन ना हो पर कविता का प्रचार अवश्य रहेगा। जैसे-जैसे सभ्यता में वृद्धि होती जाएगी मनुष्य अपने ही व्यापारों के सघन और जटिल मंडल में घिरता जाएगा और शेष सृष्टि के साथ अपने हृदय के संबंध को भूला रहेगा इस परिस्थिति में उसकी मनुष्यता खोने का डर

बराबर बना रहेगा मानव की अंत:प्रकृति में मनुष्यता को समय-समय पर जागते रहने के लिए कविता मानव- जाति के लिए निरंतर आवश्यक रहेगी, हां जानवरों को इसकी आवश्यकता नहीं है।

बोध प्रश्न-

- रामचंद्र शुक्ल के अनुसार कविता के प्रयोजन को स्पष्ट कीजिए।
- मनुष्य के लिए कविता की क्याआवश्यकता है? स्पष्ट कीजिए।

10.3.2- 'कविता क्या है' निबंध का प्रयोजन

शुक्ल जी स्वतंत्र और मौलिक चिंतक थे ।उन्होंने भारतीय और पाश्चात्य समीक्षात्मक सिद्धांतों का समन्वय करके उनके सामंजस्य का मौलिक रूप में प्रयत्न किया उनके मूल सिद्धांत थे लोक मंगल, साधारणीकरण, रसवाद, प्रकृति प्रेम ,देश प्रेम और विश्व प्रेम । उन्होंने भारतीयता के प्रति अनुरक्ति रखते हुए पश्चात्य जगत से जो नवीनता और औचित्य लगा उसको ग्रहण कर लिया । इन समीक्षा विषयक सिद्धांतों पर साहित्यिक समालोचना का मार्ग प्रशस्त किया "विश्वविद्यालय के उच्च शिक्षा क्रम के भीतर हिन्दी साहित्य का समावेश हो जाने के कारण उत्कृष्ट कोटि के निबंधों महती आवश्यकता थी "इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए शुक्ला जी ने निबंधों की रचना की थी। शुक्ल जी ने कविता क्या है निबंध में काव्य का प्रयोजन लोक मंगल माना है ।कविता व्यक्ति को अकर्मण्य नहीं बनाती बल्कि वह उसकी वृत्तियों को उदार बना देती है जिससे व्यक्ति समस्त जगत को अपना कुटुंब समझने लगता है। उन्होंने वस्तुगत सौंदर्य के सिद्धांत का मण्डन किया है, उनके अनुसार सौंदर्य काव्य का सर्वस्व है । इस तरह शुक्ल जी का 'कविता क्या है' निबंध लिखने का प्रयोजन काव्यशास्त्रीय मान्यताओं को प्रस्तुत करना है । काव्यशास्त्रीय मान्यताओं में रसवाद और लोकमंगल का जो संलयन शुक्ल जी ने किया है उसी को यह निबंध मूर्त रूप देता है । इस निबंध में शुक्ल जी ने कविता की परिभाषा देते हुए, कविता की आवश्यकता, उपयोगिता ,काव्य विषय, काव्य भाषा, कविता और प्रकृति, कविता में भावना, अलंकार का स्थान, काव्य और सौंदर्य, कविता और चमत्कारवाद तथा कविता पर होने वाले अत्याचार पर विस्तार से प्रकाश डाला है।

10.3.3- 'कविता क्या है' निबंध में व्यक्त वैचारिकता

कविता क्या है' निबंध हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार रामचंद्र शुक्ल द्वारा लिखा गया है, जो कि उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह चिंतामणि भाग -एक में संकलित है। शुक्ल जी ने इस निबन्ध की रचना साहित्यिक एवं व्यवहारिक उपयोगिता की दृष्टि से की थी। इस निबंध से उनका मौलिक चिंतन, विषय विश्लेषण क्षमता एवं सूक्ष्म दृष्टि का परिचय प्राप्त होता है। यह निबंध साहित्यिक समीक्षा संबंधी निबंध है जो शास्त्रीय आलोचना से संबंधित है। यह निबंध कविता

की परिभाषा, प्रकार, और महत्व पर प्रकाश डालता है।इस निबंध में शुक्ल जी ने कविता को "मन की रचना" कहा है। उनके अनुसार, कविता मन की अनुभूतियों और भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करने के साथ ही यह अनुभूतियों और भावनाओं को कलात्मक रूप से व्यक्त करती है।शुक्ल जी ने कविता के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि कविता मनुष्य के जीवन में आनंद, प्रेरणा, और उत्साह का स्रोत है। यह मनुष्य को जीवन के विभिन्न पक्षों को सूक्ष्मता से समझने और उसके प्रति सजग होने में मदद करती है।'कविता क्या है' निबंध हिन्दी साहित्य में एक महत्वपूर्ण निबंध है। इसमें शुक्ल जी ने कविता के लक्षणों को स्पष्ट किया है इस निबंध में उनका विवेचन नीरस नहीं हुआ है क्योंकि उन्होंने हृदय एवं बुद्धि का संतुलित समन्वय किया है। चिंतामणि भाग एक में स्वयं शुक्ल जी ने 'निवेदन' के अन्तर्गत इस तथ्य को इन शब्दों में व्यक्त किया हैं-" इस पुस्तक में मेरी अंतर्यात्रा में पड़ने वाले कुछ प्रदेश हैं। यात्रा के लिए निकलती रही है बुद्धि, पर हृदय को भी साथ लेकर। अपना रास्ता निकालती हुई बुद्धि जहां कहीं मार्मिक या भावाकर्षक स्थलों पर पहुंची है, वहां हृदय थोड़ा-बहुत रमता और अपनी प्रवृत्ति के अनुसार कुछ कहता गया है ।इस प्रकार यात्रा के श्रम का परिहार होता रहा है। बुद्धि-पथ पर हृदय भी अपने लिए कुछ-ना-कुछ पाता रहा है।" यही उनकी विशेषता है।

10.3.4- 'कविता क्या है' निबंध का भाषा सौष्ठव

भाषा भावों की वाहिका होती है। किसी भी लेखक के मानसिक विचारों को भाषा के माध्यम से मूर्तता प्राप्त होती है। कोई भी भाव बिना भाषा के व्यक्त नहीं हो सकता और भाषा भी भाव विहीन नहीं होती है। वास्तव में वही भाषा सफल मानी जाती है जो अभिप्सित भावों को पूर्ण रूप से व्यक्त करने में सक्षम होती है। विषयानुकूल और भावानुकूल भाषा ही श्रेष्ठ मानी जाती है। 'कविता क्या है' निबंध की भाषा सम्बन्धी निम्न विशेषताएं हैं-

(1) इस निबन्ध की भाषा विशुद्ध साहित्यिक परिनिष्ठित हिन्दी है जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रमुखता है।जैसे कोकिल, मधुर, उच्छ्रंखलता आदि।

(2) शुक्ल जी का भाषा विषयक दृष्टिकोण अत्यंत उदार था, उन्होंने संस्कृत शब्दों के साथ-साथ अरबी- फारसी और अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी इस निबन्ध में किया है। जैसे-स्टेशन, इंजिन, जरूरत आदि।

(3) इस निबंध में शुक्ल जी की भाषा परिष्कृत, प्रौढ़ एवं साहित्यिक है जिसमें भाव प्रकाशन की अद्भुत क्षमता है।

(4) इस निबंध में शुक्ल जी ने उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का प्रयोग किया है, किंतु ये अलंकार चमत्कार प्रदर्शन के लिए ना होकर विषय को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए प्रयुक्त किए गए हैं।

(5) इस निबंध में शुक्ल जी का वाक्य विन्यास पूर्णत: व्याकरणसम्मत और सुगठित है ।उसमें हिन्दी की मूल प्रवृत्ति का ध्यान रखा गया है, अंग्रेजी ढंग की वाक्य रचना से उनकी भाषा मुक्त है।

(6) 'कविता क्या है' निबंध की भाषा में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें कहीं भी बोझिलपन, उलझन और अस्पष्टता नहीं है। वह व्याकरणसम्मत है, अशुद्धियों से मुक्त है और विराम चिन्हो का प्रयोग अत्यन्त सजगता से किया गया है।

(7) कविता क्या है निबंध में संस्कृत के तत्सम शब्द हैं जिसमें बीच-बीच में तद्भव या देशज शब्द नगीनों की भांति जड़ दिए गए हैं जैसे- गड़बड़झाला, खेल तमाशे आदि।

(8) इस निबंध में शुक्ल जी ने अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्दों के स्थान पर हिन्दी के जो शब्द निर्मित किए हैं वे उनकी प्रतिभा के परिचायक है।

(9) इस निबंध में सामासिक पदों का सहज विधान करने के साथ ही लाक्षणिक भाषा का प्रयोग भी शुक्ल जी ने किया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 'कविता क्या है' विचार प्रधान निबंध है, जिसमें शुक्ल जी का ह्रदय भी अपनी प्रवृत्ति के अनुरूप भावात्मक और सरल स्थलों पर रमता रहा है, जिससे यह निबंध सरस और रोचक हो गया है ।

10.3.5- 'कविता क्या है' निबंध का शैली सौंदर्य

रामचंद्र शुक्ल जी ने अपने 'कविता क्या है' निबंध में आवश्यकता और विषय के अनुरूप विविध शैलियों का प्रयोग किया है। उनकी शैली उनके व्यक्तित्व का की परिचायक है ।संक्षेप में शैली के जो विविध रूप उनके निबंध में दिखाई पड़ते हैं उनका विवेचन निम्न शीर्षकों में किया जा सकता है-

(1) आलोचनात्मक शैली- इस शैली का प्रयोग शास्त्रीय समीक्षा संबंधी निबंधों में किया जाता है। यह चिंतन प्रधान शैली है, जिसमें तर्क और विश्लेषण की प्रधानता है, चिंतन का गाम्भीर्य और भाषा की सुव्यवस्था इस शैली में दिखाई पड़ती है 'कविता क्या है' का एक उदाहरण दृष्टव्य है- "जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्थारस

दशा कहलाती है ।हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है उसे कविता कहते हैं।"

(2) समास शैली- शुक्ल जी के निबंध 'कविता क्या है' में प्राय: समास शैली का प्रयोग हुआ है। समास शैली में विचारों की सघनता और कम शब्दों में अधिक बात कहने की क्षमता दिखाई पड़ती है इसे सूत्र शैली भी कहा जा सकता है। 'कविता क्या है' में वे लिखते हैं- "जो केवल अपने विलास या शरीर सुख की सामग्री ही प्रकृति में ढूंढा करता हैं उनमें उस रागात्मक सत्व की कमी है जो व्यक्त सत्ता मात्र के साथ एकता की अनुभूति में लीन करके हृदय के व्यापकत्व का अभास देता है। संपूर्ण सत्ताएं एक ही परम सत्ता और संपूर्ण भाव एक ही परम भाव के अंतर्भूत है। अतः बुद्धि की क्रिया से हमारा ज्ञान जिस अद्वैत भूमि पर पहुंचता है उसी भूमि तक हमारा भावात्मक हृदय भी इस सत्व रस के प्रभाव से पहुंचता है।"

(3) संस्कृत बहुला अलंकृत शैली- शुक्ल जी के निबंध 'कविता क्या है' में कहीं-कहीं संस्कृत बहुल पदों वाली अलंकृत शैली का प्रयोग भी मिलता है जो उनकी बुद्धिमता की परिचायक है । यद्यपि इस शैली का प्रयोग उन्होंने अधिक नहीं किया है तथापि यह शैली इस बात की परिचायक है कि शुक्ल जी उच्चकोटि की आलंकारिक भाषा भी लिख सकते थे।'कविता क्या है' में वे लिखते हैं" जो केवल प्रफुल्ल प्रसून प्रसार के सौरभ संचार, मकरंद लोलुप मधुप गुंजार, कोकिल कूजित निकुंज और शीतल सुखद स्पर्श समीर आदि की ही चर्चा करते रहते हैं वे विषयी या भोगलिप्सु हैं।"

(4) निर्णयात्मक शैली- इस शैली का प्रयोग प्रधानत: आलोचना संबंधी निबंधों में होता है। इस शैली में उनकी मत स्थापना हुई है। कहीं-कहीं तुलनात्मक विवेचना करके निर्णय देने की प्रवृत्ति भी मिलती है।'कविता क्या है' में वे लिखते हैं" सौन्दर्य बाहर की कोई वस्तु नहीं है, मन के भीतर की वस्तु है। योरोपीय कला समीक्षा की यह एक बड़ी ऊंची उड़ान या बड़ी दूर की कौड़ी समझी गई है ।पर वास्तव में यह भाषा के गड़बड़झाले के सिवाय और कुछ नहीं है ।जैसे वीर कर्म से पृथक् वईरत्व कोई पदार्थ नहीं वैसे ही सुंदर वस्तु से पृथक् सौंदर्य कोई पदार्थ नहीं।"

(5) तर्कपूर्ण शैली- शुक्ल जी के निबंध 'कविता क्या है' समीक्षात्मक निबंध में तर्कपूर्ण शैली के दर्शन होते हैं। कहीं-कहीं वे अन्य सिद्धांतों के खंडन-मंडन में तर्क का सहारा लेते पाए जाते हैं ।जैसे -"उक्ति ही काव्य होती है, यह तो सिद्ध बात है ।हमारे यहां भी व्यंजक वाक्य ही माना जाता है ।अब प्रश्न यह है कि कैसी उक्ति,

किस प्रकार की व्यंजना करने वाला वाक्य।वक्रोक्ति वादी कहेंगे कि ऐसी उक्ति जिसमें कुछ वैचित्र्य या चमत्कार हो,व्यंजना चाहे जिसकी हो, या किसी ठीक-ठाक बात की ना हो।पर जैसा

कि हम कह चुके हैं, मनोरंजन मात्र काव्य का उद्देश्य न मानने वाले उनकी इस बात का समर्थन करने में असमर्थ होंगे?"

(6) हास्य व्यंग्यपूर्ण शैली- 'कविता क्या है' निबंध में स्थान-स्थान पर हास्य-व्यंग्य का पुट भी दिखाई पड़ता है। सामाजिक विसंगतियों को व्यक्त करने के लिए शुक्ल जी इस शैली का प्रयोग करते हैं किंतु यह उल्लेखनीय है कि उनका हास्य मर्यादित है और व्यंग्य अमोघ है। हास्य का प्रयोग वह ऐसे स्थलों पर करते हैं जहां विषय की वस्तुगत विशेषता गंभीर विचार सूत्रों द्वारा नहीं समझाइए जा सकती यथा-" हिन्दी के रीति-काल के कवि तो मानों राजाओं-महाराजाओं की काम-वासना उत्तेजित करने के लिए ही रखे जाते थे। एक प्रकार के कविराज तो रईसों के मुंह के मकरध्वज रस झोंकते थे, दूसरे प्रकार के कविराज कान में मकरध्वज रस की पिचकारी देते थे, पीछे से तो ग्रीष्मोपचार आदि के नुस्खे भी कवि लोग तैयार करने लगे।"

उपरोक्त शैलियों के अतिरिक्त 'कविता क्या है' निबंध में भावानुकूल शैली, विषयानुरूप शैली, व्याख्यात्मक शैली,विवेचनात्मक शैली इत्यादि का प्रयोग देखने को मिलता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 'कविता क्या है' निबंध की शैली शुक्ल जी के व्यक्तित्व के अनुरूप है । उन्होंने विषय के अनुरूप भाषा शैली को परिवर्तित कर दिया है। उसमें लाक्षणिकता ,उक्ति वैचित्र्य,आलंकारिकता और सूत्रात्मकता जैसे गुण विद्यमान हैं।

10.4 पाठ सार

'कविता क्या है' निबंध आचार्य रामचंद्र शुक्ल (1884-1941 ई०)के द्वारा लिखित है जो ,चिंतामणि भाग-एक निबंध संग्रह में संकलित है। इस निबंध में शुक्ल जी ने अपनी काव्यशास्त्रीय मान्यताएं प्रस्तुत की है ।काव्यशास्त्रीय मान्यताओं में रसवाद और लोकमंगल का जो संलयन शुक्ल जी ने किया है उसी को यह निबंध मूर्त रूप देता है । इस निबंध में शुक्ल जी ने कविता की परिभाषा देते हुए ,कविता की आवश्यकता, उपयोगिता ,काव्य विषय, काव्य भाषा, कविता और प्रकृति, कविता में भावना, अलंकार का स्थान, काव्य और सौंदर्य, कविता और चमत्कारवाद तथा कविता पर होने वाले अत्याचार पर विस्तार से प्रकाश डाला है। शुक्ल जी ने कविता को भाव योग कहा है और इसे ज्ञानयोग एवं कर्मयोग के समकक्ष माना है। वे कहते हैं कि सभ्यता के प्रसार के साथ-साथ कविता की आवश्यकता इसलिए बढ़ेगी क्योंकि कविता ही हमारी मनुष्यता को जगाती है। काव्य का विषय मानव, प्रकृति ,भावना सौंदर्य सब कुछ हो सकता है। कविता अत्यंत आवश्यक एवं प्रयोजनीय वस्तु है, जो मानव मात्र को सत्कर्म के लिए प्रेरित करती है। शुक्ल जी का मत है कि कविता भाव एवं मनोविकारों का परिष्कार करती है तथा इनका क्षेत्र विस्तृत करते हुए इनका प्रसार भी करती है। कविता पढ़ते समय मनोरंजन

आवश्यक होता है ।वह हमें कर्म में प्रवृत्त करती है ,एक संदेश देती है इसलिए मनोरंजन को काव्य का एकमात्र उद्देश्य नहीं कहा जा सकता। कविता हर प्रकार के सौंदर्य को अभिव्यक्त करती है। सौंदर्य बाहर की कोई वस्तु नहीं है अपितु मन के भीतर की वस्तु है। काव्य और सूक्ति का अंतर समझाते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि यदि कोई उक्ति हृदय में भाव जाग्रत कर दे तो वह काव्य और जो उक्ति कथन के अनोखे ढंग ,रचना वैचित्र्य, चमत्कार, कवि की निपुणता या श्रम की ओर ध्यान खींचे,वह सूक्ति है। शुक्ल जी कहते हैं कि कविता की भाषा सामान्य भाषा से अलग होती है । इसमें लक्षणा शक्ति, वर्ण-विन्यास, विशेष रूप व्यापार सूचक शब्द,तथा उपयुक्त शब्द चयन का महत्त्व होता है। अलंकार के विषय में शुक्ल जी का मत है कि अलंकार कविता का साधन है साध्य नहीं और अंतिम में कविता की आवश्यकता के विषय में शुक्ल जी कहते हैं कि, कविता मानव के लिए अत्यंत प्रयोजनीय वस्तु है इसीलिए संसार की सभी सभ्य-असभ्य जातियों में किसी न किसी रूप में कविता पाई जाती है। इस प्रकार स्पष्ट है की 'कविता क्या है' निबंध में शुक्ल जी ने विषयानुकूल भाषा का प्रयोग करते हुए कविता के महत्त्व पर प्रकाश डाला है। इस निबंध में उनका विवेचन नीरस नहीं हुआ है, क्योंकि उन्होंने हृदय एवं बुद्धि का संतुलित समन्वय किया है।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

1- अध्ययन से यह पता चलता है कि, आचार्य रामचंद्र शुक्ल (1884-1941 ई०) के द्वारा लिखित 'कविता क्या है' निबंध सर्वप्रथम सरस्वती पत्रिका में सन् 1909 ई० में प्रकाशित हुआ ।उसके बाद कुछ वैचारिक परिवर्तनों के साथ 1939 ई० में चिंतामणि भाग-एक निबंध संग्रह में प्रकाशित हुआ।

2-यह आलोचनात्मक निबंध है, इस निबंध का प्रारंभ शुक्ल जी ने समास शैली/सूत्र शैली से किया है, साथ ही विभिन्न प्रकार की शैलियों का इस निबंध में प्रयोग हुआ है जिससे निबंध को पढ़ने पर रोचकता का संचार होता है।

3-इस निबंध को पढ़ने से कविता की परिभाषा, कविता की आवश्यकता, उपयोगिता, काव्य विषय, काव्य भाषा, कविता और प्रकृति, कविता में भावना, अलंकार का स्थान, काव्य और सौंदर्य, कविता और चमत्कारवाद तथा कविता पर होने वाले अत्याचार पर विशेष जानकारी मिलती है।

4-इसको पढ़ने के उपरान्त 'कविता क्या है' निबंध के प्रयोजन के विषय में ज्ञात होता है कि शुक्ल जी का 'कविता क्या है' निबंध लिखने का प्रयोजन काव्यशास्त्रीय मान्यताओं को प्रस्तुत

करना है । काव्यशास्त्रीय मान्यताओं में रसवाद और लोकमंगल का जो संलयन शुक्ल जी ने किया है उसी को यह निबंध मूर्त रूप देता है ।

5-इस निबंध के भाषा सौष्ठव के विषय में यह पता चलता है कि शुक्ल जी के इस निबंध की भाषा विषय के अनुरूप प्रौढ़, गंभीर एवं साहित्यिकता का पुट लिए हुए है।वह परिष्कृत एवं संयत है उसमें भाव प्रकाशन की अद्भुत क्षमता है। प्रत्येक शब्द अपने स्थान पर ऐसा जड़ा हुआ है कि उसे वहां से हटा पाना असंभव है।

10.6 शब्द संपदा

1-तादात्म्य - तल्लीनता

2- परिष्कार - सुरुचिपूर्ण

3- प्रत्यक्ष - स्पष्ट दिखाई पड़ना

4- तृप्त - जिसकीइच्छाएं पूरी हो गई हों

5-मंजरि - कोपल

6-अमराई - आम का बाग

7-मनुष्येतर - मनुष्य से भिन्न

8-हर्ष - खुशी, प्रसन्नता

9-विषाद - दु:ख

10-द्वेष - वैमनस्यता

11-उच्छृंखलता- निरंकुशता

12-दुर्दिन - बुरे दिन

13-प्रफुल्लता - हंसता हुआ, प्रसन्न

14-प्रच्छन्नता - गोपनीयता

15- स्वान्त: सुखाय- अपने सुख के लिए

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड(अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1- कविता के संबंध में शुक्ल जी के विचार क्या हैं? चिंतामणि के 'कविता क्या है' निबंध के आधार पर इसका संक्षेप में विवेचन कीजिए?

2- निम्न अवतरण की ससंदर्भ व्याख्या कीजिए एवं इसके साहित्यिक सौंदर्य को स्पष्ट कीजिए।

" जब तक कोई अपने पृथक् सत्ता की भावना को ऊपर किये इस क्षेत्र के नाना रूपों और व्यापारों को अपने योगक्षेम, हानि-लाभ, सुख-दुःख आदि से सम्बद्ध करके देखता रहता है तब तक उसका हृदय एक प्रकार से बद्ध रहता है ।इन रूपों और व्यापारों के सामने जब कभी वह अपनी पृथक् सत्ता की धारणा से छूटकर- अपने आपको बिल्कुल भूलकर- विशुद्ध अनुभूति मात्र रह जाता है ,तब वह मुक्त हृदय हो जाता है। जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है ,उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रस दशा कहलाती है ।हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आयी है, उसे कविता कहते हैं । इस साधना को हम भावयोग कहते हैं और कर्मयोग और ज्ञानयोग का समकक्ष मानते हैं।"

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए ।

1- 'कविता क्या है' निबंध के भाषा सौष्ठव पर प्रकाश डालिए?

2- 'कविता क्या है' निबंध में व्यक्त वैचारिकता के विषय में बताइए।

3- आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने काव्य की क्या परिभाषा दी है? तथा "हृदय की मुक्तावस्था रसदशा है" का अभिप्राय स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए-

(1) 'कविता क्या है' निबंध के लेखक कौन हैं? ( )

(क)श्याम सुंदर दास (ख) महावीर प्रसाद द्विवेदी

(ग)डॉ० नगेंद्र (घ) आचार्य रामचंद्र शुक्ल

(2) 'कविता क्या है' निबंध किस निबंध संग्रह में संकलित है? ( )

(क) चिंतामणि भाग एक (ख) चिंतामणि भाग दो

(ग) चिंतामणि भाग तीन (घ) चिंतामणि भाग चार

(3) जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था क्या कहलाती है? ( )

(क) मनोविकार (ख)रसदशा (ग)ज्ञानदशा (घ) साधनावस्था

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

(1)............ही मनुष्य के हृदय को स्वार्थ- संबंधों के संकुचित मंडल से ऊपर उठाकर लोक-सामान्य भाव-भूमि पर ले जाती है।

(2)..........बाहर की कोई वस्तु नहीं है ,मन के भीतर की वस्तु है।

(3) मनुष्य के लिए.......... इतनी प्रयोजनीय वस्तु है कि संसार की सभ्य- असभ्य सभी सभी जातियों में, किसी न किसी रूप में पाई जाती है।

(4) मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है उसे..........कहते हैं

(5) जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था........... कहलाती है।

III. सुमेल कीजिए-

1-तादात्म्य	(अ) प्रसन्नता।
2-मंजरि	(आ)वैमनस्यता
3-हर्ष।	(इ)तल्लीनता
4-विषाद	(ई)कोपल
5-द्वेष	(उ) दु:ख

10.8 पठनीय पुस्तकें

1- आचार्य रामचंद्र शुक्ल-चिंतामणि भाग एक, निबंध संग्रह

2- डॉ०नगेंद्र और डॉ०हरदयाल -हिन्दी साहित्य का इतिहास

3- विश्वनाथ त्रिपाठी- हिन्दी आलोचना

4- डॉ०श्यामसुंदर दास –साहित्यालोचन

5- डॉ०भागीरथ मिश्र -काव्यशास्त्र

इकाई 11: निबंधकार हजारी प्रसाद द्विवेदी : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मूल पाठ : निबंधकार हजारी प्रसाद द्विवेदी : एक परिचय
11.3.1 हजारी प्रसाद द्विवेदी का जीवन परिचय
11.3.2 हजारी प्रसाद द्विवेदी की रचनायात्रा
11.3.3 हजारी प्रसाद द्विवेदी की वैचारिकता के विविध आयाम
11.3.4 हजारी प्रसाद द्विवेदी का हिन्दी साहित्य में स्थान
11.4 पाठ सार
11.5 पाठ की उपलब्धियाँ
11.6 शब्द संपदा
11.7 परीक्षार्थ प्रश्न
11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी से पूर्व हिन्दी निबंधों की एक समृद्ध परंपरा रही है। आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रारंभ के साथ ही निबंध लेखन कार्यशुरु हो गया था। भारतेंदु युग के लेखकों ने इस साहित्य विधा का सूत्रपात किया था। इसी युग में मुद्रण कला का प्रारंभ हुआ जिसका प्रभाव हिन्दी में पत्रकारिता और विशेष तौर पर साहित्यिक पत्रकारिता के उदय के साथ होता है। हिन्दी के पारंभिक निबंध इन्हीं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी गंभीर आलोचक, एक गंभीर अध्येता, प्रगतिशील उपन्यासकार, सफल संपादक, मानवतावादी समीक्षक और कुशल निबंधकार के रूप में हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठित है। इनकी शोधपरक लेखन शैली ने इन्हें शास्त्र और लोक से नित-नवीन अनुसंधान के प्रति प्रेरित किया है। यही कारण है कि द्विवेदी जी का नाम आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साथ लिया जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' के बाद आचार्य द्विवेदी जी की हिन्दी साहित्य के इतिहास से संबंधित पुस्तकें काफी चर्चित रही हैं। इनमें 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' और 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' का महत्वपूर्ण स्थान है। इन पुस्तकों के साथ द्विवेदी जी ने साहित्यिक आलोचना से संबंधित कई पुस्तकें लिखी। इसी क्रम में उन्होंने कई निबंधों का भी लेखन किया है। निबंध साहित्य में भी उनका उल्लेख, आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साथ किया जाता है। इस इकाई में हम द्विवेदी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विविध आयामों का अध्ययन करेंगे। जिसमें विशेष रूप से निबंधकार के रूप में द्विवेदी के निबंध साहित्य के बारे में विशेष

चर्चा करेंगे। आचार्य द्विवेदी के लेखकीय व्यक्तित्व के दो रूप हैं - एक, ज्योतिष के आचार्य, भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के जानकार, ज्ञानी, खोजी, संस्कृत के प्रकांड पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी हैं और दूसरे हिन्दी साहित्य के आलोचक, निबंधकार और उपन्यासकार। उन्होंने पांडित्य में लालित्य मिलाकर उसे सर्जनात्मक रूप दे दिया है। कई बार उनका यह रूप ललित निबंधों और उपन्यासों में दृष्टिगत होता है। अपने रचनात्मक साहित्य द्वारा जो अनवरत कार्य द्विवेदी जी ने किया है उससे न केवल हिन्दी साहित्य की वृद्धी हुई बल्कि अपने साहित्यिक व्यक्तित्व के माध्यम से एक ऐसा वातावरण भी निर्माण करने में कामयाब हुए जिससे समूचे भारत में हिन्दी के विकास तथा विस्तार को बड़ा सहारा मिला।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई में आप आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का जीवन तथा साहित्यित परिचय प्राप्त करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपको निम्नलिखित बिंदुओं का ज्ञान हासिल होगा

- हजारी प्रसाद द्विवेदी के जीवन परिचय के बारे में जान सकेंगे।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी की रचनायात्रा से अवगत हो सकेंगे।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी की वैचारिकता के विविध आयाम को जान सकेंगे।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों की विशेषताएँ बता सकेंगे।

11.3 मूल पाठ : निबंधकार हजारी प्रसाद द्विवेदी – एक परिचय

11.1.1 हजारी प्रसाद द्विवेदी का जीवन परिचय

हजारी प्रासद द्विवेदी के समग्र व्यक्तित्व का निर्माण जन्मजात गुणों, पारिवारिक परिस्थितियों, शैक्षणिक उपलब्धियों, सामाजिक संपर्कों एवं राष्ट्र तथा युग के समकालीन वातावरण के समन्वित संयोग के आधार पर हुआ है। द्विवेदी का जीवन दर्शन परंपरागत रूढ़ियों तथा मिथ्या विश्वासों पर आधारित नहीं है, बल्कि विज्ञान की नवीनतम स्थापनाओं के आधार पर उन्होंने अपने चिंतन को स्थापित किया है। द्विवेदी जी की मातृ-भाषा भोजपुरी थी और वे अपने घर और भोजपुरी भाषियों से भोजपुरी में ही वार्तालाप करना ठीक समझते थे। लेकिन हिन्दी भाषा के हिमायती और पक्षधर होने के कारण उन्होंने पूरा जीवन राष्ट्रभाषा की सेवा को समर्पित किया।

आधुनिक युग के मौलिक निबंधकार और उत्कृष्ट समालोचक आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी का जन्म 19 अगस्त 1907 को बलिया जिले के छपरा नामक ग्राम में संस्कृतज्ञ परिवार में हुआ था। उनका परिवार ज्योतिष विद्या के लिए प्रसिद्ध था। उनके पिता अनमोल द्विवेदी संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। इनके परिवार के लोग धर्म परायण थे जिसका प्रभाव हजारी प्रासद द्विवेदी पर भी पड़ा। द्विवेदी जी के बचपन का नाम 'वैद्यनाथ' द्विवेदी था।

द्विवेदी जी के पारिवारिक वातावरण और संस्कारों ने उनको प्रगति के मार्ग पर अग्रसर होने के लिए हमेशा प्रोत्साहित किया। द्विवेदी जी की प्रारंभिक शिक्षा गाँव बसरिकापुर के मिडिल स्कूल में ही हुई और वहीं से उन्होंने सन 1920 में मिडिल की परीक्षा पास की। फिर उन्होंने बनारस से ज्योतिष विद्या में आचार्य की उपाधि प्राप्त की। उनके परिवार की आर्थिक

हालत ठीक न होने के कारण वे बनारस में ट्यूशन पढ़ाकर और कथा वाचन करके किसी प्रकार अपना खर्च चलाते थे।

प्रारंभिक पाठशाला के मास्टर महेन्द्र पाण्डेय द्विवेदी जी को अपना प्रिय शिष्य मानते थे। पाठशाला में पढ़ते समय ही मास्टर ने द्विवेदी जी को तुलसीदास और रहीम की बहुत सी कविताएँ कंठस्थ करा दी थी। पाठशाला के मास्टर जी के अलावा द्विवेदी जी के चाचा बाके बिहारी दूबे जी का इनकी शिक्षा में विशेष योगदान रहा है। बाके बिहारी दूबे साहित्य के बहुत प्रेमी थे और वे सबसे अधिक मैथिलीशरण गुप्त की लिखी पुस्तकें पढ़ा करते थे। इसके चलते द्विवेदी जी को बचपन में ही 'भारत भारती' और 'जयद्रथ वध' के पाठ कंठस्थ करा दिए थे। हजारी प्रासद द्विवेदी जी का विवाह 20 वर्ष की आयु में सन 1927 में भगवती देवी के साथ हो गया था। इन्हीं से उन्हें चार पुत्र और तीन पुत्रियाँ हुई थी।

द्विवेदी जी के शान्तिनिकेतन पहुचने की कथा बड़ी महत्त्वपूर्ण है, हुआ यह की श्रीमती आशा आर्य नायकम् 'शान्ति-निकेतन' में रेक्टर के पद पर आसीन थी। उन्हें एक अच्छे हिन्दी अध्यापक की आश्यकता थी। श्रीमती आशा आर्य और हरिऔध जी का परिचय था। तो उन्हेंने एक दिन हरिऔध से हिन्दी अध्यापक के लिए सुयोग्य व्यक्ति की खोज की बात बता दी फिर क्या था हरीऔध ने तुरंत द्विवेदी जी का परिचय देते हुए उनकी समस्त अच्छाइयों का बखान किया। इससे श्रीमती आशा आर्य बहुत प्रभावित हुई और द्विवेदी जी को शान्तिनिकेतन ले गई। इस प्रकार द्विवेदी जी का शांतिनिकेतन में हिन्दी अध्यापक के रूप में प्रवेश हुआ। सन 1930 से द्विवेदी जी शांति निकेतन में हिन्दी के अध्यापक बनकर हिन्दी विभाग में कार्य करते रहे। यह उनके जीवन का निर्णायक मोड़ था। शांतिनिकेतन में रवींद्रनाथ ठाकुर तथा आचार्य क्षितिमोहन सेन जैसे प्रबुद्ध विचारों के प्रभाव से साहित्य का गहन अध्ययन और उसकी रचना प्रारंभ की। वे विधिवत रूप से हिन्दी के छात्र कभी नहीं रहे। हिन्दी का उनका ज्ञान कठिन स्वाध्याय से प्राप्त किया हुआ था। यहां वे बीस वर्षों तक रहे। यही से उनकी आरंभिक पुस्तकें प्रकाशित होती रही। हिन्दी साहित्य की भूमिका (1940), सूर-साहित्य (1936), कबीर (1942), अशोक के फूल (1948), बाणभट्ट की आत्मकथा (1946) का लेखन एवं प्रकाशन शांतिनिकेतन में ही हुआ था। सन् 1949 में लखनऊ विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.लिट. की उपाधि देकर उनका विशेष सम्मान किया है।

सन 1950 में द्विवेदी जी ने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में बतौर प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष के रूप में कार्यभार ग्रहण किया। उसके उपरांत वे कुछ वर्षों के लिए पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ में हिन्दी विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष बनाए गए। यहाँ से द्विवेदी जी सन् 1967 में पुनः बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में आ गये और यही से सन् 1970 में सेवानिवृत्त हुए। सन् 1957 में द्विवेदी जी को भारत सरकार की तरफ से पद्मभूषण की उपाधि से नवाज़ा गया।

हजारी प्रासद द्विवेदी जी ने सन् 1950 में शांतिनिकेतन में रहते हुए 'विश्व-भारती' पत्रिका के संपादकीय दायित्व के अलावा 'अभिनव-भारतीय ग्रंथमाला' कलकत्ता का संपादन

कार्य भी किया। 1946 में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य संमेलन के कराची अधिवेशन में आयोजित 'साहित्य परिषद' की अध्यक्षता पद को सुशोभित किया। द्विवेदी जी राजभाषा आयोग के सदस्य भी रहे। 1970 से 1972 तक वे शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार की 'हिन्दी भाषा का ऐतिहासिक व्याकरण' योजना के निदेशक रहे। साथ ही काशी की नागरी प्रचारिणी सभा के अध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया है। हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का निधन सन1979 को दिल्ली में हुआ।

द्विवेदी जी का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली है। उनका स्वभाव बहुत विनम्र, सरल और उदार था। खद्दर का धोती, कुर्ता और कंधे पर भागलपुरी दुपट्टा डाले हुए अपनी विद्वता की गरिमा को छिपाने की असमर्थ कोशिश करते रहते थे। वे हिन्दी अंग्रेज़ी, संस्कृत और बंगला भाषाओं के विद्वान हैं। भक्तिकालीन साहित्य का उन्हें अच्छा ज्ञान है।वैसे देखा जाए को बनारस द्विवेदी जी से पहले आचार्य रामचंद्र शुक्ल की कर्म भूमि रही है। इसलिए हजारी प्रसाद द्विवेदी जी को अपने आपको प्रमाणित करने के लिए संघर्ष करना पड़ा।

द्विवेदी जी को अपने कठीन परिश्रम का फल अपने जीवन काल में ही देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्हें 'सूर साहित्य' किताब के लिए साहित्य समिति, इंदौर ने स्वर्ण पदक दिया और 'कबीर' किताब के लिए प्रसिद्ध 'मंगलाप्रसाद परितोषिक' नामक पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। भारत के राष्ट्रपति द्वारा इन्हें सन् 1957 में 'पद्मभूषण' की उपाधि से विभूषित किया गया है। साहित्य अकादमी ने भी द्विवेदी जी को सन् 1962 में 'टैगोर पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। वही सन् 1965 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद ने अपनी सर्वोच्च उपाधि 'साहित्य वाचस्पति' से उन्हें अलंकृत किया गया।

द्विवेदी दी का व्यक्तित्व अत्यन्त सराहनीय रहा है। वे जैसे घर में व्यवहार मधुर थे वैसे ही बाहर भी मधुर भाव से परिपूर्ण थे। विनय भाव और सामाजिकता द्विवेदी जी के स्वभाव में विशेष रूप में विद्यमान थी। उनके वकृत्व काला का हर कोई कायल था, वे प्रभावशाली वक्ता थे। उनके व्यक्तित्व कौशल में श्रोताओं को अपनी ओर आकर्षित करने की अपूर्व क्षमता थी जिससे इनके संपर्क में आनेवाला व्यक्ति आत्मीयता की डोर में बंध जाता था। मध्यम वर्गीय गृहस्थ जीवन में आनेवाली समयस्याओं से द्विवेदी जी भी जूझते हुए अपनी संतानों को ईमानदारी का पाठ सीखते हुए जीना सिखाया।

बोध प्रश्न :

- हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का बचपन किस प्रकार का रहा है स्पष्ट कीजिए।
- हजारी प्रासद द्विवेदी जी के शांतिनिकेतन के जीवन पर प्रकाश डालिए।

11.1.2 हजारीप्रसाद द्विवेदी की रचनायात्रा

आचार्य हजारी प्रासद द्विवेदी जी बाल्यावस्था से ही मोधावी और प्रतिभा संपन्न रहे है। द्विवेदी जी के व्यक्तित्व पर रवीन्द्रनाथ टैगोर जी का अत्याधिक प्रभाल पड़ा है। गुरूदेव के सानिध्य में ही उन्हें जीवन का वह व्यापक दृष्टिकोण, सौंदर्य का वह शाश्वत मानदण्ड और संस्कृति का वह उदात्त रूप मिला है, जो उनके साहित्य में सर्वत्र दिखाई देता हैं। इनके अलावा द्विवेदी जी शान्तिनिकेतन के आचार्य क्षितिमोहन सेन से भी विशेष रूप से प्रभावित थे। वही द्विवेदी जी पर गांधी जी के जीनव-दर्शन का भी प्रभाव पड़ा है। जिसके चलते वे सहजता में अपना नैसर्गिक आकर्षण खोजने की कोशिश करते हैऔर इसकी झलक द्विवेदी जी की रचनाओं में स्पष्ट दिखाई देती है। द्विवेदी जी की प्रकाशित कृतियों में व्यक्ति तथा सामाजिक हित के मूल्यों का सर्वौत्तम स्वरूप को प्रमुखता से स्थान मिला है।

हजारी प्रासद द्विवेदी जी को साहित्यकार बनाने में हरिऔध जी का बड़ा हाथ रहा है। हरिऔध अपनी कविताएँ द्विवेदी जी को बड़े चाव से सुनाया करते थे। साथ ही में द्विवेदी जी को कविताएँ लिखने के लिए प्रोत्साहित भी किया करते थे। शिक्षा हासिल करने के लिए जब द्विवेदी जी बनारस में रह रहे थे तब उनका परिचय हरिऔध से हुआ था। बनारस के वास्तव्य के समय ही द्विवेदी जी की अनेक साहित्य प्रेमियों से परिचय हुआ उसमें मुख्य रूप से लाला भगवानदीन, बाबू श्यामसुंदर दास और पंडित नंददुलारे वाजपेयी है।

द्विवेदी जी की प्रकाशित कृतियाँ निम्न प्रकार से है :-

उपन्यास

बाणभट्ट की आत्मकथा (1947), चारू चन्द्रलेख (1963), पुनर्नवा (1973) और अनामदास का पोथा (1976)

निबंध साहित्य

अशोक के फूल (1948), कल्पलता (1951), विचार और वितर्क (1954), विचार-प्रवाह (1959), कुटज (1964), आलोक-पर्व (1972) प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, मध्यकालीन धर्म साधना (1952), सहज-साधना (1963)

आलोचना साहित्य

सूर-साहित्य (1940), कबीर (1942), आधुनिक हिन्दी साहित्य पर वितार : साहित्य का मर्म (1949), नाथ सम्प्रदाय (1950), लालित्य मीमांसा (1962), साहित्य-सहचर (1956), कालिदास की लालित्य योजना

इतिहास ग्रंथ

हिन्दी साहित्य की भूमिका (1940), हिन्दी साहित्य का आदिकाल (1952) और हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास (1953)

संपादन कार्य

नाथ-सिद्धों की बानियाँ (1957), संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो (1957), संदेश रासक (1960), दशरूपक (1963)

एकांकी और वार्तालाप

बसंत विभ्राट- एकांकी, सुदिन्या एकांकी, शतरंज के खिलाड़ी-एकांकी,
साहित्य का नया कदम, रीतिकाव्य, इतिहास का सत्य (वार्तालाप)

अनुवाद साहित्य

लालकनेर, मेरा बचपन (1956), दो बहने (1965), विश्व-परिचय, प्रबंध चिंतामणि, एकोत्तर शतीं की 24 कविताओं का अनुवाद , रवीन्द्रनाथ की कुछ कविताओं अनुवाद। मेघदूत : एक पुरानी कहानी।

हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का रचना संसार हिन्दी साहित्य के लिए अमूल्य और ऐतिहासिक निधि है। वे उच्चकोटि के निबंधकार, उपन्यासकार, आलोचन एवं अनुसंधानकर्ता थे। उनकी प्रत्येक कृति पर उनके व्यक्तित्व की छाप देखी जा सकती है।सूर साहित्य में लेखक ने कृष्ण-भक्ति साहित्य का उदय महाभारत काल से स्वीकर किया है। इसमें माधुर्य पदों की व्याख्या तत्कालीन समाज की परिपाटी और परंपराओं के आधार पर की गयी है। 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में द्विवेदी दी ने अपने नवीन दृष्टिकोण को अभिव्यक्त किया है जिसे अन्यत्र दुर्लभ ही दिखाई देगा। इसमें भारतीय चिंतन परंपरा को 'लोकमानस' के धरातल पर प्रतिस्थापित करने का प्रयास किया है। द्विवेदी की विद्वत्ता तथा शोधकर्ता की प्रवृत्तियों का ज्वलंत उदाहरण इनकी 'कबीर' नामक किताब हैं। इसमें कबीर के साहित्य को पूर्ववर्ती और पार्श्ववर्ती साधनाओं के साथ एवं उनकी खंडन-मंडन नीतियों को नाथ-सिद्धों की परंपरा से जोड़कर समझाया गया है।

यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि द्विवेदी जी को साहित्य अकादमी पुरस्कार उनके निबंध संग्रह 'आलोक पर्व' के लिए सन 1973 में प्रदान किया गया था। इन निबंध संग्रहों के अलावा उनकी कुछ आलोचनात्मक पुस्तकें भी निबंध शैली में हैं। द्विवेदी जी ने विचारात्मक, वर्णमात्मक, आलोचनात्मक, विवरणात्मक प्रायः सभी प्रकार के निबंधों की रचना की है। अनुमानतः द्विवेदी जी ने 200 के आस-पास निबंध लिखे हैं। इनके निबंधों में विचार और भावुकता दोनों का बेजोड़ समन्वय देखने को मिलता है।'साहित्य-सहचर' को इस कोटि में रखा जा सकता है। उत्कृष्ट कल्पना, सुचिंतित विचारधारा, व्यापक जीवन दृष्टि, गहन अनुभूति, लालित्य सम्पन्नता, कलात्मक सौष्ठव आदि गुणों के कारण द्विवेदी जी के निबंध अत्यंत सरस और ह्दय स्पर्शी हैं।'अशोक के फूल' साहित्यिक निबंधों का संग्रह है। हजारी प्रासद द्विवेदी जी की सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास को लेकर जिज्ञासा को अनेक विषयों का आधार लेकर इस निबंध संग्रह में व्यक्त हुई है। 'कल्पलता' निबंध संग्रह में एक काल्पनिक वार्तालाप शैली में लिखा गये हैं। जिसमें मनुष्य के अंतस्थल में एक विचित्र परिवर्तन की क्रिया शुरू हो जाती है और मानवता को उच्च आसन पर विराजमान होने का अनुभव होता है। 'विचार और वितर्क' में 28 निबंधों को संग्रहीत किया गया है। यह निबंध संग्रह जब दूसरी बार प्रकाशित हुआ तो इसमें

द्विवेदी जी के कुछ पुराने निबंध छोड़कर, नये निबंध को शामिल किया गया है। इसलिए इस निबंध संग्रह में साहित्य, दर्शन, संस्कृति, भक्ति आदि अनेक गुत्थियों का विश्लेषण देखने को मिलेगा। 'विचार-प्रवाह' नामक निबंध संग्रह में द्विवेदी द्वारा समय-समय पर लिखे गए लेखों और उनके द्वारा दिए गये भाषणों को संग्रहीत किया गया हैं। जिसमें कुल 21 निबंधों और भाषणों को स्थान दिया गया हैं। इस संग्रह में रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविता का अनुवाद भी सम्मिलित किया गया है। 'कु टज' द्विवेदी जी द्वारा लिखा गया निबंध संग्रह है, इसमें कुल 17 निबंधों को संग्रहीत किया गया है। इन निबंधों के माध्यम से लेखक ने अपनी पीड़ा तथा मनःस्थिति को अभिव्यक्ति किया है। यह संग्रह द्विवेदी जी के जीवन दर्शन का साक्षात रूप हैं। 'आलोक पर्व' नामक निबंध संग्रह में 24 निबंधों का समावेश है। इन निबंधों में प्राचीन भारत की कला, संस्कृति के साथ-साथ देवी-देवतीओं के प्रति आस्था और गुरू-शिष्य के प्रेम का अलौकिक विश्लेषण किया गया है।

उपर्युक्त निबंध संग्रहों को आधार रखकर यहा कहाँ जा सकता है कि द्विवेदी जी का अध्ययन गहन है, उनकी विचारधारा तथा चिन्तरनशीलता गंभीर है और वे हमेशा लोक मंगल की भावना को स्मरण रखते हुए लेखन कार्य करते हैं। इनके व्यक्तित्व की अनेक विशेषताएँ उनके निबंधों में अनेक रूपों में देखने को मिलती हैं। उनके द्वारा लिखे गए वैयक्तिक निबंध हिन्दी साहित्य की अनुपम निधि कही जा सकती हैं। इनके निबंधों में व्यंग्य विनोद अत्यंत संयत रूप में वर्णित होता है। इस संबंध में बाबू गुलाब राय का कथन अनायास स्मरण हो आता है वे कहते हैं, "द्विवेदी जी के निबंधों में ठोस बौद्धिक चिन्तन, शास्त्रीय विश्लेषण-विवेचन, काव्यात्मक कमनीयता, प्रवाह की तरलता और अभिव्यक्ति की सरलता देखी जा सकती है। चिंतन क्रम और अभिव्यक्ति शैली पर उनके विस्तृत तथा गहन अध्ययन और तज्जन्य पाण्डित्य की गहरी छाप दृष्टिगत होती है।" (प्रतिनिधि हिन्दी निबंधकार, डॉ. विभुराम मिश्र,पृष्ठ206)

बोध प्रश्न :

- हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का कृतित्व किस प्रकार का रहा है ? स्पष्ट कीजिए।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की रचनाओं पर टिप्पणी लिखिए।

11.1.3 हजारी प्रासद द्विवेदी की वैचारिकता के विविध आयाम

द्विवेदी जी मूलतः निबंधकार के रूप में इस इकाई में विचारणीय हैं। द्विवेदी दी के साहित्य में विविधता दिखायी देती है। जिससे हिन्दी साहित्य को व्यापक एवं समृद्ध बनाने में योगदान मिला। उनके निबंधों के शीर्षक सामान्य ही है लेकिन भीतर गहन चिंतन-मनन अच्छे प्रकार से निरूपित होता है। इन निबंधों में उनके मन का निर्मल उच्छ्वास, भीतर की आर्द्रता अभिव्यक्त हुई हैं। उनका चिंतन और प्राचीन संस्कृति की विस्तृत जानकारी तो सभी निबंधों में वर्णित होती ही है, अपितु आत्मव्यंजक निबंधों में तो उनकी निजता श्रोताओं के साथ सहज तादात्म्य स्थापित करने में समर्थ है। इस संबंध में डॉ. प्रभाकर माचवे का कथन बड़ा प्रासंगिक

है, वे कहते है, “उनके निबंधों को पढ़ते हुए बार-बार लगता है कि शाम के झुटपुटे में हम कोई पुराने महल का खण्ड़हर देख रहे है। नाव पर से बासुरी सुनाई दे रही है और हम सफर हमसे जल्दी ही बिछुड़ने वाला है यह सुखद दर्द हमें कहीं का नहीं रहने देता। जी उचाट हो जाता है और ‘रम्याणिवीक्ष्य .... वाला भाव फिर-फिर मन से उठता हैं।’” (चौबे, 1980:188)

द्विवेदी जी संस्कृति को किसी काल विशेष, देश अथवा जाति की संपत्ति नहीं मानते बल्कि उनके अनुसार “मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति हैं।” (2011: 67) वे संस्कृति को संकीर्ण मायने में लेकर उसके व्यापक स्वरूप को स्थापित करते हैं। द्विवेदी जी के अनुसार संस्कृति अपरिवर्तनीय विकास को अवरूद्ध करने के लिए नहीं, अपितु उसे युगानुरूप गतिशील बनाने के लिए है। समय के साथ चलना, युगानुरूप बदलना मानहित को ध्यान में रखकर विकसित होने में ही संस्कृति की सार्थकता है। भारतीय संस्कृति पर अनेक संस्कृतियों का प्रभवा है, संस्कृति को किसी सीमा में नहीं बाँधा जा सकता, क्योंकि वह सर्वोच्च और सर्वव्यापी होती है। ‘संस्कृतियों का संगम’ निबंध में द्विवेदी जी उस भारतवर्ष की सांस्कृतिक जय यात्रा की कल्पना करते है जिसे रवीन्द्रनाथ ने महामानव समुद्र माना है,“यह भारतवर्ष महामानव समुद्र है। केवल आर्य, द्रविड़, कोल और मुण्डा तथा किरात जातियाँ ही इसमें नहीं आयी हैं कितनी ही ऐसी जातियाँ यहाँ आयी हैं जिन्हें निश्चित रूप से किसी खास श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। फिर उत्तर-पश्चिम से नाना जातियाँ राजनीतिक और आर्थिक कारणों से आती रही हैं, उन सबके सम्मिलित प्रयत्नों से वह महिमाशाली संस्कृति उत्पन्न हुई है जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं।” (द्विवेदी, 2011: 67) भारतीय संस्कृति में विभिन्न विचारधाराओं के होने पर भी समन्वयवादी भावना विशेष रूप से प्रकट होती है। वे लिखते है, “विरोधों में सामंजस्य स्थापित करने वाली संस्कृति कभी समस्या नहीं बन सकती वह तो समस्याओं का हल है। सांस्कृतिक परंपरा की सही पहचान अपने आप में एक दुष्कर कार्य है। देश और जाति की विशुद्ध संस्कृति केवल बात की बात है, सब कुछ में मिलावट है, सब कुछ अविशुद्ध है। (अशोक के फूल,57)’उनकी मान्यता हैं कि, “सभ्यता का आन्तरिक प्रभाव संस्कृति हैं। सभ्यता समाज की बाह्य व्यवस्थाओं का नाम हैं, संस्कृति व्यक्ति के अंतर के विकास का।(विचार और वितर्क, पृ. 181)”

जब हम व्यक्ति को सामाजिक प्राणी की संज्ञा देते है तो यह सहज ही सिद्ध होता है कि मनुष्य के जीवन और उसके साहित्य पर समाज का प्रभाव अवश्य पड़ता होगा। व्यक्ति के प्रत्येक क्रिया-व्यवहार में समाज का असर दिखता होगा। इसलिए ही शायद द्विवेदी जी ‘कल्पलता’ नामक निबंध संग्रह के ‘मुनष्यकी सर्वोत्तम कृति : साहित्य’ में कहते है, “सारे मानव समाज को सुंदर बनाने वाली साधना का नाम ही साहित्य है।” (पृ.143) अर्थात जो साहित्य मानव को संवेदनशील, सह्दय एवं परोपकारी बना सकने की क्षमता रखता हो वही साहित्य है। इस

निबंध को पढ़ते हुए आपको आनायाश की प्रेमचंद के प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्षीय वक्तव्य की यादी आती है।

द्विवेदी जी समाज में व्याप्त जाति-पाँति के भेद-भाव से आहत थे। वे सभी मनुष्य को समान तथा सामंजस्य स्थापित करना चाहते थे। वे सही मायने में मानवता के पुजारी थे। उनका कहना था कि एक जाति दूसरे जाति से घृणा न करके प्रेम पूर्ण व्यवहार करें। वे'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है' नामक निबंध में लिखते हैं,"हमारा यह देश जाति-भेद का देश है। करोड़ो मनुष्य अकारण ही अपमान के शिकार हैं। निरन्तर दुर्व्यवहार पाते रहने के कारण उनके अपने मन में हीनता की गाँठ पड़ गयी है। यह गाँठ जब तक नहीं निकल जाती तब तक भारत वर्ष की आत्मा सुखी नहीं रह सकती। कर्म का फल मिलता है, उससे बचने का उपाय नहीं है। जिन लोगों को अकारण अपमान के बंधन में डालकर हमने अपमानित किया है वे लोग सारे संसार में अपमान के कारण बने हैं।"उनका स्पष्ट मानना था की साहित्य सृजन का मुख्य और एकमात्र उद्देश्य होना चाहिए मानवता का हित। उनका साहित्य सिद्धांत मानवतावाद का पोशक है। वे मानते थे कि ऐसे साहित्य की रचना होनी चाहिए जो मानवता के सर्वकल्याण की कांमना के लिए प्रेरित करें, उसमें मानवता की भावना को जागृत कर सके।

शिक्षा मानव समाज में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और इसका महत्व कई तत्वों में होता है।शिक्षा व्यक्तित्व विकास के लिए महत्वपूर्ण है। यह विद्यार्थियों को संसाधनों, कौशलों, और दक्षताओं का संचार करती है जो उन्हें समाज में सफलता प्राप्त करने में मदद करते हैं।शिक्षा सामाजिक और आर्थिक समानता को प्रोत्साहित करती है। यह सभी वर्गों और समुदायों के लोगों को समान अवसरों के लिए सशक्त करती है और उन्हें स्वतंत्र और स्वाधीन नागरिक के रूप में बनाने में मदद करती है।द्विवेदी जी क अनुसार शिक्षा सार्वजनिक संपत्ति है और उसका लक्ष्य ज्ञान प्राप्ति और मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठापना करना है। उनका मानना है किशिक्षा लोगों को जागरूक करती है और उन्हें सामाजिक मुद्दों के बारे में जानकार बनाती है। जिससे समाज में सुधार को बढ़ावा मिलता है और लोगों को न्याय और नैतिकता के प्रति सकारात्मक रूप से योग्य बनाया जा सकता हैं।भारतीय चिंतन परम्परा में शिक्षा के विभिन्न पद्धतियाँ हैं जैसे गुरु-शिष्य परंपरा, आश्रम विद्या, गुरुकुल पद्धति आदि। इन पद्धतियों के माध्यम से छात्रों को व्यक्तिगत और सामाजिक शिक्षा प्राप्त होती थी। द्विवेदी जी इस संबंध में अपने निबंध 'हमारी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली' में कहते है, "कोई निश्चित प्रणाली या योजना उतने महत्व की वस्तु नहीं है। जितना उदार, निस्पृह और प्रेमी गुरू। दूसरी बात जो अत्यंत स्पष्ट है, वह यह है कि बदली हुई अवस्था के साथ सदा सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है। उपलब्ध साधनों का, यज्ञों का, तीर्थों का, गोष्ठियों का, समाजों का, यथेच्छ उपयोग किया गया। विद्या जीवन से विच्छिन्न कभी नहीं की गई। पुस्तकों का सहारा लेने में भी नहीं हिचका गया है, किन्तु सर्वत्र और सर्वदा गुरू का आदर्श वहीं रहा हैः निःस्पृह, उदार, प्रेमी और चरित्रवान।" (अशोक के फूल, पृ. 55) उनका अनुसार शिक्षा स्वार्थ सिद्धि का साधन नहीं है वह तो मानव मुक्ति का साधन है

अगर कोई उसे स्वार्थ सिद्धि के लिए उपयोग में लायेगा तो इससे शैक्षणिक मूल्यों का विघटन ही होगा। जिससे शिक्षा की पवित्रता नष्ट हो जायेगी। द्विवेदी जी का मानना है कि ज्ञान के समान पवित्र वस्तु कुछ भी नहीं है, वे अपने दूसरे निबंध 'राष्ट्रीय संकट और हमारा दायित्व' में लिखते है, "नहिं ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।" (कुटज, पृ.15) वे वर्तमान शिक्षा को लेकर दुखे थे क्योंकि हमारी शिक्षा व्यवस्था में सबसे बड़ी कमी उसका स्वदेशी न होकर विदेशी होना था। जिससे हमारी लोक भाषाओं की उपेक्षा हो रही थी।

चेतना और भाषा के बीच गहरा संबंध होता है। भाषा मानवीय चेतना को व्यक्त करने का मुख्य माध्यम भी है।भाषा मानव चेतना का एक महत्वपूर्ण और प्रमुख साधन है जो व्यावहारिक संचार को संभव बनाता है। इसके माध्यम से हम अपने विचारों, भावनाओं, और विचारों को दूसरों के साथ साझा करते हैं।भाषा मानव चेतना के विभिन्न पहलुओं की अभिव्यक्ति का माध्यम है। हम भाषा के माध्यम से अपने विचारों, भावनाओं, और अनुभूतियों को अद्भुत रूप से व्यक्त कर सकते हैं।भाषा सामाजिक सम्बन्धों को निर्मित करने और संरक्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह हमें समाज में जुड़ने और साझा करने की क्षमता प्रदान करती है।भाषा सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत को संरक्षित करने का माध्यम भी होती है। इसके माध्यम से हम अपनी संस्कृति, इतिहासऔर परंपराओं को आगे बढ़ाते हैं।भाषा मानव चेतना के विचारों की प्रक्रिया को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हमें विचारों को सुव्यवस्थित और समझने में मदद करती है।भाषा के माध्यम से हम सांस्कृतिक विनियोजन को प्रवर्तित करते हैं। इसलिए हजारी प्रासद द्विवेदी जी भाषा को सहज, सरल और स्वतः बोधगम्य होना आवश्यक मानते है। लेकिन वे सरलता के नाम पर भाषा को कृत्रिम और अशक्त बनाने के पक्षपाती नहीं थे। इस संदर्भ में अपने निबंध 'हिन्दी का वर्तमान और भविष्य' में लिखते है, "हमें यह नहीं समझना चाहिए कि केवल दफ्तरों में आ जाने से हिन्दी भाषा में वह शक्ति आ जायेगी जो आधुनिक युग में उन्मुक्त और उदार दृष्टि की प्रतिष्ठा करती है। हिन्दी का साहित्य पुर्णरूप से समृद्ध होना चाहिए। इसके लिए कला, विज्ञान, दर्शन, सामाजिक विज्ञान, शिल्पशास्त्र, औद्योगिक शास्त्र आदि के संबंध में ऐसी पुस्तकों का निर्माण अति आवश्यक है, जिनका स्तर ऊँचा हो और भाषा सहज हो.... सरलता के नाम पर कृत्रिम और अशक्त भाषा बनाने के पक्ष में मैं नहीं हूँ। वस्तुतः भाषा सहज होनी चाहिए न कृत्रिम और न दुरूह....।" (कुटज, पृ. 113) उनका स्पष्ट मानना है कि भाषा की समृद्धी आवश्यक है लेकिन कोई भी भाषा अपना विकास अकेले नहीं कर सकती। उसकी शक्ति और सार्थकता बढ़ाने के लिए उसे अनेक देशी-विदेशी भाषाओं की शब्द संपदा को अपना लेना होगा। किसी भी देश की उन्नती के लिए मातृभाषा और राष्ट्रभाषा की उन्नती निश्चित रूप से निर्विवाद है।

बोध प्रश्न :

- निबंधकार के रूप में आप हजारी प्रसाद द्विवेदी जी को किस रूप में देखते है ? विश्लेषित करें।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी जी निबंधों में वैचारिक विविधता है ? इस विधान को स्पष्ट करें।

11.1.4 हजारी प्रासद द्विवेदी का हिन्दी साहित्य में स्थान

द्विवेदी जी ने युनीन प्रासंगिकता को हिन्दी साहित्य के मूल मंत्र के रूप में स्वीकार करके हिन्दी लेखन को नई दिशा और दृष्टि दी है। द्विवेदी जी की लोकप्रियता और हिन्दी साहित्य में निर्विवाद मान्यता का मुख्य कारण उनकी अध्ययनशीलता और अध्यापकीय कौशल्य की प्रवणता को दिया जा सकता हैं। आधुनिक हिन्दी साहित्य के एक सर्वमान्य सुविज्ञ विद्वान के रूप में साहित्यिक जगत से लेकर विश्वविद्यालयीन कक्षाओं में समान रूप से अगर किसी को पहचना जातो हो तो वह नाम है हजारी प्रसाद द्विवेदी। द्विवेदी जी ने अपने रचना संसार को कुछ ऐसी साधना पद्धित से परिमार्जित किया की उनकी लेखनी रूपी कुंडलिनी जागृत होकर उनकी बुद्धि, विवेक और ज्ञान की धारा से निकला हुआ अमृत पान करके कृतज्ञ हो उठती है। उनमें युग परिवर्तन और काल चेतना बहुत प्रबल थी। उनके संपूर्ण लेखन में मानवता का हित, मानवता का कल्याण सर्वपरि रहा हैं। उनका कहना था कि मनुष्यता ही धर्म ही बड़ा है; भाषा, साहित्य, राजनीति, धर्म, अर्थशास्त्र इत्यादी सब कुछ उसी की सेवा के लिए हैं। द्विवेदी जी हिन्दी साहित्य में मानवतावादी मूल्यों के सबसे बड़े प्रतिष्ठापक रहे हैं।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी द्विवेदी दी का हिन्दी साहित्य के इतिहास के निरूपण, सिद्ध, नाथ, मध्यकालीन साहित्य साधना के विश्लेषण, निबंधों के चिंतनयुक्त माधुर्य और विचारपूर्वक लेखों के कारण न केवल हिन्दी साहित्य अपितु सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में अनुपम योगदान है।

हिन्दी निबंध साहित्य में हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का निबंध लेखन छायावाद और प्रगतिवाद के दरमियान प्रकाशित होते हैं। उनकों हिन्दी निबंध साहित्य के विकास में एक मील के पत्थर के रूप में और दिशा स्तम्भ के रूप में देखा जाता हैं। द्विवेदी अपने विद्वता पूर्ण गंभीर चिंतनयुक्त निबंधों को भी इतनी सहज और सरल भाषा में प्रस्तुत करते हैं कि पाठक कहीं भी ऊब नहीं जाता है और नहीं कहीं भटक पाता है और न कोई बोझ उस पर हावी होता है। द्विवेदी जी ने अपने निबंधों के माध्यम से हिन्दी निबंध विधा लोक कल्याण की भावना को स्थापित करने का कार्य किया। उन्होंने नए युग के परिवर्तन को अपने निबंधों में स्थान देकर मानवतावादी भावन से हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने का काम किया। द्विवेदी जी साहित्य को आधार बनाकर जीवन के अनेक पहलुओं को साधना चाहते थे। उन्होंने अपने निबंधों के माध्यम से जो भाषा संबंधी विचार व्यक्त किये हैं; संस्कृत साहित्य, विज्ञान, भाषा, इतिहास, दर्शन, समाज आदि के संबंध में उचित अनुसंधान के लिए पर्याप्त विश्लेषण उनके निबंधों में देखने को मिलेगा जो हिन्दी साहित्य की अमूल्य धरोहर है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के प्रमुख आलोचकों में से एक हैं, जिनका योगदान उत्कृष्ट और अविस्मरणीय है। द्विवेदी जी की आलोचना पद्धति में समाज, सांस्कृतिक परिदृश्य,

और ऐतिहासिक संदर्भ का विशेष महत्व होता है। उन्होंने हिन्दी साहित्य को उसके ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, और समाजिक परिपेक्ष में विश्लेषित किया। उनके लेखों में साहित्यिक कृतियों के विविध पहलुओं का विस्तृत और संवेदनशील विश्लेषण होता है।द्विवेदी जी ने हिन्दी साहित्य के उन्नति में अपना अद्वितीय योगदान दिया है। उनके विचारधारा में साहित्यिक कृतियों को अध्ययन करते समय गहन अध्ययन, विवेचन, और विविधता को महत्वपूर्ण माना जाता है।उनकी आलोचना में संस्कृति, भाषा, और समाज के तात्त्विक अंगों को उजागर करने का प्रयास रहता है। वे हिन्दी साहित्य को उसके मूल्यों, अनुप्रयोगोंऔर सांस्कृतिक परिणामों के साथ जोड़ते हैं।आलोचना में विचारशीलता, विश्लेषणात्मकता, और सृजनात्मकता के साथ-साथ तात्त्विक और भावात्मक पहलुओं को भी महत्व दिया जाता है। उनके लेखों में साहित्य के प्रति उत्साह, रुचि, और प्रेम का प्रकटीकरण होता है।उनकी आलोचना पद्धति का उद्दीपन हमें हिन्दी साहित्य के प्रति एक नई दृष्टिकोण प्राप्त करने में मदद करता है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की हिन्दी के प्रमुख उपन्यासकार में गिनती होती हैं,उन्होंने अपने योगदान से हिन्दी साहित्य को नई दिशा दी। वे अपने उपन्यास साहित्य 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारू चन्द्रलेख', 'पुनर्नवा'और 'अनामदास का पोथा' के माध्यम से ऐतिहासिक संदर्भ से आधुनिकता को साधने की कोशिश करते हैं। उनके उपन्यासों में गहराई, विचारशीलता, और समाज की समस्याओं का विवेचन देखने को मिलताहै। वे समाज में आधुनिकीकरण और सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया को समझने में मदद करने वाले विचारों के लिए प्रसिद्ध हैं।द्विवेदी जी के उपन्यासों में उनकी विशेषता यह है कि वेऐतिहासिक उपन्यासों में विभिन्न समाजिक वर्गों, जातियों, और सांस्कृतिक परंपराओं के माध्यम से समाज की विभिन्नता को दर्शाते हैं। उनकी कहानियाँ और किस्से आम जनता की जीवनशैली, उनकी चुनौतियों, और उनकी चिंताओं को सामाजिक एवं मानविकी परिपेक्ष में पेश करते हैं। इसके बावजूद, उनके उपन्यास उत्तेजक, रोमांचक, और विचारशील होते हैं, जो पाठकों को साहित्य के माध्यम से जीवन के अनगिनत पहलुओं को जानने और समझने में मदद करते हैं।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य के इतिहास को गहनता से अध्ययन किया और उसे विश्वसनीयता के साथ प्रस्तुत भी किया। वे अपने लेखन'सूर-साहित्य', 'कबीर', 'आधुनिक हिन्दी साहित्य पर वितार : साहित्य का मर्म', 'नाथ सम्प्रदाय', 'लालित्य मीमांसा', 'साहित्य-सहचर', 'कालिदास की लालित्य योजना' के माध्यम से तथा 'हिन्दी साहित्य की भूमिका', 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' और 'हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास' के माध्यम सेपाठकों साहित्य प्रेमियों को हिन्दी साहित्य के विभिन्न काल, युगऔर प्रमुख साहित्यिक कार्यों के बारे में समझने

में मदद करते हैं। उन्होंने हिन्दी साहित्य में विभिन्न साहित्यिक परंपराओं की महत्वपूर्ण समीक्षा की। उनके लेखन सेहमें भारतीय साहित्य की विविधता और उसकी समृद्धि का अनुभव होता हैं।उन्होंने हिन्दी साहित्य में प्रमुख काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, आदि के मूल्यांकन में अपनी विशेष रुचि और दृष्टि का परिचय दिया हैं। उनकी विशेषता यह थी कि वे साहित्य को सामाजिक, ऐतिहासिक, और सांस्कृतिक संदर्भ में देखने का प्रयास किया करते हैं।उनके लेखन में समाज के विभिन्न पहलुओं का विवरण उनकी आलोचना की महत्वपूर्ण भागीदारी है। उन्होंने समाजिक परिवर्तनों, राजनीतिक उत्थान और अध्ययन, सांस्कृतिक बदलाव, और विज्ञान और तकनीकी की प्रगति के संदर्भ में साहित्य के महत्व को समझाया।द्विवेदी जी का महत्त्व हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, और उनके योगदान ने हमें हिन्दी साहित्य की विशालता और उसकी समृद्धि का अनुभव कराया है।

बोध प्रश्न :

- निबंधकार के रूप में हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का हिन्दी साहित्य में क्या स्थान है ?
- आलोचक हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ? टिप्पणी लिखिए।

11.4 पाठ सार

प्रिय छात्रों! अब तक आप समझ ही गये होंगे कि निबंधकारहजारी प्रसाद द्विवेदी एक ऐसे लेखक हैं जो हिन्दी साहित्य के विकास में अपना विशेष योगदान देने वाले प्रमुख महान व्यक्तित्वों में से एक हैं। इस इकाई के अध्ययन से आप यह समझ ही गए होगें की उनका व्यक्तित्व और कृतित्व उनके साहित्यिक योगदान के माध्यम से व्यापक रूप से प्रस्तुत होता है।द्विवेदी जी का व्यक्तित्व उत्कृष्ट और विचारशील है। उन्हें साहित्य के प्रति अद्वितीय प्रेम और समर्पण है। उनकी विशेषता यह है कि वे साहित्य के माध्यम से समाज में जागरूकता और संचेतना फैलाने के लिए अपनी लेखनी का उपयोग करते हैं।

इस इकाई में आप यह भी समझ गये होगें की हजारी प्रसाद द्विवेदी का कृतित्व विविध और समृद्ध है। उनकी रचनाएं विभिन्न विषयों पर आधारित हैं, जिसमें ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, और व्यक्तिगत मुद्दे शामिल हैं। उनके उपन्यास, कहानियाँ, निबंध, और कविताएं साहित्य के विभिन्न रूपों में उत्कृष्टता की दिशा में अपने अद्वितीय योगदान को प्रस्तुत करते हैं।द्विवेदी जी का व्यक्तित्व और कृतित्व न केवल साहित्यिक समाज में बल्कि उनके पाठकों और उनके साहित्य संबंधित अन्य लेखकों के द्वारा भी सराहा और प्रशंसा किया जाता हैं। उनकी रचनाओं में गहरा समाजिक संदेश, मानवीयता, और साहित्यिक कला का सुंदर संगम दिखता है। इस तरह, हजारी प्रसाद द्विवेदी का व्यक्तित्व और कृतित्व साहित्य के क्षेत्र में एक अविरल और अनमोल धरोहर है।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं –

1. इस इकाई के माध्यम से आपने हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के जीवन संघर्ष को समझ लिया।
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के साहित्य सफ़र का परिचय प्राप्त कर पाए हैँ।
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के निबंध में वर्णित विविधता से अवगत हो गए हैं।
4. हजारी प्रासद द्विवेदी जी की निबंधों की वैचारिकता के विविध आयामों का विवेचन प्राप्त किया है।
5. इस इकाई के माध्यम से आपहजारी प्रासद द्विवेदी जी का हिन्दी साहित्य में योगदान को समझ गए हैं।
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के निबंधों की विशेषताओं से अवगत हो गए हैं।

11.6 शब्द संपदा

1. निरूपित - निरूपण किया हुआ। जिसकी विस्तुत विवेचना हो चुकी हो। जिसका निर्णय हो चुका हो।
2. आत्मव्यंजक - स्वयं अर्थपूर्ण
3. तादात्म्य - तल्लीनता।एक जान होना।
4. निर्विवाद - जिसमें कोई विवाद न हो, बिना झगड़े का।
5. उन्मुक्त - खुला हुआ।अच्छी तरह मुक्त। स्वच्छंद। मुक्त किया हुआ। छूटा हुआ; खुला हुआ।
6. विच्छिन्न - जिसका विच्छेद हुआ हो।काटकर या छेदकर अलग किया हुआ। पृथक। विभाजित। छिन्न-भिन्न।
7. विघटन - संयोजक अंगों को अलग अलग करना। तोड़ना फोड़ना। नष्ट या बरबाद करना।
8. दुर्व्यवहार - बुरा व्यवहार।बुरा बर्ताव।अनुचित आचरण। दुष्ट आचरण।
9. अकारण - बेवजह, बिना कारण।
10. कमनीयता - सुंदर होने की अवस्था या भाव। सुंदरता।
11. पार्श्ववर्ती - पास या निकट रहने वाला।पड़ोसी। साथ रहने वाला।
12. सुविज्ञ - अच्छा जानकार।ज्ञानवान्।बहुत अधिक विज्ञ।
13. अनुप्रयोग - किसी सिद्धांत या अनुशासन का व्यावहारिक प्रयोग (एप्लिकेशन)।

14. उत्थान - उठने का कार्य या भाव, उन्नत या समृद्ध स्थिति, उन्नाति,समृद्धि।बढ़ती, ऊपर की ओर उठना, ऊँचा होना, उठान।

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड- (अ)

दीर्घ प्रश्न ।

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में दीजिए।

1. निबंधकार हजारी प्रसाद द्विवेदी का जीवन परिचय दीजिए।
2. निबंधकार हजारी प्रसाद द्विवेदी के कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी की वैचारिकता के विविध आयामों का विश्लेषण कीजिए।
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्यिक योगदान का वर्णन कीजिए।

खंड- (ब)

लघु प्रश्न ।

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 200 शब्दों में दीजिए।

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी के बालपन पर टिप्पणी लिखिए।
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी का शिक्षा के लिए संघर्ष रेखांकित कीजिए।
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी के भाषा संबंधी विचारों पर प्रकाश डालिए।
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी का संस्कृति और सभ्यता के प्रति क्या दृष्टिकोण है?

खंड- (स)

I. सही विकल्प चुनिए (objective)

1. निम्नलिखित में से कौन-सा हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध संग्रह नहीं है ? ( )

A. अशोक के फूल B.पुनर्नवा C. कल्पलता D. कुटज

2. निम्नलिखित में से कौन-सा हजारी प्रसाद द्विवेदी का उपन्यास है ? ( )

A. संदेश रासक B. कबीर C. साहित्य सहचर
D. बाणभट्ट की आत्मकथा

3. हजारी प्रसाद की जन्म किस वर्ष में हुआ था ? ( )

A. 1907 B. 1890 C. 1920 D. 1930

4. हजारी प्रसाद द्विवेदी की किस रचना को साहित्य अकादमि पुरस्कार मिला है? ( )

A. कुटज B. विचार और वितर्क
C. आलोक पर्व D. विचार-प्रवाह

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. हजारी प्रासद द्विवेदी के पिता का नाम .... हैं।
2. हजारी प्रासद द्विवेदी का विवाह 20 वर्ष की आयु में सन 1927 में .... के साथ हो गया था।
3. भारत के राष्ट्रपति द्विवेदी को सन् 1957 में........................ की उपाधि से विभूषित किया गया है।
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने शांतिनिकेतन में .... तथा आचार्य .... जैसे प्रबुद्ध विचारों के प्रभाव से साहित्य का गहन अध्ययन और उसकी रचना प्रारंभ की।

III. सुमेल कीजिए।

1. हिन्दी साहित्य की भूमिका	अ) 1948
2. सूर साहित्य	आ) 1940
3. अशोक के फूल	इ) 1946
4. बाण भट्ट की आत्मकथा	ई) 1936

11.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी निबंधकार, डॉ. जयनाथ नलिन
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी का सर्जनात्मक साहित्य एवं सांस्कृतिक
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी समग्र पुनरावलोकन, प्रो. चौथीराम यादव
4. हिन्दी निबंध और निबंधकार, डॉ. रामचन्द्र तिवारी
5. निबंधकार आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. रविकुमार अनु
6. हिन्दी साहित्य में निबंध और निबंधकार, गंगाप्रसाद गुप्त
7. प्रतिनिधि हिन्दी निबंधकार, डॉ. विभुराम मिश्र एवं डॉ. ज्योतीश्वर मिश्र
8. विचार और वितर्क, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
9. विचार-प्रवाह, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
10. कुटज, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
11. अशोक के फूल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
12. आलोक-पर्व, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
13. कल्पलता, आचार्य हजारी प्रासद द्विवेदी
14. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का समग्र साहित्य : एक अनुशीलन, डॉ. यदुनाथ चौबे

इकाई 12 : हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'अशोक के फूल' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 मूल पाठ: हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'अशोक के फूल' की विवेचना

12.3.1 विवेच्य निबंध की विषय वस्तु

12.3.2 विवेच्य निबंध का प्रयोजन

12.3.3 विवेच्य निबंध में व्यक्त वैचारिकता

12.3.4 भाषा सौष्ठव

12.3.5 शैली सौन्दर्य

12.4 पाठ सार

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

12.6 शब्द-संपदा

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1: प्रस्तावना

प्रिय छात्रो !आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने निबंध साहित्य के शुष्क प्रदेश को 'ललित निबंध 'नामक रसमयी धारा से जोड़ने का महनीय कार्य किया है। निबंध लेखन की भिन्नभिन्न - कोटियाँमौजूद हैं उनमें से एक कोटि ललित निबंध की है। ललित निबंध में अन्य निबंधों की तुलना में चिंतन का आकाश कुछ अधिक खुला होता है। यहाँ किसी प्रकार का बंधन नहीं है। इसमें परिवेश का उचित छौंक मौजूद रहता है। ललित निबंध में लेखक अपनी निजी मान्यताओं को सामान्य तरीके से प्रस्तुत करता है। इसमें लेखक अपनी संवेदनाओं और अनुभूतियों को पाठक तक पहुंचाकर उसके साथ तादाम्य स्थापित कर लेता है। ललित निबंध की बुनावट या कसावट की बात जाए तो इसमें एक तरफ जहां कविता सी तरलता होती है तो दूसरी तरफ कहानी का उतार–चढ़ाव। गंभीर विचार प्रवाह और सांस्कृतिक दृष्टि के साथ-साथ रमणीयताकल्पना की , उड़ान और विनोदपूर्ण शैली मौजूद होती है।

हिन्दी साहित्य में प्रकृति-विषयक, आत्मपरक, हास्य-व्यंग्यपरक, लोक-जीवनपरक, संस्मरणात्मक, समसामयिक युगबोधपरक व सांस्कृतिक विषयक आदि ललित निबंध लिखे गए हैं। ललित निबंध को हिन्दी साहित्य में पूर्ण उत्कर्ष तक पहुंचाने का श्रेय आचार्य द्विवेदी को प्राप्त है। वे ललित निबंधों के क्षेत्र में हिमशिखर स्वरूप हैं। 'अशोक के फूल' उनके द्वारा रचित ललित

निबंधों के विपुल भंडार में से एक विशेष निबंध है। इसके माध्यम से आचार्य द्विवेदी जी ने भारत की ऐतिहासिक-सांस्कृतिक यात्रा के अनेकानेक पहलुओं से हमारा परिचय कराते हैं।

12.2 : उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित निबंध 'अशोक के फूल' का अध्ययन करने जा रहे हैं। इस इकाई को पढ़कर आप-

- ❖ विवेच्य निबंध की विषय-वस्तु का सार अपने शब्दों में लिख सकेंगे।
- ❖ अशोक के फूल निबंध के प्रयोजन या उद्देश्य से आप परिचित हो सकेंगे ।
- ❖ अशोक के फूल के वर्ण्य विषय की जानकारी हासिल कर सकेंगे ।
- ❖ निबंध की अंतर्वस्तु की विशेषताएं बता सकेंगे।
- ❖ भाषा और शैली की दृष्टि से निबंध पर विचार कर सकेंगे।

12.3 : मूल पाठ : हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'अशोक के फुल' की विवेचना

यह सर्वविदित है कि आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने साहित्येतिहास लेखन के साथ ही उपन्यास और निबंध लेखन के क्षेत्र में भी अपनी लेखनी चलाई है। इन दोनों विधाओं में उन्हें अपार सफलता मिली है। उपन्यास के क्षेत्र में उन्होंने भारत के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और पौराणिक पात्रों को पुनर्जीवित किया। इसी प्रकार निबंध लेखन की दुनिया में कभी अपने आसपास होने वाली गतिविधि अथवा प्रकृति की किसी विशिष्ट कृति को आधार बनाकर भारत की गौरवशाली परंपरा का तार्किक एवं समन्वयवादी इतिहास प्रस्तुत किया है। 'अशोक के फूल' शीर्षक निबंध उनके इसी चिंतन पद्धति का प्रत्यक्षीकरण है।

प्रस्तुत निबंध में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अशोक के फूल की महनीय सांस्कृतिक परंपरा एवं उसके महत्व का प्रतिपादन किया है। लेखक का मत है कि अशोक के फूल का किसी समय में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से अत्यंत ही महत्व रहा है। लेकिन वर्तमान में वह धूमिल या समाप्त हो गया है। अशोक की इस स्थिति से लेखक को अत्यधिक क्षोभ है। उन्होंने पिछले हजारों वर्ष की भारतीय चिंतन परंपरा में मौजूद इस फूल के महत्व पर ध्यान आकृष्ट किया है। निबंधकार ने इस फूल के मनोहर एवं रहस्यमयी छवि, भारतीय साहित्य एवं संस्कृति में उसकी उपस्थिति, यक्ष और गंधर्व के पूज्य वृक्ष व सामंती-सभ्यता के प्रतीक कर रूप में इसका बखूबी वर्णन किया है। उक्त प्रसंगों के बीच इस निबंध में भुलक्कड़ दुनिया की स्वार्थता और मनुष्य की निर्मम जीवनी-शक्ति एवं बदलती मनोवृति पर भी रोचक ढंग से चर्चा की गई है। विवेच्य निबंध के सारांश को निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं।

बोध प्रश्न:

- आचार्य द्विवेदी ने निबंध के अलावा अन्य किस विधा में लेखन कार्य किया है ?
- लेखक को किस बात को लेकर अत्यधिक क्षोभ है ?

12.3.1 विवेच्य निबंध की विषय-वस्तु (सारांश)

अशोक के फूल का मनोहर रूप –

प्रस्तुत निबंध का आरंभ अशोक के फूल के मनोहर रूप के वर्णन से किया गया है। छोटे-छोटे लाल पुष्पों के मनोहर स्तबकों (फूलों का गुच्छ) में खिला अशोक अत्यंत मनमोहक है। कामदेव ने भी उसकी मनोहर रूपराशि पर रीझकर उसे अपने तूणीर में स्थान देने योग्य समझा। यह पुष्पित अशोक निस्सन्देह बहुत सुन्दर है और इसे देखकर मन उदास हो जाता है। इसका वास्तविक कारण तो अन्तर्यामी ही जानते हैं। आचार्य द्विवेदी जी शोक सहित अशोक के फूल का महत्व आदि को व्याख्यायित करते हैं।

भारतीय साहित्य एवं संस्कृति में अशोक के फूल –

अशोक के मनोहर रूप पर चर्चा के पश्चात् निबंधकार ने भारतीय साहित्य एवं संस्कृति में अशोक के फूल का प्रवेश और विस्मृत करने का वर्णन किया है। द्विवेदी जी ने लिखा है कि भारतीय साहित्य में इस फूल का प्रवेश और निर्गम दोनों ही विचित्र नाटकीय व्यापार है। ऐसा नहीं है कि प्राचीन साहित्यकारों या कालिदास के पूर्व भारतवर्ष में इस फूल को महत्व नहीं दिया गया है। अवश्य दिया गया है, लेकिन कालिदास की रचनाओं में वह जिस शोभा और सुकुमारता को लेकर आता है, उसमें नववधू के गृह-प्रवेश की भाँति शोभा है, गरिमा है, पवित्रता है और सुकुमारता है। मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना के साथ ही इस मनोहर फूल से संबंधित साहित्य लुप्त हो गया। बाद में लोग इस फूल का ऐसे ही नाम लेते हैं, जैसे बुद्ध और विक्रमादित्य का।

कालिदास ने अशोक को अपूर्व सम्मान दिया था। उन्होंने अशोक के फूल को सुन्दरियों के नूपुर वाले चरणों के मृदु आघात से फूलने वाला, कोमल कपोलों पर आभूषणवत् रहकर उनकी शोभा बढ़ाने वाला बताया है। वह महादेव के हृदय में भी क्षोभ उत्पन्न करने वाला तथा राम के मन में सीता का भ्रम पैदा करने वाला भी रहा है। कामदेव के अन्य बाणों- अरविन्द (कमल), आम, नीलोत्पल (नील-कमल) व नवमल्लिका - का वर्णन अब भी कवि करते हैं, लेकिन अशोक ही अभागा है। कमल, आम व नीलोत्पल को सभी ने याद रखा। हाँ यह जरूर है कि नवमल्लिका को अब विशेष महत्व नहीं मिल रहा है किन्तु इससे ज्यादा महत्व कभी प्राप्त भी नहीं हुआ थी। लेकिन दुर्भाग्य से आज अशोक को भुला दिया गया है। केवल परंपरा-निर्वाह के लिए कवि यत्र-तत्र इसका प्रयोग उपमान या उद्दीपन रूप में कर लेते हैं। लेखक का विकल मन भारतीय रस-साधना के हजारों वर्षों का हवाला देते हुए कहता है कि क्या यह मनोहर पुष्प भुलाने की चीज है? क्या सहृदयता लुप्त और कविता सो गई थी? क्या कवियों का हृदय भी मनोहर वस्तुओं को देखकर मुग्ध नहीं होता या उन्हें देखकर उनके मन में भाव उत्पन्न नहीं होते? लेखक का आहत मन मानने को तैयार नहीं होता है और कहता है कि जले पर नमक यह है कि तरंगायित पत्रवाले

निफूले पेड़ को सारे उत्तर भारत में अशोक कहकर याद किया गया। याद का यह रूप अपमान का परिचायक है।

पुनः भारतीय धर्म, साहित्य और शिल्प में अशोक के फूल का जिक्र करते हुए कहते हैं मेरे मानने और नहीं मानने से क्या फर्क पड़ता है। ईसवी सन् के आरम्भ से ही अशोक का शानदार पुष्प भारतीय धर्म, साहित्य और शिल्प में अद्‌भुत महिमा के साथ प्रस्तुत हुआ था। उसी समय यक्षों और गन्धर्वों ने भारतीय धर्म-साधना को एकदम नए रूप में परिवर्तित कर दिया था। विद्वानों का मानना है कि कंदर्प और गंधर्व शब्द में केवल उच्चारण मात्र का अन्तर है। कंदर्प ने अशोक को अपनाया तो वह निश्चित ही आर्येत्तर सभ्यता की देन है। इन आर्येतर जातियों ने वरुण, कुबेर, इन्द्र को भी पूजा। कंदर्प ही कामदेव हुआ, जो शिव से पराजित हुआ, विष्णु से डरता था और बुद्धदेव से टक्कर लेकर लौट आया। वह हारकर भी झुका नहीं, बल्कि अशोक रूपी अस्त्र का प्रयोग कर बौद्ध धर्म को घायल किया तथा शैव-शक्ति साधना को झुका दिया। वज्रयान, कौल-साधना और कापालिक मत इस बात के साक्षी हैं।

बांग्ला साहित्य के माध्यम से भारतीय सांस्कृतिक चेतना में नई जान डालने वाले युगद्रष्टा रवीन्द्रनाथ का भी जिक्र किया है। द्विवेदी जी ने लिखा है कि रवीन्द्रनाथ ने इस भारतवर्ष को 'महामानवसमुद्र' कहा है। आज के भारतवर्ष को बनाने के लिए असुर, आर्य, शक, हुण, नाग, यक्ष, गंधर्व आदि अनेक जातियाँ आयी और समा गईं। हिन्दू जाति अनेक आर्य और आर्येतर उपादानों का अद्‌भुत सम्मिश्रण है। पशु-पक्षियों की अपनी परम्परा है। अशोक, आम, बबूल, और चम्पे की भी अपनी परम्परा है। जैसे सबकी अपनी परम्परा है ठीक वैसे ही अशोक की भी अपनी स्मृति-परम्परा है। वामन-पुराण का उल्लेख करते हुए लिखा है कि कामदेव ने शिव पर प्रहार किया जिससे वह स्वयं भस्म हो गया। उसका रत्न जड़ित धनुष पृथ्वी पर गिरकर टूट गया। रुक्म-मणि से बना मूठ का स्थान टूटकर चंपे का फूल, हीरे का बना नाह का स्थान टूटकर मौलश्री का फूल, इन्द्रनील मणियों से बना कोटि देश सुन्दर पाटल-पुष्प, चन्द्रकान्त मणियों से बने भाग से चमेली और विद्रुम से बनी कोटि बेला बन गई। स्वर्ग को जितने वाला कठोर धनुष धरती से मिलकर फूल में बदल गया। वामन-पुराण की उक्त प्रसंग के माध्यम से द्विवेदी जी ने बड़े सधे स्वर में कहा कि स्वर्गीय वस्तुएं धरती से मिले बिना मनोहर नहीं होती।

बोध प्रश्न:

- कामदेव के पाँच बाणों के नाम का उल्लेख करें।
- 'महामानवसमुद्र' किसे कहा गया और किसने कहा?

आर्य एवं गंधर्व जाति में अशोक की उपस्थिति

अशोक वृक्ष का संबंध गन्धर्व जाति के पूज्य वृक्ष से है न कि आर्य जाति। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है कि गन्धर्व और कंदर्प दोनों शब्द एक ही हैं। जो कंदर्प आज कामदेव के रूप

में आर्यों के देवता स्वीकार किये जाते है, वह वास्तव में गन्धर्व जाति का देवता थे। भारत में आर्यों के अतिरिक्त असुर, शक, हूण, नाग, यक्ष, गन्धर्व आदि जातियाँ बाहर से आयीं और यहीं पर बस गयीं। सभी ने भारत के निर्माण और प्रगति में सहयोग किया। आर्यों का इन सभी से संघर्ष हुआ। जिन जातियों ने बिना संघर्ष के आर्य जाति की अधीनता स्वीकार कर ली, उन्हें आर्यों ने देवयोनि-जात में स्थान दिया। जो गर्वीली जातियाँ थीं (असुर, दैत्य व राक्षस) और भयंकर संघर्ष के उपरांत भी आर्यों की अधीनता स्वीकार नहीं की, उन्हें परवर्ती साहित्य में घृणा के साथ स्मरण किया गया। गन्धर्व शान्तिप्रिय जाति थी। उसने आर्यों से संघर्ष करने के स्थान पर उनकी अधीनता स्वीकार कर ली। आर्यों ने गन्धर्वों को देवयोनि में रखा। गन्धर्व जाति के लोग श्रृंगारप्रिय एवं कामुक स्वभाव के थे। गाना-बजाना और नाचना उन्हें विशेष प्रिय था। कन्दर्प अर्थात् कामदेव उन्हीं के कुल देवता थे। गंधर्व का स्वभाव कन्दर्प अर्थात् कामदेव से मिलता-जुलता था। कामदेव अर्थात् कन्दर्प के जो पाँच बाण बताये गये हैं, उनमें अशोक के फूल भी एक बाण स्वरूप है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि अशोक-वृक्ष गन्धर्व जाति का वृक्ष था। अशोक-वृक्ष की पूजा गन्धर्वों से ही आर्यों में आयी है।

बोध प्रश्न:

- देवयोनि में किसे स्थान नहीं दिया गया और क्यों नहीं दिया ?
- अशोक-वृक्ष किसके पूज्य वृक्ष के रूप में थे और क्यों ? स्पष्ट कीजिए।

सामंती सभ्यता के परिष्कृत रुचि के प्रतीक –अशोक

प्रस्तुत निबंध में लेखक ने अशोक के फूल को मनोहर छवि वाला और अशोक-कल्प के माध्यम से उसका दो प्रकार- लाल और सफेद बताया है। सफेद का तांत्रिक क्रियाओं में सिद्धप्रद और लाल फूल को स्मरवर्धक बताया है। इसके साथ-साथ द्विवेदी जी का यह भी मानना है कि अशोक का वृक्ष जितना भी मनोहर, रहस्यमय और अलंकारमय हो, परंतु वह उस विशाल सामंती सभ्यता की परिष्कृत रुचि का ही प्रतीक है। वह रुचि जो साधारण प्रजा के परिश्रमों पर पली थी, उसके रक्त के संसार कणों को खाकर खड़ी हुई थी और लाखों-करोड़ों की उपेक्षा से जो समृद्ध हुई थी। आगे वे कहते हैं कि वे सामंत उखड़ गए, दुनिया अपने रास्ते चली गई और सामंती-सभ्यता के परिष्कृत रुचि के प्रतीक स्वरूप अशोक पीछे छूट गया।

मनुष्य की जीवनी-शक्ति का वर्णन

आचार्य द्विवेदी ने प्रस्तुत निबंध में मनुष्य की प्रबल जीवन शक्ति-का वर्णन करते हुए कहा है कि मैं मनुष्य जाति की कठिनाई से दबाई जाने वाली निष्ठुर धारा के हजारों वर्ष के इतिहास को भली भाँति देख रहा हूँ। मनुष्य के जीने की इच्छा बड़ी ही-प्रबल है। वह सभ्यता और संस्कृति के आकर्षण में फँसने वाली नहीं है। वह व्यर्थ के मोह को रौंदती हुई तेजी से अपने पथ पर अग्रसर हो रही है। न जाने कितने धर्माचारों, विश्वासों, उत्सवों और व्रतों को धोती-धारा आगे बढ़ी है।-बहाती यह जीवन इस संघर्ष में वह थकी-हारी नहीं अपितु संघर्षों से सर्वथा नई शक्ति पाई है। हमारे सामने समाज का आज जो रूप है, वह न जाने कितने ग्रहण और त्याग

का रूप है। देश और जाति की विशुद्ध संस्कृति केवल बाद की बात है। सबकुछ में मिलावट है, सबकुछ अविशुद्ध है। शुद्ध है केवल मनुष्य की दुर्दम जिजीविषा की । वह गंगा(जीने की इच्छा) अबाधित अनाहत धारा के समान सबकुछ को हजम करने के बाद भी पवित्र है।

अशोक की मौज और मनुष्य की बदलती मनोवृति

आचार्य द्विवेदी जी ने अशोक के मौज और मनुष्य की बदलती मनोवृति का भी जिक्र किया है। लेखक ने निबंध के आरंभ में जिस अशोक और उसके फूल को लेकर उदासी व्यक्त की है, अंत में उसके बारे में कहता है कि उदास होना भी बेकार है। अशोक आज भी उसी मौज में है, जिसमें आज से दो हजार वर्ष पहले था। कहीं भी तो कुछ नहीं बिगड़ा है, कुछ भी तो नहीं बदला है। बदली है मनुष्य की मनोवृत्ति। यदि बदले बिना वह आगे बढ़ सकती तो शायद वह भी नहीं बदलती। और यदि वह न बदलती और व्यावसायिक संघर्ष आरम्भ हो जातामशीन का रथ चल - विज्ञा-पड़तान का सावेग धावन चल निकलता, तो बड़ा बुरा होता। अशोक का फूल तो उसी मस्ती में हँस रहा है। उदास वह होता है जो इसे पुराने चित से देखने का प्रयास करता है। अशोक का कुछ भी तो नहीं बिगड़ा है। कितनी मस्ती में झूम रहा हैकालिदास इसका रस ले ! अपने ढंग से। मैं भी-सके थे ले सकता हूँ, अपने ढंग से। उदास होना बेकार है।

बोध प्रश्न:

- 'उदास होना बेकार है' लेखक यह क्यों कहता है स्पष्ट कीजिए।
- पुराने चित से देखने का क्या अर्थ है?

ज्ञान का साधारणीकरण

भारतीय चिंतन परंपरा में ज्ञान को मुक्ति का मार्ग बताया गया है। विभिन्न ग्रंथों में इस बात का उल्लेख मिलता है कि ज्ञान के समान पवित्र दूसरा कोई नहीं है। श्रीमद्भगवद्गीत के चतुर्थ अध्याय में इस बात का वर्णन मिलता है - न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। इसका आशय यह है कि इस लोक में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निसंदेह कुछ भी नहीं है। लेकिन इस बात का भी प्रमाण मिलता है कि ज्ञान से परिपूर्ण व्यक्ति में अहं (घमंड) का भाव प्रायः आ ही जाता है। कहना न होगा कि यह अहं का भाव ही उसे समाज से अलग-थलग कर देता है। द्विवेदी जी इस बात को गहराई से समझते थे। यही कारण है कि उन्होंने ज्ञान के साथ सहज व्यवहार का होना जरूरी माना है। उनकी मान्यता है कि 'पंडिताई भी एक बोझ है-जितनी ही भारी होती है उतनी ही तेजी से डुबाती है। जब वह जीवन का अंग बन जाती है तो सहज हो जाती है। तब वह बोझ नहीं रहती।' ध्यातव्य है कि पंडिताई का आशय ज्ञान है। आचार्य द्विवेदी की निगाह में वही ज्ञान स्वीकार के योग्य है जो सहज है। ज्ञान प्रदर्शन की वस्तु नहीं है, वह जीवन का अंग है।

उल्लेखनीय है कि आचार्य द्विवेदी के चिंतन को परिष्कृत करने जिन कवियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है उनमें से एक कबीर भी हैं। कबीर के यहाँ भी इसी तरह के विचार दिखाई पड़ते हैं। वे अहं की भावना पर कुठाराघात करते हैं – 'मैं-मैं बड़ी बलाइ है, सकै तो

निकसो भाजि । कब लग राखौं हे सखी, रूई पलेटी आगि॥' स्पष्ट है कि जिस अहं भाव से मुक्ति की कामना मध्यकाल के महत्वपूर्ण कवि कबीर करते हैं उसी अहं भाव से मुक्ति की कामना आचार्य द्विवेदी भी करते हैं।

बोध प्रश्न :

- अशोक के फूल की गौरवशाली परंपरा का वर्णन कीजिए।
- आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने किस प्रकार के ज्ञान को ग्रहणीय बताया है?

12.3.2 विवेच्य निबंध 'अशोक के फूल' का प्रयोजन

इस निबंध में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का प्रयोजन अशोक के फूल के माध्यम से भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा से पाठकों को अवगत कराना रहा है। आचार्य द्विवेदी जी साहित्य और जीवन में अशोक के फूल के आगमन पर विचार करते हुए उसके इतिहास से परिचित कराते हैं। भारतीय धर्म, साहित्य और कला में उसकी अद्भुत महिमा का वर्णन करते हुए गंधर्वो व यक्षों द्वारा अशोक वृक्ष की पूजा आरम्भ करने तथा मदनोत्सव आदि मनाए जाने का उल्लेख करते हैं। इस उत्सव के द्वारा लेखक ने उस काल की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा को दिखाया है। लेखक पाठकों को उस युग की समृद्ध संस्कृति से परिचित कराते हुए उसको मनुष्य की जीवनी शक्ति से जोड़ कर देखता है। उसके अनुसार कोई भी संस्कृति अपने आप में पूरी तरह से शुद्ध नहीं है, वह अपने से पूर्व की सभ्यताओं व संस्कृतियों के ग्रहण और त्याग से बनती है। मनुष्य के जीवन जीने की चाह ही शुद्ध है, वही सभ्यताओं और संस्कृतियों का सृजन करती है। इस जीवन व्यापार में सभ्यता व संस्कृति का मोह भी बह जाता है, जो इस जीवनी शक्ति को सबल बनाता है।

विवेच्य निबंध में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का प्रयोजन, अशोक के फूल के लुप्तप्राय सांस्कृतिक महत्त्व के बहाने भारतीय संस्कृति की जातीय प्रकृति से परिचित कराना है। भारतीय संस्कृति लोक-हित को महत्त्व देते हुए सदा गतिशील, उर्ध्वमुखी, समयानुकूल परिवर्तित, परिमार्जित व परिष्कृत होती रहती है। अनेक संस्कृतियों और नाना उपादानो से मिश्रित यह संस्कृति अपने अंदर संग्राहकता का गुण समेटे हुए है। उसका यह गुण इस बात की ओर इशारा करता है कि संस्कृति के लिए कोई तत्त्व इसलिए स्वीकार्य अथवा संग्रह योग्य नहीं हो जाता कि वह सुंदर है या पुराने समय से चला आ रहा है या हमारे धार्मिक जीवन का अभिन्न अंग बन चुका है। वह तो अपनी यात्रा में मात्र उन्हीं तत्त्वों का चयन करती है जिसमें मानव जीवन को प्रेरित करने की क्षमता है। साथ ही मनुष्यता के विकास के लिए सदा कल्याणकारी है। यदि वे तत्त्व किसी दिन अनुपयोगी हो जाते हैं और मनुष्य की गतिशीलता अथवा सृजनशीलता को दिशा देने में असमर्थ साबित होते हैं तो संस्कृति और मनुष्य की जिजीविषा उसे उसी समय त्यागकर आगे बढ़ जाएगी। वह सदियों तक साहित्य और संस्कृति में महत्त्व पाने वाला अशोक का फूल ही क्यों न हो!

बोध प्रश्न :

- भारतीय संस्कृति की मूल प्रवृत्ति को स्पष्ट कीजिए।
- मनुष्य की जिजीविषा से आप क्या समझते हैं? आशय स्पष्ट कीजिए।

12.3.3 विवेच्य निबंध में व्यक्त वैचारिकता

मानव जाति की दुर्दम और निर्मम धारा के हजारों वर्ष के रूप को आचार्य द्विवेदी खुली दृष्टि से साफ तौर पर देख रहे थे। वे इस बात से अवगत थे कि मनुष्य की जीवन शक्ति बड़ी निर्मम है। संस्कृति और सभ्यता के मोह को वह हमेशा रौंदती रही है। यह अपनी निरन्तरता को स्थिर बनाए रखने के लिए समय-समय पर उत्पन्न होने वाले प्रचलित धर्माचारों, विश्वासों, उत्सवों और वृतों को नष्ट करती हुई आगे बढ़ जाती है। मनुष्य जाति का इतिहास संघर्षों का रहा है। वर्तमान समाज भी अनेकानेक त्याग और संग्रह का फल है। मनुष्य के सदैव जीवित रहने की इच्छा ही बलवती है। इस जीवनधारा में सभ्यता और संस्कृति का मोह बाधा उत्पन्न करता है, लेकिन वह भी इसका शक्तिशाली अंग बन जाता है। लेखक इस बात से अवगत है कि आज की वस्तु कल नष्ट हो सकती है, उसमें विकार आ सकता है। वह इस बात से आश्वस्त है कि विनाश से ही उत्पत्ति सम्भव है। इस कारण यह मान लेना अनुचित होगा कि प्राचीन का विलय सभ्यता और संस्कृति की दृष्टि से घातक है। इसकी संभावना हमेशा बनी रहेगी कि प्राचीन का विलय नवीन की उत्पत्ति करेगा। जिस संस्कृति को आज हम मूल्यवान मान रहे हैं कुछ समय के बाद वह भी बदल जाएगी। आशय यह है कि कुछ भी चिर शाश्वत नहीं है। अनेकानेक चक्रवर्ती सम्राटों की आचार-निष्ठा लुप्त हो गई, धर्माचार्यों का बहुमूल्य ज्ञान और वैराग्य मूल्यहीन हो गया। मध्ययुगीन शासकों की रसप्रियता ऐसे समाप्त हो गई जैसे उसका अवशेष भी ढूंढें कहीं न मिल रहा हो। ऐसी स्थिति में बेचारा अशोक कैसे बचता।

आचार्य द्विवेदी इतिहास से प्रमाण प्रस्तुत करते हुए बताते हैं कि महात्मा बुद्ध ने अपने प्रताप से 'मार' विजय के बाद वैरागियों की पलटन खड़ी की थी। लेकिन वे भी बहुत देर तक न टिक सके, न जाने कब यक्षों के वज्रपाणि नामक देवता इस वैराग्य-प्रवण-साहित्य में प्रवेश कर गये जिसमें बौद्ध, शैव, शाक्त सभी प्रवाहित हो गये। जिसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने महासुखवाद कहा है वह इन्हीं साधकों की क्रियापद्धति का प्रतिफल था - 'श्री सुन्दरी साधन तत्पराणां योगश्च भोगश्च करस्थ एव।' इसमें कोई संदेह नहीं कि काव्य और शिल्प के मोहक अशोक ने अभिचार में सहायता दी। योग और भोग का यह अद्‌भुत मिश्रण था। इस परम्परा को अशोक-गुच्छ का एक-एक फूल ढोये आ रहा है। लेखक की मान्यता है कि अशोक आज भी उसी स्थिति में है, जैसा दो हजार वर्ष पूर्व था। न उसमें कुछ विकास आया और न उसमें कोई परिवर्तन ही हुआ। बदली है तो मनुष्य की मनोवृत्ति। यदि यह मनोवृत्ति नहीं बदली होती, तो मनुष्य प्रगति के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता था। मनोवृत्ति का बदलना आज भी यथावत जारी है। यदि वह न बदलती और व्यावसायिक संघर्ष आरम्भ हो जाता तो बहुत बुरा होता। हम

नष्ट हो जाते। फिर भी ऐसी स्थिति में उदास होना व्यर्थ है। लेखक किसी भी परिस्थिति में जीवन से निराश होने का नहीं बल्कि प्रफुल्लित होने का संदेश देता है।

बोध प्रश्न :

- 'विनाश से ही उत्पत्ति संभव है।' इस कथन को विश्लेषित कीजिए।
- मनुष्य की मनोवृत्ति से आप क्या समझते हैं? विवेचित कीजिए।

12.3.4 भाषा-सौष्ठव

निबन्ध एवं निबंधकार दोनों के लिए भाषा का विशेष महत्व है। एक प्रभावशाली एवं सर्वग्राही भाषा के अभाव में निबंधकार अपने उद्देश्य या प्रयोजन को पाठक तक बमुश्किल ही पहुंचा सकता है। विवेच्य निबंध में प्रयुक्त भाषा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आचार्य द्विवेदी के यहाँ यह अभाव नहीं है। आचार्य द्विवेदी का भाषा पर असाधारण अधिकार है। अशोक के फूल में उन्होंने भाषा प्रयोग में व्यावहारिकता को सदा ध्यान में रखा है। इसीलिए उनकी भाषा या वाक्य विन्यास में संस्कृत-तत्सम, तद्भव, उर्दू, अंग्रेजी, देशज आदि के शब्द प्रसंग के अनुकूल अपना स्थान प्राप्त किए हैं। प्रचलित- अप्रचलित एवं कठिन-सहज सभी प्रकार के शब्द व्यक्त हुए हैं।यथा-

तत्सम- नूपुर, कंदर्प, कपोलों,आर्येत्तर जीवनी-शक्ति, निर्मम आदि

देशज- झम से, खप से, कदर, घर्घर, पिस जाते, बोझ आदि

अरबी-फारसीउर्दू के शब्द- मुसाहिब, सल्तनत, हजम।

अंग्रेजी के शब्द - पुनालुअन सोसायटी, मशीन।

युग्म शब्द- मानने- न- मानने, आस-पास, अबाधित-अनाहत आदि

पुनरुक्त शब्द- छोटे-छोटे, लाल-लाल,

अप्रचलित शब्द- झम से, खप से आदि

कठिन शब्द- आसिन्जनकारी, कुंझटिकाच्छन्न, कर्णावतंस, स्मरवर्धक व अलक्तक आदि

अशोक के फूल में भाषा, भाव एवं व्यक्तित्व में एकाकार होती हुई दिखाई देती है। यह अनायास नहीं अपितु द्विवेदी जी के अध्ययन, लोक-कल्याणकारी दृष्टिकोण एवं हास्य-विनोद की प्रवृत्ति का प्रतिफल है। यही कारण है कि भाषा संस्कृतनिष्ठ होते हुए भी दुरूह नहीं है। शब्द चयन एवं वाक्य-विन्यास भी विषय के सर्वथा अनुकूल है। गम्भीर भाव को भी सरल भाषा में व्यक्त करने की पूर्ण क्षमता द्विवेदी जी के भाषिक-सौन्दर्य की मौलिक पहचान है। उसमें कठोरता के स्थान पर कोमलता एवं कृत्रिमता के स्थान पर सहजता है।

द्विवेदी जी के भाषा की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे गंभीर से गंभीर बात को बहुत ही सहज एवं सरल तरीके से पाठकों तक पहुचा देते हैं। पाठक आसानी से उसे आत्मासात भी कर लेता है। कारण कि ऐसे प्रसंग में वाक्य छोटे-छोटे एवं सूक्तिनुमा रहते हैं। जैसे- 'स्वर्गीय वस्तुएं धरती से मिले बिना मनोहर नहीं होती', 'मनुष्य की जीवनी शक्ति बड़ी निर्मम है', पंडिताई भी एक बोझ है' आदि। आवश्यक होने पर मुहावरों का भी प्रयोग करते हैं। यथा- 'जले पर नामक'।

बोध प्रश्न:

- द्विवेदी जी के भाषा के स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
- अशोक के फूल में व्यक्त किन्ही पाँच तत्सम एवं विदेशी शब्दों का उल्लेख कीजिए।

12.3.5 शैली-सौन्दर्य

अशोक के फूल में शैली-सौन्दर्य चर्चा की जाय तो इसमें शैली के अनेक रूप रूप दिखाई देते है जो इसे एक बेहतर निबद्ध की श्रेणी में ले जाते हैं। इसमें विवेचनात्मक, प्रसादात्मक, चिंतनप्रधान गंभीर, आवेग आदि शैली की अभिव्यक्ति हुई है। अभिव्यक्ति की सबलता, सशक्तता और गहनता, द्विवेदी जी की शैली का विशिष्ट गुण है। इस निबंध में ऐसे अनेक उदारहरण है जहां द्विवेदी जी की उक्त शैली दृष्टिगोचर होती है।

प्रस्तुत निबंध में भावात्मक शैली का समावेश हुआ है। इससे उनकी यह रचना सरल, मधुर और सुकुमार बन गई है। इस निबंध में कहीं-कहीं तो द्विवेदी जी की ममता की मन्दाकिनी गंभीरतम चिंतन भूमितल को सींचकर भावात्मकता की हरियाली उगा देती है। यथा-

"भुलाया गया है अशोक। मेरा मन उमड़-घुमड़ कर भारतीय रस-साधना के पिछले हजार वर्षों पर बरस जाना चाहता है। क्या यह मनोहर पुष्प भुलाने की चीज थी? सहृदयता क्या लुप्त हो गई थी? कविता क्या सो गई थी? ना, मेरा मन यह सब मानने को तैयार नहीं है।"

12.4 : पाठ सार

भारतीय साहित्य और समाज में अशोक पुष्प किस प्रकार आया, इस पर विचार करते हुए कहा गया कि ऐसा तो कोई नहीं कह सकता कि कालिदास के पूर्व भारत में इस पुष्प को कोई नहीं जानता था। यह पुष्प कालिदास के काव्य में अपूर्व शोभा और सुकुमारता के साथ वर्णित हुआ है। भारत में मुसलमानी सल्तनत के प्रतिष्ठा से यह पुष्प साहित्य के सिंहासन से उतर गया। भारतीय धर्म, साहित्य और शिल्प में यह फूल अद्भुत महिमा के साथ वर्णित हुआ है। कामदेव के पाँच बाणों- कमल, अशोक, आम, चमेली तथा नील कमल आदि माने गए हैं। अशोक के छोटे लाल पुष्प कामदेव के पंचबाणों में से एक है। यहाँ की आदिम जातियों गंधर्वों और यक्षों ने अशोक वृक्ष की पूजा को आंरभ किया। अशोक वृक्ष की पूजा वास्तव में इसके स्वामी कामदेव की पूजा है। इसे 'मदनोत्सव' कहा जाता था। प्राचीन साहित्य में इस उत्सव का बड़ा सारस एवं मनोरम वर्णन हुआ है। उस समय के राजाओं व सामन्तों के द्वारा इन उत्सवों को संरक्षण मिला। बाद में सामन्तों का प्रभाव समाप्त होने से मदनोत्सव का प्रभाव क्षीण हो गया।

विवेच्य निबंध में मानव की जीवन जीने की शक्ति पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि मानव की जीवनी शक्ति अनेक सभ्यताओं और संस्कृतियों को रौंदते हुए आगे बढ़ती जाती है। इसी से समाज और संस्कृति का रुप परिवर्तित होते रहता है। इसी परिवर्तन ने अशोक वृक्ष के महत्त्व को भी भुला दिया। लेखक अशोक के फूल के वैभवशाली अतीत का स्मरण करते हुए उदास होता है। कोई भी बहुमूल्य संस्कृति सदैव नहीं बनी रह सकती है। परिवर्तन इस संसार का

नियम है। लेखक का मानना है कि अशोक आज भी उसी मस्ती में झूम रहा है, जैसा कि वह दो हजार वर्ष पहले था। अतः कहीं भी कुछ नहीं बिगड़ा है, कुछ भी नहीं बदला है, जो भी परिवर्तन हुआ है, वह मानव की मनोवृत्ति बदलने के फलस्वरुप हुआ है।

12.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

प्रस्तुत इकाई में हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा रचित 'अशोक के फूल ' निबंध का परिचयात्मक विवरण दिया गया है। इस इकाई के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि –

1. ललित निबंध गद्य साहित्य की अत्यंत सशक्त एवं सारस विधा है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस विधा के मेरुदंड हैं।
2. अशोक के फूल का किसी समय में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से अत्यंत ही महत्व रहा है। लेकिन वर्तमान में वह धूमिल या समाप्त हो गया है।
3. कामदेव के जिन पाँच बाणों की प्रायः चर्चा होती है उनमें से एक अशोक का फूल भी है।
4. अशोक वृक्ष का संबंध गन्धर्व जाति के पूज्य वृक्ष से है न कि आर्य जाति से।
5. अशोक-कल्प में इस बात का उल्लेख मिलता है कि अशोक का फूल मनोहर छवि वाला होता है। वह दो प्रकार का होता है - लाल और सफेद। सफेद का तांत्रिक क्रियाओं में सिद्धप्रद और लाल फूल को स्मरवर्धक बताया है।
6. मनुष्य के जीने की इच्छा बड़ी ही प्रबल है। वह सभ्यता और संस्कृति के आकर्षण में फँसने वाली नहीं है। वह व्यर्थ के मोह को रौंदती हुई तेजी से अपने पथ पर अग्रसर हो रही है।
7. लेखक का अभिमत है कि देश और जाति की विशुद्ध संस्कृति केवल बाद की बात है। सबकुछ में मिलावट है, सबकुछ अविशुद्ध है। शुद्ध है केवल मनुष्य की दुर्दम जिजीविषा जीने की) ।(इच्छा
8. वही ज्ञान स्वीकार के योग्य है जो सहज है। ज्ञान प्रदर्शन की वस्तु नहीं है, वह जीवन का अंग है।

12.6 : शब्द संपदा

1. हतभाग्य - भाग्यहीन, बदकिस्मत
2. तूणीर - तरकश
3. आसिन्जनकारी - अनुरागोत्पादक
4. कंदर्प-देवता - कामदेव
5. नाटकीय - अभिनयपूर्ण,दिखावटी

6. सौकुमार्य - सुकुमारता

7. नूपुर - पैर में पहने जाने वाला एक गहना, घुँघुरु

8. अलकों - छल्लेदार बालों

9. उपास्थ - पूजा किए जाने योग्य, आराध्य

10. पयार्य - समान अर्थ वाला, समानार्थक

11. अधिष्ठाता - अध्यक्ष, प्रधान, स्वामी

12. स्तबक - फूलों का गुच्छा

13. गन्धर्व, यक्ष - प्राचीन भारतीय जातियाँ जिनका उल्लेख हिन्दु पुराणों में मिलता है।

14. अखाड़ा - मठ, मंडली

15. परिष्कृत - साफ किया हुआ, शुद्ध

16. प्रतीक - चिह्न, निशान, संकेत

17. उपेक्षा - तिरस्कार, अवहेलना

18. वृथा - व्यर्थ, निरर्थक।

19. दुर्दम - प्रबल/ जिसका दमन कठिन हो

20. निर्मम - जिसे ममता या मोह न हो, कठोर

21. विशुद्ध - जिसमें किसी प्रकार की मिलावट न हो, वास्तविक

22. सहृदय - दूसरों के सुखदुःख आदि समझने वाला-, भावुक

23. महार्ध - बहुत अधिक मूल्य का, महँगा

24. विकृत - जिसमें किसी प्रकार का विकार हो, जिसका रूप बिगड़ गया हो।

25. जिजीविषा - जीने की इच्छा

12.7 : परिक्षार्थ प्रश्न

खंड : अ

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए ।

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'अशोक के फूल' का सारांश अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।
2. 'अशोक के फूल' निबंध के प्रयोजन पर प्रकाश डालिए ।
3. 'अशोक के फूल' निबंध के आधार पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की निबंध-शैली को विवेचित कीजिए।

खंड : आ

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए ।

1. 'अशोक के फूल' निबंध के नाम की सार्थकता पर विचार प्रकट कीजिए।
2. 'अशोक के फूल' की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड : इ

I सही विकल्प का चुनाव कीजिए :

1. 'अशोक के फूल' का प्रकाशन वर्ष है –
   अ) 1948 आ) 1940 इ) 1958 ई) 1968
2. अशोक कल्प में कितने प्रकार के अशोक के फूल का वर्णन है?
   अ) 3 आ) 2 इ) 5 ई) 4
3. निम्न में से कंदर्प देवता है ?
   अ) भगवान विष्णु आ) कुबेर इ) कामदेव ई) शिव
4. किस फूल को देखकर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मन उदास हो जाता है?
   अ) चम्पा आ) चमेली इ) शिरीष ई)अशोक

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. ....भी एक बोझ है –जितनी भी भारी होती है, उतनी ही तेजी से डुबाती है। जब वह जीवन का अंग बन जाती है तो सहज हो जाती है। तब वह बोझ नहीं रहती।
2. रवीन्द्रनाथ ने इस भारतवर्ष को........ कहा है।
3. ...... – वृक्ष की पूजा इन्हीं गन्धर्वों और यक्षों की देन है। प्राचीन साहित्य में इस वृक्ष की पूजा के उत्सवों का बड़ा सरस वर्णन मिलता है।

4. भरहुत, साँची, मथुरा आदि में प्राप्त यक्षिणी मूर्तियों की गठन और बनावट देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये जातियाँ .... थी। .... का देश ही गंधर्व, यक्ष और अप्सराओं की निवास-भूमि है।

III संबंधित को सुमेलित कीजिए

1. महाराज भोज	क. मालविकाग्निमित्रम्
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी	ख. मार-विजय
3. कालिदास	ग. ललित निबंधकार
4. भगवान बुद्ध	घ. सरस्वती कंठभरण

12. 8 : पठनीय पुस्तकें

1. द्विवेदी, हजारीप्रसाद . (2019). अशोक के फूल
2. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र. (2006). हिन्दी साहित्य का इतिहास
3. मिश्र, कृष्णबिहारी. (2008). बेहया का जंगल
4. मिश्र, विद्यानिवास. (2007). साहित्य के सरोकार
5. तिवारी, रामचंद्र. (2009). हिन्दी का गद्य साहित्य

इकाई 13 : निबंधकार महादेवी वर्मा : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 मूल पाठ : निबंधकार महादेवी वर्मा : एक परिचय
13.3.1 महादेवी वर्मा : व्यक्तित्व और कृतित्व
13.3.2 महादेवी वर्मा का गद्य साहित्य : विविध रूप
13.3.3 महादेवी वर्मा के निबंध साहित्य की विशेषताएँ
13.3.4 महादेवी वर्मा के निबंध साहित्य में अभिव्यक्त नवजागरण और राष्ट्रीय चेतना
13.3.5 महादेवी वर्मा के निबंध साहित्य में स्त्री विमर्श/ अस्मिता विमर्श
13.4 पाठ सार
13.5 पाठ की उपलब्धियाँ
13.6 शब्द संपदा
13.7 परीक्षार्थ प्रश्न
13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

मूलतः कवि रूप में अपनी एक निजी पहचान बनाने वाली महादेवी वर्मा एक सशक्त गद्यकार भी हैं। गद्यकार का उनका यह रूप उनके संस्मरणों, रेखाचित्रों और गंभीर विचारों से युक्त निबंधों के माध्यम से प्रमुख रूप से उभरा है। उनके निबंधों के माध्यम से छायावादी प्रवृत्ति के साथ-साथ तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों को समझा जा सकता है। भारतीय समाज की संरचना और उस समय व्याप्त विसंगतियों को भलीभाँति समझा जा सकता है। उनके निबंधों के माध्यम से उनके विचारों से भी परिचित हो सकते हैं। उनके निबंधों के माध्यम से भारतीयता को रेखांकित किया जा सकता है। उनके काव्य संसार में बाह्य जगत अप्रस्तुत के रूप में उपस्थित होता है। वे चाहे 'नीर भरी दुख की बदली' के अवसाद की कथा कहें या फिर अपरिचित पंथ पर चलने का संकल्प करें, वह अपने आपको संबोधित करती है। उनका अंतर्मुखी व्यक्तित्व झलकता है। उनके गद्य में भी विषय वैविध्यता को देखा जा सकता है। विषय के अनुरूप ही भाषा-शैली भी। प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप महादेवी वर्मा के गद्यकार का रूप विशेष रूप से निबंधकार के रूप से परिचित हो सकेंगे और उनके विचारों से अवगत हो सकेंगे।

13.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- महादेवी वर्मा के जीवन और साहित्यिक यात्रा से परिचित हो सकेंगे।
- महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य के विविध रूपों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- महादेवी वर्मा के निबंध साहित्य की विशेषताओं को जान सकेंगे।

- महादेवी वर्मा के निबंधों में अभिव्यक्त उनके विचारों से अवगत हो सकेंगे।
- महादेवी वर्मा के निबंधों में निहित राष्ट्रीय चेतना को रेखांकित कर सकेंगे।
- महादेवी वर्मा के निबंधों का मूल्यांकन अस्मिता विमर्श की दृष्टि से कर सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : निबंधकार महादेवी वर्मा : एक परिचय

प्रिय छात्रो! अब तक पाठक के रूप में हम सब महादेवी वर्मा की कविताओं से परिचित हो ही चुके हैं। महादेवी वर्मा छायावाद के चार प्रमुख स्तंभों में से एक हैं। उनकी कविताओं में दुख, अवसाद व पीड़ा काफी घनीभूत होकर उभरी है। कवयित्री के रूप में जहाँ महादेवी अंतर्मुखी होती चली गई हैं, वहीं गद्यकार के रूप में वे यथार्थ का सीधा सामने करते हुए दिखाई देती है और सीधे सामाजिक विसंगतियों पर प्रहार करती हुई नज़र आती हैं।

उनके साहित्य को पढ़ते समय पाठक के मन में यह प्रश्न उभरना स्वाभाविक है कि उनकी रचनाओं में पीड़ा और वेदना की अभिव्यक्ति इतनी प्रमुखता से आखिर क्यों हुई है? उनके साहित्य में व्यक्त पीड़ा क्या उनकी अपनी निजी पीड़ा है? इन प्रश्नों के समाधान पाना है, तो हमें उनके जीवन से संबंधित कुछ पहलुओं को जानना आवश्यक होगा। तो आइए, महादेवी वर्मा के जीवन और व्यक्तित्व के बारे में जानने की कोशिश करेंगे।

13.3.1 महादेवी वर्मा : व्यक्तित्व और कृतित्व

महादेवी वर्मा का जन्म 1907 में उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद में एक संपन्न परिवार में हुआ था। अपने बचपन को याद करते हुए वे लिखती हैं कि एक व्यापक विकृति के समय में निर्जीव संस्कारों के बोध से जड़ीभूत वर्ग में उनका जन्म हुआ। उनकी माता आस्तिक और भावुक थीं तो पिता सब प्रकार की सांप्रदायिकता से दूर कर्मनिष्ठ एवं दार्शनिक। अपने माता-पिता के संबंध में महादेवी कहती हैं कि “माता बहुत पूजा-पाठ करती थीं और पक्की सनातन-धर्मी थीं, व्रत-उपवास-पूजा नित्य होती थी। पिता ईश्वर के संबंध में संदेहवादी थे। कहते थे, भाई, मैं मनुष्य को मानता हूँ जो मेरे पुकारने पर आ सके और जिसके पुकारने पर मैं दौड़ सकूँ, जहाँ सुख-दुख का आदान-प्रदान हो।” (महादेवी वर्मा, निबंधों की दुनिया, पृ.18)।

साहित्य से उनके परिवार का नाता बहुत पुराना और गहरा था। उनकी आरंभिक शिक्षा इंदौर में हुई। पाँच वर्ष के होते ही महादेवी को भोपाल और इंदौर की यात्रा करनी पड़ी। इंदौर में पूर्णतः व्यवस्थित होने पर उनकी माँ ने चाहा कि बेटी कुछ समय खिलौनों में उलझा रखें और गृह-कार्य की शिक्षा दें। यदि यह सब न हो सके तो पाटी पकड़ाकर स्कूल ही भेज दें, लेकिन महादेवी इन चक्करों में नहीं पड़ना चाहती थी। उनके लिए दीवाल या फर्श पर कुछ लकीरें उकेरने के लिए कोयला या सिर सिंदूर ले अतिरिक्त कुछ नहीं चाहिए। उनकी माँ परेशान होकर जब महादेवी से कहा कि खेलना छोटों का काम है और पढ़ना अथवा गृह-कार्य करना बड़ों का काम है, तो महादेवी ने पढ़ना पसंद किया। आर्य समाजी संस्कारों के साथ महादेवी को मिशन स्कूल में भर्ती कराया गया। गौने के विरुद्ध जाकर महादेवी ने प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. की उपाधि अर्जित की और बाद में संस्कृत से एम.ए.। उसी समय से प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाचार्य नियुक्त हुईं। 11 सितंबर, 1987 को उनकी मृत्यु हुई। महादेवी वर्मा का जीवन बचपन से ही बहुआयामी है। इसमें कोई संदेह नहीं। उनका परिवार विशाल था। इस परिवार में

न केवल इंसान थे, बल्कि पशु-पक्षी, फूल, पेड़-पौधे आदि समाहित हैं। इनकी सहानुभूति वैश्विक थी। उन्होंने हिन्दी साहित्यकारों की दिशा सुधारने के लिए कुछ साहित्यकारों से मिलकर 'साहित्यकार संसद' नामक संस्था की स्थापना की। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य था साहित्यकारों को संगठित करना और असमर्थ साहित्यकारों को सहायता पहुँचाना। महादेवी वर्मा ने जमीनी स्तर पर अकाल पीड़ितों और शोषितों की सहायता की। महादेवी वर्मा की वैश्विक दृष्टि उनके पद्य के साथ-साथ उनकी गद्य रचनाओं में दिखाई देती है। महादेवी देवी वर्मा का विश्लेषण इस इकाई में एक गद्यकार के रूप में किया जा रहा है। आइए, निबंधकार कर रूप में महादेवी के योगदान के बारे में समझने की कोशिश करेंगे।

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा ने किस संस्था की स्थापना की?

13.3.2 महादेवी वर्मा का गद्य साहित्य : विविध रूप

प्रिय छात्रो! हम सब यह भलीभाँति जानते ही हैं कि महादेवी वर्मा छायावाद के चार प्रमुख स्तंभों (जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा) में एक हैं। उनके कवयित्री रूप से सब परिचित हैं ही। दीपक को प्रतीक के रूप में अपनाकर महादेवी अपनी वैश्विक दृष्टि का परिचय देती हैं। उन्होंने प्रमुख रूप से अपनी साहित्यिक यात्रा कविता से शुरू की थी। काव्य-जीवन का आरंभ ब्रजभाषा से किया। अपने विद्यार्थी जीवन में उन्होंने राष्ट्रीय और सामाजिक जागरूकता वाली कविताएँ लिखती रहीं। इस संदर्भ में उनका यह कथन उल्लेखनीय है - "विद्यालय ले वातावरण में खो जाने के लिए लिखी गई थीं। उनकी समाप्ति के साथ ही मेरी कविता का शैशव भी समाप्त हो गया।" मेट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने से पहले वे रहस्यानुभूति से युक्त कविताएँ लिखने लगी थीं। नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्य गीत, दीपशिखा, यामा आदि उनके प्रसिद्ध काव्य-संग्रह हैं। यहाँ हम प्रमुख रूप से महादेवी वर्मा की गद्य रचनाओं पर ही दृष्टि केंद्रित करेंगे। महादेवी वर्मा एक सशक्त गद्यकार भी हैं। महादेवी वर्मा के गद्य रूपों के देखने से यह स्पष्ट होती है कि उन्होंने आलोचनात्मक निबंध के साथ-साथ रेखाचित्र, संस्मरण और कुछ भूमिकाएँ भी लिखी हैं। 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'शृंखला की कड़ियाँ', 'पथ के साथी' आदि उनके प्रमुख गद्य संकलन हैं। वाणी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित शृंखला 'निबंधों की दुनिया' में महादेवी की कुछ चयनित निबंध संग्रहीत हैं। 'चाँद' पत्रिका का एक ऐतिहासिक महत्व है। महादेवी वर्मा ने 'चाँद' पत्रिका का सफल संपादन किया। संपादकीय के रूप लिखे गए उनके लेख 'शृंखला की कड़ियाँ' में संकलित हैं। महादेवी वर्मा के गद्यकार के रूप को समझने के लिए स्वयं महादेवी की ये बातें सहायक सिद्ध होंगी - "विचार के क्षणों में मुझे गद्य लिखना ही अच्छा लगता रहा है, क्योंकि उसमें अनुभूति ही नहीं, बाह्य परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए भी पर्याप्त अवकाश रहता है।" (महादेवी वर्मा, शृंखला की कड़ियाँ, अपनी बात)

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य का विवेचन दो भागों में किया जा सकता है - रेखाचित्र-संस्मरण और निबंध-आलोचना। रेखाचित्र और संस्मरणों को एक ही आयाम में विवेचित इसलिए किया जा रहा क्योंकि उनके रेखाचित्रों में संस्मरण अंतरगुंफित है और इसी प्रकार

संस्मरणों में रेखाचित्र। उन्होंने अपने रेखाचित्रों को संस्मरणों और शब्द-चित्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

(अ) रेखाचित्र और संस्मरण

रेखाचित्र और संस्मरणों में महादेवी वर्मा की तीन रचनाएँ उल्लेखनीय हैं - 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ' और 'पथ के साथी'। इन रचनाओं में एक चित्रात्मकता, कथात्मकता और काव्य-प्रवाह है। इसीलिए इन्हें पढ़ते समय कभी ये रचनाएँ रेखाचित्र प्रतीत होते हैं तो कभी संस्मरण। कभी-कभी तो ये कहानी से भी नाता जोड़ने लगती हैं। इन रेखाचित्रों और संस्मरणों की प्रमुख विशेषता है चित्रात्मकता। आइए, अब विस्तार से इन कृतियों पर चर्चा करेंगे।

अतीत के चलचित्र

महादेवी वर्मा के रेखाचित्रों का पहला संस्करण है 'अतीत के चलचित्र'। इसका प्रकाशन पहली बार 1941 में हुआ था। पुस्तक के नाम से ही यह प्रतीत होता है कि यह अतीत का दस्तावेजी संकलन है। इनमें घूमते-फिरते चित्र हैं। इन रचनाओं को पढ़ने से स्पष्ट होगा कि इनमें अतीत, वर्तमान और भविष्य एक-दूसरे में सिमट गया हो। इस संग्रह में सम्मिलित रेखाचित्रों के संबंध में स्पष्ट करते हुए महादेवी ने कहा है कि "इन स्मृति-चित्रों में मेरा जीवन भी आ गया है। यह स्वाभाविक भी था। अँधेरे की वस्तुओं को हम अपने प्रकाश की धुंधली या उजली परिधि में लाकर ही देख पाते हैं; उसके बाहर तो वे उन्नत अंधकार के अंश हैं, वह बाहर रूपांतरित हो जाएगा। प्रस्तुत संग्रह में ग्यारह संस्मरण-कथाएँ जा सकी हैं। उनसे पाठकों का सस्ता मनोरंजन हो सके, ऐसी कामना करके मैं इन क्षत-विक्षत जीवनों को खिलौनों की हाट में नहीं रखना चाहती। यदि इन अधूरी रेखाओं और धुंधले रंगों की समष्टि में किसी को अपनी छाया की एक रेखा भी मिल सके, तो यह सफल है अथवा अपनी स्मृति की सुरक्षित सीमा से इसे बाहर लाकर मैंने अन्याय किया है।" (अतीत के चलचित्र, भूमिका)। उन्होंने अपने जीवनकाल में पहला निबंध उस समय लिखा अजब वे सातवीं कक्षा में पढ़ रही थीं। इस बात को याद करते हुए वह लिखती हैं कि "मेरा सबसे पहला सामाजिक निबंध तब लिखा गया था जब मैं सातवीं कक्षा की विद्यार्थिनी थी, अतः जीवन की वास्तविकता से मेरा परिचय कुछ नवीन नहीं है।" (महादेवी वर्मा, शृंखला की कड़ियाँ, अपनी बात)

'अतीत के चलचित्र' में महादेवी ने 11 रेखाचित्रों को सम्मिलित किया है जो इस प्रकार हैं - रामा, भाभी, बिन्दा, सबिया, बिट्टो, बालिका माँ, घीसा, अभागी स्त्री, अलोपी, बदलू और लछमा। इन पात्रों ने महादेवी के जीवन पर अमिट छाप छोड़ गए। इनमें वर्णित घटनाएँ महादेवी के किशोर काल की घटनाएँ हैं।

स्मृति की रेखाएँ

महादेवी वर्मा के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों का दूसरा संग्रह है 'स्मृति की रेखाएँ'। इसका प्रथम प्रकाशन 1945 में हुआ था। इसमें कुल 7 रेखाचित्र संकलित हैं - भक्तिन, चीनी फेरीवाला, जंग बहादुर, मुन्नू, ठकुरी बाबा, बिबिया और गूंगिया। इन रेखाचित्रों में महादेवी के प्रौढ़ काल के

चित्र उपस्थित हैं। इन रेखाओं को उन्होंने अपनी स्मृति के आधार पर खींचा है। अधिकांश पात्र निम्नवर्गीय हैं।

पथ के साथी

'पथ के साथी' का प्रकाशन 1956 में हुआ था। इसमें महादेवी वर्मा ने रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, निराला, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत और सियारामशरण गुप्त से जुड़ी स्मृतियों को सँजोया है। इस संग्रह की भूमिका में उन्होंने अत्यंत विनम्र भाव से अपने उद्गार को व्यक्त किया है - "अपने अग्रजों और सहयोगियों के संबंध में अपने आपको दूर रखकर कुछ कहना सहज नहीं होता। मैंने साहस तो किया है, पर ऐसे स्मरण के लिए आवश्यक निर्लिप्तता या असंगता मेरे लिए संभव नहीं है। मेरे दृष्टि के सीमित शीशे में वे जैसे दिखाई देते हैं, उससे वे बहुत उज्ज्वल और विशाल हैं, इसे मानकर पढ़ने वाले ही उनके कुछ झलक पा सकेंगे।"

बोध प्रश्न

- 'अतीत के चलचित्र' में कितने रेखाचित्र सम्मिलित हैं?
- 'स्मृति की रेखाएँ' के अधिकांश पात्र किस वर्ग के हैं?
- 'पथ के साथी' में किसके बारे में वर्णित किया गया है?

(आ) निबंध और आलोचना

निबंध और आलोचना के क्षेत्र में महादेवी की पैठ गहरी है। इस संदर्भ में प्रमुख रूप से उनकी चार पुस्तकों की चर्चा की जा सकती है - शृंखला की कड़ियाँ, क्षणदा, साहित्यकार की आस्था और संकल्पिता।

शृंखला की कड़ियाँ

इसका प्रकाशन 1942 में हुआ था। इसमें कुल ग्यारह निबंध संकलित हैं जो इस प्रकार हैं- हमारी शृंखला की कड़ियाँ (1,2), युद्ध और नारी, नारीत्व का अभिशाप, आधुनिक नारी (1,2), घर और बाहर (1,2,3), हिंदू स्त्री का पत्नीत्व, जीवन का व्यवसाय (1,2), स्त्री के अर्थ स्वातंत्र्य का प्रश्न (1,2), हमारी समस्याएँ (1,2), समाज और व्यक्ति तथा जीने की कला। ये निबंध मूलतः 'चाँद' के संपादकीय के रूप में लिखे गए थे। इस संग्रह में वे निबंध संकलित हैं जिनमें महादेवी वर्मा ने भारतीय स्त्री की विषम परिस्थितियों को अनेक आयामों से देखा है व देखने का प्रयास किया है। स्त्री विमर्श की दृष्टि से ये निबंध उत्कृष्ट हैं। आगे इनका विस्तार से विवेचन किया जाएगा।

क्षणदा

यह 1956 में प्रकाशित महादेवी वर्मा का दूसरा निबंध संग्रह है। इस पुस्तक में संकलित निबंधों एक ओर विचारात्मक व आलोचनात्मक निबंध हैं तो दूसरी ओर यात्रा-संस्मरण तथा भाषा, साहित्य और संस्कृति से संबंधित निबंध संग्रहीत हैं। इसमें कुछ बारह विचारोत्तेजक निबंध संग्रहीत हैं - करुणा का संदेश वाहक, संस्कृति का प्रश्न, कसौटी पर, दोष किसका?, कुछ विचार, स्वर्ग का एक कोना, सुई दो रानी, कला और चित्रमय साहित्य, साहित्य और

साहित्यकार, अभिनय कला, हमारा देश और राष्ट्रभाषा तथा हमारे वैज्ञानिक। इन निबंधों के संदर्भ में महादेवी वर्मा का कथन है कि "क्षणदा में मेरे कुछ चिंतन के क्षण एकत्र हैं।"

साहित्यकार की आस्था

इस संग्रह में भी महादेवी के विचारात्मक निबंध संकलित हैं। महादेवी वर्मा का साहित्यिक विषयक प्रतिमान किसी भी पूर्वाग्रह के कारण सीमित न होकर गतिशील है। जीवन के विविध मूल्यों के संबंध में साहित्यकार की आस्था को महादेवी ने इन निबंधों में रेखांकित किया है।

संकल्पिता

1969 में प्रकाशित 'संकल्पिता' में महादेवी की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विषयों से संबंधित आलोचनात्मक निबंध संकलित हैं।

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा ने गद्य में कौन-कौन सी विधा में लेखन किया है?
- महादेवी वर्मा की तीन गद्य रचनाओं का उल्लेख कीजिए।

13.3.3 महादेवी वर्मा के निबंध साहित्य की विशेषताएँ

छात्रो! अब तक के अध्ययन से हमने महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य के विविध रूपों के बारे में जानकारी प्राप्त कर ही चुके हैं। अब हम उनके निबंध साहित्य की विशेषताओं के बारे में जानने की कोशिश करेंगे। उनकी गद्य साहित्य का प्रमुख तत्व है यथार्थ, क्योंकि महादेवी वर्मा अपने आसपास घटित उनके जीवन से संबद्ध घटनाओं को ही प्रमुख रूप से उनके गद्य साहित्य में उकेरा है। उनके गद्य/ निबंध साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है - चित्रात्मकता, कवित्व, संवेदना, यथार्थ के प्रति आग्रह।

चित्रात्मकता

प्रिय छात्रो! महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य के बारे में आप जान ही चुके हैं। क्या आप बताया सकते हैं कि उनकी रेखाचित्रों व संस्मरणों की क्या विशेषता है? जी हाँ, चित्रात्मकता। यह इसीलिए संभव है क्योंकि महादेवी वर्मा ने अपने आसपास की प्रकृति के सूक्ष्म चित्रों को उकेरा है। वे जब अपने अग्रजों या सहयोगियों के संबंध में लिखती हैं तो उनकी सूक्ष्म दृष्टि का परिचय मिलता है। इस संदर्भ में उनका यह उल्लेखनीय है - "अपने अग्रजों और सहयोगियों के संबंध में अपने आपको दूर रखकर कुछ कहना सहज नहीं होता। मैंने साहस तो किया है, पर ऐसे स्मरण के लिए आवश्यक निर्लिप्तता या असंगता मेरे लिए संभव नहीं है। मेरी दृष्टि के सीमित शीशे में वे जैसे दिखाई देते हैं, उससे वे बहुत उज्ज्वल और विशाल हैं, इसे मानकर पढ़ने वाले ही उनके कुछ झलक पा सकेंगे।" (महादेवी वर्मा, पथ के साथी, दो शब्द)

छात्रो! यदि हम कहें कि महादेवी वर्मा सूक्ष्म द्रष्टा है तो गलत नहीं होगा। पर्यवेक्षण के अभाव में कोई भी व्यक्ति किसी भी चीज को इतनी बारीकी से प्रस्तुत नहीं कर सकते। उदाहरण के लिए देखिए, विश्वकवि रवींद्र के बारे में जब वह लिखती तो क्या चित्र बनाती हैं -

> "कुछ उजली भृकुटियों की छाया में चमकती हुई आँखें देखकर हिम रेखा से घिरे अथाह नील जल-कुंडों का स्मरण हो आना ही संभव था। दृष्टि-पथ की बाह्य सीमा

> छूते ही वे जीवन के रहस्य-कोष सी आँखें, एक स्पर्श-मधुर सरलता राशि-राशि बरसा देती थीं अवश्य।" (पथ के साथी)

उक्त उद्धरण में देखिए महादेवी ने किस तरह से कवींद्र की आँखों की तुलना हिम रेखा से घिरे अथाह नील जल-कुंडों से करती हैं। उनकी स्मृति में नील जल-कुंड विद्यमान हैं। इसीलिए जब वे कवींद्र की आँखों को देखती हैं तो स्वतः ही उनका अवचेतन मन उन नील जल-कुंडों को याद करने लगा। यह उनकी सूक्ष्म दृष्टि का ही परिचायक है। इसी प्रकार एक और उदाहरण देखेंगे। महादेवी अपनी शैशवावस्था की स्मृतियों को टटोलते हुए अपने घर के नौकर रामा का चित्र बहुत ही आत्मीयता के साथ उकेरती हैं -

> "साँप के पेट जैसी सफेद हथेली और पेड़ की टेढ़ी-मेढ़ी गाँठदार टहनियों जैसी उंगलियों वाले हाथ की रेखा-रेखा हमारी जानी-बूझी थी। किसी थके झुँझलाए शिल्पी की अंतिम भूल जैसी अनगढ़ मोती नाक, साँस के प्रवाह से फैले हुए-से नथुने हँसी से भरकर धुले हुए-से होंठ तथा काले पत्थर की प्याली में दही की याद दिलाने वाली सघन और सफेद दंत पंक्ति।" (अतीत के चलचित्र)

उक्त उदाहरणों से महादेवी वर्मा की स्मरण-शक्ति का परिचय तो होता ही है, साथ ही उनकी कल्पना-शक्ति का भी।

कवित्व

छात्रो! यह पहले भी कहा जा चुका है कि महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य का प्रमुख तत्व यथार्थ है। वे जब अपने आसपास की घटनाओं का चित्र प्रस्तुत करती हैं, तो पाठक इस तरह से बंध जाता है कि वह तल्लीन होकर उसी पाठ में डुबकी लगाता रहता है। वह इसलिए कि महादेवी वर्मा की भाषा में एक प्रवाह है। पाठक उसी प्रवाह में बहता है। उनका गद्य भी पाठक को काव्य जैसा प्रतीत होता है। यह विशेष रूप से प्रकृति चित्रण के समय मुखर हो उठता है। 'अतीत के चलचित्र' से कुछ उदाहरण देखें -

> "वैशाख नए गायक के समान अपने अग्नि-वीणा पर एक-से-एक लंबा आलाप लेकर संसार को विस्मित कर देना चाहता था।"
>
> "वह गोधूलि मुझे अब नहीं भूली। संध्या के लाल सुनहली आभा वाले उड़ते हुए दुकूल रात्रि ने मानो छिपकर अंजन की मूठ चला दी हो।"
>
> "भारी ढक्कन से ढके दीपक के समान आकाश में बिजली बुझ गई थी।"

संवेदना

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में संवेदना और भावुकता जैसे गुणों को भलीभाँति देखा जा सकता है। कहीं-कहीं यह संवेदना निराशा के रूप में परिणत होकर कारुणिक बन जाता है, तो कहीं आक्रोश और विद्रोह के रूप में प्रकट होता है। महादेवी वर्मा ने शोषितों और पीड़ितों के बारे में जब लिखित हैं तो प्रायः संवेदनात्मक अनुभूतियाँ प्रकट होती हैं। जब महादेवी रामा, बिन्दा, सबिया, घीसा, अलोपी, बदलू, अभागी स्त्री, बालिका माँ या फिर लछमा के बारे लिखती हैं तो उनकी संवेदनाओं को महसूस किया जा सकता है। वह पाठक को भी अपने साथ

लेकर बहती हैं। उनकी वेदना सम्पूर्ण शोषित समाज के प्रति समर्पित है। अतः इसे वैश्विक कहा जा सकता है। 'अतीत के चलचित्र' से कुछ उदाहरण देखें -

> "उस 19 वर्ष की युवती की दयनीयता आज समझ पाती हूँ जिसके जीवन के सुनहरे स्वप्न गुड़ियों के घरौंदे के समान दुर्दिन की वर्षा में केवल बह ही नहीं गए, वरन् उसे इतना एकाकी छोड़ गए कि उन स्वप्नों की कथा कहना भी संभव न हो सका।"
>
> "हम सहज भाव से अपनी उलझी कहानी कह नहीं सकते। अतः जब कहने बैठते हैं तब कल्पना का एक-एक तार सत्य की अनेक झंकारों की भ्रांति उत्पन्न करके उसे और अधिक उलझाने लगता है।"

यथार्थ के प्रति आग्रह

जीवन की यथार्थ स्थितियों को व्यक्त करने के लिए महादेवी वर्मा ने गद्य विधा को अपनाया। इसमें कोई संदेह नहीं। अपने गद्य साहित्य के माध्यम से निस्सहाय लोगों की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। उनका यथार्थ ऐसे पीड़ित समुदाय को संबोधित करता है जो समाज की दृष्टि में हीन होकर भी मानवता के प्रतिमूर्ति हैं। लछमा नामक एक पहाडिन पात्र तीन दिन भूख से पीड़ित होकर जब अंत में मिट्टी खाने के लिए बाध्य होती है तो महादेवी लिखती हैं "जब भूख हुई, तब पीली पट्टी का एक गोला बनाकर मुख में रखा और आँख मूंदकर सोचा - लड्डू खाया, लड्डू खाया। बस, फिर बहुत-सा पानी लिया और सब थी हो गया।" ये पंक्तियाँ उस यथार्थ स्थिति को उजागर करती हैं जब एक गरीब स्त्री भूख के मारे पानी पीकर गुजारा करती है और मुँह में कपड़ा ठूँसकर अपने मन को समझाती है कि मनपसंद चीज का सेवन किया। भारत में अनेक लोगों की स्थिति यही है।

भाषा-शैली

उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य की एक और विशेषता है भाषा-शैली । कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

कहन-शैली

कहन शैली अर्थात कहने की शैली। उनके गद्य साहित्य - रेखाचित्र, संस्मरण आदि पढ़ते समय पाठक को ऐसा प्रतीत होता है कि वह कोई कहानी पढ़ रहा हो। 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ' और 'पथ के साथी' में यह कहानी तत्व मौजूद है। अपने रेखाचित्रों के माध्यम से उन्होंने अनेक पात्रों को जीवंत कर दिया है। महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में सरल और जीवंत भाषा प्रयोग को देखा जा सकता है। उन्होंने यथार्थ की अभिव्यक्ति काव्यमय ढंग से किया है। वे विवरण देने में ज्यादा समय व्यतीत नहीं करती, संकेत मात्र देती हैं। उदाहरण के लिए - रामा की कोठरी में महाभारत के अंकुर जमने लगे। यदि कहें कि महादेवी के रेखाचित्रों में सूक्ष्म चित्रण की प्रधानता है, तो गलत नहीं होगा। वे शब्द-चित्र के माध्यम से पूरे दृश्य को प्रस्तुत करती हैं।

हास्य-व्यंग्य

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में हास्य-व्यंग्य का पुट पाया जाता है। उदाहरण के लिए, वह रामा का शब्द-चित्र इस तरह प्रस्तुत करती हैं, चुटकी लेते हुए - "उसके पास सजने के उपयुक्त सामग्री का अभाव नहीं था, क्योंकि कोठरी में अस्तर लगा लंबा कुरता, बंधा हुआ साफा, बुन्देलखंडी जूते और गँठीली लाठी किसी शुभ मुहूर्त की प्रतीक्षा करते जान पड़ते थे। उनकी अखंड प्रतीक्षा और रामा की अटूट उपेक्षा से द्रवित होकर ही कदाचित हमारी कार्यकारिणी समिति में यह प्रस्ताव नित्य सर्वमत से पास होता रहता था कि कुरते की बाँहों में लाठी को अटका कर खिलौनों का पर्दा बनाया जावे, डलिया जैसे साफे को खूँटी से उतारकर उसे गुड़ियों का हिंडोला बनने का सम्मान दिया जावे और बुन्देलखंडी जूतों को हौज में डालकर गुड्डों के जल-विहार का स्थायी प्रबंध किया जावे; पर रामा अपने अँधेरे दुर्ग में चर्रमर्र स्वर में डाटते हुए द्वार को इतनी ऊँची अर्गला से बंद रखता था कि हम स्टूल पर खड़े होकर भी छाया न मार सकते थे।"

महादेवी के व्यंग्य में आक्रोश की ध्वनि भी सुनाई देती है। कवियों की वेशभूषा और उपनामों पर व्यंग्य करते हुए महादेवी कहती हैं - "किसी एक नए सिले सूट की अंग्रेजियत ताम्बूल राग की स्वदेशीयता में रंजित होकर निखर उठी थी। किसी का चीनाशुक का लहराता हुआ भारतीय परिधान सिगरेट की धूम रेखाओं में उलझकर रहस्यमय हो रहा था। किसी के सिल्की शैंपू से धुली सीधी लटों का कृत्रिम कुंचन। आज के कवि गुण में अकिंचन और रूप में कोयले के समान होकर भी नाम से हीरालाल और उपनाम से शरदेंदु बन जाते हैं।" (स्मृति की रेखाएँ)

महादेवी वर्मा की भाषा में भले ही वक्रता और उक्तिवैचित्र्य है, पर कहीं बोझिल और उलझाव दिखाई नहीं देता। उनकी भाषा में अभिधा से ज्यादा व्यंजना का प्रयोग पाया जाता है।

मुहावरेदार भाषा-शैली

महादेवी वर्मा की भाषा में लोकोक्तियों, कहावतों और मुहावरों का भरमार रहता है। इनके प्रयोग से भाषा मार्मिक बन उठती है। कहीं भी महादेवी जान-बूझकर इन्हें नहीं ठूँसती, पर सहज रूप से इनका समावेश होता है। 'अतीत के चलचित्र' और 'स्मृति की रेखाओं' से कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है - भानमती का कुनबा जोड़ना, चोरों की बारात में अपनी-अपनी होशियारी, दूध का जला मट्ठा भी फूँक-फूँक कर पिता है, कीचड़ से कीचड़ को धोना संभव न होना आदि।

अलंकृत भाषा प्रयोग

महादेवी वर्मा हृदय मूलतः कवि-हृदय है। गद्य में भी पद्य जैसा आलंकारिक भाषा प्रयोग दिखाई देता है। उदाहरण के लिए - "माता जिस प्रकार आस्था के बिना अपने रक्त से संतान का सृजन नहीं कर सकती, धरती जिस प्रकार ऋतु के बिना अंकुर को विकास नहीं दे सकती, साहित्यकार भी उसी प्रकार गंभीर विश्वास के बिना अपने जीवन के अपने सृजन अवतार नहीं दे सकता।" (साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध)

ओज गुण युक्त भाषा प्रयोग

महादेवी वर्मा जब पीड़ितों के बारे बात करती हैं तब स्वतः ही ओज गुण युक्त भाषा प्रयोग को देखा जा सकता है। महादेवी जब उपेक्षित स्त्रियों के पक्ष में बोलती हैं, समाज में व्याप्त अंधविश्वासों व संकीर्ण रूढ़ियों को समाप्त करने की बात कहती हैं तब उनकी भाषा अत्यंत ओजपूर्ण हो जाती है। उदाहरण के लिए - "स्त्री को अपने अस्तित्व को पुरुष की छाया बना देना चाहिए, अपने व्यक्तित्व को उसमें समाहित कर देना चाहिए, इस विचार का पहले कब आरंभ हुआ, यह निश्चयपूर्वक कहना कठिन है, परंतु इसमें संदेह नहीं कि यह किसी आपत्तिमूलक विषवृक्ष का ही विषमय फल रहा होगा।" (शृंखला की कड़ियाँ)

माधुर्य गुण युक्त भाषा

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में जहाँ ओज और आक्रोश हैं वहीं माधुर्य और लालित्य को भी देखा जा सकता है। कोमलकांत पदावली को भी उनके निबंधों में देखा जा सकता है। एक उदाहरण देखें- "मानस पटल पर शांतिनिकेतन का प्रार्थना भवन उदय हो आया। उसके चारों ओर लगे रंग-बिरंगे शीशे से छनकर आता हुआ आलोक भीतर इंद्रधनुषी ताना-बाना बुना देता था। संगमरमर की चौकी पर रखे हुए चमक फूलों पर धूम-धूम भ्रमरों के समान मंडराता था। उसके पीछे बैठे कवींद्र की स्थिर दिव्य आकृति और उससे सब ओर फैलती हुई स्वर की निस्तब्ध तरंग माला।" (पथ के साथी)

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य का प्रमुख तत्व क्या है?
- महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य की तीन विशेषताएँ क्या हैं?
- महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य की भाषा-शैली की क्या विशेषता है?

13.3.4 महादेवी वर्मा के निबंध साहित्य में अभिव्यक्त नवजागरण और राष्ट्रीय चेतना

छात्रो! अब तक हमने महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य की कतिपय विशेषताओं से भी परिचित हो चुके हैं। अब हम उनके गद्य साहित्य में विवेचनात्मक अध्ययन करेंगे। पहले तो उनके निबंधों में निहित नवजागरण और राष्ट्रीय चेतना पर दृष्टि डालेंगे। हम सब भलीभाँति जानते हैं कि नवजागरण और राष्ट्रीय आंदोलन के सबसे ज्यादा यदि कोई शोषित हुआ तो वह और स्त्री और दलित वर्ग। इन वर्गों की आवाज बनकर महादेवी वर्मा ने गुहार लगाई।

महादेवी वर्मा की कृतियों में आम आदमी केंद्र में रहता है। ऐसा आदमी जो नंगा, भूखा, गरीब और फटेहाल है। ऐसे व्यक्तियों के साथ महादेवी वर्मा की संवेदना स्वतः जुड़ जाती है क्योंकि उनका मन द्रवित हो उठता है। उनका मानना है कि मानुष जन्म लेने से मात्र कोई मनुष्य नहीं हो जाता। मनुष्य के निर्माण में की शक्तियाँ काम करती हैं। मनुष्य जिस भौतिक समाज में रहता है वह केवल बाह्य दिखावे का समाज है। उसका आंतरिक समाज ही वास्तविक समाज है, जिसमें मूल्य, जीवन को समझने की शक्ति, दूसरे के विश्वास को महत्व देने की शक्ति, अस्मिता-बोध, दूसरे की अस्मिता को महत्व देने का बोध होता है। यदि यह मानसिक समाज का निर्माण व्यक्ति में नहीं होगा, तो निश्चित ही वह पशु समान ही होगा। एक-दूसरे को काटने-मारने के लिए दौड़ेगा। ऐसे में राष्ट्र में शांति का भंग होना निश्चित है। इस संदर्भ में महादेवी का

यह कथन उल्लेखनीय है - "आज के परिवेश में जब इतनी विषमता है, जब प्रत्येक मनुष्य दूसरे से विरोध करने को अपनी महत्ता मानता है तो वहाँ मनुष्य का तर्क मनुष्य के बीच में तलवार की धार की तरह आ जाता है। तब मनुष्य-मनुष्य के निकट नहीं आ सकता।" (महादेवी वर्मा, राष्ट्र, भाषा और शिक्षा)

महादेवी यह कहती हैं कि जब आत्मा की शक्ति को जगाकर सब एक हो जाएँगे, तो कोई भी शक्ति हमें मिटा नहीं सकती, तोड़ नहीं सकती। स्वाधीनता संग्राम में भी यही हुआ। जब जनता अंग्रेजी हुकूमत से डरने लगी, तब अनेक नेताओं ने उनकी आत्मा को जगाने का काम किया। "लगता था जब भारत का व्यक्ति अंग्रेज का नाम सुनते ही काँपने लगता है तो इसको उसके सामने कैसे खड़ा करेंगे? क्या करेंगे? लेकिन ऐसा हुआ कि सारे अस्त्र व्यर्थ हो गए हमारी आत्मा की शक्ति के सामने, हमारे नैतिक बल के सामने। हममें से बहुत से तब बहुत छोटे-छोटे रहे होंगे लेकिन भय न था - न गोलियों का, न लाठियों का, न किसी भाँति का, न किसी प्रकार का। इतनी बड़ी शक्ति थी आत्मा में।" (महादेवी वर्मा, मातृभूमि, महादेवी समग्र)। महादेवी वर्मा युवा पीढ़ी से आग्रह करती हैं कि वह यह संकल्प लें कि वह "इन भित्तियों को तोड़ डालेंगे - ये भित्तियाँ जो भाषा की हैं, जो धर्म की हैं, जो संप्रदायों की हैं और उन संप्रदायों में कठिन संप्रदाय राजनीति की है।" (महादेवी वर्मा, मातृभूमि, महादेवी समग्र)

अनेक लोगों के बलिदान का परिणाम है भारत की स्वतंत्रता। संघर्ष के दिनों में राजनैतिक स्वतंत्रता हर भारतीय की दृष्टि का केंद्र-बिंदु थी "और समस्याएँ भी उसी अंश से संबद्ध रहकर महत्व पाती थीं। परंतु, स्वतंत्रता की प्राप्ति के उपरांत संघर्ष-जनित वेग के अभाव में हमारी गति में ऐसी शिथिलता आ गई, जिसके कारण हमारे सांस्कृतिक स्तर का निम्न और जड़ हो जाना स्वाभाविक था। इसके साथ ही विविध पक्षों की समस्याएँ अपने-अपने समाधान माँगने लगीं।" (महादेवी वर्मा, हमारे वैज्ञानिक युग की समस्या, क्षणदा)। महादेवी वर्मा मानती हैं कि जो राष्ट्र राजनैतिक स्वतंत्रता को जीवन के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य दे सकता है, उसके जीवन में गतिरोध का प्रश्न नहीं उठता, पर साधन को साध्य मान लेना, गति के अंत का दूसरा नाम है।

बोध प्रश्न

- लक्ष्य प्राप्ति के लिए महादेवी वर्मा किस शक्ति को जगाने की बात करती हैं?

13.3.5 महादेवी वर्मा के निबंध साहित्य में स्त्री विमर्श/ अस्मिता विमर्श

प्रिय छात्रो! हम यह देख चुके हैं कि महादेवी वर्मा बार-बार उपेक्षित वर्ग के साथ खड़ी हो जाती हैं। उनके निबंध साहित्य में जहाँ एक ओर मातृभूमि और राष्ट्रभाषा के प्रति गहरी जुड़ाव दिखाई पड़ता है, वहीं दूसरी ओर उपेक्षित वर्ग के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है। विशेष रूप से स्त्री और दलित वर्ग के प्रति। आइए, इन वर्गों के प्रति महादेवी का क्या विचार है जानने का प्रयास करेंगे। महादेवी वर्मा के समय में स्त्री-विमर्श नहीं था, लेकिन स्त्री को सरोकारों को लेकर महादेवी ने आवाज उठाई। आज की विमर्शात्मक दृष्टि से उनके निबंध साहित्य को देखने से कुछ प्रमुख बातें सामने आती हैं, जो स्त्री विमर्श की कसौटियों पर पूर्ण रूप से सही ठहरती हैं।

महादेवी वर्मा की कृति 'शृंखला की कड़ियाँ' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि उन्होंने स्त्री संबंधी अनेक बातों का खुलासा किया है। महादेवी बचपन से ही अन्याय के प्रति असहिष्णु हो जाती थीं। वे यह मानती थीं कि भारतीय स्त्री जब पूरी तरह से अपने संपूर्ण प्राणवेग के साथ जागेगी उस दिन उसकी गति रोकना संभव नहीं होगा। स्त्री को बचपन से यही पट्टी पढ़ाई जाती है कि वह निरीह है, दुर्बल है, पुरुष पर आश्रिता है। यह सब कह-कहकर उसे तो अपने मूलभूत अधिकारों से भी वंचित रखा गया है। महादेवी कहती हैं कि उसे अधिकार भिक्षावृत्ति से नहीं मिलेंगे। अपने अधिकारों के लिए स्वयं स्त्री को संघर्ष करना पड़ेगा। अपनी आवाज बुलंद करनी होगी।

स्त्री और पुरुष दोनों ही समाज के लिए महत्वपूर्ण अंग हैं। पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था ने उसे पुरुष से कम मानने पर मजबूर कर दिया। स्त्री भले ही शारीरिक रूप से पुरुष से कमजोर हो सकते है, लेकिन बुद्धि-बल में वह पुरुष से आगे ही रहती है। पुरुष का जीवन जहाँ स्वच्छंद वातावरण में विकसित होता है, वहीं स्त्री का जीवन संकीर्ण सीमा में परंपरागत रूढ़ियों से। "कहीं यह विषमता और कहीं इसकी प्रतिक्रिया जीवन को एक निरर्थक रणक्षेत्र बनाकर उसकी सारी उर्वरता को नष्ट तथा सरसता को शुष्क किए दे रही है।" (शृंखला की कड़ियाँ)

महादेवी चाहती हैं कि स्त्री स्वयं अपनी गरिमा को बनाए रखें। ऐसा करने से स्त्री को कोई नहीं रोक सकता अपने लक्ष्य प्राप्त करने में। यदि स्त्री अपने कर्तव्य की गुरुता भलीभाँति हृदयंगम कर यदि अपना लक्ष्य स्थिर कर सकें तो लौह-शृंखलाओं स्त्री की गरिमा से गलकर मोम बना सकती हैं। (शृंखला की कड़ियाँ)।

पुरुष स्त्री को उतना महत्व नहीं देता जितना देना चाहिए था। समाज में पनप रही भोगवादी प्रवृत्ति के कारण पुरुष ने स्त्री को मात्र भोग की वस्तु समझना शुरू किया और उस पर अपना अधिकार जमाना शुरू किया। महादेवी कहती हैं कि "इस समय तो भारतीय पुरुष जैसे अपने मनोरंजन के लिए रंग-बिरंगे पक्षी पल लेता है, उपयोग के लिए गए या घोड़ा पल लेता है, उसी प्रकार वह स्त्री को भी पलटा है, तथा अपने पालित पशु-पक्षियों के समान ही यह उसके शरीर और मन पर अपना अधिकार समझता है।" (शृंखला की कड़ियाँ)

स्त्री कभी भी यह नहीं चाहेगी कि वह अपनी अस्मिता को बेच दे। मजबूरी में वह वेश्यावृत्ति अपनी है, न कि खुशी से। इस वृत्ति को अपनाने के लिए भी पुरुष उसे मजबूर कर देता है। एक ओर वह अपनी दयनीय स्थितियों से संघर्ष करती हैं तो दूसरी ओर अपनी नियति से।

स्त्री की वेदना को समझने के लिए संवेदनशील होना अत्यंत आवश्यक है। संवेदनशील हृदय के अभाव में कोई भी व्यक्ति चाहे पुरुष हो या अन्य स्त्री इस वेदना को, पीड़ा को समझ ही नहीं पाते। ऐसी स्थिति में स्त्री के लिए सतीत्व अभिशाप बन जाएगा। महादेवी यह कहती है कि समाज ने स्त्री की मर्यादा का जो मूल्य निश्चित कर दिया है केवल वही उसकी गुरुता का मापदंड नहीं हो सकते। "स्त्री की आत्मा में उसकी मर्यादा की जो सीमा अंकित रहती है, वह समाज के मूल्य से बहुत अधिक गुरु और निश्चित है; इसी से संसार भर का समर्थन पाकर जीवन का सौदा करने वाली नारी के हृदय में भी स्त्रीत्व जीवित रह सकता है।" (अतीत के चलचित्र)

अतः निष्कर्ष रूप से यह कह सकते हैं कि महादेवी वर्मा की स्त्री संबंधी मान्यताएँ सशक्त और विचारोत्तेजक हैं।

बोध प्रश्न

- स्त्री की वेदना को समझने के लिए किसकी आवश्यकता होती है?
- महादेवी वर्मा किस वर्ग के साथ खड़ी हुई दिखाई देती है?

13.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! आपने इस इकाई में महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य की विशेषताओं का अध्ययन किया है। इस अध्ययन से आप समझ ही चुके होंगे कि महादेवी वर्मा का निबंधकार रूप भी उतना ही सक्षम है, जितना कवि रूप। उनके गद्य साहित्य में भी उन तमाम परिस्थितियों और प्रवृत्तियों को रेखांकित कर सकते हैं जो उनकी कविताओं में निहित हैं। गद्य में भी उनके काव्य-रूप को देखा जा सकता है। महादेवी रेखाचित्र, संस्मरण तथा आलोचनात्मक निबंधों के माध्यम से उन्होंने उपेक्षित वर्ग की आवाज बनकर सामने आई। उन्होंने सिर्फ वेदना व पीड़ा को ही उजागर नहीं किया, अपितु उससे उभरने का रास्ता भी सुझाया है। उनका गद्य साहित्य केवल पीड़ा को व्यक्त करने और त्राहि-त्राहि मचाने का साहित्य नहीं, बल्कि नवनिर्माण का साहित्य है। यह नवनिर्माण अतीत और वर्तमान के संतुलन से ही संभव होगा। इसके लिए संकीर्ण सामाजिक रूढ़ियों की तिलांजलि देना अत्यंत आवश्यक है।

महादेवी ने स्त्री-स्वातंत्र्य की पुरजोर वकालत की। उन्होंने स्त्री को आवाज दी उन बंधनों को तोड़ने के लिए जिनके कारण वह दासता का अनुभव कर रही है। इसके लिए उन्होंने गद्य रूप को चुना ताकि अपनी आवाज को विशाल पाठक समुदाय तक पहुँचा सके।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. उनका गद्य साहित्य केवल पीड़ा को व्यक्त करने और त्राहि-त्राहि मचाने का साहित्य नहीं, बल्कि नवनिर्माण का साहित्य है। यह नवनिर्माण अतीत और वर्तमान के संतुलन से ही संभव होगा।
2. महादेवी वर्मा अपने गद्य साहित्य के माध्यम से सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार करती हैं।
3. महादेवी वर्मा निम्नवर्गीय व्यक्तियों एवं शोषितों की आवाज बनाकर सामने आती हैं।
4. महादेवी ने स्त्री-स्वातंत्र्य की पुरजोर वकालत की।
5. महादेवी वर्मा अपने गद्य साहित्य के माध्यम से जहाँ एक ओर राष्ट्र के नवनिर्माण की बात करती हैं, वहीं दूसरी ओर स्त्री अस्मिता की बात करती हैं। महादेवी यही चाहती हैं कि जीवन में आगे बढ़ते समय किसी को भी मूल्यों को भूलना नहीं चाहिए।

13.6 शब्द संपदा

1. कर्मनिष्ठ = कर्तव्य पालन में रहने वाला
2. जागरूकता = सतर्कता, सावधान
3. तिलांजलि = सदा के लिए किसी वस्तु अथवा व्यक्ति को त्याग करने का संकल्प
4. रहस्यानुभूति = रहस्य की अनुभूति

5. रेखाचित्र = रेखाओं द्वारा उकेरा गया चित्र, किसी व्यक्ति, स्थान अथवा वस्तु का संस्मरणात्मक शब्द-चित्र

6. शोषित = शोषण के शिकार हुए लोग

7. संस्मरण = किसी व्यक्ति विशेष जुड़ी स्मृतियाँ

8. सांप्रदायिकता = धर्म के नाम पर झगड़ा

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. महादेवी वर्मा के गद्य के विविध रूपों का परिचय दीजिए।
2. महादेवी वर्मा की स्त्री विषयक मान्यताओं पर प्रकाश डालिए।
3. महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में निहित नवजागरण और राष्ट्रीय भावना को रेखांकित कीजिए।
4. महादेवी वर्मा के गद्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. महादेवी वर्मा के जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. महादेवी वर्मा के संस्मरणात्मक साहित्य पर चर्चा कीजिए।
3. महादेवी वर्मा ने अपने साहित्य में आम आदमी का चित्रण किस रूप में किया स्पष्ट कीजिए।
4. महादेवी वर्मा की गद्य भाषा पर टिप्पणी लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. निम्नलिखित में से कौन-सा रेखाचित्र नहीं है? ( )

(अ) स्मृति की रेखाएँ (आ) अतीत के चलचित्र

(इ) पथ के साथी (ई) शृंखला की कड़ियाँ

2. 'चाँद' पत्रिका के संपादकीय के रूप लिखे गए उनके लेख किस संग्रह में संकलित हैं? ( )

(अ) अतीत के चलचित्र (आ) शृंखला की कड़ियाँ

(इ) पथ के साथी (ई) क्षणदा

3. इनमें से एक महादेवी वर्मा की गद्य कृति नहीं है। नाम बताइए। ( )

(अ) अतीत के चलचित्र (आ) क्षणदा

(इ) रश्मि (ई) साहित्यकार की आस्था

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. महादेवी वर्मा की रेखाचित्रों और संस्मरणों की प्रमुख विशेषता .... है।
2. महादेवी वर्मा की कृतियों में .... केंद्र में रहता है।
3. महादेवी वर्मा के रेखाचित्रों का पहला संस्करण .... है।
4. महादेवी वर्मा ने .... संस्था की स्थापना की।

III. सुमेल कीजिए -

1. अतीत के चलचित्र	(अ) सांस्कृतिक विषयक
2. क्षणदा	(आ) रेखाचित्र
3. संकल्पिता	(इ) स्त्री विमर्श
4. शृंखला की कड़ियाँ	(ई) चिंतन के क्षण

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. अतीत के चलचित्र : महादेवी वर्मा
2. पथ के साथी : महादेवी वर्मा
3. भारतीय संस्कृति के स्वर : महादेवी वर्मा
4. महादेवी - प्रतिनिधि गद्य रचनाएँ : सं. रामजी पांडेय
5. महादेवी : दूधनाथ सिंह
6. महादेवी वर्मा - निबंधों की दुनिया : सं निर्मला जैन, कुसुम बांठिया
7. महादेवी वर्मा की विश्व दृष्टि : तोमोको किकुचि
8. शृंखला की कड़ियाँ : महादेवी वर्मा
9. स्मृति की रेखाएँ : महादेवी वर्मा

इकाई 14: महादेवी वर्मा के निबंध 'जीने की कला' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मूल पाठ : महादेवी वर्मा के निबंध 'जीने की कला' की विवेचना

14.3.1 विवेच्य निबंध की विषय वस्तु

14.3.2 विवेच्य निबंध का प्रयोजन

14.3.3 विवेच्य निबंध में व्यक्त वैचारिकता

14.3.4 विवेच्य निबंध का भाषा सौष्ठव

14.3.5 विवेच्य निबंध का शैली सौन्दर्य

14.4 पाठ सार

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

14.6 शब्द संपदा

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

14.8 पठनीय पुस्तकें

14.1 : प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप महादेवी वर्मा के निबंध 'जीने की कला' का अध्ययन करेंगे। महादेवी वर्मा का एक परिचय यह है कि वे छायावादी कविता की एक प्रमुख स्तम्भ रही हैं। कविता के अतिरिक्त उन्होंने निबंध एवं संस्मरण भी लिखा है। चूँकि हमें प्रस्तुत इकाई में उनके निबंध का अध्ययन करना है इसलिए यहाँ उनके निबंधों को विवेचित-विश्लेषित किया जाएगा।

निबंध एक सशक्त गद्य-रचना है। इसमें लेखक अपने भावों-विचारों को क्रमबद्ध और तर्कसंगत ढंग से सीधे व्यक्त करता है। लेखक के व्यक्तित्व का भी स्पष्ट रूप से प्रकाशन निबंध में होता है। लेखक अपने भावों-विचारों की अभिव्यक्ति को कलात्मक रूप देने का प्रयास करता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने निबंध को गद्य की कसौटी कहा है। उनका मत है कि, 'यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है।' स्पष्ट है कि निबंध में लेखक को अपने चिंतन को अधिक व्यापक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए अवकाश मिलता है। कविता में इस तरह के अवकाश की गुंजाइश नहीं है। इस इकाई में हम 'जीने की कला' निबंध का विस्तृत विवेचन-विश्लेषण

करेंगे। चूँकि हम इस इकाई में महादेवी के गद्य साहित्य के संदर्भ में निबंध-कला पर विचार कर रहे हैं, इसलिए उनकी जीवन शैली की कुछ विशेषताओं पर भी विचार कर लेना उपयोगी सिद्ध होगा।

यह सर्वविदित है कि महादेवी का जन्म फर्रुखाबाद के एक शिक्षित परिवार में सन् 1907 में हुआ था। उनका विवाह नौ वर्ष की अल्पायु में ही हो गया था। विवाह के पश्चात् वे प्रयागराज आ गईं। यहाँ आकार उन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में परास्नातक किया। इसके बाद प्रयाग महिला विद्यापीठ के प्रधानाचार्य के पद पर लंबे समय तक अध्यापन का कार्य किया। इनके जीवन का अधिकांश अकेलेपन में बीता है जिसकी छाप इनके साहित्य पर दिखाई पड़ती है। अकेलेपन का कारण इनके पति का असामयिक निधन था जिसके कारण इन्हें विधवा का जीवन व्यतीत करना पड़ा। महादेवी की रचनाधर्मिता एवं साहित्य-सेवा को देखते हुए उन्हें 'पद्मभूषण' (1956) और हिन्दी साहित्य के सर्वोच्च सम्मान 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' (1982) से सम्मानित किया गया। उनका लौकिक जीवन और व्यक्तित्व अपने यथार्थ रूप में उनके गद्य साहित्य में ही व्यक्त हुआ है। समाज के जिन प्राणियों पर सामान्य रचनाकारों का ध्यान नहीं जाता उन्हें विषय के रूप में चुनने का साहस महादेवी ने ही दिखाया है। उनकी गद्य रचनाओं में पशु-पक्षियों से लेकर शोषित-उत्पीड़ित जन-जीवन के प्रति असीम सहानुभूति वर्णित हुई है। *श्रृंखला की कड़ियाँ, अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएँ, मेरा परिवार, क्षणदा, पथ के साथी* आदि उनकी प्रमुख गद्य कृतियाँ हैं। उनका समूचा गद्य साहित्य समाज-केंद्रित है। अपने गद्य साहित्य में महादेवी का कर्मनिष्ठ, संवेदनशील, अन्याय का विरोधी, सामाजिक कुरीतियों-कुसंस्कारों का भंजक व्यक्तित्व अत्यंत जीवंत रूप में उपस्थित हुआ है।

ध्यातव्य है कि महादेवी ने अपनी लेखनी के माध्यम से तदयुगीन स्त्रियों को अपने अधिकार के प्रति जागरूक करने का महनीय कार्य किया था। कुछ समय तक उन्होंने प्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'चाँद' का संपादन भी किया था। इस पत्रिका का प्रकाशन प्रयागराज से हो रहा था। इस पत्रिका में महादेवी जी ने नारी विषयक जितनी संपादकीय टिप्पणियाँ लिखीं, उन्हें ही पुस्तकाकार रूप देकर *श्रृंखला की कड़ियाँ* शीर्षक से 1942 में प्रकाशित किया गया। इसी निबंध-संग्रह का अंतिम निबंध *जीने की कला* है। महादेवी ने *अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएँ* आदि संग्रहों में भी नारी समस्या को नवीन दृष्टिकोण से वर्णित किया है लेकिन *श्रृंखला की कड़ियाँ* कुछ अलग है। इस संग्रह में भारतीय नारी की समस्याओं को विस्तार से विवेचित-विश्लेषित किया है। भारतीय समाज में मौजूद बाल विवाह, वृद्ध विवाह, दहेज, विधवा-समस्या, वेश्या-समस्या, अवैध संतान आदि समस्याओं को अत्यंत गहराई से वर्णित विश्लेषित किया है। इसके साथ ही उन्होंने भारतीय समाज, पुरुष प्रधान समाज में नारी के शोषण के स्वरूप और उसके

लिए अपनाए जाने वाले विभिन्न हथकण्डों को अपना विवेच्य विषय बनाया है। *जीने की कला* निबंध का पाठ करके आप उनकी नारी-विषयक संपूर्ण चिंतन से आप अवगत हो सकेंगे।

14.2 : उद्देश्य

इस इकाई में आप प्रमुख छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा द्वारा रचित निबंध 'जीने की कला' का अध्ययन करेंगे। इकाई को पढ़ने के उपरांत आप :

- ❖ महादेवी वर्मा की रचनात्मकता के एक नए पहलू - उनके गद्यकार- निबंधकार व्यक्तित्व के विषय में जान सकेंगे;
- ❖ निबंध का सार लिख सकेंगे;
- ❖ निबंध की अंतर्वस्तु को समुचित ढंग से विवेचित-विश्लेषित कर सकेंगे;
- ❖ निबंध के विषय-वस्तु को व्याख्यायित कर सकेंगे;
- ❖ निबंध की उपलब्धि का विवेचन कर सकेंगे;
- ❖ निबंध के प्रयोजन और वैचारिकता को विश्लेषित कर सकेंगे और
- ❖ निबंध के शीर्षक और प्रतिपाद्य की समुचित व्याख्या कर सकेंगे।

14.3 : महादेवी वर्मा के निबंध 'जीने की कला' की विवेचना

विवेच्य निबंध 'श्रृंखला की कड़ियाँ' नामक निबंध-संग्रह का अंतिम निबंध है। इस निबंध-संग्रह में लेखिका ने नारी समस्या का अनेक दृष्टियों से मूल्यांकन किया है। प्रस्तुत निबंध में जीने की कला को महादेवी जी ने भारतीय नारी के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित किया है। लेखिका ने भारतीय नारी की दुर्दशा के मूलभूत कारणों को नवीन सामाजिक-सांस्कृतिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों के आलोक में तर्कसंगत ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

14.3.1 विवेच्य निबंध की विषय-वस्तु

प्रस्तुत निबंध में लेखिका ने 'जीने की कला' के लिए सर्वप्रथम जीवन के आदर्शों, उच्च सिद्धांतों और उनके सही व्यवहार को अनिवार्य सिद्ध किया है। ये दोनों एक-दूसरे पर पूर्णतः निर्भर हैं। उनका मत है कि वही सिद्धांत स्वीकार्य हो सकेगा जो व्यावहारिक हो। अव्यावहारिक सिद्धांतों का बोझ ढोने वाला मनुष्य उस पशु के समान है। इस तरह का मनुष्य बिना जाने ही शास्त्रों और धर्मग्रंथों का भारवाहक बनना पड़ता है। उनकी स्पष्ट मान्यता है कि कोई भी मनुष्य सत्य, अहिंसा, क्षमा आदि मानवी गुणों को सिद्धांत रूप में जानकर भी न समाज का उपकार कर सकते हैं और न ही अपना भला। परिवेश, स्थिति, स्थान और काल-विशेष में इनके मूल अर्थ और यथार्थ को आत्मसात करके ही हम इन्हें सामान्य जन के लिए उपयोगी और महनीय बना सकते हैं। प्रायः सभी धार्मिक ग्रंथों में इस बात का उल्लेख मिलता है कि एक दोषमुक्त व्यक्ति के प्राणों की रक्षा के लिए बोला गया झूठ और की गई हिंसा; सत्य और अहिंसा से श्रेष्ठ मानी

जाएगी। महादेवी इस विचार से पूर्णतः सहमत हैं। इसी तरह एक हिंसक अथवा अत्याचारी को क्षमा करने वाले शांत व्यक्ति की अपेक्षा दण्ड देने वाला क्रोधी लोगों के लिए आदर्श बन सकता है। लेखिका इस बात का उल्लेख करती हैं कि हम भारतीय कर्म क्षेत्र के द्वार पर सिद्धांतों की जितनी भारी गठरी लेकर पहुँचते हैं उतनी भारी गठरी बोझ लेकर शायद ही दुनिया के किसी अन्य देश के व्यक्ति को कर्म क्षेत्र में पहुँचना पड़ता हो। इतना ही नहीं वे हमें सचेत करते हुए कहती हैं कि सिद्धांतों की भारी गठरी लेकर कार्य-क्षेत्र में पहुँचने के बाद भी हम अपने-अपने कार्य क्षेत्र में सबसे अधिक निष्क्रिय सिद्ध हुए हैं। इसका कारण यह है कि हमने अपने सिद्धांतों को कहीं उपयोग में लाने की अपेक्षा उसे बचाकर सुरक्षित रखने में ही अपनी सफलता मानी है। इस तरह के संग्रह की तुलना वे कंजूस से करती हैं। उन्होंने लिखा है कि जिस प्रकार एक कंजूस अपने धन को व्यय से बचाकर रखने में ही अपनी सफलता मान लेता है ठीक उसी प्रकार हमने भी अपने सिद्धांत और अपनी मेधा का संरक्षण किया है।

ध्यातव्य है कि उक्त विचारों को पढ़कर कोई यह भी निष्कर्ष निकाल सकता है कि निबंधकार सिद्धांतों का विरोध कर रही हैं लेकिन वास्तविक स्थिति ऐसी नहीं है। इस निबंध में लेखिका ने सिद्धांतों का विरोध नहीं किया है। उनका मत है कि सिद्धांत किसी भी समाज के निवासी के लिए जीवनयापन के मार्ग-निर्देशक आदर्श हैं, उसके अनुसार ही मनुष्य जीवन का सही लक्ष्य प्राप्त कर सकता है। लेकिन इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि हमने जीवन को मूलकार्य से अलग करके उसके व्यवस्थापक नियमों या सिद्धांतों को ही अपने रास्ते का रोड़ा बना लिया। इसका प्रतिफल यह हुआ कि हम अपना मंजिल ही भूल गए। निबंधकार का यह दृढ़ मत है कि हमारे देश में जीने की कला न जानने का अभिशाप व्याप्त है। इसका सबसे ज्यादा कुप्रभाव स्त्रियों पर पड़ा है। इस अभिशाप के कारण उन्हें घोर पीड़ा सहकर भी जीवित रहने पर अभिमान करना पड़ा है। इस करने वाला कोई विरला ही होगा। यहाँ तक के अंश को निबंध की भूमिका कहा जा सकता है। इसके बाद ही लेखिका ने भारतीय नारी की दुर्दशा के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक कारणों को विस्तार से विवेचित-विश्लेषित किया है।

महादेवी वर्मा ने भारतीय नारी के शोषण की समस्या पर गंभीरता से विचार किया है। उनका मत है कि भारतीय नारी में वे सभी गुण विद्यमान हैं, जिनके बाल पर किसी अन्य देश की नारी देवी बन सकती है। उसमें सहन-शक्ति, त्याग, आत्म-बलिदान, पवित्रता आदि की पराकाष्ठा दिखायी देती है, जिसका अत्यंत भाव-विह्वल ढंग से लेखिका ने प्रतिपादन किया है। इन्हीं गुणों के कारण भारतीय नारी में हमारी संस्कृति का वह कोष सुरक्षित है, जिसकी रक्षा किसी अन्य के द्वारा संभव नहीं थी। इसमें कोई संशय नहीं है कि आज भी भारतीय नारी में त्यागमयी माता, पतिव्रता पत्नी, स्नेहमयी बहन और आज्ञाकारी पुत्री की छवि मुखरित होती है, जबकि अत्यंत विकसित देशों की स्त्रियाँ अपने भौतिक सुखों के लोभ में अपनी युगों पुरानी संस्कृति का परित्याग कर चुकी हैं। हमारे देश की नारी त्याग, बलिदान और स्नेह के नाम पर

अपना सर्वस्व बलिदान कर सकती हैं। इन सभी के बावजूद भी उन्हें जीने की कला ही नहीं आती, जो इन अलौकिक गुणों को सार्थक और सजीव करती है।

निबंधकार ने बाल-विवाह और विधवा-समस्या पर अत्यंत भावुक ढंग से विचार किया है। उन्होंने नारी का एक अत्यंत कारुणिक बिम्ब उकेरा है। भारतीय समाज का तानाबाना कुछ ऐसा है कि हिंदू गृहस्थ की दुधमुंही बालिका से शापमयी युवती में परिवर्तित होती हुई विधवा एक अनजान व्यक्ति के लिए अपने हृदय की तमाम इच्छाओं को निर्ममतापूर्वक कुचल देती है। सतीत्व और संयम के नाम पर तमाम सारी यंत्रणाएँ झेलते हुए भी वह दूसरों के अमंगल के भय से दो बूंद आँसू और आह भी नहीं निकाल सकती।

भारतीय समाज में नारी के लिए अत्यंत उच्च आदर्श और सिद्धांत प्रतिष्ठित हैं। लेकिन इन आदर्शों को और सिद्धांतों को व्यवहार में शामिल करना अत्यंत कठिन है। व्यवहार में इनकी दुरूहता को देखते हुए महादेवी जी ने लिखा है कि स्त्री को एक तरफ अर्धांगिनी (पुरुष का आधा अंग) बनाया जाता है तो दूसरी ओर सती-सावित्री के अलौकिक तथा पवित्र आदर्श से उसे दबा दिया जाता है। इन उच्च आदर्शों के तले दबी-कुचली स्त्री बाजार से खरीदी गई एक सेविका की भाँति अपने शराबी, दुराचारी तथा अपने कर्मों के कारण जानवर से भी पतित पति की सेवा में लगी रहती है। वह अपने पति के अमानवीय दुर्व्यवहार को सहन करने के बाद भी देवताओं से यही वरदान माँगती है कि अगले जन्म में भी उसी का संग मिले। ऐसा करके वह स्त्री सभी को आश्चर्य में डाल देती है। अपने पिता के एक इशारे पर अपने सारे स्वप्नों को तिलांजलि देकर अयोग्य-से-अयोग्य पुरुष की पत्नी बनने को तैयार पुत्री, नारी जीवन के अभिशाप को साकार करती है। भारत के अधिकांश समाज की स्थिति ऐसी है कि पिता की संपत्ति केवल और केवल बेटे को मिलता है। इस स्थिति को जानते हुए भी एक स्त्री अपने भाई की कलाई पर राखी बांधती है। राखी बँधवाने वाला पुरुष इस बात की लेशमात्र भी चिंता नहीं करता है कि बहन की आर्थिक स्थिति कैसी है? उसे दोनों समय खाने को भोजन मिल भी रहा है अथवा नहीं। उस स्त्री की दरिद्रता और स्नेह देखकर चकित रह जाना पड़ता है। अपने अनेक पुत्रों द्वारा उपेक्षित दर-दर भटकती माँ का चोट खाया हुआ हृदय जब अपने उन्हीं दायित्वहीन पुत्रों के कल्याण की कामना करता है, जिसके कारण उसकी स्थिति बद से बदतर हो गई है, तो स्त्री-स्वभाव की गरिमा साकार हो जाती है। लेकिन महादेवी जी इन सभी गुणों का बखान करके नारी को उसी स्थिति में पड़े रहने का संदेश नहीं देती हैं। उनका सर्जनात्मक मन स्त्री सुलभ इन सारे गुणों पर प्रश्नचिह्न भी लगाता है। वे त्याग, सहनशीलता, निःस्वार्थ स्नेह, साहस आदि गुणों का तब तक कोई मूल्य नहीं समझती, जब तक इनके साथ विवेक, सजीवता और सार्थकता का भाव नहीं जुड़ जाता। निबंधकार ने इन सभी गुणों से परिपूर्ण स्त्री को 'शव' की संज्ञा प्रदान की है।

'शव' शब्द से किसी भी ऐसे व्यक्ति का बोध होता है जिसकी साँसें थम गई हों। वह कोई प्रतिक्रिया देने की स्थिति में न हो। वह संज्ञा शून्य हो। शव अपमान का विरोध नहीं कर सकता। वह किसी भी आघात को शांति से सह सकता है। उसे चाहे जल में फेंक दें या चिता पर जला दें, वह आह नहीं भरेगा। उसकी खुली आँखों में न आँसू आएगा और न ही उसके शरीर में कंपन होगा। ऐसी संज्ञा का प्रयोग किसी एक जाति, स्त्री, के लिए की जाने पर सामान्य पाठक के मन में भावशबलता का प्रस्फुटन होना स्वाभाविक है। पाठक यह भी अनुमान लगा सकता है कि लेखिका ने स्त्री के मूल्यांकन में पक्षपात किया है। लेकिन इस तरह का अनमान आधारहीन और गलत है। यहाँ लेखिका की आक्रोशपूर्ण सहानुभूति प्रकट हुई है। लेखिका ने नारी की जिन कमजोरियों को उद्घाटित किया है वह शव में मौजूद है। प्रतिक्रिया के धरातल पर दोनों के गुणधर्म समान होने के कारण लेखिका ने उसे शव की संज्ञा प्रदान की है। उसकी निष्क्रियता की प्रशंसा करने में वे स्वयं को असमर्थ पाती हैं। इसका कारण यह है कि स्त्री अपनी सहनशीलता, त्याग और बलिदान की प्रशंसा सुनते-सुनते इसे अपने धर्म का अंग मान बैठी है। निबंधकार इस जड़ता को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहती हैं।

प्रस्तुत निबंध में महादेवी ने भारती समाज की पुरुष केंद्रीकता को बहुत सूक्ष्म ढंग से वर्णित किया है। उन्होंने नारी की दुर्दशा के लिए उसकी स्वयं की कमजोरियों की अपेक्षा पुरुष प्रधान समाज के हथकण्डों को अधिक उत्तरदायी ठहराया है। भारतीय समाज ने अपनी प्राचीन गौरव गाथा का उसे प्रदर्शन मात्र बनाकर रख दिया है। बिना किसी प्रतिरोध के स्त्री को मूक और असहाय रूप में इस गौरव के भार को ढोना पड़ रहा है। पूँजीवाद के युग में धन की प्रभुता उसके लिए जितनी पीड़ादायक सिद्ध हुई, धर्म और अधिकार की प्रभुता भी उसके लिए उतनी ही घातक सिद्ध हुई है। समाज में धनार्जन का दायित्व मिल जाने से पुरुष को पूँजीपतित्व का अधिकार स्वतः मिल गया। सम्पत्ति रखने का अधिकारी भी पुरुष ही बना रहा। संपत्ति की अधिकता के कारण अन्य अधिकार भी उसे सहज रूप से मिल गए। शास्त्र और दूसरे सभी प्रकार के सामाजिक नियमों का निर्माता होने के कारण वह स्वयं को अधिक-से-अधिक स्वतंत्र और स्त्री को कठिन-से-कठिन बंधन में रखने में समर्थ हो गया। सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक उपकरणों से निर्मित पुरुष प्रधान व्यवस्था का यह तंत्र इतना ठोस और कारगर साबित हुआ कि उसमें ढलकर स्त्री केवल दासी या सेविका के रूप में ही निकलने लगी। अपने अपमान के प्रति विद्रोह तो क्या, अपनी दशा के विषय में प्रश्न करना भी उसके लिए जीवन में यातना और मृत्यु के बाद नरक मिलने का साधन मान लिया गया। आज के तकनीकी प्रधान युग में दासता के इस पुराने किंतु दृढ़ यंत्र के निर्माण-कौशल पर लेखिका ने आश्चर्य प्रकट करते हुए लिखा है कि इसमें मूक यंत्रणा सहने वाला व्यक्ति ही सहायता देने वाले के कार्य में बाधा डालता रहा है। इसका आशय यह है कि अपने संस्कार में बंधे होने के कारण, रूढ़िवादिता और अज्ञानता के कारण नारी मुक्ति का विरोध स्वयं नारियाँ ही कर रही हैं। कहना न होगा कि इसका विरोध प्रायः वे

नारियाँ करती हैं जो लंबे समय तक पुरुषवादी मानसिकता से युक्त समाज में रह चुकी हों। इनके ऊपर भी पुरुषवाद का बहुत गहरा प्रभाव होता है। इतना ही नहीं वे अपने कार्यों के द्वारा उसके बंधन को और मजबूती प्रदान करती हैं। इस तरह के कार्य के लिए उन्हें प्रोत्साहित भी किया जाता है। बाल विवाह, पुनर्विवाह, विधवा-विवाह के संदर्भ में इसके अनेक उदाहरण मिल सकते हैं।

महादेवी का रचनात्मक मन अपने समय और समाज के साथ गहराई से जुड़ा हुआ था। यही कारण है कि वे अपने समाज में मौजूद छोटी-से-छोटी बात पर अपना ध्यान केंद्रित करती हैं। वे अपने समाज में मौजूद हालत का बयान कुछ इस प्रकार करती हैं कि, बाल्यावस्था से ही लड़की अपने आपको पराये घर की वस्तु मानने लगती है, जिसमें न जाने की इच्छा भी उसके लिए पाप है। उन्होंने इस तथ्य को विशेष रूप से रेखांकित किया है कि विवाह के व्यवसाय में लड़की की इच्छा और उसकी योग्यता का कोई स्वतंत्र मूल्य नहीं है। उसका सारा कौशल पति के प्रदर्शन तथा गर्व की वस्तु बन जाता है। उसके सारे गुण इसी बात में निहित हैं कि वे स्वयं को अपने पति की इच्छानुकूल बनाए, दूसरों के कल्याण कार्यों के लिए नहीं। जिस घर को बचपन से उसका घर माना जाता है, वहाँ उसे अन्न-वस्त्र के अतिरिक्त कोई अन्य अधिकार प्राप्त नहीं होता। जिस पति के लिए उसका जीवन समर्पित होता है, उस पति के जीवन पर भी यदि उसका कुछ स्वत्व होता तो नारी की दासता में भी प्रभुता का सुख प्रवाहित होने लगता। लेकिन उसे तो न मायके में कुछ अधिकार का सुख मिलता है और न ही ससुराल में।

अंत में लेखिका ने 'जीने की कला' की समस्या का कोई सीधा समाधान तो नहीं दिया लेकिन जैसा कि कोई भी बड़ा लेखक समस्या को पाठक के सामने प्रस्तुत करता है ठीक उसी तरह महादेवी ने भी समाज में व्याप्त इस दुख को सबके सामने प्रस्तुत करने का कार्य किया है। उनकी स्पष्ट मान्यता है कि अपने स्वार्थ के कारण पुरुष समाज का कलंक है और और नारी अपनी अज्ञानमय सहिष्णुता के कारण पाषाण की तरह उपेक्षणीय। दोनों के मनुषत्व-युक्त मनुष्य हो जाने पर ही जीने की कला का विकास होगा। इसके बाद ही सहनशीलता, सक्रियता, सहानुभूति, त्याग, स्नेह आदि गुण व्यापक रूप से मानव समाज के विकास में सहायक होंगे। जीवन को सुंदर और उपयोगी रूप प्रदान करने वालों को सिद्धांतों से संबंध रखने वाली अंतर्मुखी शक्तियों को पूरे विकास की सुविधाएँ देनी ही पड़ेंगी। जब तक आंतरिक तथा बाहरी विकास एक-दूसरे पर निर्भर होकर एक-दूसरे के साथ जुड़कर आगे नहीं बढ़ते, तब तक हम जीना नहीं जान सकते। जीने का सही अर्थ तभी निकल पाएगा जब दोनों जातियाँ – स्त्री और पुरुष – एक दूसरे को मनुष्यता के धरातल पर बराबर समझे। जगत को बचाने और चलायमान करने का दायित्व न केवल स्त्री के जिम्मे है बल्कि स्त्री और पुरुष दोनों की जिम्मेवारी है। अतः दोनों को समान अधिकार हासिल होगा तभी जीने की कला का सही मार्ग विकसित हो पाएगा।

बोध प्रश्न :

- भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति पर अपना मंतव्य व्यक्त कीजिए।
- महादेवी ने भारतीय नारी को 'शव' की संज्ञा क्यों प्रदान की? कारण स्पष्ट कीजिए।

14.3.2 विवेच्य निबंध का प्रयोजन:

महादेवी वर्मा के निबंधों में एक महत्वपूर्ण संदेश मौजूद रहता है। वह संदेश समाज में मौजूद विद्रूपता को देखते हुए भारतीय जनता को उससे संघर्ष करने हेतु प्रदान किया है। उन्होंने भारतीय नारी-जीवन के अभिशाप के लिए सबसे पहले नारी को ही जिम्मेदार साबित किया है। वे पूरी सहानुभूति के साथ भारतीय नारी को सचेत और जागरूक बनाने का प्रयास करती हैं। वे चाहती हैं कि भारतीय नारी सतीत्व, पातिव्रत्य, त्याग, बलिदान, सहनशीलता, करुणा, स्नेह, ममता के ऊँचे आदर्शों के खूँटे से बँधकर स्वयं को असहाय न बनाए, उसे छोड़कर वह इन आदर्शों के मानवीय महत्व और लक्ष्य को समझे। उपुर्यक्त आदर्श कर्त्तव्य के बंधन मात्र न होकर अधिकार के साधन भी हैं। उसे इन सिद्धांतों या आदर्शों को अपने पैरों की बेड़ियाँ न बनाकर इन्हें अपने जीवन के विकास और उत्थान के लिए उपयोग में लाना आवश्यक है।

प्रस्तुत निबंध का एक दूसरा पक्ष भी है, जिसका संबंध पुरुष और पुरुष प्रधान समाज के विधि-निषेधों और उसके विभिन्न हथकण्डों से है। इस पक्ष का विवेचन-विश्लेषण करते हुए लेखिका ने पुरुष समुदाय को सावधान किया है कि वह अपनी हरकतों से बाज आए। इसमें पहला हथकण्डा है सीता, सती, सावित्री आदि जैसी नारियों के आदर्श और महान मानवीय गुणों को नारियों से जोड़कर उसे अपनी प्राचीन गौरवगाथा का प्रदर्शन मात्र बना देना। इस गौरव के बोझ को नारी मूक और निरीह भाव से वहन करती आ रही है। लेखिका ने पुरुष समुदाय के इस षडयंत्र का भी पर्दाफाश किया है। इस संबंध में पुरुष समुदाय के जिस दूसरे हथकण्डे को लेखिका ने विशेष रूप से प्रतिपादित किया है, वह है, पूँजीवादी युग में धन, अधिकार और धर्म की सत्ता का पुरुषों के हाथ में होना। धन और अधिकार के बल पर आज वह शास्त्र और समाज के नियमों का निर्माता बनकर अपने को अधिक-से-अधिक स्वच्छंद रखकर नारी को कठिन-से-कठिन बंधन में बांधने में समर्थ बन गया है। इस स्थिति का खुलासा कर महादेवी जी ने न केवल पुरुष समुदाय को ही सचेत किया है बल्कि नारी समुदाय को भी इस हथकण्डे के प्रति सजग बनाया है।

प्रस्तुत निबंध का प्रयोजन भारतीय नारी-जीवन के अभिशाप के विभिन्न पक्षों-पहलुओं का उद्घाटन करते हुए उनके कारणों से अवगत कराकर नारी समुदाय को जागरूक बनाना है। लेखिका ने 'श्रृंखला की कड़ियाँ' शीर्षक संग्रह में 'अपनी बात' के अंतर्गत लिखा है कि *समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर है और ज्ञान ज्ञाता की अपेक्षा रखता है। अतः अधिकार के इच्छुक व्यक्ति को अधिकारी भी होना चाहिए।* आज से लगभग साठ वर्ष पहले व्यक्त की गई यह

मान्यता आज भी ज्वलंत रूप से एक सच्चाई बनी हुई है, जो हम सबके लिए विचारणीय है। कहना न होगा कि इस आग में आज भी भारत की अनेक नारियाँ जलकर भस्म हो रही हैं। इस कुचक्र में फँसने का बाद इससे बाहर आने का उन्हें कोई रास्ता भी नहीं सूझता है। इस तरह की नारियों को सचेत करने के लिए महादेवी न केवल निबंध की रचना करती हैं बल्कि इसके साथ ही अखबारी लेखन भी करती हैं। वे सभी तरह से भारतीय नारी को उनके अधिकार के विषय में जागरूक एवं सतर्क करना चाहती हैं।

बोध प्रश्न :

- महादेवी ने स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार का सबसे पहला जिम्मेदार किसे माना है?
- प्रस्तुत निबंध का दूसरा पक्ष क्या है? स्पष्ट कीजिए।

14.3.3 विवेच्य निबंध में व्यक्त वैचारिकता:

प्रस्तुत निबंध में लेखिका ने *जीने की कला* को अपना विषय बनाया है, लेकिन निबंध में कला की बारीकियों के विवेचन-विश्लेषण को अंतर्वस्तु न बनाकर भारतीय समाज में नारी के शोषण और उसकी दुर्दशा के सामाजिक, धार्मिक और आचारशास्त्रीय कारणों पर प्रकाश डाला है। अतः निबंध की अंतर्वस्तु समाजशास्त्रीय रूप ग्रहण कर लेती है। फलस्वरूप इसमें महादेवी जी का जीवन विषयक चिंतन और सामाजिक विचार ही अधिक प्रकट हुआ है। 'श्रृंखला की कड़ियाँ' शीर्षक संग्रह की भूमिका में महादेवी जी ने लिखा है कि, *विचार के क्षणों में मुझे गद्य लिखना ही अच्छा लगता रहा है, क्योंकि उसमें अपनी अनुभूति ही नहीं बाह्य परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए भी पर्याप्त अवकाश रहता है*। लेकिन इस संबंध में यह ध्यान रखना होगा कि महादेवी एक कवयित्री भी हैं। इसलिए स्थान-स्थान पर अपनी निजी भावनाओं को भी अत्यंत उन्होंने भावुकतापूर्वक प्रतिपादित किया है। लेकिन उनके निबंधों में उनकी वैचारिकी स्पष्ट रूप में अभिव्यक हुई है। अतः यहाँ हम उनके विचार पक्ष का विवेचन करेंगे।

महादेवी जी ने 'श्रृंखला की कड़ियाँ' निबंध संग्रह को भारतीय नारी को समर्पित करते हुए लिखा है, *'जन्म से अभिशप्त, जीवन से संतप्त, किंतु अभय वात्सल्य वरदानमयी भारतीय नारी को*। इससे स्पष्ट है कि प्रस्तुत संग्रह के अन्य निबंधों के साथ ही विवेच्य निबंध भी भारतीय नारी की समस्या से संबंधित है। समस्या प्रधान होने के कारण इसे विचारधारात्मक निबंध भी कहा जा सकता है। इसमें महादेवी जी एक चिंतक और विचारक के रूप में हमारे सामने उपस्थित होती हैं। समस्या के विश्लेषण में उन्होंने अपनी समाजशास्त्रीय सोच का पूरा परिचय दिया है।

निबंधकार ने प्रस्तुत निबंध में अपनी नारी-विषयक चिंता को अत्यंत व्यापक सामाजिक संदर्भ प्रदान किया है। इस प्रक्रिया में उन्होंने सर्वप्रथम किसी कार्य के दो आवश्यक पक्षों को सामने रखा है एक सिद्धांत पक्ष और दूसरा उसका क्रियात्मक या व्यवहार पक्ष। इन दोनों पक्षों

के परस्पर सहयोग से ही किसी कार्य का समुचित संपादन संभव है। जिस तरह सिद्धांत के अभाव में कोई कार्य अंधे की छलांग मात्र बनकर रह जाता है, उसी प्रकार उसके मानवोपयोगी व्यवहार के बिना सिद्धांत मंत्रोच्चारण करने वाले तोते की वाणी की तरह निरर्थक सिद्ध हो जाता है। इस तथ्य को महादेवी ने विस्तार के साथ, कई उदाहरणों से पुष्ट करते हुए, अत्यंत प्रभावशाली पृष्ठभूमि के रूप में उपस्थित किया है। इसके बाद वे अपनी मूल समस्या पर आती है।

महादेवी ने जीने को एक कला के रूप में व्यक्त किया है। इस संदर्भ में उन्होंने लिखा है कि '*आज तो जीने की कला न जानने का अभिशाप देश-व्यापक है, परंतु विशेष रूप से स्त्रियों ने इस अभिशाप के कारण को विशेष रूप से सहा है, उसे सह कर जीवित रहने का अभिमान करने वाले विरले ही मिलेंगे*। भारतीय नारी के पास संस्कार रूप में वे सारे सिद्धांत और आदर्श मौजूद हैं जिन्हें मानवीय गुणों की संज्ञा दी जाती है। वात्सल्य, ममता, स्नेह, पातिव्रत्य से लेकर आज्ञाकारिता, त्याग, सहनशीलता, सहिष्णुता, पवित्रता आदि के रूप में उसके पास भारतीय संस्कृति का एक अक्षय कोष है, जिसकी सुरक्षा किसी अन्य के द्वारा संभव नहीं है। इन सभी गुणों के बावजूद वह उपेक्षित, अपमानित, प्रताड़ित, अधिकारविहीन, व्यक्तित्वहीन प्राणी बनकर रह गई है। इस स्थिति के लिए एक सीमा तक नारी को उत्तरदायी मानकर अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए महादेवी कहती हैं कि वह जीने की कला नहीं जानती। इसलिए वह गुणों को चरम सत्य और निरपेक्ष मानकर उन्हीं के भार से निस्सहाय की तरह दबी रहती है। अपने त्याग, बलिदान, सहिष्णुता और पवित्रता की शक्ति को पहचान कर, उनकी उपयोगिता को समझकर वह प्रतिकार, प्रतिरोध और अपने अधिकार के लिए तत्पर नहीं हो पाती। वह नहीं समझती कि इन महान मानवीय गुणों में कर्त्तव्य के साथ ही अधिकार भी समाविष्ट है। इस निबंध में लेखिका ने नारी दुर्दशा का कारण स्वयं नारियों को ही न मानकर पुरुष प्रधान भारतीय समाज के विभिन्न हथकण्डों को सबसे बड़ा कारण सिद्ध किया है। भारतीय समाज ने सीता, सती, सावित्री के आदर्श के साथ नारी-जीवन से जुडे मानवीय गुणों का ऐसा मिश्रण तैयार किया है जिसने नारी को केवल प्राचीन गौरव का प्रतीक मात्र बनाकर रख दिया है। सारे शास्त्र, पुराण, आचार-संहिता आदि में पुरुष की अर्धांगिनी मानते हुए भी नारी को किसी प्रकार का अधिकार नहीं दिया गया है। अपने सहज संस्कार से नारी ने इसे अपनी मर्यादा स्वीकार कर ली है। लेकिन यह मर्यादा पुरुष प्रधान समाज द्वारा निर्धारित है। इसे मानने के लिए उसे विवश किया गया है। इसकी जगह स्त्री द्वारा अपने ऊपर अधिकार के मानक स्वयं निर्मित करने होंगे।

महादेवी इस बात से पूरी तरह अवगत थीं कि आने वाला समाज पूंजी का होगा। यही कारण है कि इस पूँजीवादी युग में नारी दुर्दशा के एक नए पक्ष पर भी उन्होंने विचार किया है। सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होने के कारण पुरुष को धनोपार्जन का दायित्व संभाल लेने के बाद

धन की सत्ता के साथ ही उसे अधिकार की सत्ता भी सहज ही प्राप्त हो गई। इसके साथ ही, धर्म और सामाजिक विधि-विधानों का निर्माता होने के कारण वह स्त्री की अपेक्षा स्वयं को अत्यधिक बंधनमुक्त रखता है साथ ही नारी को अत्यंत कठिन बंधन में बांधने का लगातार प्रयास भी करता है। अपने युग के संदर्भ में महादेवी जी ने इस तथ्य को विशेष रूप से रेखांकित किया है कि नारी को बांध रखने का सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक उपकरणों से बना हुआ यह यंत्र इतना पूर्ण और कारगर साबित हुआ है कि उसमें ढलकर स्त्री केवल सफल दासी के रूप में ही निकल सकी। उसकी योग्यता, कला, कोमलता, सौंदर्य, करुणा, त्याग, पवित्रता आदि उसके व्यक्तित्व के अंग और समाज कल्याण के लिए न होकर केवल पुरुष (पति) को इच्छानुकूल बनाने वाले साधन मात्र बनकर रह गए। मौजूदा तंत्र ने उसे पुरुष के मनोरंजन और उसकी वंश-वृद्धि का उपकरण मात्र बनाकर रख दिया है। स्त्री को वस्तु के रूप में प्रस्तुत करने के कार्य सभ्यता की देन है। आशय यह है कि आरंभ में इस तरह का तंत्र मौजूद नहीं था तो स्त्री को इस रूप में प्रस्तुत करे। इस निबंध की अंतर्वस्तु को हम संक्षेप में प्रस्तुत करना चाहें तो कह सकते हैं कि स्त्री को न पुत्री के रूप में अधिकार है, न माता के रूप में, न पत्नी के रूप में और न बहन के रूप में ही। विधवा के रूप में तो उसकी जो दारुण स्थिति है, वह अवर्णनीय है। इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि महादेवी के इस निबंध में उनके नारी विषयक सामाजिक चिंतन और विचारों की प्रधानता है।

बोध प्रश्न :

- 'जीने की कला' निबंध की वैचारिकी को विश्लेषित कीजिए।
- महादेवी ने पूँजीवाद को स्त्रियों के लिए लाभप्रद बताया है अथवा हानिकारक? विवेचित कीजिए।

14.3.4 विवेच्य निबंध का भाषा सौष्ठव

साहित्य की अन्य गद्य विधाओं की अपेक्षा निबंध का संरचना-शिल्प काफी अलग है। पहले हम बता चुके हैं कि निबंध को गद्य की कसौटी माना जाता है। एक चुस्त-दुरुस्त और सुगठित विधा के कारण निबंध में भाषा और शैली, दोनों के विषय में लेखक को पर्याप्त सावधानी बरतनी पड़ती है। इस दृष्टि से रचनाकार अधिक स्वतंत्रता का उपयोग नहीं कर सकता। निबंध के लिए प्रायः भाषा का मिश्रित और बोलचाल वाला रूप वर्जित है। महादेवी जी ने इस दृष्टि से आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के आदर्शों का समन्वित रूप प्रस्तुत किया है। संरचना-शिल्प की दृष्टि से भाषा और शैली पर अलग-अलग विचार कर हम निबंध की विशेषताओं को समझने का प्रयास करेंगे।

निबंध एक सुगठित और सुचिंतित साहित्यिक गद्य विधा है, यही कारण है कि इसमें भाषा के व्याकरण-सम्मत, स्तरीय और परिनिष्ठित रूप को स्वीकार करना पड़ता है। महादेवी ने हिन्दी गद्य के तत्सम् प्रधान संस्कृत-निष्ठ रूप का आग्रह छोड़कर हिन्दी के अपने तद्भव-तत्सम् युक्त स्तरीय रूप को स्वीकार किया है। इसे प्रसाद गुण (सरल) संपन्न साधु (सहज) भाषा की संज्ञा दी जा सकती है। इसे आप एक उदाहरण के माध्यम से सहज ढंग से समझ सकते हैं:

प्रत्येक कार्य के प्रतिपादन तथा प्रत्येक वस्तु के निर्माण में दो आवश्यक अंग हैं तद्विषयक विज्ञान (विशेष ज्ञान) और उस विज्ञान का क्रियात्मक प्रयोग। बिना एक के दूसरा अंग अपूर्ण ही रहेगा, क्योंकि बिना प्रयोग के ज्ञान प्रमाणहीन है और बिना ज्ञान के प्रयोग आधारहीन।

यहाँ प्रत्येक, कार्य, प्रतिपादन, निर्माण, तद्विषयक, विज्ञान, प्रमाणहीन, आधारहीन जैसे संस्कृत के तत्सम् से लगने वाले शब्द बहुत सारे तद्भव शब्दों के साथ जुड़कर हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल सहज भाषा का स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। यह सहजता ही महादेवी की भाषा को प्रवाहशील बनाती है जिसमें शब्द-विन्यास का महत्वपूर्ण योगदान है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निबंध को गद्य की कसौटी माना है तो संस्कृत के प्राचीन काव्यशास्त्रियों ने *गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति* कहकर गद्य को कवियों की कसौटी स्वीकार किया है। महादेवी या किसी भी कवि की सफल काव्य-भाषा का आधार उसकी गद्य-भाषा की प्रवीणता ही है। लेकिन एक कवि के गद्य में उसकी काव्यात्मक भाषा के योगदान को भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता। महादेवी जब किसी मार्मिक प्रसंग का विश्लेषण करने लगती हैं, तो उनकी कवि-सुलभ भावुकता अत्यंत सहज रूप से काव्यात्मक प्रभाव से उसे सुशोभित कर देती हैं। उनका एक उदाहरण इसका द्रष्टव्य प्रस्तुत करती हैं:

स्त्री किस प्रकार अपने हृदय को चूर-चूर कर पत्थर की देव-प्रतिमा बन जाती है, यह देखना हो तो हिंदू गृहस्थ की दुधमुंही बालिका से शापमयी युवती में परिवर्तित होती हुई विधवा को देखना चाहिए... जो सतीत्व और संयम के नाम पर अपने शरीर और मन को अमानुषिक यंत्रणाओं को सहने का अभ्यस्त बना लेती है और इसपर भी दूसरों के अमंगल के भय से आँखों में दो बूंद जल भी इच्छानुसार नहीं आने दे सकती।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि महादेवी की गद्य-भाषा निबंध-रचना की सभी मानकों को पूरी करने वाली व्याकरण-सम्मत, तद्भव-तत्सम् शब्दों से युक्त अत्यंत सहज भाषा है। लेकिन जीवन के मार्मिक प्रसंगों में वह काव्यात्मकता का दामन भी थाम ही लेती है।

बोध प्रश्न :

- महादेवी के निबंध की भाषा पर टिप्पणी लिखिए।
- गद्य की भाषा और पद्य की भाषा के अंतर पर प्रकाश डालिए।

14.3.5 विवेच्य निबंध का शैली सौन्दर्य :

महादेवी के निबंध शैली पर विचार करने से पर यह ज्ञात होता है कि प्रस्तुत निबंध का विषय समस्या-मूलक होने के कारण इसमें प्रमुख रूप से विवेचनात्मक शैली का ही प्रयोग किया गया है। विवेचनात्मक शैली की मूलभूत विशेषता है कि इसमें बुद्धि, विवेक और तर्क-वितर्क की प्रधानता होती है। विषय की व्याख्या, उसके विश्लेषण, उसके पक्ष-विपक्ष का खंडन-मंडन करते हुए प्रायः भावना या अनुभूति का सहारा नहीं लिया जाता या अपेक्षाकृत बहुत कम लिया जाता है। लेकिन इस निबंध की विवेचनात्मक शैली में हमें भावनात्मक आग्रह का स्वर स्थान-स्थान पर तीव्रता से प्रकट होता हुआ दिखाई देता है। वैसे 'जीने की कला' निबंध का आरंभ कला के सिद्धांत और व्यवहार पक्ष की परस्पर निर्भरता से होता है। इसे स्पष्ट करने के लिए महादेवी ने चित्रकला को उदाहरण के रूप में लिया है, और उसके माध्यम से अन्य कलाओं के लिए सिद्धांत और व्यवहार - दोनों की आवश्यकता को रेखांकित किया है। इसके बाद महादेवी जी 'जीने की कला' विषय पर आती हैं। 'जीने की कला' को कला सिद्ध करते हुए महादेवी जी ने अन्य कलाओं की तरह उसमें भी सिद्धांत और व्यवहार पक्ष की अनिवार्यता पर जोर दिया है। विषय का विवेचन करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया है कि जीवन के लिए निर्धारित सिद्धांत उचित अवसर पर उपयुक्त प्रयोग के बिना निरर्थक होकर अनावश्यक बोझ बन जाते हैं। इस प्रक्रिया में अपनी मान्यताओं की पुष्टि के लिए उन्होंने कई उदाहरण भी दिए हैं। मंत्रोच्चार करने वाले तोते की वाणी की निरर्थकता को रेखांकित करते हुए उन्होंने सिद्धांतों के सही अर्थ की जानकारी और कल्याणकारी प्रयोग के अभाव में उन्हें निरर्थक और अहितकारी बताया है। इसी तरह जीवन के लिए स्वीकृत कुछ प्रमुख सिद्धांतों सत्य बोलना, क्षमा, दया, स्वामिभक्ति आदि का भी उदाहरण के रूप में उपयोग किया है। लेकिन इनके उपयुक्त और कल्याणकारी प्रयोग के महत्य को रेखांकित करते हुए उन्होंने लिखा है कि किसी निर्दोष की प्राण-रक्षा के लिए बोला गया असत्य सत्य से श्रेष्ठ माना जाएगा। इसी तरह किसी अत्याचारी को क्षमा करने वाले व्यक्ति से उसे दण्ड देने वाला क्रोधी व्यक्ति संसार के लिए अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है और एक क्रूर स्वामी की अन्यायपूर्ण आज्ञा का पालन करने वाले सेवक से उसका विरोध करने वाला सेवक अधिक स्वामिभक्त कहलाएगा। जीवन के लिए निर्धारित अन्य सिद्धांतों के संबंध में यही सत्य है और आगे भी रहेगा। वे हार हाल में स्त्रियों के भीतर अपने शोषण के प्रति आक्रोश का भाव भरना चाहती थीं। यही कारण है कि वे इस तरह का प्रयोग करती हैं।

महादेवी जी नारी-जीवन के सिद्धांत और व्यवहार की इस वास्तविकता का विवेचन-विश्लेषण करने के बाद अभिशाप की मूल समस्या पर स्वयं को केंद्रित करती हैं। वे पूरे विवेचन विश्लेषण के साथ बताती हैं कि भारतीय नारी त्याग, तप, बलिदान, सहनशीलता, सहिष्णुता, पवित्रता, स्नेह, ममता आदि की प्रतिमूर्ति है। इन भारतीय मूल्यों और आदर्शों को निष्ठापूर्वक

वहन करते हुए भी आज वह समाज में शोषित और प्रताड़ित हो रही है। क्योंकि वह इन मूल्यवान सिद्धांतों के वास्तविक महत्व और उनकी शक्ति से अनभिज्ञ है। इसलिए वह जीने की कला नहीं जानती। माँ के रूप में, पत्नी के रूप में, बहन और पुत्री के रूप में घर-परिवार और बाहर सभी जगह उसे यातना का शिकार बनना पड़ता है। इस वास्तविकता को उन्होंने तर्कसंगत ढंग से अत्यंत सूक्ष्मता से प्रस्तुत किया है।

भारतीय नारी की दुर्दशा एवं चिंताजनक स्थिति की गंभीरता और उसके मूल कारणों की समाजशास्त्रीय व्याख्या के बावजूद वे अत्यंत मार्मिक स्थलों पर भाव-विह्वल होकर भावात्मक शैली का भी प्रयोग करने लगती हैं। पतिव्रता, सद्गृहिणी, आज्ञाकारी पुत्री, ममतामयी माँ, स्नेहिल बहन, सतीत्व और संयम के नाम पर यंत्रणा झेलने वाली बाल-विधवा आदि के प्रसंगों में वे अत्यंत भावुक होकर प्रायः चित्रात्मक और भावात्मक शैली का प्रयोग करने लगती हैं। ऐसे प्रसंगों में वे *कौन ऐसा कठोर होगा जिसकी आँखों में आँसू न आ जाएँ, किसका हृदय विदीर्ण नहीं हो जाएगा* आदि जैसे भावोच्छ्वास-युक्त वाक्यों का प्रयोग करने से नहीं चूकतीं। पूरे निबंध में स्थान-स्थान पर प्रयुक्त होने वाली भावात्मक शैली और स्वानुभूत तथ्य, विवेचनात्मक शैली के नीरस विवेचन विश्लेषण में सरसता लाने के साथ ही निष्कर्षों को यथार्थ और अधिक प्रामाणिक भी बना देते हैं।

प्रस्तुत निबंध में लेखिका ने विवेचनात्मक शैली में सिद्धांत निरूपण या सिद्धांतों की पुनर्व्याख्या का विशेष प्रयास नहीं किया है। इसकी जगह उन्होंने व्यावहारिकता पर ही अधिक बल दिया है। इसी कारण उन्होंने तर्क-वितर्क और बौद्धिकता के स्थान पर स्वानुभूत अनुभवों का सहारा अधिक लिया है। अतः नारी उत्पीडन की समस्या की गंभीरता ही पाठक को अधिक आंदोलित करती है। यही उनका लक्ष्य भी रहा है, जिसमें वे पूरी तरह सफल हुई हैं।

बोध प्रश्न :

- विवेचनात्मक शैली की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
- निबंध लेखन की किन्हीं दो शैलियों की विवेचना कीजिए?

14.4 : पाठ सार

हिन्दी साहित्य के इतिहास में निबंध विधा का विकास आधुनिक युग की देन है। समाज में होने वाले परिवर्तन (राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक) ने साहित्य की जिन नवीन विधाओं की नींव डाली उनमें से एक निबंध भी है। कहना न होगा कि निबंध भाषा और विचार के धरातल पर अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक सशक्त विधा है। भारतेन्दु युग में इस विधा में साहित्य रचना सर्वाधिक मात्रा में हुई। इस युग के लेखकों ने जिस तरह से अपने सामाजिक द्वंद्व, तनाव और विद्रूपता को वर्णित करने के लिए इस विधा का सहारा लिया ठीक उसी प्रकार महादेवी ने भी इस विधा का सहारा लिया है। *श्रृंखला की कड़ियाँ* के प्रकाशन वर्ष

तक हिन्दी कविता के क्षेत्र में महादेवी अपना कीर्तिमान स्थापित कर चुकी थीं। ऐसी स्थिति में वे कविता को छोड़कर निबंध की विधा में कुछ कहने का साहस दिखती हैं तो निश्चित ही उसके कुछ मजबूत आधार होंगे।

महादेवी का रचना-समय भारतीय राजनीति और समाज-व्यवस्था में बहुत उथल-पुथल का समय रहा है। एक तरफ देश की जनता भारतीय स्वाधीनता के लिए संघर्ष कर रही थी वहीं दूसरी तरफ शोषित, उपेक्षित और श्रमशील जनता अपने अधिकार के लिए मुखर हो रही थी। जनता उन शक्तियों को ठीक ढंग से पहचान रही थी जिन्होंने उसे इस अवस्था में पड़े रहने के लिए विवश किया था। इन सभी गतिविधियों का प्रभाव महादेवी के रचनात्मक मन पर पड़ना स्वाभाविक ही था।

यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जिस समय में महादेवी भारतीय नारी के मन में अपने दमन के प्रतिरोध की ज्वाला भरना चाह रही थीं ठीक उसी समय अमेरिका में वर्जिनिया वुल्फ़ स्त्री के अधिकार के प्रति अमेरिकी महिलाओं को सचेत एवं जागरूक कर रही थीं। उसी समय में वर्जिनिया वुल्फ़ की बहुचर्चित किताब **A Room of One's Own** प्रकाशित हुई थी। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि महादेवी की चिंता कोई वायावी नहीं थी, उसकी एक ठोस आधारभूमि थी। जिस तरह की चिंता को महादेवी अभिव्यक्त करना चाह रहीं थीं उसके लिए कविता विधा अनुपयुक्त साबित हो रही थी। यही कारण है कि वे कविता की दुनिया में अत्यंत प्रसिद्धि हासिल करने के बाद निबंध विधा में लिखना शुरू करती हैं।

महादेवी ने 'जीने की कला' निबंध के माध्यम से इस बात पर बल दिया है कि भारतीय समाज में सिद्धांत पक्ष पर तो अत्यधिक बल दिया गया है लेकिन उसके व्यावहारिक पक्ष को अनदेखा किया गया है। स्त्री की महिमा तथा उसके गौरवशाली इतिहास का जितना अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन भारत में मिलता है उतना किसी अन्य देश में नहीं प्राप्त हो सकेगा। लेकिन यहाँ स्त्री जितनी निरीह, अपने अधिकार से वंचित और दूसरे के ऊपर निर्भर है उतना किसी अन्य देश की स्त्री नहीं होगी। कथनी और करनी के बीच मौजूद भेद को समाप्त करने के लिए लेखिका स्त्रियों को प्रोत्साहित करती हैं कि वे अपने अधिक के प्रति सचेत हों और गलत को गलत कहना सीखें। जिसने इस संसार को इतना सुंदर और रहने के लायक गढ़ा है उसे खुले संसार में सांस लेने का अधिकार भी नहीं हैं। उनका मत है कि, *न स्त्री को अपने जीवन का कोई लक्ष्य बनने का अधिकार है और न समाज द्वारा निर्धारित विधान के विरुद्ध कुछ कहने का। उसका जीवन पुरुष के मनोरंजन तथा उसके वंशवृद्धि के लिए इस प्रकार चिरनिवेदित हो चुका है कि उसकी सम्मति पूछने कि आवश्यकता का अनुभव भी किसी ने नहीं किया। वातावरण भी धीरे-धीरे उसे ऐसे ही मूक आज्ञा-पालन के लिए प्रस्तुत करता रहता है।* महदेवी स्त्री के जिस सहज स्वभाव और निरीह दशा का वर्णन करती हैं उसे पढ़कर तुलसीदास की एक पंक्ति सहसा मानसपटल पर आवाजाही करने लगती है - *कत बिधि सृजीं नारि जग माहीं। पराधीन सपनेहुँ*

सुखु नाहीं॥ तुलसीदास का समय भारतीय इतिहास में मध्यकाल का रहा है। उस कालखंड में वे स्त्री के जिस स्वप्न सुख की चिंता कर रहे हैं उसमें लगभग चार सौ वर्ष के बाद भी कोई बदलाव दिखाई नहीं पड़ता है। महादेवी के समय तक स्त्री की स्थिति में कोई बहुत बड़ा परिवर्तन दिखाई नहीं पड़ता है। यही कारण है कि वे तुलसीदास से आगे बढ़कर अपने समाज की स्त्रियों को प्रतिरोध के लिए प्रेरित करती हैं।

14.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई की उपलब्धि यह है कि इसे पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित तथ्यों को अच्छी तरह समझकर अपनी भाषा में व्यक्त कर सकते हैं :

- ❖ महादेवी के गद्यकार व्यक्तित्व को इस इकाई में विस्तार से विवेचित एवं विश्लेषित किया गया है। कहना न होगा कि उनकी जीवन-शैली का वास्तविक प्रतिनिधित्व उनका गद्य साहित्य ही करता है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद इस तथ्य को आप अच्छी तरह व्यक्त कर सकते हैं।
- ❖ निबंध की अंतर्वस्तु के विचार-पक्ष और भाव पक्ष की विशेषताओं को समझने के साथ ही आप निबंधकार की वैचारिकी को तदयुगीन समाज के आलोक में ठीक ढंग से विश्लेषित कर सकते हैं।
- ❖ महादेवी के व्यक्तित्व की मूलभूत पूंजी कवि सुलभ भावुकता, नारी सुलभ कोमलता और सहृदयता है। इस इकाई के अध्ययन के बाद इस तथ्य को आप अच्छी तरह समझ कर अपनी भाषा में लिख सकते हैं।
- ❖ इस इकाई के माध्यम से आप निबंध के रचनाकालीन सामाजिक परिवेश को समझने के पश्चात् महादेवी के विचारों का वर्तमान संदर्भ में सही मूल्यांकन कर सकते हैं। उनकी रचनात्मक प्रतिबद्धता को नवीन अर्थ-संदर्भों में विवेचित कर सकते हैं।
- ❖ महादेवी की संरचना शिल्प के संदर्भ में इस इकाई में उनकी गद्य भाषा और काव्य भाषा पर विस्तार से विचार कर पाएंगे। उनके निबंधों में हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल प्रयोग पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। इस तथ्य को समझकर आप स्वयं उस पर समुचित विचार अपनी भाषा में प्रकट कर सकते हैं।
- ❖ महादेवी की शैली विवेचनात्मक है, लेकिन इसके लिए तर्क-वितर्क और व्याख्या-विश्लेषण की अपेक्षा उन्होंने स्वानुभूत भावों को ही विशेष रूप से आधार बनाया है। अतः उनकी विवेचनात्मक शैली में भावात्मक शैली का समावेश अत्यंत कुशलता के साथ हुआ है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इसे अच्छी तरह समझ कर विवेचित-विश्लेषित कर सकते हैं।
- ❖ निबंध के प्रयोजन को रेखांकित करते हुए उसे युगीन सदर्भों से जोड़ने का विशेष प्रयास इस इकाई में किया गया है। इसे समझकर आप निबंध के प्रयोजन को आसानी से अपनी भाषा में व्यक्त कर सकते हैं।

14.6 : शब्द संपदा

1.	ज्ञातव्य	:	जानने का विषय, जानने योग्य।
2.	तूलिका	:	रंग की कूची, ब्र
3.	श। तत्संबंधी	:	उससे संबंधित।
4.	टीका	:	अर्थ को स्पष्ट करने वाला, कुंजी या भाष्य।
5.	सापेक्ष	:	एक-दूसरे पर निर्भर, परस्पर निर्भर।
6.	हृदयंगम	:	हृदय का अंग बनाना, दिल से महसूस कराना।
7.	क्रोधजित	:	क्रोध को जीतने वाला या वश में करने वाला।
8.	कृपण	:	कंजूस ।
9.	निदर्शन	:	दर्शन कराने वाला, प्रकट करने वाला।
10.	विरत	:	उदासीन ।
11.	आहुति	:	बलिदान ।
12.	युगजीर्ण	:	युगों पुरानी, जर्जर, कमजोर।
13.	अर्धांगिनी	:	पत्नी,
14.	विडम्बना	:	मजाक, विरोधी स्थिति, उपहास
15.	क्रीतदासी	:	खरीदी गई सेविका ।
16.	मद्यप	:	शराबी ।
17.	परिचर्या	:	सेवा ।
18.	जन्मांतर	:	एक-जन्म से दूसरे जन्म तक।
19.	इंगित	:	इशारा, संकेत
20.	आश्चर्याभिभूत	:	आश्चर्य से भर जाना।
21.	अन्वेषक	:	खोज करने वाला, शोध करने वाला।
22.	निस्पंद	:	स्थिर, कंपनडीन
23.	पक्षाघात	:	लकवा
24.	सहिष्णुता	:	सहनशीलता
25.	निरीह	:	असहाय, बेचारा

26.	गर्हित	:	घातक, पीडादायक
27.	उपार्जन	:	कमाई
28.	यंत्रणा	:	पीडा
29.	चिरनिवेदित	:	बहुत पहले से निवेदित या समर्पित
30.	स्वत्व	:	अधिकार
31.	स्पृहणीय	:	चाही जाने योग्य
32.	अंतर्मुखी	:	अंतःकरण या मन में रहने वाली।
33.	बहिर्मुखी	:	बाहर की ओर उन्मुख या सामाजिक व्यवहार में आने वाली।
34.	झंझा	:	आँधी, तूफान
35.	मलय-समीर	:	चंदन की गंध से युक्त शीतल, मंद वायु
36.	कंटकाकीर्ण	:	काँटों से भरा हुआ।

12.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड - क

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए ।

1. महादेवी वर्मा ने भारतीय स्त्रियों की सोचनीय दशा का जिम्मेवार किसे बताया है?
2. 'जीने की कला' निबंध का प्रयोजन क्या है?
3. महादेवी की वैचारिकता को स्पष्ट कीजिए।

खंड - ख

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए ।

1. 'यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है' आशय स्पष्ट कीजिए।
2. महादेवी के गद्य की भाषा पर अपना विचार प्रस्तुत कीजिए।

खंड – ग

I सही विकल्प का चुनाव कीजिए

1. महादेवी की रचना है –

   अ) चिंतामणि आ) काव्य कला एवं अन्य निबंध इ) शृंखला की कड़ियाँ ई) कुछ विचार
2. *श्रृंखला की कड़ियाँ* का प्रकाशन कब हुआ था ?

अ) 1940 आ) 1952 इ) 1987 ई) 1942

3. महादेवी वर्मा को किस वर्ष भारतीय ज्ञानपीठ से सम्मानित किया गया?

अ) 1956 आ) 1982 इ) 1980 ई)1971

4. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने किस विधा को गद्य की कसौटी माना है?

अ) निबंध आ) कहानी इ) उपन्यास ई) जीवनी

II रिक्त स्थान पूर्ति कीजिए

1. महादेवी का जन्म फर्रुखाबाद के एक शिक्षित परिवार में सन् .... में हुआ था।
2. 'जीने की कला' निबंध .... नामक निबंध-संग्रह का अंतिम निबंध है।
3. महादेवी वर्मा ने 'जीने की कला' निबंध में .... चिंता को अत्यंत व्यापक सामाजिक संदर्भ प्रदान किया है।
4. समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर है और ज्ञान .... की अपेक्षा रखता है।

III सुमेल कीजिए

1. मेरा परिवार	क. विद्यानिवास मिश्र
2. शृंखला की कड़ियाँ	ख. काव्य-संग्रह
3. मेरे राम का मुकुट भींग रहा है	ग. निबंध
4. दीपशिखा	घ. संस्मरण

14. 8 : पठनीय पुस्तकें

1. वर्मा, महादेवी. (2014). श्रृंखला की कड़ियाँ
2. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र. (2016). हिन्दी साहित्य का इतिहास
3. भाटिया, कैलाशचंद्र. (1973*). निबंध निकष*
4. द्विवेदी, हरिहरनाथ. (1971). निबंध: सिद्धांत और प्रयोग
5. मदान, इंद्रनाथ. (1966). निबंध और निबंध

इकाई 15 : रामधारी सिंह 'दिनकर' : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 मूल पाठ : रामधारी सिंह 'दिनकर' : एक परिचय
15.3.1 रामधारी सिंह 'दिनकर' का जीवनवृत
15.3.2 रामधारी सिंह 'दिनकर' की रचनायात्रा
15.3.3 रामधारी सिंह 'दिनकर' की वैचारिक्ता के विविध आयाम
15.3.4 रामधारी सिंह 'दिनकर' का हिन्दी साहित्य में स्थान
15.4 पाठ सार
15.5 पाठ की उपलब्धियाँ
15.6 शब्द संपदा
15.7 परीक्षार्थ प्रश्न
15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' हिन्दी साहित्य में बहुत महत्वपूर्ण कवि एवं लेखक माने जाते हैं। उनके साहित्य में राष्ट्रीय, सांस्कृतिक एवं लोक कल्याण का उल्लेख किया गया है। वे एक निर्भीक साहित्यकार रहें हैं। उनके काव्य में राष्ट्रीय चेतना उभरकर आयी है। दिनकर ज्ञानपीठ एवं साहित्य अकादमी से पुरस्कृत हैं। वे भारतीय समाज की संस्कृति को भी बखूबी से वर्णन किया है। उनके रचनाओं में 'संस्कृति के चार अध्याय', 'कुरुक्षेत्र', 'उर्वेशी' आदि रचनाएँ प्रचलित हैं।

दिनकर ने साहित्य के साथ-साथ वे राजनीतिक के भी सदस्य रहें वे राज्यसभा के सदस्य भी रह चुकें हैं। बादमें भारत सरकार में हिन्दी सलाहगार के रूप में कार्य किया है। भारत स्वाधीनता संग्राम में भी प्रतिभागी के रूप में कार्य किया है। सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप में उभरकर आए हैं। राजनीतिक में भी सक्रिय रहे हैं। भारत सरकार में कई पदों पर कार्य किया है।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने से आप –

- रामधारी सिंह 'दिनकर' के जीवन परिचय से परिचित होंगे।
- दिनकर के रचनाओं से जान परिचित हो सकेंगे।
- दिनकर के वैचारिक को जान सकेंगे।
- रामधारी सिंह 'दिनकर' का हिन्दी साहित्य में स्थान के बारे में जान सकेंगे।

15.3 : मूल पाठ : रामधारी सिंह 'दिनकर' : एक परिचय

15.3.1 रामधारी सिंह 'दिनकर' का जीवनवृत

जन्म एवं मृत्यु –

रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म 23 सितम्बर 1908 में बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया नामक गाँव के भूमिहार परिवार में हुआ। उनकी मृत्यु 24 अप्रैल 1974 में हुई है।

परिवार -

रामधारी सिंह 'दिनकर' का परिवार एक साधारण कृषक परिवार था। उनके माता-पिता मनरूप देवी और बाबू रवि सिंह थे। दिनकर जब दो वर्ष के थे तभी उनके पिताजी का देहांत हो चूका था। दिनकर की माँ ने ही अपने बच्चों का पालन पोषण बहुत कठिनायों से किया। दिनकर चार भाई-बहन थे। तीन भाई और एक बहन। दिनकर का बचपन का नाम ननुआ था।

शिक्षा

रामधारी सिंह 'दिनकर' की प्रारंभिक शिक्षा संस्कृत से प्रारंभ हुई है। प्राथमिक शिक्षा अपने ही गाँव में हुई। बादमें आगे चलकर माध्यमिक शिक्षा मोकाम घाट के स्थानीय विद्यालय में हुई। 1928 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण हुए। स्नातक की पदवी पटना विश्वविद्यालय से प्राप्त की। दिनकर जी को इतिहास, राजनीति एवं दर्शनशास्त्र पसंदीदा विषय रहे हैं। इसी के साथ-साथ उन्होंने हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, बांग्ला, मैथिलि एवं अंग्रेजी साहित्य में भी गहन रूचि थी। दिनकर रवीन्द्रनाथ टैगोर, मोहम्मद इकबाल, किट्स एवं मिल्टन के कविताओं से प्रभावित थे।

दीक्षा –

रामधारी सिंह 'दिनकर' ने अपने जीवन में सबसे पहले विद्यालय के मुख्याध्यापक के रूप में कार्य की शुरुआत की। इसके बाद उन्होंने बिहार सरकार में विभिन्न पदों पर कार्य किया। दिनकर ने सन् 1934 से 1943 तक उप पंजीयक (रजिस्ट्रार) के पद पर दस साल तक कार्य किया। अंग्रेज सरकार में वे कार्य किए लेकिन उनमें राष्ट्रीय चेतना से भी ओतप्रोत होने के कारण उनका बार-बार स्थानांतरण होते रहा है। 1943 ऐ 1945 तक बिहार में प्रचार अधिकारी के रूप में कार्य किया। स्वतंत्र भारत में उन्होंने 1947 से 1950 तक उपनिदेशक जनसंपर्क के पद पर कार्य किया। बिहार में हिन्दी के प्रोफेसर के रूप में दो साल कार्य किया। बादमें वे राज्य सभा के सदस्य के रूप में निर्वाचित हुए। 1952 से लेकर 1964 तक संसद का सदस्य रह चुकें हैं। बादमें राज्य सभा के सदस्य का भी इस्तीफ़ा देकर भागलपुर विश्वविद्यालय में कुलपति के रूप में पद ग्रहण किया है। सन् 1965 में भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार के रूप में कार्य किया।

पुरस्कार -

रामधारी सिंह दिनकर को कई पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। दिनकर को सन 1959 को पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। उनकी 'संस्कृति के चार अध्याय' नामक पुस्तक को साहित्य अकादमिक पुरस्कार मिला है। 'उर्वशी' के लिए 1972 में 'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार' प्राप्त हुआ है।

बोध प्रश्न –

* रामधारी सिंह दिनकर का जन्म कब हुआ ?

15.3.2 रामधारी सिंह 'दिनकर' की रचना यात्रा

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' का नाम हिन्दी साहित्य में एक महत्वपूर्ण है। उन्होंने छात्र जीवन से ही लिखना प्रारंभ किया है। उनकी सबसे पहली रचना 'छात्र सहोदर' नाम से सन् 1924 में आयी है। दिनकर ने लगभग 40 के आसपास पुस्तकें लिखी हैं। वे साहित्य के अनेक विधाओं में लेखन का कार्य किया है। साहित्य के संबंधित दिनकर जी कहते हैं – "कलाकार की मानसिक अवस्था –विशेष में जीवन अपने जिस अर्थ में प्रकट होता है, उसी के भावमय चित्रण को हम साहित्य कहते हैं। जीवन अथवा प्रकृति का जो प्रतिबिम्ब हम साहित्य में देखते हैं, वह पहले कलाकार के ह्रदय पर पड़ा था। उस प्रतिबिम्ब ने कलाकार के ह्रदय का रस पिया है, उसकी कल्पना के रंग में भिनाकर सत्य की अपेक्षा अधिक सुन्दरता प्राप्त की है, कवि की निजी भावनाएँ उसमें समा गई हैं और तब कहीं जाकर उसे साहित्य बनने का सुयोग प्राप्त हुआ है।" निम्नलिखित उनकी रचनाओं से परिचित हो जाएंगे।

पद्य कृतियाँ -

बारदोली-विजय संदेश (1928), प्रणभंग (1929), रेणुका (1935), हुंकार (1938), रसवन्ती (1939), द्वंद्वगीत (1940), कुरूक्षेत्र (1946), धूप-छाँह (1947), सामधेनी (1947), बापू (1947), इतिहास के आँसू (1951), धूप और धुआँ (1951), मिर्च का मजा (1951), रश्मिरथी (1952), दिल्ली (1954), नीम के पत्ते (1954), नील कुसुम (1955), सूरज का ब्याह (1955), चक्रवाल (1956), कवि-श्री (1957), सीपी और शंख (1957), नये सुभाषित (1957), लोकप्रिय कवि दिनकर (1960), उर्वशी (1961), परशुराम की प्रतीक्षा (1963), आत्मा की आँखें (1964), कोयला और कवित्व (1964), मृत्ति-तिलक (1964), दिनकर की सूक्तियाँ (1964), हारे को हरिनाम (1970), संचियता (1973), दिनकर के गीत (1973), रश्मिलोक (1974), उर्वशी तथा अन्य शृंगारिक कविताएँ (1974)।

गद्य कृतियाँ -

मिट्टी की ओर 1946, चित्तौड़ का साका 1948, अर्धनारीश्वर 1952, रेती के फूल 1954, हमारी सांस्कृतिक एकता 1955, भारत की सांस्कृतिक कहानी 1955, संस्कृति के चार अध्याय 1956, उजली आग 1956, देश-विदेश 1957, राष्ट्र-भाषा और राष्ट्रीय एकता 1955, काव्य की भूमिका 1958, पन्त-प्रसाद और मैथिलीशरण 1958, वेणुवन 1958, धर्म, नैतिकता

और विज्ञान 1969, वट-पीपल 1961, लोकदेव नेहरू 1965, शुद्ध कविता की खोज 1966, साहित्य-मुखी 1968, राष्ट्रभाषा आंदोलन और गांधीजी 1968, हे राम! 1968, संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ 1970, भारतीय एकता 1971, मेरी यात्राएँ 1971, दिनकर की डायरी 1973, चेतना की शिला 1973, विवाह की मुसीबतें 1973, आधुनिक बोध 1973।

दिनकर किसी एक विशेष 'वाद' के पक्षधर कवि नहीं है। उनकी रचनाओं में अलग-अलग विषय प्रतिपादित होते हैं जैसे कि – रेणुका का अतीत गौरवगान, हुंकार में वर्त्तमान परिवेश के प्रति असंतोष, रसवंती, में सौंदर्य, सामधेनी में विश्वचेतना, नील कुसुम में नयी काव्यधारा अपनाने की लालसा और कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, उर्वशी में वेद-पुराण का प्रसंग आदि हैं।

दिनकर का रचना संसार व्यापक है उनके रचनाओं में जीवन, व्यष्टि, समष्टि, वेद, पुराण, धर्मग्रंथ, प्राचीन एवं अर्वाचीन वर्ग-संघर्ष सत्ता संघर्ष से संघर्ष राष्ट्र प्रेम, राष्ट्रभक्ति, संस्कृति और सभ्यता के सभी विषय प्रखर रूप से उनके साहित्य में निखरता हुआ देखायी देता है।

बोध प्रश्न –

- संस्कृति के चार अध्याय का प्रकाशन वर्ष क्या है ?

15.3.3 रामधारी सिंह 'दिनकर' की वैचारिक्ता के विविध आयाम

रामधारी सिंह 'दिनकर' के काव्य में अनेक विषयों को प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने समाज के यथार्थ रूप को दर्शाने का कार्य किया है। उनके रचनाओं में विविध आयामों को देखा जा सकता है।

राष्ट्रीय चेतना –

रामधारी सिंह 'दिनकर'एक राष्ट्र भक्त कवि माने जाते हैं। अंग्रेजों के अत्याचारों से भारतीय समाज शोषित था इसलिए दिनकर कहते हैं कि अहिंसक आंदोलन से कुछ नहीं होता इसलिए उन्होंने अपनी 'हिमालय' शीर्षक कविता में शौर्य तथा शक्ति के लिए आहवान करते हैं –

रे रोक युधिष्ठर को न यहाँ
जाने दे उनको स्वर्ग धीर
पर फिर हमें गांडीव गदा
लौटा दे अर्जुन भीम वीर।
तू मौन त्याग, कर सिंहनाद
रे तपी आज ताप का न काला
नव-युग शंख-ध्वनि कर जगा रही
तू जान, जान मेरे विशाल - (हुंकार)

दिनकर के कव्योया में राष्ट्रीयता कूट-कूटकर भरी हुई है। वे अहिंसा के समर्थन में नहीं है इस लिए वे गांधी के अहिंसा का विरोध करते हैं वे अपनी 'महामानव की ख़ोज' कविता में गांधी के विचारधारा पर प्रहार करते हैं –

उब गया हूँ देख चतुर्दिक अपने
अजा धर्म का ग्लानि वहीन प्रवृतन
युग सातम सुबद्ध पुनः कहता है
ताप कलुष है। आशा बुझा दो मन की।

'परशुराम की प्रतीक्षा' कविता के माध्यम से दिनकर ने देशवासियों से राष्ट्र की रक्षा के लिए प्रोत्साहित करते हैं –

दासत्व जहाँ है, वहीं स्तब्ध जीवन है,
स्वातंत्रय निरंतर समर, सनातन रण है।

शोषितों के प्रति संवेदना-

दिनकर प्रगतिशील काव्यधारा के कवि के रूप में भी प्रमुख हैं। उन्होंने अपने साहित्य में सर्वहारा वर्ग का वर्णन किया है। उनकी कविताओं में दलित, शोषित किसान, मजदूरों के प्रति सहानुभूति को देखने को मिलता है। दिनकर जी सामाजिक परिस्थितियों को अच्छा से देखा है। वे जानते हैं कि गरीबी क्या होती है? श्रमिक दिन-रात काम करने पर भी उसे शरीर ढंकने के लिए भी कपड़ा नहीं होता है। यह सब दयनीय स्थिति को देखकर कवि का हृदय ओजस्वी स्वर में फुट पड़ते हैं –

श्वानों को मिलता वस्त्र दूध, भूखे बच्चे अकुलाते है।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर जाड़ों की रात बिताते हैं।
युवती की लज्जा वसन बेच, जब ब्याज चुकाए जाते है।
मालिक जब तेल फुलेलों पर पानी ज्यों द्रव्य बहते हैं।
पापी महलों का अहंकार देता मुझको तब आमंत्रण ।

सांस्कृतिक चेतना –

जिस तरह से दिनकर के रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना को देखा जाता है उसी तरह से सांस्कृतिक चेतना भी इनके रचनाओं में देखा जाता है। उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयाँ को दूर करने का प्रयास किया है। दिनकर को भारतीय संस्कृति का बड़ा गर्व था। लेकिन केवल अतीत की घटनाओं का स्मरण कर ही वे नहीं रुकने वाले थे। अतीत की घटनाओं का उदहारण देकर वर्त्तमान समय में समाजोपयोगी कार्य के लिए उन्होंने काव्य के माध्यम से भारतीय जनता के सामने कई प्रश्न रखें उन्होंने यह प्रश्न रखा कि क्या केवल जाति वंश के आधार पर ही व्यक्ति को प्रगति का अवसर दिया जायेगा? क्या परंपरा को अपना कर ही राष्ट्र की उन्नति संभव है? क्या भारतीय जनता को प्रगति का सामना अवसर नहीं दिया जायेगा? इन सभी प्रश्नों के माध्यम से जनता में सांस्कृतिक चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है।

'संस्कृति के चार अध्याय' में दिनकर बुद्ध से पहले के हिंदुत्व, बौद्ध धर्म के उदय, वैदिक-बौद्ध संस्कृति के विवाद, बोद्ध साधना पर शाक्त प्रभाव, बौद्ध आंदोलन की सामाजिकता, हिन्दू-मुस्लिम-ईसाई संबंध, भक्ति आंदोलन और इस्लाम, सिक्ख धर्म, कला- शिल्प पर इस्लमा के प्रभाव, उर्दू के जन्म, यूरोपीय संस्कृति के प्रभाव, ब्रह्म समाज और नवजागरण, ब्रह्म विद्या

समाज, तिलक अरविंद गांधी के अवदान, इकबाल, भारतीय राष्ट्रीयता और मुसलामन जैसे विषयों पर विचार करते हैं। दिनकर ने बुद्ध के मूल मंत्र को महत्वपूर्ण मानते हैं वे 'सवार उपरे मानुष' में संदेश देते हैं –

श्रेय वह विज्ञान का वरदान ,
हो सुलभ सबको सहज जिसका रुचिर अवदान।
श्रेय वह नर-बुद्धि का शिव-रूप अविष्कार,
ढो सके जिसके प्रकृति सबके सुखों का भार ।
मनुज के श्रम के अपव्यय की प्रथा रुक जाए।

मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा –

मानवीय भावनाओं से संबंधित घटित घटनाओं को मानवीय मूल्यों के अंतर्गत माना जाता है। दया, धर्म, त्याग, परोपकार, दान ऐसे कई तत्व मानवीय मूल्यों के अंतर्गत आते हैं। दिनकर के कुरुक्षेत्र में देखा गया है और कामना की है कि संसार के सब लोग एक दूसरों से प्यार से रहें। धर्म और कर्म मानव कल्याण के सशक्त साधन है। प्राचीन भारत में इन मानवीय मूल्यों का बहुत महत्त्व था। इसलिए लोग परस्पर प्रेम से रहते थे, एक दूसरे के दुःख सुख को बाँट लेते थे। कवि कामना करता है कि वह सुखद समय फिर से लौट आए –

नर नर का प्रेमी था, मानव मानव का विश्वासी
अपरिग्रह का नियम, लोग थे कर्म-लीन सन्यासी।
बंधे धर्म के बंधन में सब लोग जिया करते थे,
एक दूसरे का दुख हँसकर बाँट लिया करते थे।

दिनकर के काव्य में अनेक तरह की वैचारिकी को प्रस्तुत किया गया है। वे विभिन्न ज्ञान से जानकर थे। इसलिए उनके काव्य में सामाजिक सभी तत्वों का विचार दिखायी देता है।

बोध प्रश्न –

- दिनकर के काव्य में मानवीय मूल्य को बताइए।

15.3.4 रामधारी सिंह 'दिनकर' का हिन्दी साहित्य में स्थान

रामधारी सिंह 'दिनकर' ने कई रचनाएँ कई विधाओं में लिखकर हिन्दी साहित्य विकास को बढ़ावा दिया है। हिन्दी साहित्य में दिनकर एक महत्वपूर्ण पद्य कवि एवं गद्य लेखक के नाम से प्रसिद्ध हैं। उन्होंने अपने रचनाओं के माध्यम से भारतीय राष्ट्रीयता एवं सांस्कृतिक मूल्यों को प्रस्तुत करने का कार्य किया है। हिन्दी साहित्य के साथ-साथ दिनकर ने ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक ग्रंथों की भी रचना कियी है। इन्होंने अपने लेखन के माध्यम से समाज के यथार्थ को प्रस्तुत किया है। उन्होंने समाज को प्रमुख स्थान दिया है।

दिनकर की ह्रदय की विशालता उन्हें राष्ट्रकवि ही नहीं बल्कि महान गद्यकार, चिंतक, संस्कृति-विद्वान और सबसे बढ़कर एक अच्छा इंसान बनाती है। ऐसा इंसान जिसे आम जन-जीवन की चिंता है, देश, समाज, संस्कृति और विश्व चिंता है। युद्ध जैसे वैश्विक समस्या को

लिखी गई उनकी कृति 'कुरुक्षेत्र' है। इसमें हार तो मानवता को ही झेलना पड़ता है। मानवता की रक्षा के लिए लेखनी उठाना एक महान कार्य हैं।

दिनकर के रचनाओं के माध्यम से आम जनता को अपार उर्जा और प्रेरणा मिलती है। रचाना के माध्यम से राष्ट्रीय भावना की घोषणा करने वाले दिनकर चिरयुवा हैं। इनके रचनाओं में नारी का भी चित्रण प्रस्तुत किया गया है। दिनकर जी कहते है कि नारी के भीतर एक और नारी है, जो अगोचर और इन्द्रियातीत है। इस नारी का संधान पुरुष तब पाता है, जब शरीर की धारा, उछालते-उछालते, उसे मन के समुद्र में फेंक देती है, जब दैहिक चेतना से परे, वह प्रेम की दुर्गम समाधि में पहुँच कर निस्पंदन हो जाता है।

दिनकर एक बहु आयामी कवि एवं लेखक हैं। उनकी दृष्टि हर क्षेत्र में प्रवेश कियी हुई है। वे समाज के प्रत्येक समस्या का सूक्ष्मता से परखने की कोशिस की है। इनके रचनाओं से आम आदमी में चेतना जागृत होने को उत्साहित रहता है। समग्र साहित्य में मानवता, राष्ट्रीयता, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं ऐतिहासिक पहलू को दर्शाने का कार्य किया है। दिनकर कवि एवं लेखक के रूप में हिन्दी साहित्य में सक्षम थे। उन्होंने अपने रचनाओं से हिन्दी साहित्य विकास में योगदान दिया है।

बोध प्रश्न –

- रामधारी सिंह दिनकर का हिन्दी साहित्य में महत्त्व को बताइए।

15.4 : पाठ सार

रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म 23 सितम्बर 1908 में बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया नामक गाँव के भूमिहार परिवार में हुआ। रामधारी सिंह 'दिनकर' का परिवार एक साधारण कृषक परिवार था। उनके माता-पिता मनरूप देवी और बाबू रवि सिंह थे। रामधारी सिंह 'दिनकर' की प्रारंभिक शिक्षा संस्कृत से प्रारंभ हुई है। प्राथमिक शिक्षा अपने ही गाँव में हुई।

दिनकर जी को इतिहास, राजनीति एवं दर्शनशास्त्र पसंदीदा विषय रहे हैं। इसी के साथ-साथ उन्होंने हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, बांग्ला, मैथिलि एवं अंग्रेजी साहित्य में भी गहन रूचि थी। दिनकर रवीन्द्रनाथ टैगोर, मोहम्मद इकबाल, किट्स एवं मिल्टन के कविताओं से प्रभावित थे। उन्होंने बिहार सरकार में विभिन्न पदों पर कार्य किया। बिहार में हिन्दी के प्रोफेसर के रूप में दो साल कार्य किया। बादमें वे राज्य सभा के सदस्य के रूप में निर्वाचित हुए। 1952 से लेकर 1964 तक संसद का सदस्य रह चुकें हैं। कुलपति के रूप में भी कार्य किया। अंततः वे भारत सरकार में हिन्दी के सलाहकार के रूप में कार्य किया है। पद्मभूषण एवं ज्ञानपीठ पुस्कृत हैं।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' का नाम हिन्दी साहित्य में एक महत्वपूर्ण है। उन्होंने छात्र जीवन से ही लिखना प्रारंभ किया है। उनकी सबसे पहली रचना 'छात्र सहोदर' नाम से सन् 1924 में आयी है। दिनकर ने लगभग 40 के आसपास पुस्तकें लिखी हैं। दिनकर का रचना संसार व्यापक है उनके रचनाओं में जीवन, व्यष्टि, समष्टि, वेद, पुराण, धर्मग्रंथ, प्राचीन

एवं अर्वाचीन वर्ग-संघर्ष सत्ता संघर्ष से संघर्ष राष्ट्र प्रेम, राष्ट्रभक्ति, संस्कृति और सभ्यता के सभी विषय प्रखर रूप से उनके साहित्य में निखरता हुआ देखायी देता है।

दिनकर के काव्य में अपार उर्जा और प्रेरणा के ओजस्वी स्वर हैं। दिनकर एक बहु आयामी कवि एवं लेखक हैं। उनकी दृष्टि हर क्षेत्र में प्रवेश कियी हुई है। वे समाज के प्रत्येक समस्या का सूक्ष्मता से परखने की कोशिस की है। इनके रचनाओं से आम आदमी में चेतना जागृत होने को उत्साहित रहता है। समग्र साहित्य में मानवता, राष्ट्रीयता, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं ऐतिहासिक पहलू को दर्शाने का कार्य किया है। दिनकर कवि एवं लेखक के रूप में हिन्दी साहित्य में सक्षम थे। उन्होंने अपने रचनाओं से हिन्दी साहित्य विकास में योगदान दिया है।

15.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन निम्नलिखित उपलब्धियाँ प्राप्त हुई –

- रामधारी सिंह 'दिनकर' का जीवन परिचय प्राप्त किए हैं।
- दिनकर के रचनाओं से परिचित हुए हैं।
- दिनकर के वैचारिकी के बारे में जान चुकें हैं।
- दिनकर का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान के बारे में जानकारी प्राप्त कर चुकें हैं।
- दिनकर एक राष्ट्रीय कवि के रूप में माने जाते हैं। ।

15.6 : शब्द संपदा

1.पंजीयक -	किसी संस्था अथवा विभाग के अभिलेख, कुलसचिव, (रजिस्ट्रार)
2. स्थानांतरण -	स्थान परिवर्तन, तबादला, बदली (ट्रांसफर)
3. उपनिदेशक -	वह जो निदेशक के बाद प्रमुख अधिकारी हो (डिप्टी डायरेक्टर)
4. कुलपति -	किसी विश्वविद्यालय का प्रधान अधिकारी, (वाईस चांसलर)
5. प्रतिबिम्ब -	छाया, परछाई, प्रतिच्छाया
6. गौरव -	सम्मान, आदर, इज्जत, मर्यादा गरिमा आदि
7. समष्टि -	सबका सम्मिलित और सामूहिक रूप, एक जैसी वस्तुओं का समूह
8. अर्वाचीन -	आधुनिक, वर्त्तमान, नया
9. अहिंसक -	जो हिंसा न करता हो, करुणामय, दयालु
10. शोषित -	जिसका शोषण किया गया हो, शोषण का शिकार होने वाला व्यक्ति
11. कलुष -	दूषित अथवा मलिन होने की अवस्था या भाव, मैल, मलिनता
12. अकुलाना -	परेशान होना, आकुल होना, बेचन होना
13. लज्जा -	शरम, लाज, मान-मर्यादा, इज्जत

14. वसन - वस्त्र, कपड़ा, आवरण

15. वरदान - खुश होकर अभिलाषित वस्तु प्रदान करने की अवस्था या भाव, कृपा

16. अपरिग्रह - किसी से कुछ ग्रहण न करना, दान का अस्वीकार, त्याग

17. संन्यासी - वह जो संन्यास ले चूका हो. संन्यास आश्रम में रहनेवाला ।

18. चिरयुवा - लंबी आयु वाला युवा,

15.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए ।

1. रामधारी सिंह 'दिनकर' का जीवन परिचय दीजिए।
2. रामधारी सिंह 'दिनकर' के गद्य रचनाओं पर प्रकाश डालिए।
3. रामधारी सिंह 'दिनकर' के पद्य रचनाओं पर प्रकाश डालिए ।
4. दिनकर की वैचारिकता पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए ।

1. रामधारी सिंह 'दिनकर' के काव्य राष्ट्रीय चेतना को स्पष्ट कीजिए ।
2. रामधारी सिंह 'दिनकर' के काव्य में सांस्कृतिक को स्पष्ट कीजिए।
3. दिनकर के काव्य में शोषित समाज पर प्रकाश डालिए ।
4. दिनकर का हिन्दी साहित्य में स्थान के बारे में चर्चा कीजिए।

खंड (स)

I. **सही विकल्प चुनिए।**

I. 'हुंकार' रचना का प्रकाशन वर्ष क्या है ?

(अ) 1925 (ब) 1940 (क) 2000 (ड)1938

2. रामधारी सिंह 'दिनकर' के पिताजी का नाम क्या है ?

(अ) धोंडोपंत (ब) नाना फडनवीस (क) बाबू रवि सिंह (ड) लक्ष्मुन

3. दिनकर को 'पद्मभूषण' से किस वर्ष सम्मानित किया गया ?

(अ) 2000 (ब) 1959 (क) 2008 (ड) 1984

4. दिनकर के किस रचना को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला है ?

(अ) उर्वशी (ब) हुंकार (क) संस्कृति के चार अध्याय (ड) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. 'उर्वशी' का प्रकाशन वर्ष ________ है।
2. दिनकर का जन्म __________ वर्ष हुआ।
3. दिनकर ने कुलपति के रूप में ________ विश्वविद्याल में कार्य किया।
4. 'संस्कृति के चार अध्याय' का प्रकाशन वर्ष ____________हैं।

III. सुमेल कीजिए।

1.	हुंकार	(अ)	1961
2.	पद्मभूषण	(ब)	1956
3.	संस्कृति के चार अध्याय	(क)	1959
4.	उर्वशी	(ड)	1938

15.8 : पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी का गद्य साहित्य – डॉ. रामचंद्र तिवारी
2. दिनकर के काव्य में युग चेतना – डॉ. पन्ना
3. दिनकर : सृजन और चिंतन – डॉ. रेणु व्यास
4. दिनकर – डॉ. सावित्री सिन्हा

इकाई 16 : रामधारी सिंह 'दिनकर' के निबंध 'भारत की सांस्कृतिक एकता' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 मूल पाठ : रामधारी सिंह 'दिनकर' के निबंध 'भारत की सांस्कृतिक एकता' की विवेचना
16.3.1 भारत की सांस्कृतिक एकता निबंध का प्रयोजन
16.3.2 निबंध में व्यक्त वैचारिकता
16.3.3 निबंध का भाषा सौष्ठव
16.3.4 निबंध का शैली सौंदर्य
16.4 पाठ का सार
16.5 पाठ की उपलब्धियाँ
16.6 शब्द-संपदा
16.7 परिक्षार्थ प्रश्न
16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

रामधारी सिंह 'दिनकर' बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार थे। उत्कृष्ट साहित्यकार, परम देशभक्त, प्रतिष्ठित संसदविद, विख्यात शिक्षाविद एवं सम्मानित दार्शनिक के साथ-साथ प्रगतिवादी और मानवतावादी प्रख्यात कवि थे। कहने में अतिशयोक्ति न होगी की स्वतंत्रता पूर्व उन्होंने अपनी प्रेरणादाई एवं राष्ट्रभक्ति की रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रवाद की भावना जागृत की। दिनकर स्वतंत्रता पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतंत्रता के बाद 'राष्ट्रकवि' के नाम से जाने गए।

ऐसे महान कवि का जन्म 23 सितंबर 1908 को बिहार के बेगूसराय जिले के सिमरिया गांव के भूमिहार ब्राह्मण परिवार में हुआ। बाल्यावस्था में ही उनकी काव्य प्रतिभा का परिचय हो गया था। स्कूल में पढ़ते हुए 'वीरबाला' नामक काव्य की रचना कर डाली थी। मैट्रिक में पढ़ते समय इनका 'प्राणभंग' नामक काव्य प्रकाशित हो गया था। स्कूली शिक्षा के समय शुरू हुआ यह साहित्य का सफर आगे फलता और फूलता गया। कविता के क्षेत्र में दिनकर जी 'वीर रस' के कवि के रूप में प्रसिद्ध हुए। वह उत्कृष्ट कोटि के ही नहीं बल्कि उच्च कोटि के गद्यकर भी थे। इन्होंने अपने काव्य में देश के प्रति असीम राष्ट्रीय भावना का परिचय दिया है। राष्ट्रीय भावनाओं पर आधारित इनका साहित्य भारतीय साहित्य की अनमोल धरोहर है। उनकी गणना विश्व के महान साहित्यकारों में की जाती है।

दिनकर जी अपने साहित्य में ऐतिहासिक पात्रों के ताने-बाने से 'राष्ट्रीय चेतना' जगाने का कार्य किया है। उनकी प्रमुख रचनाओं में 'रेणुका', 'हुंकार', 'सामधेनी', 'रूपवंती', 'कुरुक्षेत्र', 'रश्मिरथी', 'उर्वशी', 'परशुराम की प्रतीक्षा', 'अर्धनारीश्वर', 'रेती के फूल', 'हमारी सांस्कृतिक

एकता', 'राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता', 'काव्य की भूमिका', 'पंत,प्रसाद और मैथिलीशरण', 'वेणुवन', 'वट-पीपल', 'शुद्ध कविता की खोज', 'धर्म, नैतिकता और विज्ञान', 'साहित्यमुखी', 'भारतीय एकता', 'आधुनिक बोध', 'विवाह की मुसीबतें', 'लोक देव नेहरू', 'राष्ट्रभाषा आंदोलन और गांधीजी', 'उजली आग', 'मिट्टी की ओर', 'संस्कृति के चार अध्याय', 'चेतना की शिखा', 'देश-विदेश' आदि कृतियां हैं जिनमें यात्रा-वृतांत और संस्मरण के बीच-बीच में वैचारिक निबंध भी गुंफित है।

दिनकर जी ने अपने जीवन काल में विविध पदों को विभूषित किया। जिनमें मोकाम घाट हायस्कूल में 1 वर्ष तक प्राचार्य रहे। कुछ समय पश्चात मुजफ्फरपुर कॉलेज में हिन्दी विभाग अध्यक्ष के रूप में नियुक्त हुए। कुछ समय तक वह रजिस्ट्रार के पद पर भी आसीन रहे। सन 1952 में दिनकर जी को राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया गया। उसके पश्चात वह भागलपुर विश्वविद्यालय के कुलपति के पद पर आसीन रहे। इसके बाद भारत सरकार के गृह मंत्रालय में हिन्दी सलाहकार मनोनीत हुए। सन 1947 में वह बिहार सरकार के जनसंपर्क विभाग में उपनिदेशक बने। दिनकर जी ने आकाशवाणी के निर्देशक रूप में भी कार्य किया है। अपनी बुद्धिमत्ता और कार्य कुशलता से इन्होंने विविध पदों पर कार्य कर अपनी प्रतिभा की झलक दिखाई।

रामधारी सिंह 'दिनकर' जी के लेखनी से जन्में साहित्य कृतियों को विविध हा सम्मानों से सम्मानित किया गया है। जिनमें 'उर्वशी' महाकाव्य को उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना माना जाता है। इसके लिए उन्हें 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से और 'संस्कृति के चार अध्याय' के लिए 'साहित्य अकादमी' सम्मान से नवाजा गया है। अपने कार्य और सेवा के लिए सन 1959 में भारत सरकार की ओर से 'पद्मविभूषण' पुरस्कार की उपाधि से अलंकृत किया गया। काव्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट कृतियों के लिए दिनकर जी को अनेक अन्य पुरस्कार मिले हैं जिनमें 'कुरुक्षेत्र' और 'रश्मिरथी' के लिए 'नागरी प्रचारिणी सभा काशी' द्वारा इन्हें दो बार 'द्विवेदी पदक' दिया गया। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 'नील कुसुम' के लिए और 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद' द्वारा 'मिर्च का मजा' रचना को पुरस्कृत किया गया है। भागलपुर विश्वविद्यालय ने उन्हें 'डि.लीट.' की उपाधि से सम्मानित किया।

कलम के धनी इस साहित्यकार ने गद्य विधा में राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत कृतियों की रचना की है। इनमें भारतीय संस्कृति की गौरव गाथा और एकता पर वैचारिक लेख, निबंध, आलोचनात्मक टिप्पणियां आदि की प्रमुखता दिखाई देती है। दिनकर जी के आज हम एक ऐसे ही वैचारिक निबंध 'भारत की सांस्कृतिक एकता' का अध्ययन करेंगे।

16.2 : उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

1)भौगोलिक दृष्टि से प्राकृतिक विविधता में बंटे भारत को समझ सकेंगे।

2) भाषायी दृष्टिकोण से भारतीय भाषाओं से परिचित होंगे।

3) जलवायु के अनुसार खान-पान, पहनावा- ओढावा तथा रीति-रिवाज की विविधता से परिचित हो सकेंगे।

4) प्राचीन भारत की सांस्कृतिक गौरवगाथा को समझ पाएंगे।

5) अनेक विविधता होने के बावजूद भावनात्मक एकता से जुड़े रहना ही हमारी एकता है यह जान पाएंगे।

6) 'विचारों की एकता जाति की सबसे बड़ी एकता होती है' यह समझ पाएंगे।

7) भारत की सांस्कृतिक एकता को समझ पाएंगे।

16.3 : मूल पाठ : 'भारत की सांस्कृतिक एकता' की विवेचना

रामधारी सिंह दिनकर जी को 'राष्ट्रकवि' की उपाधि से नवाजा जाता है। उन्होंने हमेशा से ही राष्ट्रीय हित को सर्वप्रथम रखा है। उन्होंने वैचारिक निबंधों के माध्यम से भारत को एक संघ बनाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। 'भारत की सांस्कृतिक एकता' इस वैचारिक निबंध का हेतु भी यही रहा है। रामधारी सिंह जी कहते हैं कि, "अक्सर कहा जाता है कि भारतवर्ष की एकता उसकी विविधता में छिपी हुई है।" यह कहना गलत नहीं है क्योंकि यह विविधता प्रकट रूप में माने दृश्यमान है। इसमें कुछ भी ढपा या छिपा नहीं है। ना ही हम प्रकट चीजों को छुपाने का असफल प्रयास कर सकते हैं। दिनकर जी कहते हैं कि एक बार भारत के नक्शे को ध्यान से देखने की आवश्यकता है। देखते समय ही हमें साफ दिखाई देगा कि देश के तीन हिस्से प्राकृतिक रूप में स्पष्ट है। इसमें सबसे पहले तो भारत का उत्तरी भाग है जो लगभग हिमालय दक्षिण से लेकर विंध्याचल के उत्तरी तक फैला हुआ है। उसके बाद विंध्य से लेकर कृष्णा नदी के उत्तर तक फैला हुआ है जिसे हम दक्षिणी प्लेटो कहते हैं। इस प्लेटों के दक्षिण कृष्णा नदी से लेकर कन्याकुमारी तक का जो भाग है वह प्रायद्वीप जैसा है। यह तीन हिस्से साफ तौर पर दिखाई देते हैं। प्रकृति ने भारतवर्ष के यह जो तीन खंड किए हैं वही खंड भारतवर्ष के इतिहास के भी तीन क्रीड़ास्थल रहे हैं।

अगर हम पुरातन समय के इतिहास में झांकें तो हमें दिखाई देता है कि उत्तर भारत में जो राज्य कायम हुए उनमें से ज्यादातर विंध्य पर्वत की उत्तरी सीमा तक ही फैल कर रहे गए। इस विंध्य पर्वत को लाँघ कर उत्तर भारत को दक्षिण भारत से मिलने के प्रयास तो बहुत किए गए किंतु इस कार्य में सफलता किसी-किसी राजाओं को ही मिली है। क्योंकि यह कार्य भौगोलिक रूप में बहुत ही कठिन था। इसके लिए विशेष प्रयास करने पड़े हैं। कहा जाता है कि इसकी पहल अगस्त्य ऋषि ने विंध्याचल को पार करके दक्षिण के लोगों को अपना संदेश सुनाया था। उसके पश्चात भगवान श्री रामचंद्र जी ने लंका पर चढ़ाई करने हेतु विंध्याचल को पार किया था। महाभारत के समय में उत्तर और दक्षिण भारत के अंश एक राज्य के अधीन थे या नहीं इसका कोई पक्का सबूत नहीं मिलता। लेकिन रामचंद्र जी ने उत्तरी और दक्षिणी भारत के बीच एकता स्थापित की थी। यही एकता महाभारत काल में भी कायम रही और दोनों हिस्सों के लोग आपस में मिलते-जुलते रहते थे। महाराज युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ में दक्षिण के राजा भी आए थे और कुरुक्षेत्र के मैदान में जो युद्ध हुआ था। उसमें भी दक्षिण के कई वीरों ने हिस्सा लिया था। इसके प्रमाण महाभारत में मिलते हैं।

प्राचीन भारत से लेकर मध्य युग तक कई प्रमाण दिखाई देते हैं जो भारत को उत्तर से लेकर दक्षिण तक एक संघ बनाने प्रयत्नरत रहे हैं। जिसमें महाराज चंद्रगुप्त, सम्राट अशोक, सम्राट विक्रमादित्य और उसके बाद मुगलों ने भी इस बात के लिए बड़ी कोशिश की यह देश एक छत्र, एक शासन के अधीन लाया जा सके और उन्हें इस कार्य के लिए सफलता भी मिली है। परंतु भारत के इतिहास की एक शिक्षा यह भी है कि देश को 'एक संघ' रखने की जो भी सफलता जिन-जिन राजाओं को मिली वह ज्यादा दिनों तक टिकाऊ नहीं रही। इस देश के प्राकृतिक ढांचे में ही कुछ ऐसी बात है जो उसे एक संघ रखने में बाधा बन जाता है। यही कारण था कि जब भी कोई बलवान,सामर्थ्यशील, दूरदर्शी राजा इस काम को अविरत करते रहा उसे इस कार्य में थोड़ी बहुत सफलता जरूर मिली। लेकिन स्वार्थी और अदूरदर्शी और कमजोर राजाओं के आते ही देश की एकता टूट गई। इसी प्रकार जो मुश्किलें विंध्य के उत्तर को विंध्य के दक्षिण में जोड़ें रखने में हुई वहीं मुश्किलें कृष्णा नदी के उत्तर भाग को उसके दक्षिण भाग से मिलाकर एक रखने में होती रही है।

भारतवर्ष में वैर और फूट का भाव इतना प्रबल क्यों रहा है इसका भी कारण है। बड़े-बड़े पहाड़ और नदियां गुणों से भरपूर होती है किंतु वह प्रांतों की विभाजन रेषा भी बन जाती है। ऐसे में एक प्रदेश दूसरे से अलग हो जाता है। ऐसे क्षेत्रों में क्षेत्रीय भावना पनपती है जो एक को दूसरे से अलग या उच्च मानने लगते हैं। यही वैर का या फुट का मुख्य कारण बन जाता है। अगर हम भारतवर्ष के ऊपरी छोर की बात कहे तो वहां कश्मीर है। जिसकी जलवायु मध्य एशिया की जलवायु समान है। इसके विपरीत दक्षिणी छोर है जहां की घरों की रचना और लोगों का रंग-रूप श्रीलंका के लोगों से मिलता जुलता है। देश में चेरापूंजी जैसी जगह है जहां सबसे ज्यादा बारिश होती है तो दूसरी ओर थार का मरुस्थल है जहां न के बराबर बारिश होती है।

जलवायु, प्राकृतिक भेद भौगोलिक संरचना के कारण लोगों के रहन-सहन, खान-पान, पोशाक पद्धति में भी विविधता आती है। इन सब भेदों को मिटाकर हम सब एक राष्ट्रीय ढंग चलाना चाहे तो उससे बहुत से लोगों को तकलीफ हो सकती है। उदाहरण के तौर पर रोटी और उड़द की दाल या फिर रोटी और मांस को देश का भोजन बनाए तो पंजाबी लोग तो मजे में रहेंगे। यह उनकी जलवायु के अनुकूल है। लेकिन बिहार और बंगाल के लोगों का हाल बुरा हो जाएगा। इसी तरह अगर यह कानून बना दे की हर हिंदुस्तानी को चप्पल ही पहनना होगा तो कश्मीर के लोग घबरा उठेंगे। क्योंकि कश्मीर में पहाड़ों पर चलते समय चप्पल से ठीक-ठाक तरह चल नहीं सकते। वहां जूतो का ही अधिक मात्रा में उपयोग होता है। इसी तरह पोशाकों का भी है। अपनी सुविधा के अनुसार पोशाके पहनी जाती है।

हमारे देश की विविधता का सबसे बड़ा एक और लक्षण है। अनेक प्रकार की भाषा। विविध राज्यों में अपनी-अपनी प्रांतीय भाषाओं का उपयोग होता है। उत्तर भारत की भाषाओं ने कुछ मात्रा में आपस में संपर्क साधने का कार्य किया है। किंतु कोई दक्षिण भारतीय उत्तर भारत में या कोई उत्तर भारतीय दक्षिण आ जाए तो मातृभाषा के सिवा अन्य भाषा नहीं जानता हो तो वह सचमुच में बड़ी मुश्किल में पड़ जाएगा। 'भाषा-भेद की यह समस्या हमारी राष्ट्रीय एकता की सबसे बड़ी बाधा है।'

विज्ञान के कारण अब प्राकृतिक बाधाएँ खत्म हो गई है। जिस कारण प्रांतीय मोह अब काम हो रहा है। दिनकर जी कहते हैं कि, “मगर, भाषा-भेद की समस्या जरा कठिन है और उसका हल तभी निकलेगा जब हिन्दी भाषा का अच्छा प्रचार हो जाए। सौभाग्य की बात है कि इस दिशा में काम शुरू हो गए हैं और कुछ समय बीतते-बीतते हम इस बाधा पर भी विजय प्राप्त कर लेंगे।”

अब तक हमने भारत की विविधता के दर्शन किए आप इस विविधता में छपी एकता के करने हैं। सबसे अहम बात है कि हम संविधान में स्वीकृत भाषा और अनेक बोलियां बोलते हैं। किंतु अलग-अलग भाषाओं के भीतर बहने वाली हमारी भावनधारा एक है, तथा हम प्रायः एक ही तरह के विचारों और कथा वस्तुओं को लेकर अपनी-अपनी भाषा में साहित्य रचना करते हैं। रामायण और महाभारत को लेकर प्राय सभी भाषाओं के बीच अद्भुत एकता मिलेगी। इसके अलावा संस्कृत और प्राकृत में भारत का जो साहित्य लिखा गया था। उसका प्रभाव सभी भाषाओं की जड़ में कार्य करता है।

हमारी एकता का दूसरा प्रमाण यह है उत्तर से लेकर दक्षिण तक आपको एक ही संस्कृति के मंदिर दिखाई देते हैं। धार्मिक रीति-रिवाज, चंदन लगाना, पूजा-अर्चा, तीर्थ-व्रत सभी एक समान है। उत्तर-दक्षिण के लोगों के स्वभाव दृष्टि भी एक समान है। धर्म, संस्कृति की एक विरासत के भागीदार है। सभी ने एक होकर देश के आजादी की लड़ाई लड़ी है। आज संसद और शासन विधान भी एक है।

यही बात मुसलमान को लेकर भी कहीं जा सकती है। भारत के सभी कोनों में बसे मुसलमान में एक धर्म को लेकर एक तरह की आपसी एकता है। वहां वे संस्कृति के दृष्टि से हिंदुओं के भी बहुत करीब है। साथ रहते हुए संस्कृति और तहजीब की बहुत-सी बातें समान दिखाई देती हैं।

विश्व के देशों पर अगर नजर डालें तो हमें पता चलता है कि हर एक का देश, वातावरण, रहन-सहन, खान-पान, पोशाके सभी अलग है। अगर किसी भारतीय को इंग्लंड देश की पोशाक पहना कर उन लोगों में खड़ा कर भी दे तो वह अपनी चाल-ढाल से उनसे अलग दिखाई देगा। यह बातें हम इतिहास के पन्ने पलट कर देख सकते हैं कि भारतवासी अंत में भारतवासी कहलाता है। संस्कृतिक एकता वह शक्ति है जो भारत को एक सूत्र में बांधती है।

बोध प्रश्न :

- भारत की सांस्कृतिक एकता को स्पष्ट कीजिए।
- भारत की भौगोलिक विविधता को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

16.3.1 भारत की सांस्कृतिक एकता निबंध का प्रयोजन :

भारतवर्ष जिसने लगभग डेढ़ सौ साल अंग्रेजों की गुलामी सही। अनगिनत बलिदानों से जिसने आजादी का सूरज देखा है। यह आजादी किसी मुश्किल या विपत्तियों से घिर ना जाए इसलिए समूचे देश को एक सूत्र में पिरोकर रखना आवश्यक है। क्योंकि विविधता से परिपूर्ण भारत देश है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी और गुजरात से लेकर ईशान्य भारत प्राकृतिक रूप से विविध पूर्ण है। ऐसे में प्रांतीयता या क्षेत्रीयता जोश मारने लगती है। यहां भौगोलिक संरचना

के कारण जो विरोधाभास दिखाई देते हैं उसे कारण हर प्रांत को लगता है कि वह दूसरे से अलग है और श्रेष्ठ है। यह भावना उभर कर प्रबल हो गई तो वह विद्रोह का रूप धारण कर सकती है। जो देश की अखंडता और एकता के लिए हानिकारक है। दोबारा देश पर कोई आपत्ति ना आए इसलिए भावनात्मक रूप से सभी भारतीयों को एक रहना आवश्यक है। इसी एकता और अखंडता को बनाए रखने के लिए दिनकर जी का इस वैचारिक निबंध के पीछे का प्रयोजन रहा है।

कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक हमारे बीच धर्म, संप्रदाय, जाति, पंथ,वर्ण,प्रांत, भाषा के स्तर पर ही नहीं तो श्रृद्धाएं, मान्यताएं, प्रथाएं, परंपराएं, रीति-रिवाज में भी विविधता दिखाई देती है। इसी से हमारा रहन-सहन, खान-पान, पहनावा-ओढावा, सभी चीजों में विभिन्नता दिखाई देती है। यह मूल कारण है विविधता का किंतु इस विशालकाय देश को जोड़े रखना आवश्यक है। इसलिए दिनकर जी ने इस निबंध के माध्यम से विविधता के दर्शन कराते हुए सांस्कृतिक एकता का परचम लहराया है। जो हमें हर हाल में एक सूत्र में बांधता है। अखंड भारत को बनाए रखने के लिए क्षेत्रीयता, सीमावाद, प्रांतवाद, भाषावाद को परे रख कर सांस्कृतिक विरासत को अपनाना आवश्यक है। इन भीतरी वाद-विवादों में ना पढ़ कर देश के विकास के लिए सभी जनता को एकजुट होकर कदम उठाना होगा।

दिनकर की प्राचीन काल की गौरव गाथा को उजागर करते हुए भारतवर्ष के स्वर्णिम भविष्य की राह दिखाते हैं। वह कहते हैं, “भारतीय जनता की एकता के असली आधार भारतीय दर्शन और साहित्य है, जो अनेक भाषाओं में लिखे जाने पर भी अंत में जाकर एक ही साबित होते हैं।” फारसी लिपि को छोड़ दे तो भारत की अन्य सभी लिपियां की वर्णमाला एक ही है। मात्र अलग-अलग लिपियों में लिखी जाती है। उसी प्रकार धार्मिक आस्थाओं पर भी वह चर्चा करते हैं। उत्तर से लेकर दक्षिण तक हमारे मंदिर भी एक है। एक ही संस्कृति में बंधे नजर आते हैं। आराधना की पद्धतियां, माथे पर चंदन का तिलक लगाना, तीर्थ-व्रत आदि सभी श्रद्धाओं में समानता दिखाई देती है।

मुस्लिम धर्म पर चर्चा करते हुए वह कहते हैं, भारत के किसी भी कोने में रहने वाले मुसलमान धर्म को लेकर एक ही तरह की आपसी एकता रखता है। “वहां पर संस्कृति की दृष्टि से हिंदुओं के भी बहुत करीब है, क्योंकि ज्यादा मुसलमान तो ऐसे ही है जिनके पूर्वज हिंदू थे जो इस्लाम धर्म में जाने के समय अपनी हिंदू आदतें अपने साथ ले गए। इसके सिवा अनेक सदियों तक हिंदू-मुसलमान साथ रहते आए है।” इस दीर्घ संगति के कारण उनके बीच संस्कृति और तहजीब की बहुत सी सामान बातें दिखाई देती है। जो आपस में नज़दीक लाती है और एक सूत्र में बांधती है। इस एकता के उदाहरण से हमें धार्मिक सौहार्द दिखाई देता है जो देश की एकता के लिए पोषक है।

16.3.2 निबंध में व्यक्त वैचारिकता :

‘भारत की सांस्कृतिक एकता’ इस निबंध में रामधारी सिंह ‘दिनकर’ जी ने भारत की सांस्कृतिक एकता और अखंडता बनाए रखने पर जोर दिया है। बरसों की गुलामी की जंजीरों को तोड़ भारत मां को उसके वीर-जवानों ने आजाद किया है। इस आजादी की कीमत अनगिनत

बलिदानों ने चुकाई है। अब भविष्य में इस आजादी पर कभी आंच ना आए इसलिए उन्होंने वैचारिक धरातल के माध्यम से एकता का संदेश देशवासियों को दिया है। भविष्य में किसी भी वजह से एकता में दरार ना पड़े यह इस निबंध का मूल उद्देश्य है।

भारत विविधता से परिपूर्ण देश है। उत्तरी छोर से लेकर दक्षिणी छोर तक प्राकृतिक, धार्मिक, सांप्रदायिक, विभिन्नता के साथ ही वर्ण,पंथ,प्रांत,भाषाई विभिन्नता दिखाई देती है। विशाल प्रदेश और भौगोलिकता के कारण कहीं हड्डियां तक जमाने वाली सर्दी है तो कहीं अधिक उच्च तापमान के कारण मरुस्थल दिखाई देते हैं। एकदम विपरीतता के दर्शन हमें इसी भूमि पर दिखाई देते हैं। ऐसे परस्पर विरोधी वातावरण के समुदायों को एक सूत्र में बांधे रखना कठिन होता है। किंतु इस कठिन कार्य को साधने का कार्य हमेशा से होता रहा है। आधुनिक युग में भी भारतवर्ष पर भविष्य में कोई विपत्ति ना आए इसलिए समूचे भारतवर्ष को 'एकता' का महत्व समझना आवश्यक है।

भाषाओं को लेकर भी कई विवाद उत्पन्न होते हैं किंतु सभी भाषाओं को एक सूत्र में पिरोने का काम हिन्दी भाषा कर रही है। जिस कारण हम एक दूसरे से भाषाई स्तर पर बंधे रहेंगे। दिनकर जी कहते हैं, "संसार के हर एक देश पर अगर हम अलग-अलग विचार करें तो हमें पता चलेगा कि प्रत्येक देश की एक ही निजी सांस्कृतिक विशेषता होती है।" जो उसके रहन-सहन, चाल-ढाल, रीति-रिवाज उसे दिखाई देती है। जैसे की चीन से आने वाला आदमी विलायत से आने वालों के बीच नहीं छुप सकता। यद्यपि अफ्रीका के लोग भी काले ही है,मगर वह भारतवासियों के बीच नहीं खप सकते। वह तुरंत पहचान लिए जाते हैं। सांस्कृतिक विरासतें ही हमारी पहचान है। इसका एक उदाहरण दिनकर जी देते हैं, केवल हिंदू ही नहीं तो क्रिश्चियन, पारसी और मुसलमान भी भारत से बाहर जाने पर यह हिंदुस्तानी है बड़ी आसानी से पहचान लिए जाते हैं।

धर्म, पंथ, संप्रदाय, जाति और भाषा को लेकर कभी भी मन में ज्वार उमड़ने लगे तो यह सदैव याद रखना होगा कि इस सब से परे हमारी पहचान भारतीय है। हम चाहे किसी भी वर्ण, वंश, संप्रदाय या भाषा को बोलने वाले हो किंतु इन सब से ऊपर हमारी एक ही पहचान है और वह है 'भारतीयता'। यही हमारी असल पहचान है।

क्योंकि जब भी हम देश से बाहर जाते हैं तो हम किसी प्रांत या भाषा का प्रतिनिधित्व नहीं करते बल्कि हम अपने देश का प्रतिनिधित्व करते हैं। वहां हमारी पहचान हमारे नाम से नहीं हमारे देश से होती है और इसी सोच को लेखक अपने निबंध के माध्यम से आम भारतवासियों तक पहुंचाना चाहते हैं। भविष्य में इन सारे मुद्दों को लेकर कभी कोई आपसी मनमुटाव ना हो यही निबंध की वैचारिकता है।

16.3.3 निबंध का भाषा सौष्ठव:

गद्य और पद्य साहित्य पर समान पकड़ रखने वाले दिनकर जी की भाषा जिवंत है। वह साहित्य प्रेमियों के मन में आशा और उत्साह का संचार कराती है। उनकी भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है। जिसमें संस्कृत शब्दों की बहुलता है। उर्दू एवं अंग्रेजी के प्रचलित शब्द भी उनकी

भाषा में उपलब्ध हो जाते हैं। संस्कृतनिष्ठ भाषा के साथ-साथ व्यवहारिक भाषा उनकी गद्य रचना में दिखाई देती है।

'भारत की सांस्कृतिक एकता' इस निबंध में दिनकर जी की भाषा खड़ी बोली है। पार्लियामेंट, क्रिस्तान जैसे दो एक अंग्रेजी शब्द भी दिखाई देते हैं। कुछ उर्दू शब्द भी दिखाई देते हैं जिसमें कायम, कामयाबी, खिलाफ, तकलीफ, तहजीब और लिबास आदि है। जो भाषा का सौंदर्य निखारते हैं।

दिनकर जी के निबंध की भाषा सादी, सरल और प्रवाहमान है। उन्होंने वैचारिक निबंध जैसे विषय में अपनी भाषा शैली के माध्यम से पाठक के मन में पढ़ने के प्रति लालसा उत्पन्न की है। अक्सर देखा जाता है कि जब वैचारिक गद्य की बात आती है तो बहुत बार ऐसा होता है की बड़े ही उत्साह से पढ़ना शुरू किया जाता है किंतु मध्य तक आते-आते वह निरस लगने लगता है। लेकिन दिनकर जी का निबंध पढ़ते समय पाठक के मन में लालसा जागृत होती है। वह अंत तक पढ़ने के लिए बेचैन होता है। एक बार पढ़ना शुरू कर दिया तो खत्म होने पर ही उसे चैन आता है। 'भारत की सांस्कृतिक एकता' इस निबंध में उनके भाषा सौंदर्य का एक उदाहरण देखते हैं, "भाषा की दीवार के टूटते ही, उत्तर भारतीय और दक्षिण भारतीय के बीच कोई भी भेद नहीं रह जाता और वे आपस में एक दूसरे के बहुत करीब आते हैं। असल में भाषा की दीवार के आर-पार बैठे हुए भी वे एक ही है। वह धर्म के अनुयाई और संस्कृति की एक विरासत के भागीदार है।" सभी ने मिलकर देश की आजादी की लड़ाई लढी है। उनका शासन एक है, संविधान एक है। इससे हमें पता चलता है कि दिनकर की भाषा सुस्पष्ट और खड़ी बोली ही है। उन्होंने बड़े ही सरल रूप में भाषा को प्रवाहमान कर पाठक के अंतर मन तक पहुंचाया है।

16.3.4 निबंध की शैली :

राष्ट्रकवि की उपाधि पाने वाले दिनकर जी का समग्र साहित्य 'राष्ट्र प्रेम' और 'राष्ट्रीय एकता' से ओतप्रोत है। विपरीत तौर पर शांत दिखने वाले दिनकर जी जब बात राष्ट्र की आती है तब अपनी कविताओं के माध्यम से दहाड़ने लगते हैं। उनका गद्य साहित्य भी राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रीय एकता से भरा पड़ा है आजादी के मतवालों में दिनकर जी पहली पंक्ति में ही नजर आते हैं।

रामधारी सिंह दिनकर जी के लगभग सभी निबंध में 'देश प्रेम', 'राष्ट्रीय एकता' और 'अखंडता' का पाठ मिलता है। भारत की सांस्कृतिक एकता निबंध भी वैचारिक निबंध है। इस निबंध में उन्होंने विवेचनात्मक, समीक्षात्मक और भावात्मक शैली का प्रयोग किया है। इन शैलियों के कारण लेखक अपने विचारों को बड़े ही सरल रीति से पाठक के मन में गहरी छाप छोड़ते है। लेखक का उद्देश्य उसके विचारों को आम लोगों तक पहुंचाना है। क्योंकि दिनकर जी एक दृष्टा साहित्यकार थे। उन्हें पता था प्राकृतिक विविधता से उत्पन्न विभिन्न प्रश्नों से जन-मानस को दूर रखना होगा। उनके मन में एकता और अखंडता का बीज बोना आवश्यक है। इसलिए उन्होंने भाषा, धर्म, पंथ, जाति, वर्ण, समुदाय, प्रांत, उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम जैसे अनेक मुद्दों का विवेचन अपने निबंध में किया है।

भाषावाद, सीमावद के चलते देश में निर्माण हो रहे नए-नए राज्य और अपनी प्रांतीय भाषा का ज्वार, यह देश के लिए हानिकारक है। देश में सब कुशल-मंगल रहने के लिए भाषा, सीमा, धर्म, वर्ण से परे उठकर हमें सोचना होगा। वह सोंच एक सही दिशा में होनी चाहिए। युवा शक्ति और सकारात्मक सोंच ही हमेशा देशहित और राष्ट्रीय एकात्मता पर ही आकर रुकनी चाहिए। इस वैचारिक सत्यको उन्होंने बड़े ही सुंदर और सरलभाषा के माध्यम से जनमानस में पहुंचाया है। पाठक सरल,प्रवाहमान और ओजस्वी भाषा से अभिभूत हो तन-मन में 'देश प्रेम' और 'राष्ट्रीय एकता' की मशाल जलाएं रखना चाहिए।

16.4 : पाठ सार

हम सबको ज्ञात है कि अंग्रेजो के शासन से भारत मां को आजाद करने के लिए कितने ही वीर,जवानों ने खून की होली खेली है। यह आजादी हमारे लिए बहुत मायने रखती है। पूरब से लेकर पश्चिम और उत्तर से लेकर दक्षिण तक के जन-मानस में एकता का झंडा लहराया और एकता की शक्ति के बल पर ही विभिन्न प्रांत, भाषा, समुदाय, वर्ण, जाति,पंथ के लोगों ने एक ही नारा लगाया 'हम एक है' और यही भावना हमें हमेशा कायम रखनी है। प्राकृतिक संरचनाओं के कारण हमारे नाक-नक्श से लेकर रहन-सहन तक की विभिन्नता दिखाई देती है किंतु हमारी सांस्कृतिक विरासतें एक है।

दिनकर जी ने 'भारत की सांस्कृतिक एकता' इस निबंध में 'राष्ट्रीय चेतना' को जागृत करने का कार्य किया है। भौगोलिक संरचना के कारण भारत के नक्शे पर नजर डालें तो वह तीन भागों में विभाजित सा दिखाई देता है। ऐसे विशाल भारतवर्ष को एक संघ और एक छत्र में बांधने का कार्य चंद्रगुप्त, अशोक, विक्रमादित्य और अकबर जैसे सम्राटों ने किया है। किंतु दुर्बल शासक आते ही भाषा,वर्ण,पंथ, प्रांतीयता ने जोर पकड़ा और भारत में 'अराजकता' फैली। हमेशा इस आपसी मनमुटाव का फायदा बाहरी आक्रमणकारियों ने उठाया। भारत को गुलाम बनाया गया। इसी गुलामी से आजादी का सफर बहुत ही लंबा और कुर्बानियों से भरा है।

भविष्य में ऐसी दुर्घटनाएं ना घटे इसलिए भारतीय जन-मानस को भावना के धरातल पर बांधे रखना आवश्यक है। दिनकर जी ने अपनी कविता और गद्य साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना की ज्योत अविरत जलाए रखी। 'विविधता में एकता' का नारा लगाकर हमारी सांस्कृतिक विश्वास को बनाए रखा है।

उत्तरी कश्मीर की छोर से दक्षिण के कुमारी अंतरिप तक एक ही भावना प्रधान रही है 'अखंडता' की। हमारी धार्मिक आस्थाएं, श्रृद्धाएं, मान्यताओं का मूल एक है। हमारा भारतीय साहित्य विविध भाषाओं में लिखा गया है किंतु रामायण और महाभारत को लेकर भारत की प्राय: सभी भाषाओं के बीच अद्‌भुत एकता मिलती है। इसके अलावा संस्कृत और प्राकृत में भारत का जो साहित्य लिखा गया है उसका प्रभाव भी सभी भाषाओं की जड़ों में काम कर रहा है।

इसके अलावा भारतीय मुसलमान, पारसी और क्रिश्चियन का भी यही है। सदियों से वह एक दूसरों के साथ रहने के कारण उनके बीच संस्कृति और तहजीब की बहुत-सी सामान बातें

पैदा हो गई है। जो उन्हें आए दिन एक-दूसरे से और नजदीक ला रही है। दिनकर जी के इस वैचारिक निबंध के माध्यम से यही कह सकते हैं।

“हिंद देश के निवासी, सभी जन एक है।
रंग, रूप, वेश, भाषा चाहे अनेक है।
बेला, गुलाब, जूही, चंपा, चमेली,
प्यारे-प्यारे फूल खिले, माला में एक है।”

16.5 : पाठ की उपबधियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1) विविधता में एकता ही हमारी पहचान है।
2) राष्ट्रीय एकता, अखंडता और राष्ट्रीय चेतना की ज्योत जलाए रखना है।
3) हमारी सांस्कृतिक विरासतें और मान्यताएं एक है।
4) प्राकृतिक अलगाव के बावजूद समूचे भारत को एक सूत्र में पिरोया गया है।
5) भारत की विभिन्नता वह हीरें-जवाहरात है जो एक जगह जुड़ कर भारत मां के मुकुट सजाते हैं।
6) राष्ट्रीय एकता ही मूल मंत्र है।

16.6 : शब्द संपदा

1) कुमारी अंतरीप - कन्याकुमारी
2) कायम - ठहराव, स्थापित करना, निर्धारित करना
3) कामयाबी - सफलता
4) खिलाफ - विरोध
5) मरुभूमि - रेगिस्तान,बंजर
6) पार्लियामेंट - संसद
7) तहजीब - संस्कार,सभ्यता
8) क्रिस्तान - क्रिश्चियन
9) लिबास - पोशाक
10) विलायत - इंग्लैंड

16.7 : परीक्षार्थी प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1) ‘भारत की सांस्कृतिक एकता’ इस निबंध के आधार पर दिनकर जी की दूरदृष्टीता को स्पष्ट कीजिए ।

2) ‘भारतीय जनता की एकता के असली आधार भारतीय दर्शन और साहित्य है ।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में लिखिए।

1) निबंध में प्राकृतिक दृष्टी से देश के किन तीन भागों को दर्शाया है चर्चा कीजिए ।

2) 'जलवायु के कारन बदलता जनजीवन' प्रस्तुत निबंध के आधार पर स्पस्ट कीजिए।

खंड (स)

I) सही विकल्प चुनिए –

1) निम्न में से कौन-सी रचना दिनकर जी की नहीं है?

अ) रश्मिरथी ब) संस्कृति के चार अध्याय क) गोदान ड) कुरुक्षेत्र

2) दिनकर जी को किस उपाधि से नवाजा गया था ?

अ) हास्य कवि ब) राष्ट्र कवि क) व्यंग्य कवि ड) संत कवि

3) दिनकर जी की प्रथम काव्य रचना कौनसी थी ?

अ) उर्वशी ब) वीरबाला क) हुंकार ड) रेणुका

4)भारत सरकार ने दिनकर जी पर कब डाक टिकट जारी किया?

अ) सन 1974 ब) सन 1999 क) सन 1980 ड) 1992

II) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1) ------ ॠषि ने विंध्याचल को पार करके दक्षिण के लोगों को अपना संदेश सुनाया था।

2) भाषा-भेद की यह समस्या हमारी ------ की सबसे बड़ी बाधा है ।

3) विचारों की एकता -------की सबसे बड़ी एकता होती है।

4)भागलपुर विश्वविद्यालय दिनकर जी को ------- उपाधि से सम्मानित किया ।

III) सुमेल कीजिए –

1) ज्ञानपीठ पुरस्कार (अ) सन 1952

2)साहित्य अकादमी पुरस्कार (आ) सन 1908

3) पद्मविभूषण पुरस्कार (इ) उर्वशी

4) राज्यसभा सदस्य (ई) संस्कृति के चार अध्याय

5) दिनकरजी का जन्म (उ) सन 1959

16.8 : पठनीय पुस्तकें

1)गद्यशिल्पी –दिनकर ------ देवव्रत जोशी

2) दिनकर का गद्य साहित्य और राष्ट्रिय चेतना ---- डॉ. संदीप कुमार यादव

3) रामधारी सिंह दिनकर ----- डॉ. मन्मथनाथ गुप्त

5)अपने समय का सूर्य दिनकर ---- डॉ. मन्मथनाथ गुप्त

6) दिनकर सृष्टि और दृष्टी ---- डॉ. मन्मथनाथ गुप्त

इकाई 17 : निबंधकार हरिशंकर परसाई : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

17.1- प्रस्तावना
17.2- उद्देश्य
17.3 -मूल पाठ : निबंधकार हरिशंकर परसाई : एक परिचय
17.3.1- हरिशंकर परसाई का जीवन वृत्त
17.3.2- निबंधकार हरिशंकर परसाई की रचना यात्रा
17.3.3- निबंधकार हरिशंकर परसाई की वैचारिकता के विविध आयाम
17.3.4- निबंधकार हरिशंकर परसाई का हिन्दी साहित्य में स्थान
17.4 -पाठ सार
17.5 -पाठ की उपलब्धियां
17.6- शब्द संपदा
17.7 -परीक्षार्थ प्रश्न
17.8 -पठनीय पुस्तकें

17.1 प्रस्तावना

हरिशंकर परसाई एक प्रसिद्ध हिन्दी व्यंग्यकार थे, जिनको समकालीन भारतीय समाज पर अपनी तीक्ष्ण और व्यावहारिक टिप्पणी के लिए जाना जाता है। परसाई ने पूर्णकालिक लेखन में जाने से पहले एक स्कूली शिक्षक के रूप में अपना करियर शुरू किया। परसाई जी की रचनाओं ने अक्सर भारतीय राजनीति, नौकरशाही और सामाजिक रीति-रिवाजों के पाखंडों और विडम्बनाओं पर तीखा व्यंग्य किया है। उनकी लेखन शैली की विशेषता इसकी सरलता और प्रत्यक्षता थी, जिसमें अक्सर बोलचाल की भाषा का उपयोग किया जाता था और अपने संदेश को व्यक्त करने के लिए खिचड़ी भाषा का प्रयोग किया जाता था। उन्हें विडंबना और कटाक्ष के उपयोग के लिए भी जाना जाता था, जिसे उन्होंने अपने व्यंग्य में बहुत शामिल किया।

17.2 : उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- व्यंग्य निबंधकार हरिशंकर परसाई के व्यक्तित्व-कृतित्त्व सहित विशेषकर निबंधों की विशेषताएं व लेखन कला के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में जन्मी परिस्थितियों के दृष्टिगत उनके निबन्धों का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- हरिशंकर परसाई के व्यंग्य निबंधों का विधिवत अध्ययन करने हेतु सटीक दिशा प्राप्त कर सकेंगे।
- हरिशंकर परसाई के निबन्धों के कथ्य या अंतर्वस्तु की सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

17.3 : मूल पाठ : निबंधकार हरिशंकर परसाई : एक परिचय

17.3.1- हरिशंकर परसाई का जीवन वृत्त

जन्म-मृत्यु

हिन्दी साहित्य के यशस्वी निबंधकार हरिशंकर परसाई का जन्म 22 अगस्त सन 1924 ईस्वी में मध्यप्रदेश के होशंगाबाद जिले के जमानी गांव में हुआ था। 10 अगस्त, 1995 को जबलपुर, मध्यप्रदेश में इनका निधन हो गया।

परिवार-

हरिशंकर परसाई के पिता का नाम जुमक लालू प्रसाद और उनकी माता का नाम चंपा बाई था। परसाई जी के 4 भाई बहन थे और उनके माता पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गई थी। जिससे सभी भाई बहनों के पालन पोषण का जिम्मेदारी हरिशंकर परसाई के ऊपर ही आ गया था। हरिशंकर परसाई का बचपन बहुत ही परेशानियों और कठिनाइयों से में व्यतीत हुआ था।

शिक्षा-दीक्षा-

हरिशंकर परसाई अपनी प्रारंभिक शिक्षा अपने गांव में ही प्राप्त की। उसके बाद में इन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में परास्नातक (MA) की उपाधि प्राप्त की। पढ़ाई पूरा होने के बाद उन्होंने वन विभाग में भी नौकरी की। लेकिन वह नौकरी उन्होंने कुछ ही दिनों बाद छोड़ दिया। और किसी स्कूल में अध्यापक के पद पर नौकरी कर लिया। लेकिन इसमें उनका मन नहीं लगा और वह नौकरी छोड़ दिए नौकरी छोड़ने के बाद हरिशंकर परसाई ने लेखन प्रारंभ किया उन्होंने अपना स्वतंत्र लेखन लिखना शुरू किया। इसी क्रम में उन्होंने जबलपुर से साहित्यिक पत्रिका वसुधा का प्रकाशन भी प्रारंभ किया था।

जीवन संघर्ष-

परसाई जी के कुल 4 भाई बहन थे और उनके माता पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गई थी। जिससे सभी भाई बहनों के पालन पोषण का जिम्मेदारी हरिशंकर परसाई के ऊपर ही आ गयी थी। हरिशंकर परसाई का बचपन बहुत ही परेशानियों और कठिनाइयों से में व्यतीत हुआ। हरिशंकर परसाई की समकालीन राजनीति पर बड़ी पैनी निगाह थी। वे समाजवादी होते हुए भी वामपंथी दलों और वामपंथी लेखक संगठनों पर करारा प्रहार करने में कोई कोताही नहीं बरतते थे। सुप्रसिद्ध समालोचक डॉ रामविलास शर्मा यदि कबीर के बाद प्रेमचंद को स्वाधीनता आंदोलन का व्यंग्यकार किसी को मानते हैं तो परसाई जी को। स्वतंत्रता के बाद भारत के समकालीन राजनीति के साथ-साथ धार्मिक खोखलेपन और पाखंड पर उनकी पैनी नज़र थी। उनकी पहली रचना स्वर्ग से नरक धार्मिक पाखंड और अंधविश्वास पर करारा प्रहार है। हरिशंकर परसाई कार्ल मार्क्स से अधिक प्रभावित है।

हरिशंकर परसाई उत्तम कोटि के व्यंग्यकार माने जाते हैं। उन्होंने अपनी रचना कौशल से व्यंग्य को साहित्यिक विधा का दर्जा दिलाने में सफलता प्राप्त की है। उनके व्यंग्य मनोरंजन और

विलास की सामग्री मात्र न होकर समाज में व्याप्त कुरीतियों पर गहरा कटाक्ष करती है। भ्रष्टाचार और शोषण पर भी उनके व्यंग बहुत गहरे हैं। मध्यवर्गीय लोगों में झूठी शान पाने की ललक पर उन्होंने गहरी चोट की है। प्रेमचंद के फटे जूते और दो नाक वाले लोग शीर्षक निबंध में उन्होंने इन प्रवृत्तियों को गहराई से बताया है।

उपलब्धियां-सम्मान-

हरिशंकर परसाई को समय-समय पर साहित्य लेखन के लिए विभिन्न पुरस्कारों एवं सम्मान से नवाजा गया। जैसे, 'विकलांग श्रद्धा का दौर' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उन्हें मध्यप्रदेश के संस्कृति विभाग के पुरस्कार, चकल्लस पुरस्कार और शरद जोशी सम्मान के अलावा जबलपुर विश्वविद्यालय द्वारा डीलिट की उपाधि से भी सम्मानित किया गया।

बोध प्रश्न-

- परसाई का संक्षिप्त जीवन परिचय दीजिए?
- परसाई के संघर्षों एवं उपलब्धियों का संक्षिप्त विवरण दीजिए?
- डॉ राम विलास शर्मा ने परसाई के बारे में क्या कहा है ?
- परसाई को किस रचना के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ?

17.3.2- निबंधकार हरिशंकर परसाई की रचना यात्रा

सन् 1947 से परसाई जी अपने वयग्य लेखन की यात्रा आरम्भ करते हैं। 23 नवम्बर 1947 को उनकी रचना "पैसे का खेल में छपती है, सन् 1955 तक लगातार "प्रहरी" में उनकी रचनाएँ छपती रहीं। सन् 1995 से 'जनयुग" में "ये माजरा क्या है", साप्ताहिक लेख माला "आदम" नाम से तथा "नयी दुनिया में "सुनो भाई साधो" साप्ताहिक लेख माला कबीर के नाम से लिखते हैं। "कल्पना" या "नई कहानियाँ में इनके कॉलम नियमित छपा करते थे और "सारिका' में 'कबीरा खडा बाजार में" कथा यात्रा में "रिटायर्ड भगवान की कथा" "परिवर्तन" में "अरस्तू की चिठी" करंट में "देख कबीरा रोया' तथा 'माटी कहे कुम्हार से" आदि कॉलम भी लिखा है। इसेक अलावा परसाई जी ने "वसुधा" पत्रिका की सम्पादकीय जिम्मेदारी" भी कुछेक वर्षों तक निभाई।

उनकी समस्त कृतियाँ "परसाई रचनावली के अंतर्गत छः खण्डों में संकलित है, उनकी प्रमुख व्यंग्य रचनाएँ निम्नलिखित हैं – स्वर्ग से नरक , परछाई भेदन,हँसते हैं रोते हैं(1951), तबकी बात और थी, भूत के पाँव पीछे, तट की खोज, सदाचार की ताबीज , निठल्ले की डायरी, 'वैष्णव की फिसलन, अपनी अपनी बीमारी, माटी कहे कुम्हार से, काग भगोड़ा, प्रेमचंद के फटे जूते , हम एक उम्र से वाक़िफ़ हैं, तब की बात और थी, पगडंडियों का जमाना, जैसे उनके दिन फिरे, सदाचार की ताबीज, शिकायत मुझे भी है ,ठिठुरता हुआ गणतंत्र,अपनी-अपनी बीमारी ,विकलांग श्रद्धा का दौर ,भूत के पाँव पीछे,बेईमानी की परत,सुनो भाई साधो , तुलसीदास

चंदन घिसें ,कहत कबीर, ऐसा भी सोचा जाता है ,पाखण्ड का अध्यात्म , आवारा भीड़ के खतरे , ,हम बिहार में चुनाव लड़ रहे,कंधे श्रवणकुमार के,गुड़ की चाय इत्यादि।

उपन्यास- रानी नागफनी की कहानी, तट की खोज।

कहानी संग्रह- हँसते हैं, रोते हैं, जैसे उनके दिन फिरे आदि।

बोध प्रश्न

- परसाई की रचना यात्रा का विवरण प्रस्तुत कीजिए?

17.3.3- निबंधकार हरिशंकर परसाई की वैचारिकता के विविध आयाम

धार्मिक आडम्बरों पर व्यंग्य

भारतीय संविधान सभी धर्मावलम्बियों को समान मूलभूत अधिकार देता है। सभी धर्मों को एक धरातल पर स्वीकार करने वाली हमारी राज व्यवस्था स्वयं धर्म निरपेक्ष है। यह धर्म निरपेक्षता हमारे प्रजातान्त्रिक संगठन का मूलाधार मानी गयी। व्यक्ति को धर्म के क्षेत्र में पूरी आजादी दी गयी, पर समाज सुधार और कल्याण को ध्यान में रखकर धर्म सम्बन्धी कानून बनाने का अधिकार राज्य ने अपने पास ही रख लिया।

'कंधे श्रवण कुमार के' नामक निबन्ध में परसाईजी ने प्राचीन मान्यताओं, जो आज के युग में असत्य एक मिथ्या ही जान पड़ती है, पर बड़ी कुशलता के साथ व्यंग्य किया है। 'गुड़ की चाय' परसाई जी का एक सामाजिक समस्या व्यांग्य प्रधान निबन्ध है लेकिन उसमें भी लेखक ने धर्मनिष्ठ भारतीयों की प्रवृति पर व्यंग्य किया है। पाखण्ड का आध्यात्म' निबन्ध संग्रह में धर्म की भ्रष्टता देखिए 'भगवानके विरुद्ध कोई कार्यवाहीं नहीं करेगा क्योंकि मार्टिन लुथर ने भगवान से लड़ाई की थी। उसने स्वर्ग में सुख का इन्तजाम करनें के लिए टिकिट लोगों को बेचकर पोप का पैसा नहीं भेजा। मार्टिन लूथर को भी सजा हुई।"देश भर में मूर्तियों की चोरी होती है। वें यूरोप और अमेरिका में ले जाकर बेची जाती हैं। तस्करी यह नियमित थधा है। इसमें धर्म कही नहीं हैं।"

वस्तुतः परसाईजी में धार्मिक व्यंग्य के माध्यम से समाजिक सुधार एवं देशोद्धार के स्वर ध्वनित होते हैं। परसाई जी को इस बात का ज्ञान था कि तत्कालीन समाज का जीवन धर्म-केन्द्रित है, किन्तु धर्म के तत्कालीन अवस्था से असन्तुष्ट थे। पश्चिम से आए ज्ञान के आलोक में उस धर्म में अनेक रूढ़ियाँ तथा अन्धविश्वास मौजूद था। इस प्रकार दोषपूर्ण धर्म को केन्द्र मानकर चलने वालों के जीवन में अनेक प्रकार की विकृतियों का आना स्वाभाविक था। इन्ही विगतियों और विकृतियों को पहचान कर परसाईजी ने इन पर हैं। वास्तव में इन सभी धार्मिक व्यंग्यात्मकता के पीछे पुनरुत्थान की भावना रही है। क्या भगवान भी टांग खींचते हैं?" परसाईजी का सशक्त व्यंग्य प्रधान निबन्ध है। इसमें भगवान पर अन्धविश्वास करने वालों पर व्यंग्य किया गया है।

भ्रष्टाचार पर व्यंग्य

राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र भारत की आर्थिक नीतियों ने भारत देश को पूरी तरह खोखला कर दिया, अंग्रेजों की आर्थिक विसंगतियों के कारण ही देश के सामने निर्धनता, बेरोजगारी उद्योग धन्धों का अभाव जैसी अनेक समस्या थी, जिनका समाधान ढूँढना आवश्यक था। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् आर्थिक दृष्टि से देश का विकास करने, समुन्नत बनाने तथा आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने के उद्देश्य से समय-समय पर अनेक योजनाएँ और कार्यक्रम निर्धारित किये गये। व्यक्तिगत स्वार्थ पूर्वि की भावना ने देश की राजनीति में व्यापक स्तर सर भ्रष्टाचार को जन्म दिया। अदूरदर्शिता, अकुशलता, फिजूलखर्ची, अपव्यय, रिश्वतखोरी, रिश्वतखोरी, कामचोरी आदि चरम सीमा पर पहुँचते गये। व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति हेतु देश और जनता के साथ बड़ी से बडी गद्याती की गई। नेतागिरी, अफसरशाही और सेठशाही की मिली-जुली साठ-गांठ ने देश में व्यापक स्तर पर आर्थिक भ्रष्टाचार को जन्म दिया। नेताओं और अफसरों ने सेठों से रिश्वत लेकर अपने-अपने घरों को भरना शुरू कर दिया, दूसरी तरफ टैक्सों की अधिकता, जमाखोरी, मुनाफाखोरी के कारण मंहगाई बढ़ती चली गई। कमर तोड़ मंहगाई ने आम आदमी के जीवन को दूभर बना दिया, एक तरफ तिजोरियों में धन एकत्र होता गया, दूसरी तरफ सूखी रोटियों के भी लाले पड़ने लगे। जनसंख्या की बेतहासा वृद्धि ने जीवन जीने के साधनों और बेरोजगारी की समस्या को और भी व्यापक बना दिया।

सरकारी विभागों एवं सेवाओं में अव्यवस्था इतनी फैल चुकी है कि शिक्षा-प्रसार के लिए सरकार ने गाँव-गाँव में पातशाला खोल रखी हैं, परन्तु वहाँ अध्यापकों तथा अन्य सामग्री एवम् भवनों का अभाव है अस्पताल खुले हैं, लेकिन यहाँ अभी डॉक्टर कर्मचारी तथा दवाएँ आनी शेष है।

राजनैतिक विसंगतियों पर व्यंग्य

राजनैतिक क्षेत्र में स्वतन्त्रता के बाद भारतीय राजनीति में जो विसंगतियाँ उत्पन्न हुई। जनतन्त्र की उपज विधायकों की बड़ी भीड़ यह घोषणा भी करती है कि विधायक विधाता से कम शक्तिवान नहीं रह गया है क्योंकि उसने तमाम मौसम को बदल दिया है। इन विधायको के कार्य-कलापों करनी और कथनी के अन्तर को परसाई जी ने व्यंग्य का जामा पहना दिया है। ये चरणसिंड है अब छः पार्टी मोर्चों में है. जो मँहगाई विरोधी आन्दोलन करेगा। मगर नरेन्द्रसिंह कहते हैं कि यही चरणसिह शक्कर के घोटाले के लिए जिम्मेदार है। इन्होंने शक्कर मिल मालिकों का पक्ष लिया और गन्ना उत्पादक किसानों को उचित मूल्य नहीं दिया। यही शक्कर के मूल्य के लिए खिलाफ आन्दोलन करेंगे। मगर बरणसिंह इस मोर्चे में रहेंगे ही नहीं।"

हरिशंकर परसाई के निबन्धों में व्यंग्य स्वर प्रधान होने के कारण सर्वप्रथम इस राजनैतिक उथल-पुथल को ही अपना शिकार बनाया था। वर्तमान में व्याप्त राजनेताओं को सम्प्रदाय के नाम पर जाति के नाम पर वोट मिल सकते हैं. मागे जाते है। सम्प्रदायवाद के खिलाफ होते हुए

भी साथ मिलकर सरकार बनाइये और जब तब दगा होये तो कहिये कि संघ ने ही करवाया यह सिद्धान्त का सही आग्रह है। राजनैतिक दांव पेचों और सिद्धान्तहीन दल-बदल ने भी अपना पूरा चमत्कार दिखाया। राजनीति कुटनीति और वोट नीति आदि के पाटों में निरन्तर पिसती रहने वाली जनता ने उनके प्रति व्यंग्य का भाव उनमें जाग्रत कर दिया था। परसाई का लेखन राजनीति के मेड़ भेड़िये, में उनके चरित्र और उनके विज्ञापित रूप को देश भक्ति का पॉलिस देने वाले जुटेरों का अंकन प्रस्तुत निबन्ध में किया है।

सामाजिक विसंगतियों पर व्यंग्य

हास्य और व्यंग्य की परंपरागत वैचारिकता का स्पर्श करने के स्थान पर परसाई ने सामाजिक परिवेश की विद्रूपता को अपने लेखन का कथ्य' बनाया है। देश की सामाजिक विषमताओं को परसाई जी ने सुधार की दृष्टि से नहीं देखा है। वे परिवेश को बदल डालने के परामर्श दाता है, जो टूटने लायक है, उसे तोड़ डालने के कायल है। परसाई ने स्वयं स्वीकार किया है- "मैं सुधार के लिए नहीं बदलने के लिए लिखना चाहता हूँ यानी कोशिश करता हूँ। चेतना में हलचल हो जाऐं, कोई विसंगति नजर के सामने आ जाय इतना काफी है।"

वस्तुत व्यंग्य का विषय ऐसा समाज होता है जिसमें मनुष्य रहता है वह शासनतन्त्र होता है, जो उसे राजनैतिक सुरक्षा प्रदान करने का दावा करता है। समाज में रहने वाले लोगों की अपनी-अपनी धार्मिक मान्यताएँ होती है। व्यंग्य स्वयं उस माज को टटोलता है। समाजिक दुर्वयवस्था, रूढ़ियों एवं कुरीतियों का भाण्डा-फोड़ केवल मात्र व्यंग्य ही कर सकता है। और उस व्यंग्य का श्रेय लेखक को जाता है। समाज में प्रचलित ऐसी रूढियाँ जो दिन-प्रतिदिन अधिक सार्थकता की ओर अग्रसर होने वाले जन जीवन को तर्क संगत नहीं लग जाती या सामाजिक मान-मर्यादाओं का ऐसा शिकंजा जो व्यक्ति को न्याय नहीं दे पाता अथवा ऐसी रूढ़ मान्यताओं जिन्हें नई मानवीयता की प्रतिष्ठा के लिए समाप्त हो ही जाना चाहिए, यदि समाज में बनी रहती है तो परसाई जी उनकों विनाश करने की ही दवा देते हैं।

समाज की नग्न कुरीतियों का पर्दाफाश करने में परसाईजी पीछे नहीं है बल्कि वे उन सामाजिक हिताहित की चिंता न करने वाले और स्वार्थ सिद्धि में मग्न समाज-सुधारकों का मजाक उड़ाया है। विकलांग श्रद्धा का दौर" में संकलित निबन्ध "तीसरी आजादी का जाँच कमीशन" में किस प्रकार नेता अपने ही स्वार्थ में मशगुल है- "मोरारजी- चिन्ता और तनाव उसे हो, जिसने देश की जिम्मेदारी ली हो। मैंने तो कोई जिम्मेदारी नहीं ली। सब ईश्वर पर छोड़ दी। हानि- लाभ जीवन-मरण, जस अपजस विधि हाथ। आदमी के लिए कुछ नहीं होता। लोग भूखे मरते हैं, गरीब हैं, पीड़ित हैं तो यह ईश्वर की इच्छा है।

बोध-प्रश्न:-

- राजनैतिक विसंगतियों पर परसाई के निबंध किस प्रकार प्रभावशाली बन पड़े हैं?

- 'कंधे श्रवण कुमार के' शीर्षक निबन्ध के दृष्टिगत सामाजिक विडंबना का वर्णन कीजिए?
- स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज की परिस्थितियों का विश्लेषण कीजिए ?
- धार्मिकं पाखंड पर परसाई के क्या विचार हैं ?

17.3.4- निबंधकार हरिशंकर परसाई का हिन्दी साहित्य में स्थान

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि हरिशंकर परसाई जी ने सामाजिक रूढ़ियों, राजनीतिक विडम्बनाओं तथा सामयिक समस्याओं पर व्यंग्य किया है और यथेष्ट कीर्ति पाई है। ये एक सफल व्यंग्यकार के रूप में स्मरणीय रहेंगे। उनकी व्यंग्य रचनाएं हिन्दी, जगत में बड़े आदर की वस्तु हैं तो एक व्यंग्यकार के रूप में परसाई जी को हिन्दी साहित्य में पर्याप्त यश प्राप्त हुआ है। मुक्तिबोध ने उनके बारे में ठीक ही लिखा है कि-

"परसाई जी का सबसे बड़ा सामर्थ्य संवेदनात्मक रूप से यथार्थ का आकलन है, चाहे वह राजनैतिक प्रश्न हो या चरित्रगत । हमारे यहां की साहित्यिक संस्कृति ने सच्चाई के प्रकटीकरण पर जो हदबंदी करके रखी है, उसे देखते हुए परसाई की कला सहज ही वामपंथी हो जाती है ।"(सारिका, जनवरी 1986 पृ. 39)

मानवीय दुःख और पीड़ा को हरिशंकर परसाई ने अनुभव किया है। समाज में व्याप्त विसंगतियों को उन्होंने देखा- परखा है और एक प्रबुद्ध एवं भावुक व्यक्ति होने के कारण वे इन्हें अपनी व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से दूर करने के लिए सजग एवं सक्रिय रहे हैं। निश्चय ही उनका योगदान अविस्मरणीय है तथा उनकी व्यंग्य रचनाओं ने हिन्दी को गौरव प्रदान किया है। -

बोध प्रश्न :-

- मुक्तिबोध ने परसाई के बारे में क्या कहा है?

17. 4 पाठ-सार

वे हिन्दी के पहले रचनाकार हैं जिन्होंने व्यंग्य को विधा का दर्जा दिलाया और उसे हल्के–फुल्के मनोरंजन की परंपरागत परिधि से उबारकर समाज के व्यापक प्रश्नों से जोड़ा। श्री हरिशंकर जी का झुकाव अधिकतर सर्वहारा वर्ग की ओर अधिक था । 15 अगस्त 1947 को हमारा देश आजाद हुआ था तत्समय सारे देश में आदर्शवादिता चरम सीमा पर थी ओर लोगो के दिलो में आदर्शवादिता का जज्बा कायम था । लोगो के नए नए अरमान थे वे देश ओर साहित्य के लिए समर्पित थे । प्रहरी में हरिशंकर जी परसाई की पहली रचना " पैसे का खेल " 23 नवम्बर 1947 को प्रकाशित हुई थी ओर इसके बाद धोखा, भीतर के घाव, भूख के स्वर ओर स्मारक ओर जिंदगी ओर मौत, दुःख का ताज आदि एक से बढ़कर एक रचनाये प्रकाशित हुई जोकि अत्यंत भावप्रधान थी जिनमे गरीबी की छाप स्पष्ट दिखलाई देती है।

नौकरी से त्यागपत्र देकर श्री परसाई जी ने अल्प साधन होते हुए भी लेखन के क्षेत्र में पदार्पण किया वे सर्वहारा वर्ग के शुभचिंतक थे बाद में उनका झुकाव बामपंथ की ओर हो गया था जिसके कारण उनके लेखो में इस प्रकार के वाक्यों का अधिकतर उल्लेख किया गया है जैसे –

“पर जहाँ जीवन की परिभाषा मृत्यु को टालते जाना मात्र हो वहां जीवन को नापता हुआ वर्ष पास पास कदम रखता है ।पर जो जीवन की कशमकश में उलझे है जो पसीने की एक एक बूँद से एक एक दाना कमाते है जिन्हें बीमार पड़ने की फुरसत नहीं है” ।

जो साहित्यकार गरीबो ओर पिछडे वर्ग के लिए चिंतन करता है ओर उनके हितों को ध्यान में रखकर रचना धर्मिता कार्य लेखन करता है वह निश्चय ही दूर दृष्टि का मालिक होता है ।इसमें कोई संदेह नहीं है ओर जो लेखक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति ओर समस्याओं पर इतना अधिक लिख सकता है वह अपने मोहल्ले गाँव ओर कस्बे से बंधा नहीं रह सकता है और निश्चित ही संकीर्ण चिन्तक हो ही नहीं सकता है । परसाई जी का स्वतंत्र चिंतन समग्र सर्वहारा वर्ग के लिए था जो इस देश की सीमाओं को पार करते हुए देश विदेश तक फ़ैल गया । पाई पाई जोड़कर अपने चिंतन द्वारा श्री परसाई जी द्वारा जो साहित्य रचा गया है आज हम उसे परसाई साहित्य के नाम से जानते है और पढ़ते है ।

परसाई जी की पहली रचना “स्वर्ग से नरक”जो मई १९४८ को प्रहरी में प्रकाशित हुई थी जिसमे उन्होंने धार्मिक पाखंड और अंधविश्वास के खिलाफ पहली बार जमकर लिखा था । धार्मिक खोखला पाखंड उनके लेखन का पहला प्रिय विषय था । वैसे हरिशंकर जी परसाई मार्क्सवादी विचारक कार्लमार्क्स से जादा प्रभावित थे । परसाई जी की प्रमुख रचनाओं में “सदाचार का ताबीज” जिसमे रिश्वत लेने देने के मनोविज्ञान को उन्होंने प्रमुखता के साथ उकेरा है।

जिस स्थान पर अमन चैन हो वहां पुलिस वाले कैसे अशांति फैला रहे है और कैसे भ्रष्टाचार फैला देता है को लेकर परसाई जी की रचना “इस्पेक्टर मातादीन” में व्यंग्यपूर्ण वर्णन है ।इस प्रकार यह कहा जा सकता है की हरिशंकर जी परसाई जी की रचना पहले के समय में प्रासंगिक थी और आज भी है और भविष्य में भी रहेगी ।'भोलाराम का जीव' रचना में परसाई जी ने सरकारी संस्थानों, दफतरों तथा राजनैतिक क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार, नौकरशाही, लाल फीताशाही का उद्घाटन किया है । साथ ही भ्रष्टाचार के कारण आम आदमी की पीड़ा मानसिक क्लेश अभावों से भरी जिंदगी की त्रासदी को भी उद्घाटित किया है।

17.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप

- व्यंग्य निबंधकार हरिशंकर परसाई के व्यक्तित्त्व-कृतित्त्व सहित विशेषकर निबंधों की विशेषताएं व लेखन कला के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में सफल हुए ।
- स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज में जन्मी परिस्थितियों के दृष्टिगत उनके निबन्धों का मूल्यांकन व विश्लेषण कर सकने में सक्षम हो सके ।
- हरिशंकर परसाई के व्यंग्य निबंधों का विधिवत अध्ययन करने हेतु सटीक तर्कसंगत दिशा प्राप्त कर सके ।

- हरिशंकर परसाई के निबन्धों के कथ्य या अंतर्वस्तु की सामान्य जानकारी प्राप्त की।

17.6 : शब्द संपदा

1. कटाक्ष - व्यंग्य,
2. शख्सियत - व्यक्तित्त्व,
3. साइक्लोन - चक्रवात-तूफ़ान,
4. निकृष्ट - नीच-अधम,
5. नवोत्थान - नई शुरुआत,
6. कलुषित - दागदार।

17.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खण्ड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए –

1- हरिशंकर परसाई के निबन्धों के दृष्टिगत स्वातंत्र्योत्तर भारतीय परिवेश की विवेचना कीजिए

2- हरिशंकर परसाई की रचना यात्रा का वर्णन कीजिए।

3- निबंधकार हरिशंकर परसाई का हिन्दी साहित्य में स्थान निर्धारित कीजिए।

4- निबंधकार हरिशंकर परसाई की वैचारिकता के विविध आयामों को रेखांकित कीजिए।

खण्ड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1- हरिशंकर परसाई का संक्षित परिचय दीजिए।

2- निबंधकार हरिशंकर परसाई की रचना यात्रा का उल्लेख करते हुए उनके प्रमुख निबन्धों का नामोल्लेख कीजिए।

3- सामाजिक विसंगतियों पर आधारित परसाई के विचार उनके निबन्धों के प्रकाश में लिखिए।

4- निम्नलिखित पर सारगर्भित टिप्पणी लिखिए-

(क) परसाई की भाषा शैली

(ख) परसाई की वैचारिकता

खण्ड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1- परसाई का जन्म कब हुआ

(अ) 14 अगस्त 1924 (ब)18 अगस्त 1924 (स) 22 अगस्त 1924

2- परसाई ने परास्नातक की उपाधि किस विश्वविद्यालय से अर्जित की-

(आ) मुम्बई विश्वविद्यालय (ब)नागपुर विश्वविद्यालय (स) भोपाल विश्वविद्यालय

3- "पगडंडियों का ज़माना" किस विधा की रचना है-

(अ) निबंध (ब)कहानी (स) उपन्यास

4-परसाई रचनावली कुल कितने भागों में संग्रहीत है-

(अ)5 (ब)6 (स) 8

5-परसाई को निम्नलिखित में से कौन सा सम्मान प्राप्त हुआ-

(अ)यशभारती सम्मान (ब)शरदजोशी सम्मान (स) पद्मश्री सम्मान

II. रिक्तस्थान की पूर्ति कीजिए -

1- परसाई की व्यंग्य चेतना -------- भारतीय परिवेश की देन है।

2- परसाई का बचपन बहुत--------में बीता।

3- हरिशंकर परसाई की समकालीन राजनीति पर-------नज़र थी।

4- सन्--------से परसाई ने अपने अपने व्यंग्य लेखन की यात्रा आरम्भ की।

5- परसाई की रचनाएं सन् 1955 तक लगातार -----पत्रिका में छपती रहीं।

III. सुमेल कीजिए

1- स्वर्ग से नरक जहाँ तक	अ) - 1924
2- परसाई का जन्म	आ) - 1995
3- परसाई की मृत्यु	इ) - 1948
4- सदाचार का तावीज़-	ई) -1957
5- परसाई का स्वतंत्र लेखन	उ) - निबन्ध संग्रह
6- वैष्णव की फिसलन	ऊ) - व्यंग्य निबन्ध

17.8 : पठनीय पुस्तकें

1- परसाई रचनावली -संपादक-कमलाप्रसाद

2- आँखन देखी - संपादक- कमला प्रसाद

3-देश के इस दौर में - विश्वनाथ त्रिपाठी सुनो भाई साधो - हरिशंकर परसाई।

इकाई 18 : हरिशंकर परसाई के निबंध 'पगडंडियों का जमाना' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
18.2 उद्देश्य
18.3 मूल पाठ: हरिशंकर परसाई के निबंध 'पगडंडियों का जमाना' की विवेचना
18.3.1 विषय वस्तु
18.3.2 निबंध का प्रयोजन
18.3.3 व्यक्त वैचारिकता
18.3.4 भाषा सौष्ठव
18.3.5 शैली सौन्दर्य
18.4 पाठ सार
18.5 पाठ की उपलब्धियां
18.6 शब्द संपदा
18.7 परीक्षार्थ प्रश्न
18.8 पठनीय पुस्तकें

18.1 : प्रस्तावना

आप इस प्रश्नपत्र की इकाइयों में हिन्दी के प्रसिद्ध निबंधकारों का परिचय और उनके प्रतिनिधि निबंधों की विवेचना का पाठ पढ़ रहे हैं। हर निबंधकार अपनी अलग पहचान रखता है। अक्सर किसी निबंध को पढ़ते ही हम उसके लेखक के नाम का अंदाजा लगा लेते हैं। हरेक का अंदाजे- बयां एक सा नहीं होता। कोई धीर गंभीर होता है तो कोई हास्य रस से भरपूर। हरिशंकर परसाई का परिचय आप पढ़ चुके हैं। आप जान चुके हैं कि कथा साहित्य में जो स्थान मुंशी प्रेमचंद का है, व्यंग्य साहित्य में वही स्थान परसाई जी का है। व्यंग्य को उन्होंने 'विधा' के रूप में विधिवत स्वीकार किया। आज व्यंग्य विधा की हैसियत और इस विधा का नाम परसाई जी की बदौलत भी है। उसके मूल में परसाई का बहु-विधा लेखन ही है। इस इकाई में आप लेखक की एक प्रतिनिधि रचना 'पगडंडियों का जमाना'(1966) की विवेचना करेंगे। आप इस समय इस विश्वविद्यालय के छात्र हैं। आपकी बहुत सी चिंताओं में एक यह भी है कि आपकी परीक्षा समय पर हो। कोई पेपर आउट न हो जाए। कई बार लोग शॉर्ट कट अपनाने की कोशिश करते हैं। शिक्षा क्षेत्र मे भृष्टाचार हमारे सामाजिक पतन का सूचक है। यह निबंध इस सच्चाई को सामने रखता है कि यह जमाना शॉर्टकट का हो गया है। हर कोई इसके चक्कर में है। परसाई जी

ने इस व्यंग्य के द्वारा समाज और शिक्षा के क्षेत्र में फैली आपा-धापी के बारे में चुटकी ली है। यह एक छोटी सी व्यंग्य रचना है। आपको इसे पहले खुद पढ़ना है। तभी आप इसकी विवेचना कर सकेंगे। इसकी विशेषताओं को बता सकेंगे।

18.2 उद्देश्य

इस इकाई के पाठ से आप

- निबंध की एक विधा के रूप में व्यंग्य की एक प्रतिनिधि रचना का पाठ कर सकेंगे।
- 'पगडंडियों का जमाना' व्यंग्य के पाठ से इसके लेखक के व्यक्तित्व और रचना शैली की समझ विकसित कर सकेंगे।
- 'पगडंडियों का जमाना' निबंध का प्रयोजन स्पष्ट कर सकेंगे।
- इस व्यंग्य रचना में व्यक्त वैचारिकता को समझ सकेंगे।
- इस व्यंग्य रचना की भाषा शैली की विशेषताओं को समझ सकते हैं।
- इस निबंध के मुख्य अंशों की व्याख्या करते हुए इसके शैली-सौन्दर्य का विवेचन कर सकेंगे।

18.3 : मूल पाठ : हरिशंकर परसाई के निबंध 'पगडंडियों का जमाना' की विवेचना

18.3.1 निबंध की विषय वस्तु

हिन्दी निबंध के अंतर्गत इस इकाई में अब आप एक महत्वपूर्ण विधा- व्यंग्य- को पढ़ने जा रहे हैं। हरि शंकर परसाई के व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय भी आपको मिल चुका है। यह आप जान सकें हैं कि परसाई जी ने अपने लेखन से व्यंग्य विधा को स्थापित किया। 'ललित निबंध' से 'व्यंग्य रचना' खासी अलग होती है। परसाई ने इस छोटे से निबंध में अपने जमाने की सच्चाई को सामने रखा है। इस जमाने में पढ़ाई-लिखाई और शिक्षा व्यवस्था कैसे दुकानदारी बन गई है, यह सब जानते हैं। लड़के-लड़कियां मेहनत से जी चुराते हैं, और जैसे तैसे इम्तिहान में अच्छे नंबर लाना चाहते थे। आजकल सबको शॉर्ट कट चाहिए। ज्यादा क्या कहें। आप अब पहले इस छोटे से निबंध को खुद आराम से ध्यान लगाकर पढ़ लें। फिर इसकी खासियतों पर गौर करना आसान होगा।

हम यह मानकर आगे बढ़ रहे हैं कि हरिशंकर परसाई जी के व्यंग्य प्रधान निबंध 'पगडंडियों का जमाना' को आपने पढ़ लिया है। आपने इसे पढ़ते समय यह समझा होगा कि निबंधकार इसमें एक समस्या को लेकर चला है। निबंध की एक विषय-वस्तु है। लेखक इस जमाने की बात करता है और बताता है कि जमाना बड़ा खराब है। लोग खुली सड़क पर न चल कर पगडंडियों पर चलते हैं। निबंध में लेखक ने इस एक बात को बार बार कहा है। हर बार वह कहता है कि हर कोई जल्दबाजी में लगा है। हरेक को सफलता चाहिए। पर मेहनत कोई नहीं करना चाहता। सबको आसान रास्ता चाहिए। निबंध में लेखक ने जो कुछ कहा है वह छोटी छोटी घटनाओं की मार्फत कहा है। छोटे छोटे जीवन प्रसंग ही तो इस जिंदगी के बड़े बड़े अनुभव देते हैं । शुरू में लेखक एक छोटी सी घटना का जिक्र करता है। हुआ कुछ यूँ था कि एक आदमी लेखक के पास आता है और वह चाहता है कि लेखक उसकी मदद करे। वह चाहता है कि लेखक

अपनी जान-पहचान के अध्यापक से कहकर उसके बेटे के नंबर बढ़वा दे। यह हमारे समाज का आम चलन हो गया है। पर लेखक ऐसा करने से साफ मना कर देता है। लेखक सोचता है कि वह ईमानदारी दिखाकर अच्छा काम कर रहा है। इससे समाज में अच्छा संदेश जाएगा। इससे भगवान भी खुश होंगे। पर ऐसा कुछ नहीं होता। वह आदमी तो लेखक से नाराज हो ही जाता है, वह उन्हें सब लोगों में बदनाम भी करने लगता है। जो काम उसने नहीं किया उसी का इल्जाम उस पर लगा दिया जाता है। लेखक को बड़ा दुख होता है। वह अपनी आत्मा से पूछता है कि उसे क्या करना चाहिए। उसे ईमानदारी से जिंदगी बसर करनी चाहिए या वैसे ही करना चाहिए जैसे आजकल सब करते हैं। निबंधकार के इस निबंध से ही पढिए।

मैंने फिर ईमानदार बनने की कोशिश की और फिर नाकामयाब रहा। एक सज्जन ने मुझसे कहा कि एक परिचित अध्यापक से कहकर मैं उनके लड़के के नंबर बढ़वा दूँ। यों मैं उनका काम कर देता, पर बहुत अरसे बाद उसी दिन मुझे ईमान की याद आयी थी और मैंने पूरी तरह ईमानदार बन जाने की प्रतिज्ञा कर ली थी। सज्जन की बात सुनकर मुझे पुरानी कथाएं याद आ गयीं और मैंने सोचा कि प्रतिज्ञा करते हुए मुझे देर नहीं हुई कि ये इन्द्र या विष्णु मेरी परीक्षा लेने आ पहुंचे। उन्हें विश्वास नहीं है कि कोई इस जमाने में लंबी तपस्या करेगा। चार कहानियाँ लिखकर लोग युग-प्रवर्तक की लिस्ट में नाम खोजने लगते हैं। इसलिए ये देवता अब तपस्या शुरू होते ही परीक्षा लेने आ पहुंचते हैं।

मैंने उन्हें मन-ही-मन प्रणाम किया और प्रकट कहा, 'मैं इसे अनुचित और अनैतिक मानता हूँ। मैं यह काम नहीं करूंगा।"

वह अपनी आत्मा से पूछता है।लेखक को पता है कि उसकी आत्मा कभी कभी बड़ी सुलझी हुई बात कह देती है। अच्छी आत्मा 'फोल्डिंग' कुर्सी की तरह होनी चाहिए। जरूरत पड़ी तब फैलाकर उस पर बैठ गए, नहीं तो मोड़कर कोने में टिका दिया।

लेखक इस निबंध में व्यंग्य का सहारा लेकर और भी कई वाकयों का जिक्र करता है। वह बताता है कि उसे बहुत से 'स्नेही' लोग मिलते हैं जो बड़ी मीठी बोली बोलकर अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। परीक्षा के पहले और उसके बाद बहुत से बच्चों के पिता आते हैं। वे या तो प्रश्नपत्र को जान लेना चाहते हैं, या अपने बच्चों के नंबर बढ़वाना चाहते हैं। सबके अपने अपने तर्क हैं। कुछ बड़ी चालाकी से , कुछ डरते डरते और कुछ निडर निर्लज्ज होकर पेपर आउट करवाने या नंबर बढ़वाने को कहते हैं। कुछ धमकाते भी हैं। प्रलोभन भी देते हैं। कई लोग अधिकार पूर्वक कहते हैं। लेखक को लगता है जैसे सारा जमाना आम रास्ता और खुली सड़क को छोड़ कर मुख्य मार्ग को छोड़कर पगडंडियों पर आ गया है। येन-केन-प्रकारेण उन्हें सफलता चाहिए। लेखक बहुत दुखी होता है यह देखकर कि अब तो नंबर बढ़वाने का धंधा खुले आम होने लगा है। लोग न समाज से डरते हैं और न सरकार से। निबंधकार कहता है कि सफलता के महल का सामने का आम दरवाजा बंद हो गया है। जिसे उसमें घुसना है, वह रूमाल नाक पर रखकर नाबदान में से घुस जाता है। सब पगडंडी पकड़ते हैं।अनुपयोग के कारण सड़कें दब गयीं हैं।

बोध प्रश्न-

- "बहुत अर्से बाद मुझे ईमान की याद आई" इस कथन में क्या व्यंग्य छिपा है?
- इस व्यंग्य में आत्मा को 'फॉल्डिंग कुर्सी' क्यों कहा गया है?
- लेखक 'मुख्य मार्ग' किसे कहता है?
- 'इन दिनों मुझे बहुत स्नेही मिलते हैं" इस कथन में 'स्नेही' का क्या अर्थ है?
- लोग सफलता पाने के लिए मुख्य द्वार का इस्तेमाल क्यों नहीं करते?

18.3.2 निबंध का प्रयोजन

हरि शंकर परसाई ने यह निबंध एक खास मकसद या प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए लिखा है। यह तो आप समझते ही हैं कि निबंध में यह जो 'मैं' नाम का पात्र है, वह निबंधकार है। यह 'मैं' जो करता और कहता है, वह इस बात को बताने के लिए करता कहता है कि आज का जमाना 'पगडंडियों का जमाना' है। पगडंडी (शॉर्ट कट) वह रास्ता होता है जिससे मंजिल पर जल्दी से और बिना किसी की नजर पड़े फटाफट पहुंचा जा सकता है। इसमें कुछ पैसा जरूर खर्च होता है, पर यह कीमत देने के लिए आज बहुत से लोग तैयार हैं। कुछ लोग जो इसके लिए राजी नहीं होते, वे दुखी रहते हैं। दौड़ में पीछे रह जाते हैं। लेखक से शब्द हैं, "जिन्हें बदबू ज्यादा आती है और जो सिर्फ मुख्य द्वार से घुसना चाहते हैं, वे खड़े दरवाजे पर सिर मार रहें हैं और उनके कपालों से खून बह रहा है"।

प्रयोजन और मकसद यह बताना भी है कि हमारी शिक्षा-पद्यति में यह दोष अब तक कायम है कि लियाकत को नंबरों की दरकार होती है। एक नंबर से भी कोई फेल हो सकता है। उसकी डिवीजन मारी जा सकती है। अंकों, नंबर, मार्क्स की बदौलत उसे आगे की क्लास में दाखिला मिलता है ।नौकरी मिलती है। इसके लिए ही सारी मेहनत,पढ़ाई और जोड़ तोड़ किये जाते हैं। पेपर आउट हो जाए तो अच्छे नंबर आ जाते हैं। पेपर न मिले तो सीधे इम्तिहान की कॉपी जाँचने वालों के पीछे दौड़कर सिफारिश लगाई जाती है। पेपर आउट करवाने और नंबर बढ़वाने की कोशिश ही वह पगडंडी है जिससे यह सफर आसान होता है।

क्या यह जायज तरीका है? कोई भी इसे सही नहीं ठहराएगा। यह गैरकानूनी है और यह अनैतिक भी है। यह बहुत बुरा है क्योंकि इसमें पढ़ने वाले ही नहीं उनकी परवरिश करनेवाले भी मदद करते हैं। बहुत से टीचर भी मजबूर होते हैं या कर दिए जाते हैं। उन पर दबाव होता है और वे कई बार नंबर बढा देते हैं। कामयाबी के लिए गलत रास्ता चुनने वाले सब लोग अपराधी हैं। यह गलत रास्ता या शॉर्ट कट की वह पगडंडी है जिसकी तरफ लेखक इशारा करता है। लेखक दुखी भी है और लाचार भी।

यह बात आईने की तरह साफ है कि परीक्षा में पास होने के लिए कोई शॉर्ट कट अपनाना ठीक नहीं। यह आदत नहीं कुटेव है । बुराई है। समाज को इससे कोई लाभ नहीं होने वाला। जो विद्यार्थी मेहनत करते हैं, उन्हें ही अच्छे अंक लाकर आगे बढ़ने का हक है।

बोध प्रश्न

- निबंध में 'मैं' कौन है?

- दरवाजे पर सिर मारने वालें कौन हैं और वे ऐसा क्यों कर रहे हैं?

18.3.3 व्यक्त वैचारिकता

एक अंग्रेजी व्यंग्यकार जोनाथन स्विफ्ट व्यंग्य के विषय में कहते थे कि व्यंग्य एक ऐसा आईना है जिसमें देखने वाले को अपने अलावा सब का चेहरा दिखाई देता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी भी कुछ ऐसा ही कहते हैं कि व्यंग्य वह है जहां कहने वाला तो अधरोष्ठों में हँस रहा हो और पर सुनने वाला तिलमिला रहा हो। व्यंग्य विधा के लेखक के नाते परसाई जी के लेखन का मकसद समाज की विसंगतियों पर वार करना रहा है। परसाई जी को सच कहने का हौसला और नतीजों को स्वीकार करने का जज्बा रहा है।

निबंध 'पगडंडियों का जमाना' हमारे समाज को आईना दिखाने के लिए है। यह निबंध भारतीय समाज का सच्चा आईना है। समाज में जो कुछ हो रहा है उसका वास्तविक चित्र यहाँ प्रस्तुत किया गया है। यह निबंध केवल हँसने-हँसाने खिलखिलाने और खिल्ली उड़ाने के लिए नहीं। सोचने विचारने के लिए है। यह निबंध हमें सोचने विचारने के लिए मजबूर करता है। चूंकि यह बुरी आदत आम हो गई है। लोग नंबर बढ़वाने और पेपर आउट करवाने के लिए किसी हद तक भी जा रहे हैं। समाज में यह रोग आम हो गया है। अब तो लोग इसको छिपाते भी नहीं। दिल खोलकर सबको अपने काले कारनामे बताते हैं। आम लोग और आम विद्यार्थी भी आजकल इसे कोई बुराई नहीं मानते। जो लोग इस बात का विरोध करते हैं, लोग उनका मजाक उड़ाते हैं। उन पर फब्तियाँ कसते हैं। वे पढे लिखे विचार शील विद्वान कहते कहते थक गए कि यह आदत अब लत बन चुकी है और इसको छोड़ना जरूरी है पर शॉर्ट कट अपनाने वालों पर कोई असर होता दिखाई नहीं देता। इसलिए समझदार लोग लहूलुहान हैं और पगडंडियों पर दौड़ लगाने वाले मजे में दिखाई देते हैं। यह इस जमाने की कड़वी सच्चाई है। यह बात भी याद रखने की है कि परसाई जी के दूसरे निबंधों की तरह इस निबंध में भी आपको किसी खास व्याख्या और अर्थ को जानने के लिए सहयोग की जरूरत नहीं होती। यह निबंध भी सीधी और सरल भाषा में लिखा गया है।

आप भी कह सकते हैं कि परसाई जी की यह रचना उनकी वैचारिक दृष्टि को समग्र रूप से पेश करती है। यह निबंध उनकी गंभीर सोच, सूक्ष्म दृष्टि, वैचारिक फलक, उच्च जीवन मूल्य, गिरती इंसानियत, दरकते इंसानी रिश्ते, आदि को बड़ी खूबसूरती से पेश करने में कामयाब हुआ है ।

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य निबंध 'पगडंडियों का जमाना' का आपने पाठ किया। पढ़ते वक्त आपको कुछ आप बीती बातें भी जरूर याद आई होंगी। जब निबंधकार ने यह निबंध लिखा होगा तब के माहौल में और अब के जमाने में कोई खास फ़र्क दिखाई नहीं देता। लेखक ने जो कहना चाहा है उसे बड़ी बेबाकी से कहा है। कहा ही नहीं है, बल्कि कई वाकयों से चुटकी भी ली है। कहीं पौराणिक प्रसंग और देवताओं का जिक्र है तो कहीं परेशान पिता की मजबूरी है। शिक्षा के क्षेत्र में जो हो रहा है, वह तो है ही,कुछ दुनिया की बात भी है जिसमें चरित्रवान की मजबूरी

है और बेईमान मौज उड़ाते हैं। अब वक्त आ गया है कि आप अपने शब्दों में इस व्यंग्य का सार लिख लें।

बोध प्रश्न

- परसाई के निबंध लेखन का क्या उद्देश्य है?
- कौनसी बुरी आदत अब आम हो गई है?

18.3.4 भाषा सौष्ठव

परसाई जी के भाषा के बारे में इस निबंध को देखते हुए कहना बेहतर है। क्योंकि इनकी लिखी हुई छत्तीस किताबें तो हम अभी पढ़ नहीं सकते। अपनी पहली किताब 'हँसते हैं रोते हैं' (1953) में परसाई ने अपनी भाषा और शैली के बारे में लिखा है, " आदमी को मैंने जैसे हँसते और रोते देखा है, वैसा ही उतारा है...। शैली के मामले में मैं किसी की नकल करने से साफ बच गया हूँ ... भाषा जैसी बोलता हूँ, वैसी ही लिखी है।"

"जैसे बोलता हूँ, वैसे ही लिखता हूँ" कहकर निबंधकार ने अपना ढंग बता दिया है। यह देखना दिलचस्प है कि परसाई शब्दों, पदों, और वाक्यों के चुनाव में एक ही कसौटी को काम में लाते हैं। और वह कसौटी व्यंग्य की है। एक एक वाक्य और एक एक संवाद इसी बात को मद्दे-नजर रखते हुए वे लिखते रहे हैं। एक वाक्य देखें, " ऐसे परमुखापेक्षी विद्यार्थी का भविष्य संदिग्ध है।" इसे ही गागर में सागर भरना कहते हैं।

उन्हें शब्द-सचेत लेखक कहा जाता है क्योंकि वे शब्दों के प्रति बहुत अधिक सावधान थे। उनका यह 'सतर्क बोध' उनका कभी साथ नहीं छोड़ता। वे बहुत आसान भाषा में लिखते हैं जैसे बतिया रहे हों। इसी निबंध में वे बोलते हैं, " क्या गाली खाकर बदनामी करवाकर मैं ईमानदार बना रहूँ? "आप खुद नोट कर सकते हैं कि परसाई जी ने लिखने की जनशैली की खुद खोज कर ली थी। उनके बिंब, प्रतीक, सूत्र, और मुहावरे रचना के भीतर तक समोए हुए होते हैं।

परसाई जी के इस निबंध में भाषा और शब्द व्यंग्य को लेकर चलते हैं।" वत्स! तू परीक्षा में खरा उतरा। बोल , तुझे क्या चाहिए? हम वर देने के मूड में हैं।" इस एक वाक्य में ही संस्कृत का 'वत्स' है तो अंग्रेजी का 'मूड' भी है। ' खरा उतरना' मुहावरा भी है। निबंध का एक और वाक्य देखिए। " सच्चाई के लिए घूस देने की अपेक्षा यह ज्यादा अच्छा है कि झूठ के लिए घूस दूँ।" एक एक वाक्य में परसाई ने कूट-कूट कर गहरे अर्थ भरे हैं। " ईमान के पास बेईमानी की सिफारिशी चिट्ठी न हो, तो कोई उसे कौड़ी का न पूछे। "

इस तरह आप देख सकते हैं कि परसाई जी की भाषा सरल पर धारदार है। निबंधकार के शब्द-शब्द में व्यंग्य के तेवर हैं। इनकी भाषा में तत्सम शब्दों की भरमार नहीं है। उर्दू, फारसी, और अंग्रेजी शब्दों से इन्हें कोई परहेज नहीं है। उनका हर शब्द व्यंग्य का पुट लिए रहता है।

बोध प्रश्न

- कैसे परमुखापेक्षी विद्यार्थी का भविष्य संदिग्ध होता है ?
- परसाई जी 'शब्द सचेत' लेखक किन अर्थों में हैं?

18.3.5 शैली सौन्दर्य

सच्चे व्यंग्य को परसाई ने 'जीवन की समीक्षा' कहा है। सच्चा व्यंग्य आदमी को सोचने के लिए मजबूर करता है।खुद को आईना दिखाता है। दिल में हलचल पैदा करता है। और जिंदगी में फैली बुराइयों को दूर करने की हिम्मत देता है। परसाई के निबंधों में भाषा प्रधान शैली का बहुत उपयोग हुआ है। इससे इनकी भाषा शैली कभी सरल, कभी मुहावरेदार, और कभी सूक्तिपरक हो जाती है। उक्ति प्रधान शैली का उदाहरण देखें- हर सत्य के हाथ में झूठ का सर्टिफिकेट है। इनकी शैली की एक विशेषता यह भी है कि लेखक ने अपने निबंधों में कहानियाँ न लिखकर केवल घटनाओं का इशारा भर किया है। वे निबंध के बीच कभी कभी कहानी का एक टुकड़ा डाल देते हैं। 'पगडंडियों का जमाना' निबंध के शुरू में ही लेखक को 'पुरानी कथाएं' याद आ जाती हैं। वे लिखते हैं कि देव और दानव में अब भी तो यही फर्क है –एक की आत्मा अपने पास ही रहती है और दूसरे की उससे दूर।

शैली लेखक के व्यक्तित्व का परिचायक होती है। यह बात हरिशंकर परसाई के लेखन से भी साबित होती है। परसाई अपने हर निबंध में विषय का सिलसिलेवार परिचय, विषय की व्याख्या या उसका लेखा-जोखा नहीं देते बल्कि व्यंग्य के टुकड़े और घटनाओं की झलक देते हुए अपने आप को ही पेश करते चले जाते हैं। आप खुद देख सकते हैं कि परसाई जी की अपनी लेखन-शैली है। उनके निबंध चुस्त, जीवंत, तल्खी भरे, व्यावहारिक और अनुभव की आंच से तपे हैं। इन निबंधों में एक प्रकार का खुरदुरापन है।

'पगडंडियों का जमाना' निबंध में भी यही है। यह निबंध निबंध की सरहद को पार कर दूर दूर की बातें करता है। लेखक समाज में फैली बहुत सी बुराइयों पर टिप्पणी करते हैं। इस निबंध में भी वे जीवन के कई क्षेत्रों में फैली हुई बुराइयों पर गिन-गिनकर जोरदार प्रहार करते हैं। उनका मन मौजी व्यक्तित्व इस निबंध में भी झलकता है। उनकी भाषा-शैली में खास किस्म का अपनापा है, जिससे पाठक यह महसूस करता है कि लेखक उसके सिर पर नहीं, सामने ही बैठा है।इस निबंध को पढ़कर आपके मनोविकारों का भी अच्छा-खासा व्यायाम हो गया होगा, ऐसा लगता है।

बोध प्रश्न

- परसाई जी की निबंध लेखन शैली से उनके व्यक्तित्व की किन दो विशेषताओं का पता चलता है?
- लेखक को पुरानी कथाएं क्या याद दिलाने की खातिर आ जाती हैं?

18.4 : पाठ सार

हिन्दी के प्रमुख निबंधकारों में हरिशंकर परसाई का शुमार है। उन्होंने व्यंग्य लेखन में अपना नाम कमाया। इनके प्रतिनिधि निबंधों में से एक ' पगडंडियों का जमाना' है। इस निबंध में शिक्षा के क्षेत्र में फैले उस गलत चलन के बारे में बताया गया है जिसकी वजह से सबकी बहुत बदनामी होती है। अभिभावक अपनी संतान को परीक्षा में अच्छे नंबरों से पास होते देखना चाहते हैं। पर कई बार वे देखते हैं कि बच्चों ने ठीक तरह से पढ़ाई नहीं की और उनका पास होना

मुश्किल है। तब कई बार इम्तिहान से पहले पेपर आउट करवाने और परीक्षा के बाद नंबर बढ़वाने के लिए अध्यापकों और परीक्षकों को किसी न किसी तरह मनाया जाता है। यह वैसे तो कानूनन अपराध है। पर यह हमारे समाज में फैली हुई एक ऐसी बुराई है जिस पर लेखक चुटकी लेते हैं। वे देखते हैं कि लोग जीवन के कई क्षेत्रों में मेहनत मशक्कत करने के बजाय शॉर्ट कट अपनाने के चक्कर में पड़ जाते हैं।ईमानदार दुकानदार, नौकरी की उम्मीद रखने वाली जवान लड़की भी समाज में चले आ रहे भृष्टाचार के शिकार होते हैं। लेखक का उद्देश्य केवल भृष्ट आचरण की इस बढ़ती आदत को उजागर करना नहीं है, वे यह भी कहते हैं कि लोग इस तरह की आदतों को छोड़ दें। बच्चे पढ़ाई करें और तब अच्छे नंबर लाएं। जो विद्यार्थी खुद की मेहनत से कामयाब होते हैं, उनकी आत्मा कभी उनको बुरा-भला नहीं कहती। पर जो ऐसा नहीं करते, वे हमेशा मन ही मन पछताते रहते हैं। आखिर ईमानदारी से बढ़कर कोई रास्ता नहीं। यही तो यह 'मुख्य मार्ग' है जिससे चलकर कोई भी गर्व से सिर उठाकर आगे बढ़ सकता है।

18.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के पाठ से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं:

1. हरिशंकर परसाई हिन्दी में व्यंग्य विधा के खास लेखक हैं और 'पगडंडियों का जमाना' उनका प्रतिनिधि निबंध है। यह निबन्ध आज के इस ज्वलन्त सत्य को उद्घाटित करता है कि सभी लोग किसी-न-किसी तरह 'शॉर्टकट' के चक्कर में हैं।
2. इस निबंध का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में फैले भृष्टाचार को उजागर करना है।
3. समाज में लोग अपने बच्चों के परीक्षा में नंबर बढ़वाने के लिए और उससे पहले पेपर आउट करवाने के लिए गलत रास्ते अख्तियार करते हैं।
4. परसाई जी कहते हैं कि यह जमाना पगडंडियों का है और लोग मुख्य मार्ग की बजाय पगडंडियों (शॉर्ट कट) से चल निकलते हैं। रिश्वत देकर कामयाबी खरीदते हैं।
5. लेखक ने इस निबंध में व्यंग्य का सहारा लेकर अपनी बात कही है। रोजमर्रा की जिंदगी से ऐसे उदाहरण दिए हैं जो आप-बीती कहानी से लगते हैं। अब तो लोग दुविधा में भी नहीं पड़ते, खुले-आम ईमान बेच देते हैं, खरीद लेते हैं।
6. इस बुराई को खोलकर पेश करते वक्त लेखक इस उम्मीद से अपने पाठकों को देखते हैं कि वे इस बुराई से निजात पाने की कोशिश करेंगे। ईमान न तो खुद का बिगाड़ें, और न दूसरे का।
7. स्कूल-कॉलेज में पढ़ने वाले इस भृष्टाचार के चश्मदीद गवाह हैं, वे जब इस निबंध को पढ़ते हैं तो उन पर इसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा, वे जरूर जागरूक होंगे।
8. उनकी भाषा-शैली में खास किस्म का अपनापा है, जिससे पाठक यह महसूस करता है कि लेखक उसके सिर पर नहीं, सामने ही बैठा है।

18.6 : शब्द संपदा

1. अधरोष्ठ - अधर तथा ओष्ठ क्रमशः नीचे और ऊपर के होंठ
2. परमुखापेक्षी - प्रत्येक बात के लिए दूसरों का मुँह ताकने वाला; दूसरे से सहयोग के लिए लालायित।
3. संदिग्ध - शक, सुबहा, जिस पर कोई शक हो
4. दुविधा - असमंजस, पशोपेश
5. पगडंडी - वह पतला रास्ता जो लोगों के चलते चलते बन गया हो, इस निबंध में 'शॉर्ट-कट'
6. पुरातत्ववेत्ता - प्राचीन संस्कृति तथा सभ्यता से जुड़े हुए तत्वों की जानकारी रखने वाला व्यक्ति; (आर्कियोलॉजिस्ट)।
7. नाबदान - गंदे पानी की मोरी या नाली; पनाला; (गटर)

18.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड –(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'पगडंडियों का जमाना' निबंध में समाज में फैली किस बुराई की तरफ संकेत किया गया है? छात्रों के जीवन में इसका क्या महत्व है?
2. 'पगडंडियों का जमाना' निबंध की भाषा शैली की विशेषताओं का सोदाहरण विवेचन कीजिए।
3. 'पगडंडियों का जमाना' निबंध का निहितार्थ उदाहरण देते हुए स्पष्ट कीजिए।
4. 'पगडंडियों का जमाना' निबंध की विषय वस्तु पर प्रकाश डालिए।
5.'पगडंडियों का जमाना' किन प्रवृत्तियों का सूचक है और क्यों?

खंड –(ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए

1. 'इन दिनों मुझे बहुत स्नेही मिलते हैं' इस कथन में 'स्नेही' का अर्थ 'शुभचिंतक' नहीं है तो क्या है और क्यों?
2. आत्मा को 'फोल्डिग कुर्सी' किन अर्थों में कहा गया है? स्पष्ट कीजिए।
3. 'चार कहानियाँ लिखकर लोग युग-प्रवर्तक की लिस्ट में नाम खोजने लगते हैं'कहकर परसाई किन लोगों की किन आदतों की तरफ इशारा कर रहे हैं और क्यों?

4. “जिन्हें बदबू ज्यादा आती है और जो सिर्फ मुख्य द्वार से घुसना चाहते हैं, वे खड़े दरवाजे पर सिर मार रहें हैं और उनके कपालों से खून बह रहा है।“ इस कथन के निहितार्थ पर प्रकाश डालिए।

खंड- (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

क) ‘पगडंडियों का जमाना’ में ‘पगडंडी’ का असली मतलब क्या है?

1) आम रास्ता 2) कच्चा रास्ता 3) शॉर्ट कट 4) खतरनाक रास्ता

ख) निबंध में ‘मुख्य द्वार’ से क्या तात्पर्य है?

1) खास रास्ता 2) सही रास्ता 3) मुश्किल भरा रास्ता 4) आसान रास्ता

ग) इस निबंध की भाषा-शैली की प्रमुख विशेषता है?

1) काव्यात्मकता 2) व्यंग्यात्मकता 3) शुचिता 4) इनमें से कोई नहीं

घ) “रमेश चंद्र के भाई सुरेश की मोटर साइकिल , जिस पर अंग्रेजी में नंबर 2431 लिखा है, बिगड़ गई है। वह आपके मित्र सिन्हा के पास सुधरने गई है। आप उसे सुधरवा दें कि कम-से कम 40 प्रतिशत तो काम देने लगे।“ इसमें ‘2431’ क्या है?

1) मोटर साइकल का नंबर 2) टू फोर थ्री वन 3) सुरेश का रोल नंबर 4) रमेश चंद्र का रोल नंबर

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. अच्छी आत्मा ____________________ की तरह होनी चाहिए।
2. आज का जमाना ______________________________ है।
3. ___________________ लेखक के व्यक्तित्व का परिचायक होती है।
4. सच्चे व्यंग्य को परसाई ने ___________________ कहा है।
5. हर सत्य के हाथ में झूठ का __________________ है।

III. सुमेल कीजिए।

अ) फोल्डिंग कुर्सी	क) विद्यार्थी
आ) मुख्य मार्ग	ख) अच्छी आत्मा
इ) परमुखापेक्षी	ग) पगडंडी
ई) शॉर्ट कट	घ) सदाचार

18.8 : पठनीय पुस्तकें

1. परसाई रचनावली
2. हरिशंकर परसाई : विश्वनाथ त्रिपाठी
3. तुम्हारा परसाई :कान्ति कुमार जैन

इकाई 19 : निबंधकार विद्यानिवास मिश्र : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

19.1 प्रस्तावना

19.2 उद्देश्य

19.3 मूल पाठ: निबंधकार विद्यानिवास मिश्र: एक परिचय

19.3.1 निबंधकार विद्यानिवास मिश्र का जीवनवृत

19.3.2 निबंधकार विद्यानिवास मिश्र की रचनायात्रा

19.3.3 निबंधकार विद्यानिवास मिश्र की वैचारिकता के विविध आयाम

19.3.4 निबंधकार विद्यानिवास मिश्र का हिन्दी साहित्य में स्थान

19.4 पाठ सार

19.5 पाठ की उपलब्धियाँ

19.6 शब्द संपदा

19.7 परीक्षार्थ प्रश्न

19.8 पठनीय पुस्तकें

19.1 : प्रस्तावना

शुक्लोत्तर युग निबंध का आधुनिक युग माना जाता है। स्वतंत्रा से पूर्व और बाद की रचनाओं का संकलन इस युग की विशेषता है। राष्ट्रीय चेतना से ओत - प्रोत हो कर यथार्थ से जुड़ कर निबंधकारों ने अपने निबंध लिखे। शोषित, दीन -हीन, पीड़ित मानवों का चित्रण इस युग के लेखकों का मुख्य विषय रहा। इस युग का साहित्य सहज, व्यवहारिक, सामाजिक, विचारात्मक, विषय -वैविध्य पूर्ण रूप रूप से भरा हुआ है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेंद्र, आचार्य नन्द दुलारे वाजपई, इलाचंद्र जोशी, रामवृक्ष बेनीपूरी, डॉ. राम विलास शर्मा, डॉ. भगवत शरण उपाध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, शिंदां सिंह चौहान, डॉ विनय मोहन शर्मा, प्रभाकर माचवे, विद्यानिवास मिश्र आदि प्रमुख निबंधकार हैं। इस इकाई में आप शुक्लोत्तर युग के अग्रणी निबंधकार विद्यानिवास मिश्र के बारे में पढ़ेंगे।

19.2 : उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप

- डॉ, विद्यानिवास मिश्र के जीवन वृत्त से परिचित हो सकेंगे।

- डॉ विद्यानिवास मिश्र के व्यक्तित्व की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- डॉ. विद्यानिवास मिश्र की रचना यात्रा के विभिन्न पड़ावों से अवगत हो सकेंगे।
- डॉ. विद्यानिवास मिश्र के निबंधों की विशेषता के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- उनकी वैचारिकता के विविध आयामों से अवगत हो सकेंगे।
- हिन्दी साहित्य में उनके महत्त्व के बारे में जान सकेंगे।

19.3 : मूल पाठ : निबंधकार विद्यानिवास मिश्र : एक परिचय

19.3.1 निबंधकार विद्यानिवास मिश्र का जीवनवृत्त

जन्म और परिवार

भारतीय साहित्य की सुगंध भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी फ़ैलाने वाले निबंधकार पंडित विद्यानिवास का जन्म 14 जनवरी 1926 को उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जिले के पहाड़डीहा गाँव में हुआ था। इनके पिता पंडित प्रसिद्ध नारायण मिश्र की विद्वता दूर -दूर तक फैली हुई थी। उनकी माता श्रीमती गौरादेवी की भी लोक संस्कृति में गहरी आस्था थी। इसी कारण बचपन से ही मिश्र जी के मन में भारत, भारतीयता और हिंदुत्व के प्रति प्रेम जागृत हो गया। 1942 में राधिका देवी से विवाह हुआ तो कुछ समय के लिए गोरखपुर में अध्यापन का कार्य किया और फिर अमरीका में कैलिफोर्निया और फिर वाशिंगटन विश्विद्यालय तक की यात्रा तय की।

शिक्षा - दीक्षा

प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा गोरखपुर में ही प्राप्त की। उच्च शिक्षा प्रसिद्ध केंद्र प्रयाग और फिर काशी से प्राप्त किया। प्रयाग विश्विद्यालय में हिन्दी के विभागाध्यक्ष वेदमूर्ति क्षेत्रेश चंद्र चटोपाध्याय उनके प्रेरक अवं गुरु थे। उन्होंने शोध कार्य के लिए सबसे मुश्किल विषय 'पाणिनी की अष्टाध्यायी' को चुना। कठोर परिश्रम के बाद 1960 -61 में 'पाणिनीय व्याकरण की विश्लेषण पद्धति' पर गोरखपुर विश्वविद्यालय से पी. एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। उनके शोध कार्य के लिए अनेक विद्वानों से बहुत प्रसंशा और शुभकामनाएँ मिलीं।

जीवन संघर्ष

मिश्र जी अध्यापन को अपनी आजीविका का आधार बनाया। देशी-विदेशी विश्वविद्यालयों में अध्यापन का काम किया। विद्यानवास प्रतिभा संपन्न थे। इन्होने अपने -आप को अद्यापन तक ही सीमित नहीं रखा। दस साल तक मिश्र जी आकाशवाणी मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के सूचना विभाग में भी कार्य किया। प्रसार भारती से जुड़ कर इनका योगदान रहा। लेखन के क्षेत्र में मिश्र जी ने सारी विधाओं में योगदान दिया। वे इस बात को मानते थे कि साहित्य और संस्कृति में कोई भेद नहीं है। अपने जीवन की सच की भट्टी में तप कर ही साहित्य में निखार आएगा।

बोध प्रश्न : -

- डॉ. मिश्र जी जन्म कब और कहाँ हुआ ?
- डॉ. मिश्र के गुरु कौन थे ?

उपलब्धियाँ और सम्मान

श्री विद्यानिवास मिश्र संस्कृत के विद्वान्, जाने -माने भाषाविद, हिन्दी साहित्यकार और एक सफल संपादक थे। विद्यानिवास मिश्र ने कुछ वर्ष तक 'नवभारत टाइम्स' समाचार पत्र के सम्पादन का दाइत्व सम्भाला था। ललित निबंध परम्परा में मिश्र जी, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और कुबेरनाथ के साथ मिलकर एक त्रिवेणी बनाते हैं। द्विवेदी के बाद ललित निबंध को अगली चरन तक ले जाने का श्रेय मिश्र जी को जाता है। संख्या की दृष्टि से ललित निबंध साहित्य में डा. मिश्र का योगदान सबसे अधिक है।

मिश्र जी बहुमुखी प्रतिभा संपन्न रहे। वे साहित्य के हर विधा में सक्रीय रहे और उनका योगदान अद्वितीय रहा। विंध्य - प्रदेश और उत्तर- प्रदेश के सूचना विभागों से सम्बद्ध रहे। साहित्य कार्यकारी मंडली के सदस्य और संस्कृत भाषा सलाहकार मंडल के संयोजक रहे, मिश्र जी प्रकाशित कृतियों की संख्या सत्तर से अधिक है, जिनमें व्यक्तिव्यंजक निबंध संग्रह, आलोचनात्मक तथा विवेचनात्मक कृतियाँ, भाषा चिंतन के क्षेत्र में शोध ग्रंथ और कविता संकलन सम्मिलित हैं।

सम्प्रति आप 'इनसायक्लोपीडिया ऑफ हिन्दुइज़्म' और हिन्दी मासिक साहित्य के सम्पादन कार्य से जुड़े रहे। डॉ.मिश्र आधुनिक ज्ञान -विज्ञान, समाज - संस्कृति, साहित्य - कला की नवीनतम चेतना और तेजस्विता से मंडित थे। संस्कृत भाषा के साथ हिन्दी और अंग्रेजी साहित्य के मर्मज्ञ

डॉ. मिश्र अनेक संस्थाओं के सम्मानित सदस्य रहे। उनका जातीय, आंचलिक ज्ञान पाश्चात्य परिवेश से जुड़ कर और निखारा। विदेश में रहकर भी वे अपने जड़ों से जुड़े रहे।

पुरस्कार -

साहित्य के जगत में अपनी अद्वितीय योगदान और सेवाओं के लिए डॉ. मिश्र जी को अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। भारतीय ज्ञानपीठ के मूर्ति देवी परस्कार -1989, के.के. बिडला फाउंडेशन के शंकर सम्मान, भारत के पद्मश्री (1988) और पद्मभूषण (1999) से सम्मानित किया गया। इसके अलावा विश्व भारती सामान (1996), मंगला प्रसाद पारितोषिक (2000), हेडगेवार प्रज्ञा पुरस्कार। सराहनीय सेवा के लिए राष्ट्रपति का पुलिस पदक(1994), हिन्दुस्तान समाचार का भाषा सम्मान (2014), सेवक स्मृति साहित्य श्री सामान (2014),

वासुदेव द्विवेदी सम्मान (2017) आदि। राजग (राष्ट्रीय जनतानत्रिक गठबंधन) शासन काल में उन्हें राज्य सभा का सदस्य मनोनीत किया। उनके अद्वितीय योगदान को जो सम्मान मिला साथ ही उनके नाम पर भी साहित्य जगत के उभरते साहित्यकारों एवं पत्रकारों को सम्मानित किया गया। उतार प्रदेश, मध्य -प्रदेश सरकारों ने डॉ. विद्या निवास मिश्र पुरस्कार से साहित्यकारों को सम्मानित किया। सन 2017 में डॉ. सतीश चतुर्वेदी, कस्तूरबा कन्या कॉलेज में पदस्त, को इस पुरस्कार से सम्मानित किया।

डॉ.विद्यानिवास मिश्र पुरस्कार राज्य कर्मचारी साहित्य संस्थान द्वारा मेरठ के अरुण कुमार मानव को 2024 में दिया गया। 2023 में विद्यानिवास स्मृति सम्मान तमिल के तुलसी कहे जाने वाले साहित्यकार डॉ. गोविंदराजन को प्रदान किया गया। मिश्र का योगदान निबंध, काव्य जगत के साथ -साथ पत्रकारिता के जगत में भी रहा। वे एक सफल पत्रकार के रूप में भी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। उनके इस दिशा में दिए योगदान की कदर करते हुए उनके नाम पर पत्रकारिता जगत में भी लोगों को सम्मानित किया गया है। विद्यानिवास मिश्र राष्ट्रीय पत्रकारिता पुरस्कार 2011 - श्री राजनाथ सूर्य, लखनऊ।

2012 - श्री असीम कुमार मित्र, कोलकाता।

2013 - श्री धीरेन्द्रनाथ चक्रवर्ती, असम।

2014 - श्री शेखर गुप्ता, दिल्ली।

19.3.2 निबंधकार विद्यानिवास मिश्र की रचना यात्रा

1. छितवन की छाँह -पहला निबंध संग्रह, 1953
2. हल्दी दूब -1955
3. कदम की फूली दाल -1956
4. तुम चन्दन हम पानी - 1956
5. आंगन का पंछी और बंजारा मन - 1963
6. मैंने सिल पहुँचाई -1966
7. बसंत आ गया पर कोई उत्कंठा नहीं 1972
8. मेरे राम का मुकुट भीग रहा है 1972
9. परंपरा बंधन नहीं 1976
10. कंटीले तारों के आर पार 1976
11. कौन तू फुलवा बीन निहारी - 1980
12. निज मन मुकुर 1981
13. भ्रमरानन्द के पत्र - 1981
14. तमाल के झरोखे से -1981
15. अस्मिता के लिए - 1981
16. संचारिणी - 1982
17. अंगद की नियति -1984
18. लागो रंग हरी -1985
19. गाँव का मन - 1985
20. नैरंतर्य और चुनौती - 1988
22. शैफाली झर रही है - 1989
23. भारतीयता की पहचान - 1989

24. भाव पुरुष श्रीकृष्ण 1990

25. सोऽहम -1991

26. जीवन अलभ्य है जीवन सौभाग्य है - 1991

27. देश, धर्म और राजनीति - 1992

28. नदी नारी और संस्कृति - 1993

29. फागुन दुइ रे दिन - 1994

30. बूँद मिले सागर में - 1994

31. पीपल के बहाने - 1994

32. शिरीष की याद आई - 1995

33. भारतीय चिंतन धारा - 1995

34. साहित्य का खुला आकाश - 1996

35. स्वरूप -विमर्श (सांस्कृतिक पर्यायलोचन से सम्बंधित निबंधों का संकलन) - 2001

36 गाँधी का करुण रस - 2002

37.थोड़ी सी जगह दें - (घुसपैठियों पर आधारित निबंध) - 2004

38. वाचिक कविता अवधी - सं, 2005

39. रहिमन पानी राखिए - 2006

40. कितने मोरचे -2007

41. साहित्य के सरोकार -2007

42. तुलसीदास भक्ति प्रबंध का नया उत्कर्ष

43. भारतीय संस्कृति के जीवन पर आधारित पुस्तक

44. चिड़िया रैन बसेरा

45. भ्रमरानन्द का पचड़ा-(श्रेष्ठ कहानी संग्रह)

46. राधा माधव रंग रंगी (गीतगोविन्द की सरस निबंध)

47. लोक और लोक का स्वर (लोक की भारतीय जीवनसम्मत परिभाषा और उसकी अभिव्यक्ति)

48. व्यक्ति -व्यंजना (विशिष्ट व्यक्त व्यंजक निबंध)

49. सपने कहाँ गए (स्वाधीनता संग्राम पर आधारित पुस्तक)

50. आज के हिन्दी कवि -अज्ञेय

51.हिन्दी और हम

52. हिन्दी साहित्य का पुनरालोकन

53. व्यक्ति व्यंजन

54. वाचिक कविता भोजपुरी (सं)

55. बीत गया है

56. अग्निरथ

57. तुलसी मंजरी

58. महाभारत का काव्यार्थ ('महाभारत का काव्यार्थ' अज्ञेयजी द्वारा डॉ. वत्सल निधि की ओर से

डॉ.हीरानंद शास्त्री व्याख्यान माला की पाँचवीं लड़ी के रूप में दिलवाए गए तीन व्याख्यानों

का संकलन है।)

बोध प्रश्न : -

- पत्रकारिता में डॉ. मिश्र जी के नाम पर दिया जाने वाला पुरस्कार कौन सा है ?
- डॉ. मिश्र जी को भारत सरकार से कौन सा पद दिया गया ?

19.3.3 निबंधकार विद्यानिवास मिश्र के वैचारिकता के विविध आयाम

डॉ मिश्रा जी आधुनिक ज्ञान - विज्ञान, समाज- कला की नएपन की चेतना और आलोक से भरे हुए थे। इनकी जितनी पकड़ संस्कृत भाषा पर थी उतनी ही हिन्दी, अंग्रेजीऔर भोजपुरी पर भी थी। परंपरा, पुराण, इतिहास से जुड़े होते हुए भी उनके साहित्य मेंआधुनिक सोच का ताज़ापन भी मिलता है। इसी कारण इन्हें बाकी निबंधकारों से अलगऔर विलक्षण पहचान मिली है। मिश्रा जी संस्कृत, लोक साहित्य, पाश्चात्य चिंतन सभी का समाहार अपनी लेखनी में दिखाते थे। मिश्री की जी की जेड धरती से जुड़ी हुई हैं। सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक, आसपास के परिवेश, लोकजीवन सभी के प्रति बहुत ही सटीक परख है। मिश्रा जी की अंतर्दृष्टि जितनी पैनी है, अभिव्यक्ति भी उतनी ही मर्म स्पर्शी है। अपनी निबंध लेखन के संसार के बारे में वे खुद लिखते हैं - “हिमालय के आंचल के निचले छोर ने मुझे अपनी ममता से खड़ा किया, गंगा-यमुना ने मुझे संघर्षों का झूला झुलाकर गति दी और विंध्य ने धैर्य की गंभीरता दी..... संस्कृत में जन्म कर अंग्रेजी का स्तन्यपान किया है, पर मुझे छाँह मिला है भोजपुरी के धानी आँचल में।”

मिश्रा जी के निबंधों में जितनी विविधता है शायद ही हिन्दी साहित्य में किसी और निबंधकार में देखने को मिल सकते हैं। निबंध जी की शैली हैउनके व्यक्तित्व का परिचायक है। विष्णु जी के निबंधों को शैली के आधार पर निम्न वर्गों में विभक्त किया जा सकता है -

1 ललित- भावात्मक शैली -

2 वर्णानात्म्क शैली

3 विवरणात्मक शैली

4 हास्य - व्यंग्य शैली

भावात्मक शैली में लिखे निबंध आत्मीय निबंध होते हैं, वैयक्तिक निबंध भी इसी शैली के अंतर्गत आते हैं। इस शैली के निबंधपाठकों को अपने-अपने अस्तित्व से अलग कर की लेखकके व्यक्तित्व में विलीन कर देती है। पंडित विद्या निवास मिश्र मुख्ता ललित निबंध लिखे हैं - छितवन की छाँह, कदम की फूली डाल, तुम चन्दन हम पानी और बनजारा मन, तमाल के झरोखे से, गांव का मन आदि निबंध संग्रह का मूल धरातल भावात्मक है। यह निबंध इतिहास

का नया अर्थ ढूंढती है, देश-विदेश के साहित्य का मर्म पहचानती है और नर -नारायण पर समान रूप से श्रद्धा रखती है। वर्णनात्मक शैली में स्थान लेखक किसी स्थान या घटना का वर्णन बड़े ही सजीवता और सहजता के साथ करता है। मुकुट मेखला और नूपुर, राष्ट्रपति की छाया, रूपल धुआं, रेवा से रीवा आदि निबंध वर्णन और विवरण दोनों में ही अपनी छाप छोड़ते हैं। मिश्रा जीके निबंधों में व्यंग्य अधिक है और हास्य कम।

मिश्रा जी ने पुराण की अनेक कहानियों को अपनी रचनाओं में नए संदर्भ में प्रस्तुत किया है। अपने निबंध 'लो अपना अहंकार डाल दो' में मिश्रा जी ने शिव पार्वती संवाद के माध्यम से देवी देवताओं के साथ मनुष्यों को भी आलस्य दूर रहने तथा सदैव कार्यशील रहने की प्रेरणा देते हैं - "पार्वती चिढ़ाती है कि आप देवताओं को सताने वालों को इतने प्रतापी क्यों बनाते हैं ?शिव अट्टाहास करते हैं और उन्हें प्रतापी ना बनाए तो देवता आलसी हो जाए, उन्हें झकझोड़ने के लिए कुछ कौतुक करना पड़ता है।"

विद्या निवास मिश्रा ने हिंदू धर्म के व्रत यो उपवास पद्धति और उससे संबंधित देवी देवताओं का वर्णन अपने निबंधों में यत्र तत्र किया है। 'माटी के माधव' निबंध में शिव के स्वरूप का वर्णन करते हुए लिखते हैं- "शिव नृत्य, संगीत, नाटक आदि के प्रवर्तक आचार्य हैं। वे नटराज है। कलाधर हैं, काल के डमरू के ताल पर ही कला थिरकती है।"

पुराणों के अध्येता विद्यानिवास मिश्र पुराणों का ज्ञान और उसका अवलोकन आज के समाज के परिप्रेक्ष्य में आवश्यक मानते हैं। उनका मानना है कि पुराणों में 'वसुधैव कुटुंबकम' की भावना है जिससे आदमी अकेलेपन से जूझते हुए जीवन को सुंदर बन सकता है। शिवजी के अनुसार पुराण कथाएं सामान्य जन को अपनी संस्कृति से जोड़ने तथा उनका जीवंत बनाए रखने, जीवन को त्याग, प्रेम, सहानुभूति, करुणा आदि मानवीय मूल्यों को सबको एकता के सूत्र में बांधने का कार्य करते हैं। मिश्रा जी ने पुराणों के माध्यम से पाठकों से भारतीय संस्कृति से परिचित कराकर उसकी प्रतिष्ठा को बढ़ाने तथा उसका महात्म्य स्तथापित करते हैं। पुराणों की कथाओं - तथ्यों को अपने निबंधों में स्थान देकर मिश्रा जी जनमानस के हृदय को छू लेते हैं। उनके निबंधों में लौकिक साहित्य के तत्व होने पर भी उसमें नवीनता बनी हुई है वह आज भी बहुत प्रासंगिक है।

लोग संस्कृति और लोकमानस उनके ललित निबंधों के अभिन्न अंग थे, उसे पर भी पौराणिक कथाओं और उपदेशों की फुहार उनके ललित निबंधों को और अधिक प्रवाहमय बना देते हैं। इसकी स्पष्ट झलक हमें हमें उनके निबंधों 'तुम चंदन हम पानी', साहित्य का खुला आकाश, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है, भ्रमरानंदन के पत्र, महाभारत का काव्यार्थ आदि में देखने को मिलता है। वसंत ऋतु से विद्यानिवास मिश्र को विशेष लगा था। उनके ललित निबंधों

में ऋतुचार्य का वर्णन उनके निबंधों को जीवंतता प्रदान करता था। फागुन दी रे दिन में बसंत के पर्वों को व्याख्या दिया है। विद्यानिवास मिश्र कला एवं भारतीय संस्कृति के मर्मज्ञ थे। खजुराहो की चित्रकला का सूक्ष्मता और तार्किकता से अध्ययन कर उसकी नई अवधारणा प्रस्तुत करने वाले विद्या निवास मिश्र ही थे।

साहित्यिक जगत में मिश्रा जी अपनी व्याख्यानों के लिए भी जाने जाते रहेंगे। सन 1994 के 30 नवंबर और 1 दिसंबर को जयपुर आकाशवाणी वाणी की राजेंद्र प्रसाद स्मारक व्याख्यान माला में साधुमान और लोकमत पर दिए पर व्याख्यान ललित निबंध की शैली में दिया गया था जिसकी प्रेरणा स्रोत तुलसी का मानस रहे। इसके अलावा जयपुर और कोलकाता में 'गीत गोविंद' परउनके व्याख्यान करवाए गए आगे चलकर जो 'राधा माधव रंग रंगी' नाम से प्रकाशित हुए।

अपनी निबंध संसार के बारे में मिश्रा जी कहते हैं - "वैदिक सूत्रों के गरिमामय उद्गम से लेकर लोकगीतों के महासागर तक जिस अविच्छिन्न प्रवाह की उपलब्धि होती है उस भारतीय परंपरा का मैं स्नातक हूँ ।"ललित निबंधकार विद्या निवास के विचार हिन्दी इनके अंतःकरण से निकलते हैं, यथार्थ को सामने रखने की कोशिश करते हैं। रोचकता लाने के लिए कहीं -कहीं स्वप्न और कल्पना का सहारा अवश्य लिया है फिर भी यह ना तो विचारों का बोझ डालते हैं, न मात्र कोरी कल्पना में व्यस्त हो जाते हैं। इतिहास पुराण से विचार ग्रहण कर उसे भी रोचक बना डालते हैं, यही उनके निबंधों की विशेषता है। संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी भाषाओं के विद्वान भाषा शास्त्री विद्या निवास मिश्र ने अपने ललित निबंधों में प्राय सरल सहज भाषा का उपयोग किया है। इनके ललित निबंधों के शब्द स्रोत इन भाषाओं के अतिरिक्त ग्रामीण जनजीवन की भोजपुरी बोली भी है। इनके ललित निबंधों में है - प्राकृतिक अपादनों से लेकर अपने देश के विस्तृत सांस्कृतिक जीवन की रम्य झांकी, घर आंगन से लेकर विशाल विश्व के प्रसिद्ध नगरों में गुजराता हुआ प्रवासी का दर्द, अपनी मिट्टी की सोंधी महक, के इतिहास का नया अर्थ ढूंढता हुआ स्वस्थ, परिष्कृत सबर व्यक्तित्व वाला निबंधकार। देश विदेश के साहित्य अज्ञात जब सामान्य जन जीवन के विविध पक्षों के अंतिम परत तक पहुंचता है तब जिस नवनीत, जिस जीवन अमृत को पता है वह उनके ललित निबंधों के कक्षा में भरा है।

बोध प्रश्न : -

- डॉ. मिश्र जी किन - किन भाषाओं में दक्ष थे ?
- डॉ. मिश्र की शैली की विशेषता क्या है ?

3.4 निबंधकार का हिन्दी साहित्य में स्थान

डॉ मिश्रा एक सफल निबंधकार, कवि, अध्यापक, लेखक तथा संपादक रहे। मिश्रा जी लंबे समय तक विदेश में अध्यापन कार्य से जुड़े रहे। रामायण सम्मेलन तथा विश्व हिन्दी सम्मेलनों में इन्होंने हिन्दी और हिंदुत्व का प्रचार और प्रसार किया। रामचंद्र शुक्ल के बाद हिन्दी साहित्य जगतमें सबसे बड़ा योगदान मिश्रा जी का रहा। द्विवेदी जी की परंपरा को प्रचार और प्रसार मिश्रा जी ने दिया।

डॉ मिश्रा बहुत कुछ हजारी प्रसाद द्विवेदी के समान जीवन दृष्टि के पक्षधर हैं। उनकी दृष्टि में भी भारतीय संस्कार -युक्त जीवन में ही मानव - जीवन की सार्थकता दिखती है। आत्म संतोष, आत्म सम्मान, ईश्वर के प्रति आस्था, त्याग - बलिदान से युक्त सात्विक प्रेम भाव, राष्ट्र प्रेम, सहजता आदि बार-बार इनके निबंध अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। यह आदर्शवादी जीवन- दृष्टि रखते हैं। लोक संस्कृति को विषय बनाकर ग्रामीण परिवेश की चर्चा में रस लेते विद्या निवास मिश्र की भाषा शैली की सहजता - व्यावहारिकता एवं प्रभावोत्पादकता संपूर्ण ललित निबंधों की भाषा शैली में सर्वाधिक प्रशंसनीय है।प्रकृति प्रेम के संबंध विषय हजारी प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय के निबंधों में व्यापकता के साथ उपस्थित है। विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय ने प्रकृति के प्रांगण में मन रमाकर ऋतु - मास का जितना अनुभव किया उतना और किसी ने नहीं। शेष नगर जीवन के निबंधकारों को इससे कोई मतलब नहीं रहा है। जहां हजारी प्रसाद द्विवेदी ने मात्र ग्राम में जीवन में ही रुचि दिखेलाई है वही विद्या निवास मिश्रा कुबेरनाथ राय गांव और शहर के जीवन से प्राप्त अनुभव वर्तमान सत्य एवं परंपरागत यथार्थ व्यक्त करते हैं। इनका झुकाव गांव की और अधिक है। विद्यानिवास मिश्र अपने जीवन की समस्याएं, निजी व्यक्तित्व की विशेषताएं आदि व्यक्त करके अपने मां का बोझ पाठकों के सिर पर फेंकते रहे हैं और कला की शक्ति ऐसी रही कि पाठकों ने कभीउ से नकारा नहीं बल्कि सहर्ष स्वीकार किया है।डॉ विद्या निवास मिश्रा अध्ययन और अनुभव की दृष्टि से जितने संपन्न है उतनी ही जीवन के प्रति अपना दृष्टिकोणम व्यक्त करने में भी समर्थ हुए हैं। डॉ विद्या निवास मिश्रा अपनी ग्रामीण प्रियता के कारण प्रकृति की गोद में ही भ्रमण करते हैं यह उल्लास के साथ धीरे-धीरे नष्ट होते प्राकृतिक सौंदर्य के प्रति क्षोभ भी व्यक्त करते हैं।

19.4 : पाठ सार

भारतीय संस्कृति की अविरल भावधारा ही डॉ. विद्यानिवास मिश्र के ललित निबंधों में चिंतन - विकास बनकर आई है। डॉ मिश्र भारतीय संस्कृतिऔर मनुजता को प्रदूषित करने वाली विचारधाराओं और तत्वों से टकराते हैं। इस टकराहट की अनुगूंज भारतीयता के पक्ष में तर्क सहित उनके निबंधों में अभिव्यक्त होती है। उनके 25 से अधिक ललित निबंध -संग्रह और 75 से अधिक साहित्यिक ग्रन्थ हैं। द्विवेदी जी की ललित निबंध की परंपरा को मिश्रा जी नेअपने उत्कर्ष

तक पहुँचाया। गांव और विश्व विश्व संस्कृति और सभ्यता, परंपरा और आधुनिकता, शास्त्र और लोक, सत्य और ऋतु, विश्वास और विज्ञान, यथार्थ और आदर्श पर चिंतन करते हुए उन्होंने ललित निबंध का उसकी फलवती और मधुमती भूमिका में सक्षम सिद्ध किया है। डॉ. मिश्र ग्रामीण जिजीविषा, वैदिक परंपरा और मनुष्य की संस्कारी सृजनात्मक को लेकर ललित निबंधों को अलग और सर्वथा रचनाकारी स्वरूप प्रदान करते थे। भारत तथा विदेश में अनेक सम्मेलनों में हिन्दी के संघर्ष को मजबूती प्रदान की।हिन्दी शब्द संपदा, हिन्दी और हम, हिन्दीमय जीवन और प्रौढ़ों का शब्द संसार जैसी उनकी पुस्तकों ने हिन्दी की संप्रेषण के दायरे को बढ़ाया था। तुलसी, सूरदास, भारतेंदु, कबीर, अज्ञेय, रसखान, रहीम, राहुल सांस्कृत्यायन की रचनाओं को संपादित कर उन्होंने हिन्दी के साहित्य को विपुलता दी है।

पद्मभूषण मिश्रा जी राज्य राज्यसभा के संसद के रूप में कार्य करते हुए14 फरवरी 2005 को एक सड़क दुर्घटना में परलोक सिधार गए। उसे समय उनकी उम्र लगभग 80 वर्ष की थी। ललित निबंध साहित्य का चमकता ध्रुव ताराआसमान में अनेक तारों के बीच जाकर चमकने लगा।

19.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं-

1 डॉ मिश्र की पहला निबंध संग्रह 'छितवन की छाँव' आधुनिक हिन्दी का एक मौलिक प्रतिमान है। जिसके प्रतिमान हमारे जन - जीवन से जुड़े हैं।

2 भोजपुरी लोकगीत और ग्राम्य जीवन का वर्णन उनके निबंधों में मिलता है।

3 विद्यानिवास मिश्र जी को वसंत ऋतु से खासा लगाव था।

4 'पाणनीय व्याकरण की विश्लेषण पद्धति' जैसे मुश्किल विषय पर अपना शोध कार्य किया।

5 वे नवभारत टाइम्स सम्पादक और साहित्य अमृत संस्थापक सम्पादक रहे।

6 साहित्य लेखन के साथ वे दस वर्षों तक सूचना विभाग से भी जुड़े रहे।प्रसार भारती के सदस्य भी रहे।

7 काशी विद्या पीठ, हिन्दी विद्या पीठ (देवधर) और सम्पूर्णानद विश्विद्यालय के कुलपति रहे।

8 रामायण सम्मलेन और विश्व हिन्दी सम्मेलनों में हिन्दी अवं हिन्दू धर्म का खूब प्रचार अवं प्रसार किया।

9 उनके साहित्य सहयोग के लिए पद्माश्री, पद्माभूषण, साहित्य अकादमी पुरस्कार, व्यास सम्मान, ज्ञानपीठ सामान आदि प्रतिष्ठित सम्मानों से शुशोभित किया गया।

10 साहित्य शिरोमणि डॉ मिश्र जी को अपने अद्वितीय साहित्यिक उपलब्धियों के लिए राज्य सभा का सदस्य मनोनीत किया गया।

19.6 : शब्द संपदा

1 अध्येयता - पाठक, अध्ययन करने वाला
2 औदात्य - उदारता
3 मंडित - विभूषित, सजाया हुआ
4 व्याख्यान - भाषण, प्रवचन
5 सूक्ष्मता - बारीकी
6 उद्गम - आविर्भाव, उत्पत्ति स्थान
7 स्नातक - विश्विद्यालय से प्राप्त उपाधि, ग्रेजुएट
8 क्षोभ - व्याकुलता, खलबली
9 अवधारणा - सुविचारित धारणा, विचारव
10 सात्विक - सरल और शुद्ध
11 अविच्छित्र - ढका हुआ, छिपा हुआ
12 परिप्रेक्ष्य - दृष्टि
13 मर्मज्ञ - तत्वज्ञ, गूढ़ रहस्य को जानने वाला
14 महात्म्य - महिमा, गौरव
15 प्रभावोत्पादकता - गुण - कारिका, प्रभाव
16 संप्रेषण - भेजना, पहुँचाना
17 जिजीविषा - जीने की चाह
18 विपुलता - आधिक्य, बहुतायत
19 प्रवर्तक - प्रवृत्त करने वाला, प्रतिष्ठाता
20 अनुगूंज - प्रतिध्वनि
21 वैविध्य - विविधता, अनेकरूपता
22 परिवेश - वेष्टन, परिधि
23 सृजनात्मक - सृजनशील
24 गरिमामय - सम्मान, उदात्त
25 आगाज़ - आरम्भ, शुरुआत

19.7: परीक्षार्थ प्रश्न

खंड - अ

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न :

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1 विद्यानिवास मिश्र ने आधुनिक साहित्य में अद्वितीय योगदान दिया, उनके कार्यक्षेत्र पर प्रकाश डालते हुए समझाए।

2 ललित निबंध का अर्थ समझाते हुए डॉ. विद्यानिवास मिश्र के वैचारिक यात्रा को विस्तार से लिखिए।

खंड ब

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1 हिन्दी साहित्य के इतिहास में शुक्लोत्तर युग की उपलब्धियों पर प्रकाश डालें।

2 डॉ. विद्यानिवास मिश्र के उपलब्धियों और सम्मान के बारे में लिखिए ?

प्र03 डॉ. मिश्र की लेखनी में पुराण और लोक साहित्य की प्रचुरता है - समझाकर लिखिए

खंड स

I सही विकल्प चुनिए।

1 डॉ. मिश्र जी जन्म उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जिले के -----------------गाँव में हुआ था।

अ) पहाड़डीहा ब) पहाड़गंज स) पहाड़पुरा

2 -------------------------- मिश्र जी का पहला निबंध संकलन है

अ) रहिमन पानी राखिए ब) गाँधी का करुण रस स) छितवन की छाँह

3 ------------------------ डॉ. मिश्र जी की श्रेष्ठ कहानी संग्रह है।

अ) भ्रमरानन्द का पचड़ा ब) पीपल के बहाने स) गाँव का मन

4 डॉ. मिश्र ---------------- को एक सड़क दुर्घटना में परलोक सिधार गए।

अ) 14, फरवरी 2005 ब) 14, फरवरी1905 स) 14, फरवरी 2008

5 साहित्य में अद्वितीय योगदान के लिए इन्हें -------------------- का सदस्य मनोनीत किया गया।

अ) लोक सभा ब) राज्य सभा स) धर्म सभा

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1 डॉ मिश्र जी का विवाह 1942 में ------------------- से हुआ।

2 डॉ मिश्र जी को ------------------ ऋतु से बहुत लगाव था।

3 डॉ मिश्र जी ने -------------------- का सम्पादन कार्य किया।

4 'सपने कहाँ गए' ----------------------आधारित निबंध संकलन है।

5 वाराणसी के -------------------- विश्विद्यालय में अध्यापन कार्य किया।

III सुमेल कीजिए

1 मिशेल दी मोंटग्रे	(अ) मूर्ति देवी पुरस्कार
2 शुक्ल युग	(आ) गीतगोविन्द की सरस निबंध
3 पाणिनी की अष्टाध्यायी	(इ) 1920 से 1940 तक
4 महाभारत का काव्यार्थ	(ई) निबंध के जनक
5 राधा माधव रंग रंगी	(उ) शोध कार्य

19.8 : पठनीय पुस्तकें

1 हिन्दी ललित साहित्य का अनुशीलन - डॉ. प्रफुल्ल कुमार

2 निबंध - दृष्टि - डॉ. विकार दिव्य कीर्ति, निशांत जैन

3 विद्यानिवास मिश्र के ललित निबंध - सम्पादन - भोला भाई पटेल, राम कुमार

4 विद्यानिवास मिश्र के साहित्य में जीवन मूल्य - डॉ. (श्रीमती) क्षमा शुक्ला

इकाई 20 : विद्यानिवास मिश्र के निबंध 'अस्ति की पुकार – हिमालय' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

20. 1 प्रस्तावना

20.2 उद्देश्य

20.3 मूल पाठ : विद्यानिवास मिश्र के निबंध 'अस्ति की पुकार – हिमालय' की विवेचना

20.3.1 विवेच्य निबंध की विषय वस्तु

20.3.2 विवेच्य निबंध का प्रयोजन

20.3.3 विवेच्य निबंध में व्यक्त वैचारिकता

20.3.4 विवेच्य निबंध का भाषा सौष्ठवविवेच्य निबंध का शैली सौंदर्य

20.4 पाठ सार

20.5 पाठ की उपलब्धियाँ

20.6 शब्द संपदा

20.7 परीक्षार्थ प्रश्न

20.8 पठनीय पुस्तकें

20.1 : प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के ललित निबंधकारों में विद्यानिवास मिश्र का नाम सम्मान के साथ पहली पंक्ति में लिया जाता है। आप भारतीय परंपरा और संस्कृति के चितेरे लेखक हैं। विद्यानिवास जी ने भारतीय संस्कृति व सामाजिक परंपराओं और विसंगतियों को विस्तार से अपने निबंधों में अभिव्यक्त किया है। लेखक यह मानते हैं कि हिमालय भारतीय जीवन का स्रोत है, इसका मनुष्य के चिंतन से गहरा संबंध है। प्रस्तुत इकाई (अस्ति की पुकार - हिमालय) निबंध में लेखक ने भारतीय समाज की सम-सामयिक समस्याओं व मनुष्य की स्वार्थपरता व रूढ़ियों पर कहीं तीखा व्यंग्य, तो कहीं सहज सवालों के माध्यम से व्यक्त किया है। मनुष्य में असहजता, उसका सामाजिक रूढ़ियों के प्रति मोह और नये के प्रति निष्ठा व चिंतन का अभाव हैं। इस निबंध में पारिवारिक तनाव व टूटते हुए परिवारिक संगति की तरफ़ भी संकेत किया गया है।

20.2 : उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत हम विद्यानिवास मिश्र के निबंध का अध्ययन करेंगे जिससे निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हो सकेगी।

- विद्यार्थी इस निबंध का सार अपने शब्दों में समझकर प्रस्तुत कर सकेंगे।
- निबंध के प्रमुख अंशो की व्याख्या प्रस्तुत कर सकेंगे।
- निबंध की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- निबंधकार के व्यक्तित्व व उसकी वैचारिकी को जान सकेंगे।

- निबंध की संरचना-शिल्प यानी भाषा और शैली की विशेषताएँ बता सकेंगे।

20.3: मूल पाठ : विद्यानिवास मिश्र के निबंध 'अस्ति की पुकार – हिमालय' की विवेचना

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के आग्रही विद्यानिवास मिश्र ललित निबंधकारों के अप्रतिम निबंधकार हैं। सर्वश्रेष्ठ निबंधकार के रूप में विद्यानिवास जी की व्यापक प्रतिष्ठा है। विद्यानिवास जी आधुनिक ज्ञान-विज्ञान, समाज-संस्कृति एवं साहित्य कला की नवीनतम चेतना और तेजस्विता के पुरोधा लेखकों में से एक हैं। वे हिन्दी भाषा के साथ-साथ संस्कृत और अंग्रेज़ी साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान हैं। साथ ही साहित्य अकादमी के कार्यकारी मंडल के सदस्य और संस्कृत भाषा सलाहकार मंडल के संयोजक के पद भार का भी निर्वहन सफलतापूर्वक किया है। वे संस्कृत एवं लौकिक साहित्य के विधिवत ज्ञाता रहे। प्रस्तुत निबंध में इसी सांस्कृतिक एवं लोक जीवन की महत्ता को स्थापित कर भारतीय जीवन-शैली की बारीकियों से अवगत कराया है। प्राचीन पारंपरिक मूल्यों की नई प्रतिष्ठापना पर बल दिया है बल्कि रूढ़ियों से मुक्ति और परंपरा की नई चिंतन धारा से जोड़ने का सशक्त कार्य भी किया है।

विद्यानिवास मिश्र का निबंध 'अस्ति की पुकार हिमालय' एक ललित निबंध है। यहाँ हम निबंध पर विचार करने से पूर्व ललित निबंध के अर्थ पर एक नज़र डाल लेते हैं। 'ललित निबंध' निबंध-साहित्य की ही एक विशिष्ट विधा है, जिसमें रचनाकार अपने इंद्रियों द्वारा अनुभूत सभी तत्त्वों की सजीव व्याख्या गद्यात्मक रूप में प्रस्तुत करता है। जब हम निबंध से पहले 'ललित' शब्द लगा देते हैं तब उसका तात्पर्य होता है कि ऐसा निबंध जिसमें ललित का गुण विद्यमान हो अथवा जिसमें लालित्य तत्त्व विद्यमान हो, उसे ही हम 'ललित निबंध' कहते हैं। शाब्दिक रूप से विचार करें तो स्पष्ट है कि ललित का अर्थ 'सुंदर' या 'रमणीय' होता है। लेकिन यहाँ प्रश्न यह है कि कौन-सी वस्तु या किस सौंदर्य को हम ललित कहेंगे। इस प्रश्न के उत्तर में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी पुस्तक 'लालित्य तत्त्व' में लिखते हैं कि "एक प्राकृतिक सौंदर्य है, दूसरा मानवीय इच्छा-शक्ति का विलास है। दूसरा सौंदर्य प्रथम द्वारा चालित होता है, पर है मनुष्य के अंतरतम की अपार इच्छा-शक्ति को रूप देने का प्रयास। एक केवल अनुभूति देकर विरत हो जाता है, दूसरा अनुभूति से उत्पन्न होकर अनुभूति-परंपरा का निर्माण करता है। भाषा में, मिथक में, धर्म में, काव्य में, मूर्ति में, चित्र में बहुधा अभिव्यक्त मानवीय इच्छा-शक्ति का अनुपम विलास ही वह सौंदर्य है, जिसकी मीमांसा का संकल्प लेकर हम चले हैं। प्रथम सौंदर्य रूप से व्यावृत्त करने के लिए इसे हम लालित्य कहेंगे। लालित्य, अर्थात् प्राकृतिक सौंदर्य से भिन्न किन्तु उसके समानान्तर चलने वाला मानव रचित सौंदर्य।" कहने का आशय यह है कि हम ललित निबंध में उस सौंदर्य को देखते हैं जो प्रकृति द्वारा अनुप्राणित होकर भी मानव रचित हो।

बोध प्रश्न

- ललित निबंध की विशेषता लिखिए।

20.3.1 विवेच्य निबंध की विषय वस्तु

विद्यानिवास मिश्र जी का यह एक ललित निबंध है जो भावात्मक निबंधों की श्रेणी में आता है। इस निबंध में निबंधकार ने कालिदास रचित 'कुमारसंभव' की पहली पंक्ति "अस्ति उत्तस्यां दिशि देवात्मा हिमालयों नाम नगाधिकराजः" का उल्लेख कर प्रतिपादन किया है। समाज में व्याप्त अनेक सामाजिक रूढ़ियों और समस्याओं का रेखांकन निबंधकार ने सफलतापूर्वक किया है।

निबंध के शीर्षक में 'अस्ति' शब्द (लाक्षणिक अर्थ में) पर बल देते हुए निबंध की रचना कर लेखक ने अपने वैचारिकी को स्पष्ट किया है। विद्यानिवास मिश्र संस्कृति और परंपरा के मध्य सामंजस्य व रूढ़ियों के प्रति अतिसंवेदनशील चिंतन के चितेरे लेखक हैं। जिनके साहित्य में सहज ही यह भाव दिखाई पड़ता है। इसी क्रम में 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध भी कालिदास के 'कुमारसंभव' व 'गीता' के संदर्भों के माध्यम से भारतीय जीवन-शैली का विवेचन किया है। जिसमें व्यंग्य की स्फूर्त ध्वनि भी है।

संस्कृत भाषा में 'अस्ति' के बिना भी काव्य पूर्ण हो जाता है और उसमें हिन्दी या अंग्रेजी की तरह 'अस्ति' की समानार्थक क्रिया देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। प्रस्तुत निबंध में कालिदास जब अपने ग्रंथ का निर्माण करते हैं तब वे शब्दों को बिखेरते नहीं तथा अपने ग्रंथ का पहला श्लोक लिखने जा रहे हैं और बिना ज़रूरत पूर्ण होने का भाव सिर पर सवार हो गया। इसलिए या तो कालिदास या हिमालय में कुछ न कुछ गड़बड़ है इस दृष्टि से इसकी खोज करनी चाहिए।

कई वर्ष पहले लेखक को स्व. राहुल सांकृत्यायन के साथ रहने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। वे कहते हैं हिमालय मुझे बुला रहा है, अपना काम समेटिये, अब यहाँ काम नहीं हो सकता। ऐसे नास्तिक आदमी को हिमालय का बुलावा, विश्वास नहीं होता। आख़िर हिमालय देवताओं की आत्मा है तथा श्रीमद्भागवत गीता के अनुसार हिमालय साक्षात् भगवान वासुदेव का विग्रह है। राहुल जी किसी वस्तु के आस्तित्व बोध पर अधिक विश्वास रखते थे, क्योंकि वे हिमालय को भारतीय जीवन-प्रवाह का स्रोत मानते हैं, जिसमें भाषा, संस्कृति, समाज-चेतना ऐसा सभी कुछ शामिल है जिसका समष्टि चैतन्य से संबंध हो। राहुल जी के लिए जीवन भर हिमालय भूत या भविष्य ही नहीं बल्कि वह 'अस्ति' को भी स्वीकारते हैं।

निबंधकार ने कुमारसंभव और हिमालय की कथाएँ पढ़ी हैं और हेमाली राजा की कहानियों से भी अवगत है, किन्तु हिमालय की तरफ़ से कभी उनको बुलावा नहीं आया। शायद इसका कारण यह रहा हो कि शहरों की बढ़ती आबादी और वहाँ व्याप्त अनेक दूषित वातावरण

के कारण वह आवाज़ सुनाई नहीं पड़ती। वास्तव में हिमालय की अस्ति की पुकार न तो निबंधकार को सुनाई पड़ती है और न ही उसके पड़ोसियों को। प्रस्तुत निबंध में व्यंग्य के रूप में लेखक आस्तिकता के साथ-साथ कुंडली दिखाने, रत्न धारण करने, मंगलवार को हनुमान जी के यहाँ लड्डू चढ़ाने जाते हैं, देवताओं का दरबार करते हैं, मनौती माँगते हैं, भारतीय संस्कृति की बात करते हैं। लेकिन ये सभी चीज़े केवल छल है। हम देवताओं को, अफ़सर या नेता को देवता मानते हैं। हम देवता को ही नहीं पूजते बल्कि उसके स्थान को भी पूजते हैं। जिस प्रकार नेता या अफ़सर की महिमा उसकी कुर्सी को पाकर है, उसी प्रकार देवता के स्थान की है। हमारी नज़रों में एकनिष्ठ श्रद्धा ही वास्तविक युग-श्रद्धा है। इसी पैमाने से हम देवता को भी नापते हैं। भारत वर्ष की राष्ट्रीय एकता की बात करनी होगी तो नागाधिराज हिमालय का नाम ज़रूर लेना होगा। अब तो हिमालय में भी रस नहीं रहा, क्योंकि उसने हमें धोखा दिया है। हम उसे संरक्षक या प्रहरी मानकर निश्चिंतता पूर्वक सोते रहे और चीनी सेना ने हमारे हरे-भरे भाग पर क़ब्ज़ा कर लिया। हमने हिमालय पर्वत को पड़ोसी मानकर ही यह सब कुछ किया। हमारी सुख की नींद टूट गई और लगा कि एक बहुत बड़ा तिलिस्म टूट गया है। यह तो चीनी सेना की मेहरबानी हुई कि यह आतंक जमाकर पुनः लौट गई। हमने इसे एक बुरा स्वप्न मानकर विस्मित कर दिया और इसके असर को कम करने के लिए कविताएँ भी लिखी। अब तो एक धुँधली-सी याद बाक़ी रह गई है तथा हार-जीत का अंतर भी समाप्त हो गया है। अब हिमालय के साथ विश्वासघात करने का दुःख नहीं रहा।

हम वस्तुतः सिद्धावस्था में पहुँच चुके हैं इसलिए हमें वर्तमान नहीं छू सकता, हमें केवल भूतकाल को पकड़ना है या भविष्य को खींचना है, वर्तमान हमें तनिक भी प्रभावित नहीं करता। इसीलिए हम 'अस्ति' की अटपटी भाषा नहीं समझ पाते। लेखक कहता है हम ख़ुद अपने आप में हिमालय है अर्थात् ऐसे बर्फ़ का घर जहाँ कभी बर्फ़ नहीं पिघलती, जिसमें चीज़ें ज्यों की त्यों पड़ी रह जाती हैं और जैविक व्यापार जहाँ आकर समाप्त हो जाता है। आज परिवारों में वंश के नाम पर असंख्य तनाव है— सास-बहू के बीच, पिता-पुत्र के बीच, भाई-भाई के बीच, देवरानी-जेठानी के बीच आदि आदि। धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष सभी बेमानी हो गए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन ठहर-सा गया है, जिसमें कुछ चीज़े अटक गई हैं। लोग कहते हैं कि यह युग अर्थ प्रधान युग है, लेकिन जहाँ तक लेखक का विचार है कि वह युग को शब्द प्रधान की संज्ञा देता हैं क्योंकि शब्द की महिमा के आगे किसी की महिमा नहीं हैं। क्योंकि यह शब्द की महिमा ही है जो हिंदुस्तान के संपादक हिमालय जैसे अर्थशून्य विषय पर लेख लिखने के लिए आग्रह क्यों करते? हिमालय एक शब्द है, हिंदुस्तान दूसरा शब्द है और हिंदुस्तान का हिमालय परस्त

लेखक एक तीसरा, पाठक चौथा। चारों शब्द है, इसलिए एक-दूसरे से जुड़े हुए है। अगर ये अर्थ होते तो इनमें आपसी लगाव होता, टकराव होता, झगड़े होते, कोई टूटता, कोई तोड़ता। परंतु शब्द बड़े मासूम होते हैं, ये एकता में विश्वास करते हैं तथा इनमें कभी भी आपसी तनाव की संभावना नहीं होती।

यदि हिमालय एक विषय के रूप में भूगोल होता तो उसे आसानी से भुलाया जा सकता है, कमरे का मानचित्र हटा देने से इस समस्या का समाधान हो जाता। अगर यह इतिहास होता भी तो प्रगतिशील बनकर इससे मुक्ति मिल जाती और यदि यह चौकीदार होता तो भी निद्रा की गोली से इसके बल की पुकार से छुट्टी मिल जाती। परंतु यह न भूगोल है, न इतिहास है, न भूगोल या इतिहास का प्रहरी, यह तो केवल 'अस्ति' है। हिमालय के अस्ति का स्मरण कालिदास ने कुमारसंभव के बीज के रूप में किया है।

वर्तमान युग में हिमालय और उसकी अस्ति से इतनी तटस्थता आज इसलिए दिखा रही है कि इस अस्ति की पुकार हम तक नहीं पहुँच पा रही है। आज हमें अपने देश व किसी अन्य चीज़ का कोई दर्द नहीं है, क्योंकि आज मानव के मन मस्तिष्क में संवेदनहीनता आ गयी है।
प्रस्तुत पाठ में लेखक ने एक कहानी का हवाला दिया है जब शिव बारात लेकर जाते हैं तब वे खा-पीकर हिमालय की सम्पूर्ण संपदा को समाप्त कर देते हैं और दहेज में पार्वती को बावन हंडा दिया जाता है। यह सुहाग पतिव्रता स्त्रियों ने घमंड वश नहीं भोगा। बल्कि निम्न जाति की ही स्त्रियों ने इसे भोगा, पार्वती ने भी उन्हें मुक्त भाव से दिया। अतः हमारी निःस्व संस्कृति का सुहाग अहम् से परिपूर्ण धनी वर्ग में न होकर उसी अकिंचन वर्ग में सुरक्षित है, जहाँ देश की अस्ति है। हमने स्वयं को अधनंगे, अकिंचन लोगों से अलग मान रखा है, उसी का यह वैरूप्य है कि हिमालय स्याह पड़ा दिखता है। क्या इस विरूप 'अस्ति' की पुकार हमारे अस्तित्व-बोध से रहित व्यक्तित्व को अनावृत कर सकेगी? क्या व्याप्त जाति विषमता हमारी अचेतन अवस्था से पार पा सकेगी और उनकी अस्मिता उन्मुक्त भाव से स्वीकार सकेगी? इसी तरह के भाव-बोध को लेखक ने आधुनिक जीवन में व्याप्त विषमताओं के चित्र बड़ी तत्परता एवं तल्लीनता के साथ अंकित किया है। ये लेखक की उन्मुक्त उड़ान को केवल अवकाश ही प्रदान नहीं करती, अपितु लेखक के व्यक्तित्व एवं कृतित्व में सन्निहित मुक्ति को भी स्वर प्रदान करती हैं। इस निबंध के माध्यम से लेखक ने यह भी स्पष्ट किया है कि हिमालय का गहन संबंध भारतीय जीवन-प्रवाह तथा समष्टि चैतन्य से है।

बोध प्रश्न

- निबंध के विषय वस्तु की विवेचना कीजिए।

20.3.2 विवेच्य निबंध का प्रयोजन

विद्यानिवास मिश्र के द्वारा लिखा गया यह निबंध 'कुमारसंभव' के प्रथम श्लोक से शुरू होता है। लेखक ने 'अस्ति' शब्द पर बल देते हुए भारतीय गौरव बोध की गाथा का बखान किया है। 'अस्ति' अर्थात संस्कृत की एक क्रिया है। जिसे लेखक ने लक्षणार्थ रूप में प्रयोग करते हुए वर्तमान संदर्भ में अभिहित किया है। लेखक ने पूर्व भारतीय जीवन-शैली से वर्तमान जीवन-शैली की तुलना करते हुए पारिस्थिकी तंत्र को दिखाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है। जैसा कि विद्यानिवास मिश्र भारतीय संस्कृति और मिथकीय संदर्भ के माध्यम से वर्तमान जीवन के प्रभाव को बताने में सबसे सफल लेखक साबित हुए हैं। उनके निबंध संग्रहों में भूत से होते हुए वर्तमान और भविष्य की चिंता की प्रतीति होती है।

बोध प्रश्न

- विद्यानिवास मिश्र के निबंधो की विशेषता बताएं।

20.3. 3 विवेच्य निबंध में व्यक्त वैचारिकता

विद्यानिवास मिश्र के निबंधों में भारतीय परंपरा, प्राकृतिक सौंदर्य एवं सांस्कृतिक बोध का समन्वय दिखाई पड़ता है। प्रस्तुत निबंध में भी लेखक ने भारतीय परंपरा में जीवन-शैली पर गहन विचार अभिव्यक्त किया है। निबंध के अंतर्गत मानव की स्वार्थपरक आस्तिकता पर तीखा प्रहार किया है। आज के संदर्भ में सामाजिक रूढ़ियों एवं कुरीतियों पर प्रहार करते हुए सभ्य मानव समाज की खंडित चातुर्य का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जैसे— कुण्डली दिखाना, ग्रहों को प्रसन्न करने के लिए रत्न धारण करना और हनुमान जी को प्रसन्न करने के लिए मंगलवार को मंदिर में लड्डू चढ़ाने जैसे क्रिया-कलापों को निरर्थक माना है। इतना ही नहीं मनुष्य देवताओं का दरबार करता है, मनौती माँगता है, लेकिन यह सब उसका दिखावा व ढोंग मात्र है। यह सभी कार्य वह अपने कार्यों को पूर्ण करने के लिए स्वार्थवश ही करता है। आधुनिक मानव की यह आस्था उसके लिए स्वार्थ का ही द्योतक है। आधुनिक मानव के इसी स्वार्थपरक व्यवहार को स्पष्ट करते हुए लेखक कहता है "हम देवताओं को अफसर या नेता और अफसर या नेता को देवता मानते हैं। हम थान पूजते हैं, माई का हो, बरम्ह का हो, तेलियामसान का हो, अगियाबीर का हो, लंगोटी वाले का हो, या नंगे का हो। हम देवता नहीं पूजते क्योंकि देवता की महिमा उसके स्थान को पाकर है, जैसे नेता या अफसर की महिमा उसकी कुर्सी को पाकर है। हम जानते हैं कि अभी कल जिसके सात पुरखों को हमने एक सांस में तारा था, उसी की कुर्सी पर बैठते ही जब आरती उतार रहे हैं तो यह भी हमारे भक्तिभाव का मर्म जानता होगा। पर साथ ही हम दोनों भली-भाँति समझते हैं, यही जनतन्त्र है, ऐसे ही सब चलता है, हमारी नजरों में एकनिष्ठ

श्रद्धा कोई मूल्य नहीं रखती, क्षण-क्षण नया-नया रूप धारण करने वाली श्रद्धा ही वास्तविक युगश्रद्धा है।"

विद्यानिवास जी ने सांस्कृतिक मूल्यों पर विचार करते हुए पाश्चात्य संस्कृति का देश में आगमन ने भारतीय संस्कृति की रूपरेखा में परिवर्तन का एक नकारात्मक पक्ष की ओर संकेत किया है। भारतीय मनीषि के युगकर्ता पाश्चात्य संस्कृति के समक्ष भारतीय संस्कृति के प्रति हीनताबोध ने अपनी संस्कृति को तिलांजलि दे देने का पैरोकार बना दिया है। सभी इस संस्कृति को बासी कह कर इससे नाता तोड़ रहे हैं। इसका नतीजा यह निकल रहा है कि मानव अपने मानवीय सरोकारों एवं मूल्यों को भूल रहा है और नैतिकता से परे अनैतिक कार्यों में लिप्त हो रहा है। वास्तव में हिमालय भारतीय जन-जीवन के प्रवाह का स्रोत है, हमारी संस्कृति का प्रतीक है, लेकिन वैज्ञानिक एवं तकनीकी युग में मानव को हिमालय की यह पुकार सुनाई नहीं पड़ रही है। इसकी सबसे बड़ी वजह यही है कि हम अपनी संस्कृति को भुलाकर पाश्चात्य संस्कृति के समीकरण की दुनिया में प्रवेश कर गए हैं।

शहरों में व्याप्त दूषित वातावरण पर चिंता व्यक्त करते हुए विद्यानिवास जी कहते हैं कि स्व० राहुल सांकृत्यायन जी को तो हिमालय की पुकार सुनाई देती है लेकिन मुझे और मुझे ही नहीं मेरे आस-पड़ोस के व्यक्तियों को भी यह आवाज़ सुनाई नहीं देती। इस प्रकार यह प्रसंग ध्वनि प्रदूषण के प्रश्न को जोड़ता है। इसलिए लेखक कहता है कि "मुझे यह बुलावा नहीं मिलता या शायद मिलता है, मुझे सुनाई नहीं पड़ती, सुनाई न पड़े इसके लिए शहरों में काफी सरंजाम है, पान की दुकानों पर अहर्निश बजते रेडियो, यान्त्रिक वाहनों की चिल्ल-पों, जुलूसों की अर्थहीन नारेबाजी, ध्वनि विस्तार यंत्रों के द्वारा प्रसारित हरिनाम संकीर्तन और संगीत का बुखार उतारने वाली फिल्मी धुनों का वृंदगान और बच्चों के स्कूल से उठती हुई मछली हट्टे का शोरगुल।" हिमालय की आवाज़ शहरों में व्याप्त ध्वनि प्रदूषण के कारण सुनाई नहीं पड़ती। विद्यानिवास जी ने प्रस्तुत निबंध के माध्यम से विकराल रूप धारण कर रहे 'ध्वनि प्रदूषण' की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

विद्यानिवास जी ने आज टूटते पारिवारिक सम्बन्धों व तनाव ग्रस्त सामाजिक वातावरण पर चिंता व्यक्त करते हुए अपने विचारों को साझा किया है। वर्षों पहले भारतीय परिवारों में, जो परस्पर आत्मीयता, स्नेह, भाई-चारे का भाव था। वह अब बिल्कुल समाप्ति के कगार पर है। वर्तमान समय में परिवार खंडित हो रहे है। एकल परिवार के ढाँचे को स्वीकार कर व्यक्ति अकेले ही जीवन व्यतीत करना चाहता है। यह समस्या आने वाले समय में और भी भयावह हो सकती है। सामाजिक वातावरण में वैमनष्य का भाव इतना अधिक चिंताजनक हो चुका है कि अब भाई-चारे का भाव नहीं रहा। यह समस्या देश में अनेकता में एकता की भावना को खण्डित कर रही है। लेखक ने इस चिंतन को प्रस्तुत निबंध के इस उद्धरण से समझा जा सकता है— "कहाँ

का कुल, कहाँ का कर्ता? कुल के नाम पर अगणित तनाव है, सास-बहू के बीच देवरानी-जेठानी के बीच और हर तनाव के बाद एक टूटन है।" लेखक ने इस समस्या पर करारा व्यंग्य करते हुए इसका मूल कारण अर्थ (धन) को माना है। वह अर्थ के महत्व को नकारते हुए इसे विवाद का केन्द्र बिन्दु के रूप में स्वीकार करते हैं। लेखक ने मानवीय जीवन के यथार्थ को उद्‌घाटित कर दिया है और इस समस्या पर कटु-व्यंग्य भी किया है।

विद्यानिवास जी ने राष्ट्रीय एकता में हिमालय की भूमिका के महत्व को स्थापित करते हुए वर्तमान परिस्थितियों का रेखांकन किया है। जब-जब राष्ट्रीय एकता की बात उठेगी, तब-तब हिमालय का नाम ज़रूर आएगा। क्योंकि यह सीमा पर हमारी रक्षा भी कर रहा है। हमें हिमालय पर पूर्ण विश्वास था कि इसे शत्रु कभी भी नहीं लांघ सकता। लेकिन इसने भी हमारे साथ विश्वासघात किया। निबंधकार लिखता है “तो हिमालय में भी रस नहीं रहा। फिर उसने इतना धोखा दिया, हम उसके आसरे सोते रहे और लाल चींटियों का दल रेंगकर आया, हमारे सीमान्त का श्यामल प्रसार चट कर गया। आखिर उसे हमने पासबाँ मानकर ही तो इतना सम्मान दिया था, हमने उसे भाल कहा, अपनी क़िस्मत का लेखा-जोखा उसमें अंकित कराया और उसने कुछ नहीं किया, हमारी सुख नींद नष्ट हो गयी और लगा कि एक बड़ा तिलिस्म टूट गया।“ हिमालय को भारत का सजग प्रहरी माना था लेकिन 1962 के चीनी आक्रमण ने और वर्तमान में हिमालय के सीमावर्ती इलाक़ो में चीनियों की घुसपैठ भारतीयों का सारा भ्रम तोड़ रही है। हिमालय चीनी सेना से भारतीय क्षेत्र की रक्षा नहीं कर पाया। विद्यानिवास जी ने हिमालय से खिन्न होकर उसे विश्वासघाती कारक की संज्ञा दे दी।

बोध प्रश्न

- प्रस्तुत निबंध के आधार पर लेखक के विचार स्पष्ट कीजिए।

20.3.4 विवेच्य निबंध का भाषा सौष्ठव

यह एक ललित निबंध है। इसलिए लेखक की अपनी भाषा अत्यंत सजग है। चूँकि यह निबंध लेखक ने आत्मपरक शैली में लिखा है और लेखक की आत्मीयता, संवेदनशीलता तथा जनमानस के प्रति गहरा लगाव व्यक्त किया है। इसलिए भाषा भी उसी के अनुकूल भावप्रवण, मर्मस्पर्शी और उदात्त है। जहाँ वैचारिक पक्ष अधिक उभरा है, वहाँ भी भाषा में सरसता बनी रही है। लेखक के बात कहने का ढंग जहाँ निजता लिए हुए है, वहीं उसमें आत्मीयता का स्पर्श भी झलकता है, जो सीधे पाठक के हृदय को छूता है। लेखक के हृदय की पुकार और हिमालय के प्रति आस्था में शब्द सौंदर्य की महत्ता को इन पंक्तियों में देखा जा सकता है— “हिमालय में भी रस नहीं रहा। फिर उसने इतना धोखा दिया, हम उसके आसरे सोते रहे और लाल चींटियों का

दल रेंगकर आया, हमारे सीमान्त का श्यामल प्रसार चट कर गया। आखिर उसे हमने पासबाँ मानकर ही तो इतना सम्मान दिया था, हमने उसे भाल कहा, अपनी क़िस्मत का लेखा-जोखा उसमें अंकित कराया।”

विद्यानिवास जी की निबंध की भाषा की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि भाव और विचार दोनों ही स्तरों पर भाषा रागात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करती है। उनके व्यंग्य की भाषा इतनी सटीक और साधारण होते हुए पाठक के मस्तिष्क पर गहरा छाप छोड़ती है। इन पंक्तियों से द्रष्टव्य है— "हम देवताओं को अफसर या नेता और अफसर या नेता को देवता मानते हैं।... हम देवता नहीं पूजते क्योंकि देवता की महिमा उसके स्थान को पाकर है, जैसे नेता या अफसर की महिमा उसकी कुर्सी को पाकर है।“

विद्यानिवास जी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान होते हुए भी भाषा में लोक जीवन की आम बोलचाल की भाषा का भी रूप उनके निबंधों में देखने को मिलता है। जिसे इन पंक्तियों के माध्यम से समझा जा सकता है— “हम थान पूजते हैं, माई का हो बरम्ह का हो, तेलियामसान का हो, अगियाबीर का हो, लंगोटी वाले का हो, या नंगे का हो।“

इस निबंध की भाषा यद्यपि तत्सम प्रधान है, लेकिन आवश्यकतानुसार इसमें तद्भव, देशज और उर्दू-फारसी शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। अपनी बात को प्रभावशाली बनाने के लिए निबंधकार ने हिन्दी और संस्कृत काव्य-ग्रंथों से उद्धरण भी देते हैं। वैसे तो उनकी भाषा सहज और सरस है, लेकिन कहीं-कहीं विचारों की जटिलता के कारण क्लिष्ट भी दिखाई पड़ती है। जैसे— निम्न वाक्यों में देखा जा सकता है: ‘आखिर हिमालय देवात्मा है।‘, ‘सुनाई न पड़े इसके लिए शहरों में काफी सरंजाम है।‘

बोध प्रश्न

- विद्यानिवास मिश्र के निबंधों की भाषा की विशेषता बताइए।

20.3.5. विवेच्य निबंध का शैली सौंदर्य

प्रस्तुत निबंध में विद्यानिवास जी ने एक तरफ़ भावात्मक शैली के माध्यम से जीवन मूल्यों के प्रति निष्ठा का भाव प्रकट किया है। तो वहीं दूसरी तरफ़ गवेषणात्मक शैली के अंतर्गत भारतीय जीवन-शैली के प्रति चिंता व मानवीय मूल्यों के प्रति अपार श्रद्धा, चिंतन व मनन को अग्रसारित किया है। ललित निबंध की शैली का अपनापन और उसका सौंदर्य इस निबंध में भलीभाँति देखा जा सकता है। इनके निबंध में भावना की एकरूपता दिखाई देती है, साथ ही निबंध के दौरान विचार उठते हुए भी दिखाई देते हैं। वे अपनी बात को प्रभावशाली, आत्मीय और भावप्रवण रूप में प्रस्तुत करते हैं, यद्यपि निबंध पढ़ते हुए उनके विस्तृत अध्ययन और ज्ञान

का बार-बार परिचय मिलता है। विशेष रूप से उनके निबधों में आने वाले उद्धरणों से इसका संकेत मिलता है लेकिन यह सब उनके यहाँ अत्यंत सहज रूप में दिखाई देता है। उनमें बनावट या विद्वता प्रदर्शित करने का भाव नहीं है। वस्तुतः उनके निबंध हमारे विचारों को उतना उद्वेलित नहीं करते जितना हमारे हृदय को। वे हमें एक ख़ास तरह के लालित्य में डूबो देते हैं। यही उनकी शैली की विशेषता है।

बोध प्रश्न

- विद्यानिवास मिश्र के निबंधों की शैली की विशेषता लिखिए।

20.4 : पाठ सार

विद्यानिवास मिश्र जी ने निबंध में 'अस्ति' शब्द की व्याख्या की हैं। निबंध के प्रारंभ में लेखक ने 'अस्ति' शब्द पर गंभीर रूप से विचार करते हुए और उसे वर्तमान का द्योतक मानते हुए अपना चिंतन प्रस्तुत किया है। उन्होंने राहुल जी और कालीदास के बहाने अनेक संदर्भों को भारतीय जीवन-शैली और सामाजिक चेतना को उद्घाटित किया है। निबंधकार ने कथाओं, लोक कथाओं व साहित्य के माध्यम से अनेक विषय पर अपना विचार व्यक्त किया है। जो हिमालय राहुल को बुला रहा है और जो कालीदास के कुमारसंभव में निहित है। उस हिमालय का हमारे वर्तमान से क्या संदर्भ है। लेखकानुसार इसकी सही व्याख्या ही अस्ति की पुकार हिमालय है। अपने मत की पुष्टि के लिए निबंध में लिखा है— "आखिर हिमालय देवात्मा है गीता के अनुसार साक्षात भगनान वासुदेव का विग्रह है। उस हिमालय को बुलावा भेजना ही था तो पहले राहुल जी को ही भेजना था पर नहीं। शायद हिमालय को अपने देवात्मा से अधिक अस्ति पर श्रद्धा रखने वाले का ख्याल है। राहुल जी इस अस्ति पर विश्वास रखते थे क्योंकि वो हिमालय को भारतीय जीवन प्रवाह का स्रोत मानते हैं।" लेखक में आज के भारतीय समाज की परिस्थितियों के प्रति विशेष आग्रह का पुट दिखाई पड़ता है। विद्यानिवास जी भारतीय संस्कृति व परंपरा के प्रति निष्ठा के लेखक होने के साथ-साथ उनके कवि व्यक्तित्व की भी छाया प्रतिबिंबित होती हुई दिखाई पड़ती है। विद्यानिवास जी प्रस्तुत निबंध 'अस्ति की पुकार हिमालय' में सामाजिक प्रहरी के द्योतक दिखाई पड़ते हैं। निबंध की कसौटी ही है लेखक के वैचारिक व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति।

बोध प्रश्न

- प्रस्तुत निबंध का सार संक्षेप में अपने शब्दों में लिखिए।

20.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

इस पाठ के अध्ययन से कुछ महत्वपूर्ण बिंदु निष्कर्ष के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं, जो निम्नलिखित हैं—

1. प्रस्तुत निबंध में 'अस्ति' शब्द के लाक्षणिक प्रयोग के द्वारा आज के भारतीय समाज की परिस्थितियों का प्रत्यक्ष दर्शन।
2. वर्तमान जीवन-शैली का बोध।
3. सामाजिक रूढ़ियों के प्रति नकार व नवीन मानवीय मूल्य बोध की स्थापना पर बल।
4. लेखक के व्यक्तित्व और उसके विचार से परिचय।
5. ललित निबंध की भाषा-शैली का बोध।

20.6 : शब्द संपदा

1.	अस्ति	=	वर्तमानता, विद्यमानता, भाव, सत्ता
2.	विचित्र	=	अजीब, अनोखा
3.	अपार्थ	=	बिना उद्देश्य, अर्थहीन, निरर्थक
4.	साक्षात्	=	सामने
5.	चैतन्य	=	जो सोचने-समझने की स्थिति में हो, होशियार
6.	प्रतिकृति	=	तस्वीर, चित्र, प्रतिबिंब, छाया
7.	एकनिष्ठ	=	जिसकी निष्ठा एक में हो, जो एक ही से सरोकार रखे
8.	अच्छत	=	बिना टूटा हुआ चावल जो मंगल द्रव्यों में गिना जाता है और देवताओं को चढ़ाया जाता है
9.	उद्धरण	=	लेख या वाक्य का उदधृत अंश
10.	सीमान्त	=	वह स्थान जहाँ सीमा का अंत होता हो, सरहद
11.	तिलिस्म	=	जादू, करामात, चमत्कार
12.	सिद्धावस्था	=	अब कोई स्वप्न नहीं, छुटकारा
13.	विन्ध्य	=	एक प्रसिद्ध पर्वत
14.	सामंजस्य	=	वैषम्य या विरोध आदि का अभाव, मेल
15.	असंपृक्त	=	जो किसी के संपर्क में हो, तटस्थ
16.	दारुण	=	कठिन, विकट, दुःसह
17.	उदात्त	=	श्रेष्ठ, बड़ा
18.	सिसृक्षा	=	रचने या बनाने की इच्छा
19.	अंतरतम	=	आत्मीय, निकटतम

20.7: परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए –

1. ललित निबंध किसे कहते हैं? स्पष्ट कीजिए।
2. 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध की तात्विक समीक्षा कीजिए।
3. 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध में 'अस्ति' शब्द पर प्रकाश डालिए।
4. 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध पर अपना मंतव्य स्पष्ट कीजिए।

खंड - (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए –

1. 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध का सार संक्षेप में लिखें।
2. 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
3. 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध के आधार पर वर्तमान बोध का आशय स्पष्ट कीजिए।

खण्ड (स)

I. सही विकल्प चुनिए-

(1) 'अस्ति की पुकार हिमालय' किस विधा की रचना है

(क) संस्मरण (ख) कहानी (ग) निबंध (घ) रेखाचित्र

(2) लेखक ने निबंध में किस साहित्यकार का उल्लेख किया है।

(क) अज्ञेय (ख) मुक्तिबोध (ग) जैनेंद्र कुमार (घ) राहुल सांकृत्यायन

(3) निबंध में कालिदास के किस रचना का उल्लेख है।

(क) अभिज्ञान शाकुंतलम (ख) कुमारसंभवम् (ग) मेघदूत (घ) रघुवंशम

(4) लेखक ने पाठ के आरंभ में किस भाषा के श्लोक का उद्धरण प्रस्तुत किया है

(क) पालि (ख) प्राकृत (ग) संस्कृत (घ) हिन्दी

(5) निबंध के आधार पर अस्ति शब्द का अर्थ है

(क) वर्तमान (ख) है (ग) प्रकृति (घ) आज

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. संस्कृत भाषा में वैसे अस्ति क्रिया के बिना .... पूरा हो जाता है।
2. कुमारसम्भव .... की रचना है।

3. लेखक को साहित्यकार ...... के साथ रहने का अवसर प्राप्त हुआ था।
4. लेखक ने .... राजा की कहानी का उल्लेख किया है।
5. कुमारसम्भव .... भाषा में लिखा गया है।

III. सुमेलित कीजिए-

(i) शैली	(क) निबंध
(ii) अस्ति की पुकार हिमालय	(ख) 1962
(iii) चीनी आक्रमण	(ग) कालिदास
(iv) विद्यानिवास मिश्र	(घ) गवेषणात्मक
(v) मेघदूत	(ङ) निबंधकार

20.8 : पठनीय पुस्तकें

1. निबंध निकष, डॉ. सिद्धार्थ श्रीवास्तव
2. हिन्दी निबंध लेखन, प्रो. विराज एम. ए.
3. साहित्यिक निबंध, डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त
4. निबंध साहित्य, जनार्दन स्वरूप अग्रवाल
5. ललित निबंध : संवेदना और शिल्प, डॉ. शैलेन्द्र नाथ मिश्र

इकाई 21 : निबंधकार निर्मल वर्मा : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

21.1 प्रस्तावना

21.2 उद्देश्य

21.3 मूल पाठ: निबंधकार निर्मल वर्मा : एक परिचय

21.3.1 निबंधकार का

21.3.2 निबंधकार की रचनायात्रा

21.3.3 निबंधकार की वैचारिकता के विविध आयाम

21.3.4 निबंधकार का हिन्दी साहित्य में स्थान

21.4 पाठ सार

21.5 पाठ की उपलब्धियाँ

21.6 शब्द संपदा

21.7 परीक्षार्थ प्रश्न

21.8 पठनीय पुस्तकें

21.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग के हिन्दी साहित्य में गद्य की कई महत्वपूर्ण विधाओं का प्रादुर्भाव और उनका क्रमिक विकास हुआ है। निबन्ध भी एक ऐसी गद्य विधा है। निबन्ध के प्रादुर्भाव के कारण हिन्दी गद्य का रूप निखरता गया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का विचार है कि यदि गद्य कवियों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है।अन्य विधाओं की तरह हिन्दी में निबंध का प्रादुर्भाव भी 'भारतेन्दु-युग' में ही हुआ है। 'द्विवेदी युग' में इसका विकास हुआ। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी निबंध कला के द्वारा इसे और अधिक परिमार्जित रूप दिया है। सैद्धांतिक, मनोवैज्ञानिक और विचारात्मक जैसे कई प्रकार के निबन्ध हिन्दी में लिखे गए। शुक्ल जी के बाद नंददुलारे वाजपेयी, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, जैनेन्द्रकुमार, डॉ. नागेंद्र, डॉ. सत्येन्द्र, विद्या निवास मिश्र, प्रभाकर माचवे आदि ने हिन्दी निबन्ध को संपन्न बनाया है। विषय और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से हिन्दी निबन्ध उच्च स्तर का बन गया है।

स्वातंत्रोत्तर रचनाकारों में निर्मल वर्मा का रचना-संसार व्यापक ही नहीं अपितु गहरा भी है। हम उनकी रचनाओं को एकाग्रता से पढ़ते हैं तो उनकी गहराई से अभिभूत हुए बिना नहीं रहते। निर्मल वर्मा के निबंधों को समझने के लिए सूक्ष्म चिंतन की आवश्यकता रहती है। उन्होंने गद्य के अंतर्गत कहानी, उपन्यास, यात्रा विवरण, निबंध आदि विधाओं में अपनी पहचान बनायी है। निबंध साहित्य में चिंतनपरकता को अधिक बढ़ावा मिला है। इस दृष्टि से

उनके निबंधों में चिंतन के विविध पहलू दिखाई देते हैं। साहित्य की प्रासंगिकता, साहित्य की स्वायत्तता, सार्थकता, महान कलाकृति की विशेषता, साहित्य की शाश्वतता, साहित्य के फॉर्म आदि विषयों पर इनमें व्यापक विचार किया गया है। भारतीय एवं पाश्चात्य संस्कृति, संस्कृति का रक्षण, धर्म, धर्मबोध, धर्मनिरपेक्षता, सांप्रदायिकता जैसे विषयों पर अनेक जगहों पर गहरी सोच व्यक्त हुई हैं। इन सबके माध्यम से उनेक निबंधों की विकास यात्रा देखना निबंधकार का विकास परखना होगा।

21.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- निर्मल वर्मा के जीवन एवं साहित्यिक कर्म का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- निर्मल वर्मा के रचना कर्म का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- उनकी निबंध कला के क्रमिक विकास को जान सकेंगे।
- उनके निबंधों में चिंतन के विविध पहलुओं को समझ सकेंगे।

21.3 मूल पाठ: निबंधकार निर्मल वर्मा : एक परिचय

21.3.1 निबंधकार निर्मल वर्मा जीवनवृत्त

किस भी साहित्यकार के साहित्य के सृजन में उनके संस्कार, पारिवारिक वातावरण उनके मानस पटल पर अंकित प्रभाव तथा इस प्रभाव के द्वारा निर्मित विचारधारा और मान्यताओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है। व्यक्ति के जीवन में कब, कौन-सी घटनाएँ, उसे असाधारण बना देने में सहायक हो जाती है, यह कहा नहीं जा सकता। साहित्यकार का जीवन तथा साहित्य उसके संस्कार, अनुभूति-जन्य मान्यताओं एवं विचारधाराओं के द्वारा अनुशातित एवं पल्लवित होता है। किसी भी साहित्यकार के साहित्य को समझने परखने के लिए उसके जीवन एवं व्यक्तित्व से भली भाँति परिचित होना अत्यंत आवश्यक है,क्योंकि उसका संपूर्ण जीवन किसी न किसी रूप में उसकी रचनाओं में अवश्य प्रतिबिंबित होता है। निर्मल वर्मा के जीवन, साहित्यिक व्यक्तित्त्व, जीवन-दर्शन एवं मान्यताओं के संश्लिष्ट परिचय से उनके व्यक्तित्व एवं साहित्यकार का समग्र चित्र स्पष्ट होता है।

निर्मल वर्मा का वैयक्तिक परिचय :

जन्म: निर्मल वर्मा के पिता श्री नंदकुमार वर्मा मूलतः पंजाब के रहनेवाले थे। निर्मल की माता पुरानी दिल्ली में नीम का कटरा (चाँदनी चौक) के खत्री परिवार से थीं। इन्हीं श्री नंदकुमार वर्मा के यहाँ शिमला में 3 अप्रैल, 1929 को निर्मल वर्मा का जन्म हुआ। अपने परिवार में निर्मल चार बड़ी बहिनों और तीन बड़े भाइयों के बाद आठवीं संतान थे।

बचपन: बड़े परिवार में जन्म होने के बावजूद निर्मल का बचपन काफी लाड़- प्यार से बीता। दादाजी व बड़ी बहिन का भी बालक निर्मल के प्रति खास लगाव था। निर्मल का बचपन अपनी

इस बहिन से काफी प्रभावित रहा है। साहित्य के प्रति निर्मल को प्रेरित करने का काम इसी बड़ी बहिन ने किया।

बड़ा होकर कुछ बनने की ख्वाइश हर बच्चे में होती है और यह निर्मल में भी थी। निर्मल को इन दिनों जहाज के कप्तानों की तस्वीरें काफी प्रभावित करती थीं। इन तस्वीरों से प्रभावित निर्मल बड़े होकर किसी समुद्री जहाज का कप्तान बनने की सोचा करते थे। लेकिन ज्यों-ज्यों निर्मल बड़े होने लगे त्यों-त्यों उनके सपने भी बदलने लगे। कुछ समय बाद निर्मल को सैनिकों की पोशाक पसंद आने लगी और उन्होंने सेना में भर्ती होकर सैनिक बनने की ठान ली लेकिन ऐसा नहीं हुआ। कुछ दिनों बाद उनके मन में राष्ट्र सेवा का भाव जागा और वे राष्ट्र सेवक बनने की सोचने लगे। बाद में किसी सुदूर गाँव में स्कूली टीचर बनने की आकांक्षा पालने लगे।

शिक्षा :निर्मल वर्मा के पिता रक्षा विभाग में कार्यरत थे। इसलिए उन्हें गर्मियों के दिनों में दिल्ली से शिमला स्थानान्तरित होना पड़ता था। ऐसे में निर्मल का बचपन भी दिल्ली और शिमला में बीता। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा भी दोनों शहरों में हुई। निर्मल ने हायर सैकेण्डरी की परीक्षा शिमला में उत्तर प्रदेश सरकार के आरकोट बटलर स्कूल से उत्तीर्ण की।

इसके बाद निर्मल ने दिल्ली के सेंट स्टीफेन्स कॉलेज में प्रवेश लिया। 1949 में इसी कॉलेज से कला में स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। निर्मल ने 1951 में दिल्ली विश्वविद्यालय से इतिहास में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। इतिहास में एम.ए. करने के बाद निर्मल दिल्ली के सेंट स्टीफेन्स कॉलेज में ही इतिहास के प्राध्यापक नियुक्त हुए। दिल्ली का सेंट स्टीफेन्स कॉलेज अभिजात्य वातावरण के लिए जाना जाता है लेकिन निर्मल इस वातावरण से अछूते रहते हुए इससे ठीक विपरीत मार्क्सवादी विचारधारा के सम्पर्क में आये। कॉलेज के दिनों में इन्होंने मार्क्सवादी साहित्य का काफी अध्ययन किया। इन दिनों निर्मल मार्क्सवादी विचारधारा से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने 1949 में बाकायदा साम्यवादी दल की सदस्यता तक ले ली।

निर्मल के लिए साहित्य जितना अर्थ रखता था, उतनी ही राजनीति भी। यही वजह है कि वे साम्यवादी दल से सम्बद्ध हो गए। 1956 में हंगरी की घटनाओं के बाद निर्मल का मार्क्सवाद से मोहभंग होने लगा। हंगरी की घटनाओं ने निर्मल को गहरे तक प्रभावित किया। हंगरी में निर्मल ने साम्यवाद का जो चेहरा देखा वह उनकी कल्पना के चेहरे से अलग था। इससे वे काफी विचलित हुए। अंततः निर्मल का साम्यवाद से मोहभंग हो गया और उन्होंने साम्यवादी दल की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया। यूरोप से लौटने के बाद 1972 में 'इन्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवांस्डस्टडी' (शिमला) में'फेलो' रहे, जहाँ 'मिथक चेतना' विषय पर काम किया। 1977 में 'इन्टरनेशनल राइटिंग प्रोग्राम आयोवा' (अमरीका) में सम्मिलित हुए।

साहित्य से सम्पर्क : निर्मल को बचपन से ही पढ़ने का शौक था। यही शौक आगे चलकर उनके साहित्य से सम्पर्क का कारण बना। निर्मल के घर में बड़े भाई-बहनों के लिये 'कल्याण', 'वीणा', 'सरस्वती' और 'माधुरी' जैसी कहानियों की पत्रिकाएँ आती थीं। निर्मल भी इन पत्रिकाओं को

पढ़ लिया करते थे। इसी से निर्मल का धीरे-धीरे साहित्य से परिचय गहराता गया। निर्मल में पढ़ने के प्रति लगाव जगाने में उनके दादाजी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

लेखन के प्रति बाल निर्मल का लगाव पहली बार 14-15 वर्ष की उम्र में जाहिर हुआ। इन दिनों दसवीं की परीक्षा के बाद निर्मल अपने कुछ मित्रों के साथ कश्मीर घूमने गए। वहाँ निर्मल और उनके साथी हाउस बोट में ठहरे। कश्मीर का प्राकृतिक सौन्दर्य हर किसी को प्रभावित करता है। ऐसे में निर्मल जैसा संवेदनशील किशोर बिना प्रभावित हुए खामोश कैसे रह सकता था? कश्मीर के सुरम्य प्राकृतिक वातावरण से प्रभावित होकर निर्मल ने भी कविताएँ लिखीं।

निर्मल वर्मा को रचनाकार बनाने में दिल्ली के साहित्यिक माहौल का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 1950 के आसपास दिल्ली का वातावरण काफी उत्साहवर्धक था। इस वातावरण में निर्मल को नरेश मेहता, मनोहर श्याम जोशी व श्रीकांत वर्मा जैसे अपनी ही उम्र के कई लेखकों का साथमिला। वे इन सबके साथ अक्सर कविता, कहानियों पर बहस करते थे। इसी माहौल में उनके अन्दर का रचनाकार सजग हो गया।

विवाह व परिवार : निर्मल की मान्यता है कि लेखक की पहचान उसके रचनाकर्म से की जानी चाहिए। पाठकों द्वारा लेखक की व्यक्तिगत जिन्दगी में रूचि लेना उचित नहीं है। स्वयं निर्मल अपनी व्यक्तिगत जिन्दगी के बारे में अधिक कुछ बताने से कतराते है, इसलिए निर्मल के विवाह व परिवार के बारे में अधिक जानकारी नहीं मिल सकी है। स्वयं निर्मल वर्मा द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार उनका विवाह 1964 में हुआ। इस के अनुसार निर्मल एक लड़की के पिता है।

विदेश प्रवास : सेंट स्टीफेन्स कॉलेज में व्याख्याता नियुक्त होने के उपरांत अध्यापन के साथ-साथ निर्मल का लेखन कार्य भी जारी था। धीरे-धीरे लेखक के रूप में निर्मल की पहचान बढ़ने लगी। 1959 में चैकोस्लोवाकिया के प्राच्यविद्या संस्थान और चैकोस्लोवाक लेखक संघने चैक साहित्य के अध्ययन के लिये निर्मल को चैकोस्लोवाकिया आमंत्रित किया। इसी वर्ष निर्मल चैकोस्लोवाकिया चले गए।

चैकोस्लोवाकिया में शुरूआती दो वर्षों में निर्मल ने चैक भाषा का अध्ययन किया। इसके बाद उन्होंने चार्ल्स विश्वविद्यालय में चैक साहित्य का अध्ययन शुरू किया। इस दौरान उन्होंने चैक लेखकों की कई रचनाओं का गहरा अध्ययन किया और कुछ उत्कृष्ट रचनाओं का अनुवाद कर हिन्दी के पाठकों तक पहुँचाया।

निर्मल वर्मा 1968 तक चैकोस्लोवाकिया में रहे। उसके बाद वे लन्दन चले गए। यूरोप और लन्दन प्रवास के दौरान वे नियमित रूप से 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' के लिये यूरोप की सांस्कृतिक और राजनीतिक समस्याओं पर लेख व रिपोर्ताज लिखते रहे।

स्वदेश वापसी : 1971 में निर्मल यूरोप से 'भारत लौटे। भारत लौटने पर उन्होंने दो वर्ष तक 'मिथक चेतना' विषय पर शोध कार्य किया। 1977 में निर्मल 'इन्टरनेशनल राइटिंग प्रोग्राम',

आयोवा (अमरीका) में सम्मिलित हुए। 1973 में कुमार साहनी ने निर्मल वर्मा की कहानी 'माया दर्पण' पर एक फिल्म का निर्माण किया।

1984 में निर्मल वर्मा को भोपाल में 'निराला सृजनपीठ' का निदेशक नियुक्त किया गया। उन्होंने दो वर्ष तक इस पीठ पर कार्य किया।

अभिरूचियाँ : निर्मल वर्मा केवल साहित्यकार ही नहीं है। साहित्य के साथ-साथ संगीत, चित्र और फिल्मों में भी उनकी गहरी रूचि रही है। वे समय के साथ कदम मिलाकर चलनेवाले साहित्यकार है। सामयिक समस्याओं और प्रश्नों से वे जूझते हैं। विदेशों में लम्बे समय तक रहने के कारण वे आधुनिकतम वैश्विक प्रवाहों से भी परिचित है। वे सोचते वैश्विक संदर्भ में है और उसका अमल भारतीय परिवेश में करते हैं।

पुस्तकें चाहे वे साहित्य की हो या कला से सम्बन्धित, वे पढ़ लिया करते है। कविताओं से इनका लगाव शुरू से ही रहा है। कविताएँ पढ़ना, चाहे वह युरोपियन कवियों की हों या हिन्दी कवियों की, उन्हें हंमेशा अच्छा लगता है। हिन्दी कवियों में इन्हें अज्ञेय, विजय नारायण देव शाही और श्रीकान्त वर्मा की कविताएँ पसन्द है।

विदेशी कवियों में उन्हें टी. एस. इलियट, फ्रांस के सुर्रियलिस्ट कयि पाल एलुमा व लोर्का की कविताएँ पसन्द हैं। कथाकारों में चेखव वर्माजी के पसन्दीदा कथाकार है। साथ ही रूसी साहित्यकार इवान तुर्गनेव, लेव तालस्ताय, बोरिस पास्तरनाक, अलावा टामसमना का लेखन भी पसन्द आता है। हिन्दी में फणीश्वरनाथ रेणु और अज्ञेय इनके प्रिय रचनाकार रहे हैं।

संगीत सुनना और अच्छी फिल्में देखना भी निर्मल के शौक है। वे अक्सर शास्त्रीय संगीत सुनते हैं। इसके अलावा निर्मल पुराने फिल्मी गीत भी सुनते हैं। संगीत के बारे में निर्मल का मानना है कि यह हमारे मन की रिक्तियों को भरने का काम करता है। शायद यही वजह है कि निर्मल अपनी कहानियों और उपन्यासों में अपने पात्रों के मन की विरल अनुभूतियों को संगीत के माध्यम से पकड़ने का प्रयास करते है।

भ्रमण करने का शौक निर्मल को बचपन से ही रहा है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ यह शौक और भी गहराता गया है। यही वजह है कि निर्मल घूमते बहुत है। घूमना, खासकर नए-नए शहरों में घूमना, निर्मल को काफीअच्छा लगता है। निर्मल प्राग, लंदन, पेरिस, बर्लिन, कोपनहेगन जैसे यूरोप के लगभग सभी प्रमुख शहरों का भ्रमण कर चुके है। इन शहरों में प्राग और लंदन उनके प्रिय शहर है। निर्मल भ्रमण को लेखक के लिए अनिवार्य बताते है। यही वजह है कि उनकी इच्छा देशभर में भ्रमण करने की है।

पुरस्कार व सम्मान : निर्मल वर्मा का लेखन गंभीर चिन्तन एवं रचनात्मक उत्कृष्टता का परिणाम है। इसी उत्कृष्टता के परिणाम स्वरूप निर्मल के लेखन का सम्मान हुआ है।

1973 में निर्मल की कहानी 'माया दर्पण' पर कुमार साहनी ने फिल्म बनाई। इस फिल्म को वर्ष की सर्वश्रेष्ठ फिल्म का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। 1977 में आयोवा (अमरीका) में आयोजित इन्टरनेशनल राइटिंग प्रोग्राम में निर्मल वर्मा को आमंत्रित किया गया। उनके सम्मान

के लिए मध्य प्रदेश सरकार ने 1984 में 'निराला सृजनपीठ' का निदेशक नियुक्त किया। 1985 में कहानी संग्रह 'कव्वे और कालापानी' को साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया।1987 में बी.बी.सी. ने निर्मल वर्मा के 'जीवन और कृतित्व' पर फिल्म का प्रसारण किया। 1989 में उन्हें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की ओर से सम्मानित किया गया। 1993 में मोहनलाल केडिया हिन्दी साहित्य न्यास की ओर से 'साधना सम्मान' से विभूषित किया गया। 1995 उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान की ओर से 'लोहिया अतिविशिष्ट सम्मान' से अलंकृत किया गया। 1997 में उन्हें 'मूर्तिदेवी सम्मान' से सम्मानित किया गया। 1999 में निर्मल को उनकी सम्पूर्ण साहित्यिक साधना के लिए हिन्दी साहित्य का सर्वोच्च सम्मान 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' पंजाबी कथाकार गुरुदयाल सिंह के साथ संयुक्त रूप से दिया गया। 2001 में राष्ट्रपति द्वारा 'पद्मभूषण' से सम्मानित किया गया।

देहावसान: हिन्दी भाषा और साहित्य का प्रसार-प्रचार और सेवा करते हुए लम्बी बीमारी के बाद 76 वर्ष की उम्र में दिल्ली की एम्स अस्पताल में 24 अक्तुबर, 2005 के दिन निर्मल वर्मा का निधन हुआ।

बोध प्रश्न

- निर्मल वर्मा के पिता का नाम क्या है?
- निर्मल वर्मा किनके साथ अक्सर कविता, कहानियों पर बहस करते थे?
- निर्मल वर्मा अपने किस प्रवास के दौरान 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' के लिए नियमित रूप से लिखते रहते थे?

21.3.2 निबंधकार की रचनायात्रा

निर्मल वर्मा ने कविता के अलावा साहित्य की अन्य सभी विधाओं को स्पर्श किया है, उनका प्रकाशित साहित्य निम्न है :

उपन्यास : वे दिन (1964), लाल टीन की छत (1974), एक चिथड़ा सुख (1979), रात का रिपोर्टर (1989), अंतिम अरण्य (2000)

कहानी संग्रह : परिन्दे (1959), जलती झाड़ी (1965), पिछली गर्मियों में (1968), बीच बहस में (1973), कव्वे और काला पानी (1983), सूखा तथा अन्य कहानियाँ (1995), थिगालियां (2024)

यात्रा-संस्मरण एवं डायरी : चीड़ों पर चाँदनी (1963), हर बारिश में (1970), धुंध से उठती धुन (1977)

निबन्ध संग्रह : चिड़ो पर चाँदनी (1964), हर बारिश में (1970), शब्द और स्मृति (1976) कला का जोखिम (1981), ढलान से उतरते हुए (1985), भारत और यूरोप : प्रतिश्रुति के क्षेत्र (1991), इतिहास, स्मृति, आकांक्षा (1991), सताब्दी के ढलते वर्षों में (1995), दूसरे शब्दों में (1997) आदि, अन्त और आरम्भ (2001), सर्जना पथ के सहयात्री (2005), साहित्य का आत्म-सत्य (2005)

संचयन : मेरी प्रिय कहानियाँ (1973), दूसरी दुनिया (1978), प्रतिनिधि कहानियाँ (1988), शताब्दी के ढलते वर्षों में (प्रतिनिधि निबन्ध) (1995), ग्यारह लम्बी कहानियाँ (2000).

नाटक : तीन एकान्त (1976), संभाषण/साक्षात्कार/पत्र, दूसरे शब्दों में (1999), प्रिय राम (अवसानोपरांत प्रकाशित) (2006), संसार में निर्मल वर्मा (अवसानोपरांत प्रकाशित) (2006)

अनुवाद: कुप्रिन की कहानियाँ (1955), रोमियो जूलियट और अँधेरा (1964), कारेल चापेक की कहानियाँ (1966), इतने बड़े धब्बे (1966), झोंपड़ीवाले (1966), बाहर और परे (1967), बचपन (1970), आर यू आर (1972), एमेके एक गाथा (1973)

यह पाठ निर्मल वर्मा के निबंध साहित्य पर केन्द्रित है, इसलिए हम यहाँ इनके निबंधों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करने का प्रयास करेंगे।

निर्मल वर्मा के अब तक लगभग दस निबन्ध संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिसमें दो निबन्ध संग्रहों को पूर्णरूप से निबन्ध-साहित्य में समाहित नहीं किया जा सकता,क्योंकि उसमें निबन्ध, साक्षात्कार और व्याख्यान को संकलित किया गया है। उनमें से एक है-'इतिहास स्मृति आकांक्षा' यह व्याख्यान माला है। जब कि दूसरा है- 'दूसरे शब्दों में' इसमें निबन्ध और साक्षात्कार दोनों संकलित हैं। वस्तुतः उनके निबन्धों का कथ्य अत्यन्त स्पष्ट, दूरदर्शी एवं गंभीर है। निर्मल वर्मा द्वारा लिखित निबन्ध संग्रह निम्न है:

शब्द और स्मृति :

'शब्द और स्मृति' निर्मल वर्मा का पहला निबन्ध संग्रह है। यह संग्रह कथाकार निर्मल वर्मा के चिंतक रूप की पहचान पाठकों से कराते हैं। संग्रह में निर्मल कलागत रूपों के सवालों को संस्कृति के सवालों से जोड़ते हैं और कहीं-कहीं भारतीय व यूरोपीय सन्दर्भों में देखते हुए दोनों के मध्य का अन्तर भी स्पष्ट करते है।

'शब्द और स्मृति' में स्मृति की आन्तरिक सम्पन्नता को रेखांकित करते हुए वे बताते है कि स्मृति ही किसी रचना का आधार बनती है। हालाँकि अनुभव इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं लेकिन अनुभव स्मृति से जुड़कर ही कहानियाँ बनाते हैं। स्मृति ही किसी अनुभव को 'रचना' में बदलती हैं। उनका मानना है कि लेखक अनुभव में अकेला हो सकता है,स्मृति में नहीं। 'शब्द और

स्मृति'में कुल बारह निबन्ध संकलित हैं। इनमें से अधिकांश निबन्ध वर्माजीने शिमला निवास के दौरान लिखे थे। इन निबन्धों का स्वर गैर आधुनिक है।

कला का जोखिम

'कला का जोखिम' निर्मल वर्मा के चिन्तन-प्रधान आलोचनात्मक निबन्धों का संग्रह है। पुस्तक में संकलित निबन्धों को तीन खण्डों में विभाजित किया गया है। रचना चिन्तन,रचनाकार और रचना यात्रा। 'रचनाचिन्तन' के अन्तर्गत पाँच निबन्ध 'कला मिथक और यथार्थ', 'परम्परा और इतिहास बोध', 'रचना की जरूरत', 'साहित्य में प्रासंगिकता काप्रश्न' और 'संवाद की मर्यादाएँ' हैं। इन निबन्धों में निर्मलवर्मा की मुख्य चिंता यह है कि आधुनिक सभ्यता और परिवेश में कला की स्वायत्तता कैसे बराबर रखी जाए? उनके अनुसार कला की स्वायतता का सवाल ही कला का जोखिम है। इन लेखों में निर्मल वर्मा कला की स्वतंत्रता को अक्षुण्ण बनाए रखने की हिमायत करते हैं।

ढलान से उतरते हुए :

'ढलान से उतरते हुए' निर्मलवर्मा के वैचारिक निबन्धों का संग्रह है। 'ढलान से उतरते हुए' तीन खण्डों में विभाजित हैं अतः वे खंडहैं- 'कला और कृति', 'अवस्थाएँ' व 'रास्तेपर'। 'कलाऔरकृति' खण्ड का पहला निबन्ध 'कालऔरसृजन' है। इसमें लेखक ने कला का सत्य, कला का अर्थ, उसकी उपयोगिता व कला की नैतिकता जैसे सवालों पर चिंतन किया है। 'कहानी: एक शुद्ध विधा' में अनुभव की प्रकृति को महत्व दिया गया है। 'कलाकृति और आलोचना की मर्यादा' में आलोचना और यथार्थ के सवालों को अनेक कोणों से देखा गया है।

दूसरे खण्ड 'अवस्था' में पाँच निबन्ध हैं। 'शताब्दी के ढलते वर्षों' लेखक मानव के भविष्य पर चिंतन करते हुए बीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों को बहुत कुछ उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों के समान पाता है। 'धर्म, धर्मतंत्र और राजनीति' में मनुष्य की पूर्णता को धर्म और धार्मिक अनुभव से जोड़ा गया है। 'सिंगरौली : जहाँ से कोई वापसी नहीं' में विकास के नाम पर गाँवों को उजाड़ने वाली विकासहीन व्यवस्था पर सवाल उठाये गएहैं। 'ढलान से उतरते हुए' में निर्मल की अपनी रूस यात्रा पर प्रतिक्रिया है। 'क्यों भारतीय संस्कृति को जीवित रखना जरूरीहै' इस खण्ड का अंतिम निबन्ध है।

तीसरा खण्ड 'रास्तेपर' डायरी के अंशों का संग्रह है। ये अंश विभिन्न साहित्यकारों के बारे में निर्मल वर्मा के विचारों के साथ निर्मल के व्यक्तित्व, रूचियों, चिंताओं, सरोकारों एवं संवेदनाओं को भी पाठकों तक पहुँचाते है।

कुल मिलाकर कह सकते है कि 'ढलान से उतरते हुए' संग्रह के निबन्ध आने वाले भयावह संसार में मानव की नियति और उसके अस्तित्व से जुड़े हुए ऐसे सवाल उठाते और उनके उत्तर खोजते है जिन की ओर हम सबका ध्यान जाना चाहिए, किन्तु जाता नहीं।

भारत और यूरोप : प्रतिश्रुति के क्षेत्र :

'भारत और यूरोप: प्रतिश्रुति के क्षेत्र' निबन्ध संग्रह का प्रकाशन राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली से सन् 1991 में हुआ था। प्रस्तुत निबन्ध संग्रह को सन् 1997 में भारतीय ज्ञानपीठ के मूर्तिदेवी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

प्रस्तुत निबन्ध संग्रह वर्माजी के आलोचनात्मक निबन्धों का संग्रह है। इसमें उन्होंने साहित्य, समाज एवं संस्कृति जैसे विषयों पर अपना चिन्तन प्रकट किया है।

दूसरे शब्दों में :

निर्मल वर्मा का 'दूसरे शब्दों में' निबन्ध संग्रह भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली द्वारा सन् 1993 में प्रकाशित किया गया था। खुद वर्मा जी केअनुसार - "पुस्तक में संकलित लेख और वक्तव्य हमारे समय के तात्कालिक दबावों के तहत लिखे गए हैं।" यह संग्रह चार खण्डोंमें विभाजित है।

पहले खण्ड 'सृजन का प्रवेश' में आठ लेख हैं। जिन में लेखक ने रचनाकार का अपने परिवेश, उसके समाज व इतिहास से सम्बन्धों का विश्लेषण करने का प्रयास किया है। दूसरे खण्ड को 'अस्मिता की खोज' नाम दिया गया है। तीसरा खण्ड 'कुछ टिप्पणियाँ' नाम से हैं। इसमें' मानसिक गुलामी का शब्दकोश', 'हमारी चुनी हुई चुप्पियाँ' तथा 'तिब्बत संसार का अंतिम उपनिवेश' नाम केनिबन्ध है।

पुस्तक के अन्तिम खण्ड में वर्मा जी के समय-समय पर लिए गए नौ साक्षात्कार हैं। इन साक्षात्कारों से पाठक को वर्मा जी के लेखकीय व्यक्तित्व के विकास, उसकी प्रतिबद्धताएँ और चिन्ताओं की जानकारी मिलती है। कुछ साक्षात्कारों में निर्मल वर्मा धर्म, समाज, भारतीय संस्कृति और हमारे समय की राजनीति पर भी सारगर्भित टिप्पणियाँ करते हैं।

शताब्दी के ढलते वर्षों में :

'शताब्दी के ढलते वर्षों में' वर्माजी का नया निबन्ध संग्रह है। इस संकलन में वर्मा जी के कुल 29 निबन्ध संकलित है। ये निबन्ध बहु आयामी हैं। पुस्तक तीन खण्डों में विभाजित है।

'कला, साहित्य, सृजनकर्म' शीर्षक के पहले खण्ड में दस निबन्ध संकलित है। इन निबन्धों में लेखक कला की प्रासंगिकता, साहित्य की सार्थकता पर विचार करते हुए उनका सम्बन्ध संस्कृति से जोड़ते हैं।

दूसरे खण्ड 'समाज, संस्कृति, आधुनिक युग बोध' में नौ निबन्ध संकलित हैं जो पूर्व प्रकाशित' शब्द और स्मृति', 'कला का जोखिम', 'ढलान से उतरते हुए' और 'भारत और यूरोप: प्रतिश्रुति के क्षेत्र' निबन्ध संग्रहों से संकलित किए गए हैं।

'रचनाकार' शीर्षक से तीसरे खण्ड में लेखक के संस्मरणात्मक प्रकृति के लेख हैं। इसके अलावा इस में नोबोकोव और लैम्सनेस जैसे विदेशी लेखकों पर भी निबन्ध है।

'शताब्दी के ढलते वर्षों' पुस्तक में लेखक ने कला, साहित्य, संस्कृति और समाज के सनातन सवालों पर चिंतन किया है। इनमें जहाँ समाज औ सांस्कृति के अस्मिता की चिंता है वहीं धर्म और राजनीति के सम्बन्धों जैसे आधुनिक सवालों पर विचार भी किया गया है। पुस्तक के निबन्ध पाठक को कथाकार निर्मल वर्मा की चिंतन प्रतिभा से गहरा परिचय कराते हैं।

आदि, अन्त और आरम्भ :

'आदि, अन्त और आरम्भ' वर्मा जी का अगला निबन्ध संग्रह है। इसका प्रकाशन सन् 2001 में राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली द्वारा किया गया है। प्रस्तुत संग्रह चार खण्डों में विभाजित है।

संग्रह के प्रथम खण्ड को 'भारत : एक स्वप्न' शीर्षक दिया गया है। दूसरा खण्ड 'कथ्य की खोज' है। तीसरा खण्ड 'दो स्वीकृतियाँ' शीर्षक से हैं। इस खण्ड में 'भारतीय सभ्यता : तीसरा महाकाव्य', 'हिन्दी का आत्म संघर्ष' नाम के निबन्ध है। चतुर्थ एवं अन्तिम खण्ड को' इतिहास के खोये हुए पद चिन्ह' नाम दिया गया है।

श्री निर्मल वर्मा के उपर्युक्त सभी निबन्ध संग्रहों में संकलित निबन्धों को देखने पर लगता है कि निर्मल वर्मा एक श्रेष्ठ कहानीकार या उपन्यासकार ही नहीं, परंतु शताब्दी के श्रेष्ठ चिंतक और निबन्धकार हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे हिन्दी के विचारपरक निबन्धकारों में अपना विशिष्ट स्थान रखते है।

सर्जना पथ के सहयात्री

इस निबन्ध संग्रह में देश के महत्त्वपूर्ण रचनाकारों, प्रेमचन्द, महादेवी वर्मा, हजारी प्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय, रेणु, मुक्तिबोध, भीष्म साहनी, धर्मवीर भारती, मलयज और चित्रकारों, कलाकारों जैसे-हुसैन, रामकुमार, स्वामीनाथन पर निबन्ध हैं ही साथ में बोर्खेज, नायपॉल, राब्बग्रिये और लैक्सनेस पर भी बेहद संजीदगी और तरल संवेदना से युक्त निबन्ध संकलित हैं। इस निबन्ध संकलन के विषय में निर्मल वर्मा ने लिखा है- "मैं समय-समय पर अपने प्रिय लेखकों-कलाकारों पर लिखता रहा हूँ। आलोचना की लगी बँधी खूँटी से अपने को छुड़ाकर इन लेखों में मैंने अपने को आत्मीय प्रतिक्रियाओं के प्रवाह में मुक्त बहने दिया है। अब तक ये लेख मेरी निबन्ध-पुस्तकों में बिखरे पड़े थे। उन्हें एक जिल्द में एकत्रित करने के पीछे यदि कोई

आकांक्षा थी, तो सिर्फ यह कि उन पर पाठकों का ध्यान एकाग्र रूप से अवस्थित हो सके।" प्रस्तुत निबन्ध संग्रह में कुल अठारह निबन्ध संकलित हैं।

साहित्य का आत्म-सत्य

प्रस्तुत निबन्ध संग्रह में निर्मल वर्मा जी ने साहित्य के अस्तित्व के संकट को रेखांकित करते हुए विचारधारा के आतंक, इतिहास की कूहेलिका और सम्प्रेषण की समस्या के परिप्रेक्ष्य में उत्तर आधुनिकता के दबाव तले धूमिल होते मनुष्य की सनातन छवि कोअंकित किया है। इस पुस्तक की भूमिका में वे लिखते हैं- "निबन्धों की यह पुस्तक इन परिवर्तनों के प्रति सचेत अवश्य है, पर इनसे छुटकारा पाने का कोई दावा नहीं करती। उसके लिए साहित्य के बाहर नहीं, स्वयं उसके भीतर 'सोच' की जगह ढूँढनी होगी, जो यदि नहीं है, तो बनानी होगी। शायद इसीलिए मैं इस पुस्तक का केन्द्रीय निबन्ध 'सृजन में सोच की प्रक्रिया' समझता हूँ। विचारधारा के अन्य दूषण भले रहे हों, सबसे अधिक आत्मघाती और भयावह परिणाम स्वयं कला से विचार की विदाई थी-मानों विचारधारा के झाड़ू से स्वयं 'विचार' को निष्कासित कर दिया हो।" प्रस्तुत निबंध संग्रह में निर्मल वर्मा जी के नौ निबंध एवं विशेष सम्मानों पर दिए गए वक्तव्य हैं।

बोध प्रश्न

- 'भारत और यूरोप : प्रतिश्रुति के क्षेत्र' निबंध संग्रह का प्रकाशन कहाँ से हुआ?
- 'आदि, अन्त और आरम्भ' निबंध संग्रह का प्रकाशन कहाँ से हुआ?
- 'साहित्य का आत्म-सत्य' निबंध संग्रह में किसके अस्तित्व के संकट को रेखांकित किया गया?

21.3.3 निबंधकार की वैचारिकता के विविध आयाम

कथाकार होने के साथ-साथ निर्मल वर्मा गहरे चिंतक भी है। उनके चिंतन का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। सनातन भारतीय संस्कृति से लेकर आधुनिक मानव सभ्यता तक कोई विषय उनके चिंतन से नहीं छूटे। उनका चिंतन कला और साहित्य के सवालों के अलावा भारतीय संस्कृति की सनातनता और आधुनिक मानवीय सभ्यता के अन्तर्विरोधों से जुड़ी है। उनके इसी चिंतन के कारण आलोचक अशोक वाजपेई उन्हें देश के श्रेष्ठ बुद्धिजीवियों में गिनते हैं। वर्माजीने एक-से-एक श्रेष्ठ निबन्ध संग्रह दिए है।

निर्मल वर्मा ने अपने समय के सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक परिवेश पर चिंतन किया। अंग्रेजी, चेक भाषा का उन्होने अध्ययन किया। वे इतिहास के अध्यापक भी रहे थे। पूर्व एवं पश्चिमी संस्कृति के अन्वेषक रहे। पहले समाजवादी विचारधारा से जुड़े रहे। बाद में इन विचारों से मोहभंग होने का प्रसंग उन्होने अनुभव किया और इसे वे बाकायदा अलग भी हुए। इसके बाद व्यक्तित्वादी, अस्तित्ववादी, गांधावादी जनसंधी विचारों से भी प्रभावित रहे। उनका व्यक्तित्व अनेकानेक सिद्धांतों के द्वंद्व में विकसित होता रहा। इन्हीं विचारों से प्रेरित

साहित्य-सृजन भी होता रहा। इसलिए अपने पूर्ववर्ती एवं समकालीन निबंधकारों में उनका लेखन स्वतंत्र विचारों का तथा मौलिक अनुभूत होता है।

21.3.4 निबंधकार का हिन्दी साहित्य में स्थान

सन 1956 से निर्मल वर्मा का लेखन निरंतर जारी रहा। पाठक वर्ग को इनके नए कृति/रचना की हमेशा प्रतीक्षा रहती। एक सशक्त सार्थक रचनाकार के रूप में उन्होने हिन्दी साहित्यको बहुत कुछ दिया है,इसमें दो राय नहीं होना चाहिए। एक रचनाकार के रूप में उन्होने कहानी, उपन्यास,निबंध,यात्रासंस्मरण,अनुवाद लेखन किया है। इनमें से वैचारिक या चिंतनपरक लेखन की दृष्टि से उनकेनिबंधों का विशेष योगदान रहा है। उनके लिए निबंध मात्र शब्दों की अभिव्यक्ति (शब्दाभिव्यक्ति) न होकर वह विचारों से प्रतिबद्ध होता हैं। वह आत्मविष्कार होते हुए भी बौद्धिक चिंतन से जुड़ा है। उनके चिंतन का क्षेत्र व्यापक है। उनका अधिकांश लेखन धर्म, समाज, कला, सभ्यता, संस्कृति, इतिहास, परंपरा, राजनीति, साहित्य जैसे अनेक विषयों पर चिंतन किया है। साहित्य हो या समाज हो धर्म या धर्मनिरपेक्षता, आधुनिकता या प्राचीनता हर चिंतन में प्रश्नाकुलता दिखाई देती है। वे आत्मसंवादी भी रहे हैं। स्वयं ही प्रश्नों पर समस्याओं का चिंतन करते स्वयं ही उसका समाधान प्रस्तुत करते हैं।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी निबंधकारों में बहुमुखी प्रतिभा के धनी निर्मल वर्मा का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा है। उन्होने साहित्य की विविध विधाओं में लिखकर अपनी मेधावी प्रतिभा का परिचय दिया है। उन्होने एक से बढ़कर एक सुंदर निबंधों की सर्जना की। निबंध विधा को चिंतन से जोड़ दिया है। परवर्ती निबंधकारों के लिए उन्होंने निबंध लेखन की पहली आवश्यकता विचार के प्रति बद्धता की समझायी। यह निबंध लेखन की महत्त्वपूर्ण दिशा है, जो सशक्त निबंधों के लिए पथप्रदर्शन का काम करती है।

निर्मल वर्मा ने हिन्दी निबंध परंपरा में अपने पूर्ववर्ती एवं समकालीन निबंध परंपरा की रक्षा करते हुए अलग पहचान बनायीं। उन्होने निबंध को नयी भाषा दी। नया शिल्प एवं नयी शैली का प्रयोग किया। निबंध को नीरसता से मुक्त किया। आधुनिक बुद्धिजीवियों के लिए बहस के लिए नयी पृष्ठभूमि प्रदान की। एक चिंतक होने की सारी जिम्मेदारियाँ निभायी। भारतीयता को पहचानने के नये मापदंड दिए। साहित्य की प्रासंगिकता जैसे प्रश्नों में न उलझते हुए साहित्य के अन्य महत्त्वपूर्ण प्रश्नों की ओर सोचने के संकेत दिए। पश्चिमी दृष्टि क्या है, धर्म रिलिजन से कैसे अलग है,भारतीय संस्कृति में उसका सही स्थान क्या है आदि बातों की पहचानने की नयी दृष्टि दी।

इस प्रकार निर्मल वर्मा के निबंधों के भावगत एवं कलागत स्थूल अध्ययन के बाद यह स्पष्ट होता है कि हिन्दी निबंध के विकास में उनके निबंधों का योगदान बड़ा उपलब्धिपूर्ण रहा है। उन्होने कलागत, जीवनगत, सांस्कृतिक, भौगोलिक, इतिहास परंपरा विषयक राष्ट्रीय, धार्मिक, मिथकीय जैसे चिरंतन विषयों पर,उनसे जुड़े सवालों पर आलोचनात्मक निबंध प्रस्तुत किए हैं। आनेवाला समय ही यह बतायेगा कि उनकी उपयोगिता क्या है। उन्होने उठाए प्रश्नों के सवाल मात्र सभ्यता के विकास में नहीं बल्कि जीवन के हर संस्कृति में मिलेंगे। जीवन की

गुत्थियों को सुलझाने लिए हमें अपनी परंपरा, संस्कृति, धर्म आदि के प्रश्नों के उत्तरों को साहित्य के द्वारा ही खोलने होगे तब हम कभी शांति की साँस ले सकते है।

बोध प्रश्न

- निर्मल वर्मा किस विषय के अध्यापक रहे ?
- उन्होंने निबंध को किससे मुक्त किया ?

21.4 पाठ सार

स्वातंत्र्योत्तर रचनकारों में निर्मल वर्मा का रचना संसार अत्यंत व्यापक एवं गहरा है। कविता के अलावा साहित्य की अन्य विधाओं में इनकी पैठ है। इनके निबंध साहित्य में रचनाकार के चिंतन के विविध पहलू परिलक्षित होते हैं। साहित्य के विविध पक्षों पर इनका गहन चिंतन इनके निबंधों की विशेषता है। दुसरे शब्दों में कहा जाये तो उनके निबन्धों का कथ्य अत्यन्त स्पष्ट, दूरदर्शी एवं गंभीर है।

उनके निबन्ध धर्मनिरपेक्षता, कला, साहित्य, समाज, संस्कृति, सभ्यता, भाषा, ज्ञान-विज्ञान, पर्यावरण, औद्योगीकरण, परम्परा, इतिहास आदि विषयों के मूल्यों को समाहित करते हैं। उनके निबन्धों में विभिन्न विषयों पर बुनियादी मूल्य चेतना मिलती है। जिससे उनकी जीवन दृष्टि, मान्यताएँ तथा साहित्य, समाज, संस्कृति विषयक उनकी नई अवधारणाएँ, व्यापक जीवन-बोध आदि का परिचय मिलता है। वे भारतीय परम्परा, भारतीय संस्कृति, भारतीय उपन्यास, भारतीय भाषाएँ आदि के बहाने भारतीय मूल्यों को अपने चिन्तन का लक्ष्य मानते हैं। उनके लगभग प्रत्येक निबन्ध में कला एवं संस्कृति के महत्त्व को निरूपित किया गया है। उन्होंने कला की उपयोगिता, प्रासंगिकता, कला का सौंदर्य एवं नैतिकता, कला का सत्य, कला का रहस्य, कला का अर्थ, कला की प्रेषणीयुता आदि पर विचार किया है।

निर्मल वर्मा ने कथ्य एवं शिल्प के स्तर पर ही नहीं, भाषा के स्तर पर भी अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। भाषा उनके लिए मात्र चिंतनाभिव्यक्ति का साधन ही नहीं बल्कि सत्य को पकड़नेवाला तत्त्व है। भाषा एक अजब प्रभाव पैदा करती है। उनके निबंधों में भाषा के नये प्रयोग है, नई शब्दावली है तथा उसकी विविध छवियाँ है।

21.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. स्वातंत्रोत्तर रचनाकारों में निर्मल वर्मा का रचना-संसार व्यापक ही नहीं अपितु गहरा भी है।

2. निर्मल वर्मा आधुनिक हिन्दी निबंधकारों में अग्रणी रहे हैं। धर्म, समाज, साहित्य, संस्कृति, कला आदि निर्मल वर्मा के चिन्तनम के विषय रहे हैं या हम कह सकते हैं की वर्मा जी में इन विषयों पर नए सिरे से चिंतन किया।
3. इनके निबंधों की भाषा कसावपूर्ण, प्रौढ़ एवं गद्य की सशक्त भाषा है।
4. उनके निबंधों में मनुष्य से जुड़े सवालों पर चिंतन प्रकट हुआ है।
5. निर्मल वर्मा की कहानियों पर पाश्चात्य प्रभाव परिलक्षित होता है, किन्तु उनके निबंध भारतीय दर्शन का समर्थन करते दृष्टिगोचर होते है।
6. इनके निबंधों में भाषा, शैली एवं शिल्प का निरंतर विकास दिखाई देता है।

21.6 शब्द संपदा

1. प्रादुर्भाव = आविर्भाव, उत्पत्ति, उदगमन, उदय, उद्गम, उद्भव,
2. कसौटी = जाँच या परीक्षा का आधार
3. परिमार्जित = परिष्कृत या माँजा हुआ
4. सैद्धांतिक = सिद्धांत संबंधी, तत्व संबंधी
5. अभिभूत = जिस पर प्रभाव ड़ाला गया हो
6. प्रासंगिकता =सं गति, संबंधता, योग्यता
7. स्वायत्तता = स्वयं फैसला लेने का अधिकार
8. मान्यता = सिद्धांत, मत, मान्य होने का भाव
9. संश्लिष्ट = खूब मिला हुआ, जड़ा हुआ, एक साथ किया हुआ, सम्मिलित,

21.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खण्ड (अ)

अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित शब्दों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. निर्मल वर्मा के जीवन का परिचय देते हुए उनके जीवन का उनके लेखन कर्म पर प्रभाव को रेखांकित कीजिए।
2. निर्मल वर्मा के निबंधों की विशेषताओं को रेखांकित कीजिए।
3. निर्मल वर्मा के निबंधों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

खण्ड (ब)

आ)दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित शब्दों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. निर्मल वर्मा के हिन्दी साहित्य में स्थान निर्धारित कीजिए।

2. निर्मल वर्मा के वैचारिकता के विविध आयामों पर प्रकाश डालिए।
3. निर्मल वर्मा के किसी एक नाबंध सकलन का परिचय दीजिए।
4. निर्मल वर्मा को प्राप्त पुरस्कारों का उल्लेख कीजिए।

खण्ड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. साहित्य के प्रति निर्मल को प्रेरित करने का काम किसने ने किया। ( )
   क) बड़ी बहिन ख) बदर भाई ग) दादा जी घ) पिता जी
2. कॉलेज के दिनों में निर्मल वर्मा ने किस साहित्य का काफी अध्ययन किया। ( )
   क) गांधीवादी ख) मार्क्सवादी ग) आदर्श वाद घ) प्रतीक वाद
3. राष्ट्रपति द्वारा निर्मल वर्मा को किस पुरस्कार से सम्मानित किया गया? ( )
   क) पद्मभूषण ख) पद्मविभूषण ग) साहित्य अकादमी घ)साधना सम्मान
4. ‘शताब्दी के ढलते वर्षों में’ पुस्तक कितने खण्डों में विभाजित है? ( )
   क) दो ख) एक ग) तीन घ) पाँच

II. रिक्त स्थानों की पूर्ती कीजिए

1. निर्मल के लिए साहित्य जितना अर्थ रखता था, उतनी ही .... भी।
2. निर्मल वर्मा को रचनाकार बनाने में दिल्ली के .... माहौल का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।
3. कुमार साहनी ने निर्मल वर्मा की कहानी .... पर एक फिल्म का निर्माण किया।
4. 'ढलान से उतरते हुए' निर्मलवर्मा के .... निबन्धों का संग्रह है।

III. सुमेल कीजिए

1. भारत और यूरोप : प्रतिश्रुति के क्षेत्र	वैचारिक निबन्धों का संग्रह
2. शताब्दी के ढलते वर्षों में	पहला निबन्ध संग्रह है
3. शब्द और स्मृति	कुल 29 निबन्ध संकलित है
4. ढलान से उतरते हुए	आलोचनात्मक निबन्धों का संग्रह

21.8 पठनीय पुस्तकें

1. कथाकार निर्मल वर्मा : डॉ. नरेन्द्र इष्टवाल
2. निर्मल वर्मा : अवलोकन : आचार्य नंदकिशोर
3. निर्मल वर्मा : (सं) अशोक वाजपेयी

इकाई 22 : निर्मल वर्मा के निबंध 'अतीत : एक आत्ममंथन' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

22.1. प्रस्तावना
22. 2. उद्देश्य
22. 3. मूल पाठ : निर्मल वर्मा के निबंध 'अतीत: एक आत्ममंथन' की विवेचना
22.3.1. 'अतीत: एक आत्ममंथन' की विषयवस्तु
22.3.2. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का प्रयोजन
22.3.3. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध में व्यक्त वैचारिकता
22.3.4. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का भाषा-सौष्ठव
22.3.5. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का शैली-सौन्दर्य
22.4.पाठ सार
22.5.पाठ की उपलब्धियाँ
22.6. शब्द सम्पदा
22.7. परीक्षार्थ प्रश्न
22.8. पठनीय पुस्तकें

22.1 : प्रस्तावना

हिन्दी निबंध के वर्तमान स्वरूप का इतिहास लगभग डेढ़ सौ वर्ष पुराना है। इस थोड़े से काल में ही इस विधा में बड़े पैमाने पर बदलाव हुए हैं। निबंध लेखन के लिए सृजनात्मकता के साथ ही आलोचक दृष्टि का होना अत्यंत आवश्यक है। वर्तमान सूचना-तकनीकी के युग में निबंध विधा अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। साहित्यिक क्षेत्र में निबंध समीक्षा, संस्मरण, यात्रा वृतांत, कहानी, नाटक आदि के रूप में देखी जा सकती है। प्रतिस्पर्द्धा के क्षेत्र में निबंध एक चुनौती भरा कार्य होता है। निबंध में विचारों को ठीक-ठीक तथा संतुलित रूप में प्रस्तुत करना अत्यंत अनिवार्य होता है। निबंध के आत्मपरक तथा वस्तुपरक दो स्थूल स्वरूप होते हैं। निर्मल वर्मा ने 'शब्द और स्मृति' नामक निबंध संग्रह के प्राक्कथन में अपने निबंध लेखन के मंतव्य को प्रकट किया है। 'अतीत एक आत्ममंथन' एक गंभीर , आत्मपरक तथा रोचक निबंध है।' निबंध विधा का विकास आधुनिक युग में हुआ। इस विधा के महत्त्व को आचार्य रामचंद्र शुक्ल के द्वारा दी गयी इस परिभाषा से समझा जा सकता है -'गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी है।' भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही अधिक संभव है। निर्मल वर्मा के द्वारा निबंध विधा में सृजित 'शब्द और स्मृति' शीर्षक निबंध संग्रह में संकलित 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत पाठ के द्वारा किया जाएगा।

22.2: उद्देश्य

इस पाठ में निर्मल वर्मा के निबंध 'अतीत: एक आत्ममंथन' से संबंधित निम्नलिखित बिन्दुओं का अध्ययन किया जाएगा –

1. हिन्दी निबंध लेखन विधा का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे।
2. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध के लेखक का परिचय दिया जाएगा।
3. 'अतीत: एक आत्ममंथन' का परिचय दिया जाएगा।
4. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का विविध धरातल पर विवेचन-विश्लेषण किया जाएगा।
5. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध के आधार पर वर्तमान का मंथन अतीत के द्वारा किया जाएगा।

22.3 : मूल पाठ : निर्मल वर्मा के निबंध 'अतीत: एक आत्ममंथन' की विवेचना

निर्मल वर्मा का जन्म 3 अप्रैल सन् 1929 में शिमला में हुआ था। निर्मल वर्मा के पिता अग्रेजी शासन में एक उच्चाधिकारी थे। उनकी पत्नी गगन गिल भी प्रसिध्द लेखिका रही हैं। वे आठ भाई-बहनों में सातवीं संतान थे। विद्यार्थी जीवन में साम्यवादी विचारों से प्रभावित होते हुए भी महात्मा गाँधी जी के प्रार्थना सभा में सन् 1947-48 के समय में नियमित रूप से जाते थे। आगे चलकर सोवियत द्वारा हंगरी पर आक्रमण करने के बाद उनका साम्यवाद से विश्वास उठ गया। वे लेखक के लिए आध्यात्मिक सुरक्षा की कामना को भौतिक सुख की इच्छा के समान घातक मानते थे। क्योंकि उनका मानना था कि 'लेखक के लिए, शरण का हर स्थान एक ख़तरा है, आप एक बार गिरते हैं और रचनात्मकता का स्पष्ट आकाश हमेशा के लिए खो जाता है।'

निर्मल वर्मा ने प्राग में अपने 10 वर्षों के प्रवास के समय उन्होंने चेक भाषा सीख कर नौ विश्व क्लासिक्स रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया। इसी प्रवास काल में उन्होंने कई यात्रा वृतांत, उपन्यास तथा कहानियों की रचनाएँ की। स्वदेश वापसी के पश्चात् वे सरकार के आपादकाल के निर्णय के विरुद्ध अधिक मुखर हुए। आगे चलकर निर्मल वर्मा के लेखन पर भारतीय प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध इसी का प्रतिफल है। निर्मल वर्मा की 'माया दर्पण' कहानी अत्यधिक चर्चित हुई। सन् 1972 में कुमार शाहनी के निर्देशन में 'माया दर्पण' फिल्म को सर्वश्रेष्ठ क्रिटिक्स का पुरस्कार प्राप्त हुआ। हिन्दी साहित्य में नयी कहानी के लेखकों में निर्मल वर्मा का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। उनकी प्रमुख रचनाओं में 'वे दिन'(1964), 'अन्तिम अरण्य', 'एक चिथड़ा सुख' (1979), 'लाल टीन की छत' (1974),'रात का रिपोर्टर' (1989) आदि उपन्यास हैं। निर्मल वर्मा की कहानियों में 'परिंदे'(1959), 'जलती झाड़ी' (1965), 'लंदन की रात', 'पिछली गर्मियों में' (1968), 'अकाला त्रिपाठी', 'डेढ़ इंच ऊपर', 'बीच बहस में' (1973), 'मेरी प्रिय कहानियाँ', (1973), 'प्रतिनिधि कहानियाँ'(1988), 'कव्वे और काला पानी' (1983), 'सूखा और अन्य कहानियाँ' (1995), 'धागे' (2003) आदि उल्लेखनीय हैं। 'चीड़ों पर चाँदनी'(1962), 'हर वारिश में'

(1989) यात्रा वृतांत की रोचक रचनाएँ हैं। 'किशोर एकांत' (1976) निर्मल वर्मा की नाट्य रचना है। 'शब्द और स्मृति' (1976), 'कला का जोखिम' (1981), 'धुंध से उठती धुन', 'ढलान से उतरते हुए', 'भारत और यूरोप: प्रतिश्रुति के क्षेत्र'(1991) आदि महत्वपूर्ण निबंध रचनाएँ हैं। निर्मल वर्मा की रचनाधर्मिता को देखते हुए उन्हें अलग-अलग संस्थाओं के द्वारा विविध पुरस्कारों व सम्मानों से समय-समय पर अलंकृत किया जाता रहा। जिनमें ज्ञानपीठ पुरस्कार (1999), साहित्य अकादमी(1985),पद्म भूषण (2002), मूर्तिदेवी सम्मान (1991), लेटे युलियस पुरस्कार, साहित्य अकादमी फेलोशिप (2005) आदि उल्लेखनीय हैं। 25 अक्टूबर 2005 में दिल्ली में हिन्दी साहित्य के इस रथी ने अंतिम साँस ली।

बोध प्रश्न:

- 'एक चिथड़ा सुख' किस विधा में लिखी गई रचना है ?
- निर्मल वर्मा प्राग में कितने वर्ष तक रहें ?

मंथन, मनन करने की क्षमता मानव का विशेष गुण होता है। निबंधकार निर्मल वर्मा ने बड़ी ही रोचक शैली में 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध की रचना की है। प्रायः प्रत्येक युग का वर्तमान हमारे पूर्वजों का भविष्य होता है। वर्तमान को हम जीते हैं और भविष्य की कल्पना करते हैं। भविष्य की कल्पनाएँ यदि सुखद हों, तो हम अतीत की ओर कम ही झाँकते हैं। लेकिन जब वर्तमान में कोई घटना हमारी सोच के विपरीत घटती है, तो हम अवश्य ही अतीत में उसके समाधान सूत्र ढूँढ़ने का प्रयास करते हैं। जब हम इस खोजबीन में लगते हैं, तो विवेक के साथ अतीत को टटोलना पड़ता है। बिना सोचे-समझे अतीत को वर्तमान के लिए कोसना हमारी निर्ममता तथा अल्पज्ञता का सूचक होता है।

अतीत की टोह पाने के लिए हमारे जीवन में साँसों की तरह बसी हमारी परंपराओं का विवेचन करना आवश्यक हो जाता है। मानव समाज की ये परम्पराएँ उन्हें अपने मूल की ओर ले जाती हैं। हम अपने जीवन में उन परम्पराओं को औचित्य के साथ ही अपनाते हैं। भारतीय तथा यूरोपीय चेतना का विकास अलग-अलग धरातल पर हुआ है। यूरोपीय संस्कृति में खंडित चेतना व्यक्तिवादिता का पोषक बनता है, तो भारतीय संस्कृति में अखंडित चेतना की अधिकता पायी जाती है। भारतीय अपने वर्तमान के लिए अतीत से भयभीत नहीं होते हैं। उदाहरण के लिए भारतीय जीवनदर्शन में जीवन-मृत्यु की परिकल्पना सदा एक-सी रही है। वहीं दूसरी ओर यूरोपीय संस्कृति का पतन, पुनर्जागरण आंदोलन, चर्च की प्रभुसत्ता तथा औद्योगिकी, तकनीकी के विकास ने द्वंद्व को बढ़ावा दिया है।

बोध प्रश्न:

- प्रत्येक युग का वर्तमान हमारे पूर्वजों का क्या होता है ?
- यूरोपीय संस्कृति में खंडित चेतना किस बात की पोषक बनती है ?

पाश्चात्य ऐतिहासिक परिदृश्य में बौध्दिक वैभव का आरंभ यूनानी दार्शनिकों के द्वारा विकसित हुआ है। इस वैभव में तार्किकता का बवंडर उठा हुआ दिखाई देता है। भारतीय व्यवहारिक स्तर पर ऐतिहासिक परिवर्तनों को स्वीकारते हुए भी मानसिक स्तर पर सभी परिवर्तनों से निर्लिप्त रहें। उदाहरण के लिए पाश्चात्य संस्कृति का स्वभाव प्रकृति को जीतने के

बाद मानव पर विजय प्राप्त करना रहा है। दूसरी ओर भारतीय जीवन दर्शन में राजा राममोहन राय जैसे बुध्दिजीवियों ने उदारवादी दृष्टिकोण अपनाकर अतीत को महिमामंडित किया। मैक्समूलर जैसे विदेशी विद्वान् भारतीय मनीषा पर व्याख्यान देते हुए भारतीय प्राचीन धर्मं को मृतप्राय तथा इसाई धर्मं को मानवीय स्वतंत्रता का मूल मानने लगे थे। मार्क्स जैसे विद्वान् यूरोपीय सभ्यता को कसौटी बनाकर विश्व की संस्कृतियों का मूल्यांकन करने लगे थे। यह बात तो स्पष्ट है कि यूरोपीय विश्लेषक अपनी मूल दृष्टि को लेकर ही किसी भी विषय का विश्लेषण करेंगे। किन्तु भारतीय विद्वानों का भी इस विषय में भ्रष्ट विवेचन रहा है। किसी जाति के धर्म-विश्वास, संस्कार, जीवन गति को भ्रष्ट करके अपनी वैचारिकता को बलात ओढ़ा देना प्रगति नहीं कहा जा सकता है। पाश्चात्य शिक्षा मार्क्सवाद को भाग्यवादिता से ढँक कर इतिहास को ईश्वर बना देता है। विकास के नाम पर भारतीय आध्यात्मिकता को कुचल कर कई विद्वान् स्वयं को अत्याधुनिक दर्शाते हुए स्वयं से छले गए हैं। धरती को स्वर्ग बनाने की परिकल्पना में भविष्य का स्वप्न दिखा कर वर्तमान को धूमिल बनाने में लगे रहें।

पाश्चात्य विचारक अतीत का भय और भविष्य की वायवी दुनिया में वर्तमान आधुनिकता का ढोंग करते रहे हैं। लगभग सभी यूरोपीय विचारक अतीत के भक्त और भविष्य के पुजारी रहे हैं। एक खंडित विचार जब सम्पूर्णता को प्राप्त करने का मार्ग बताने लगता है, तो वहाँ संदेह के बादल निर्मित होते हैं। वर्तमान को सीधा बनाकर भविष्य के स्वर्ग तक पहुँचने का पाश्चात्य विचार कभी भी पूर्ण नहीं हो सकता है। अतः निर्मल वर्मा ने अतीत के पुनर्मूल्यांकन की बात कही है। जब-जब वर्तमान घायल होता है, तो उसका उपचार अतीत से ही प्राप्त होता है। अपने देश की परंपरा को पाश्चात्य अन्धानुकरण में त्याग देने वाले भारतीयों को वर्तमान जीवन की समस्या का समाधान अतीत को खंगालने पर अवश्य ही प्राप्त होगा।

बोध प्रश्न:

- मार्क्सवाद इतिहास को क्या बनाता है ?
- घायल वर्तमान का उपचार कहाँ से प्राप्त होता है ?

अतीत को समझने के लिए आत्ममंथन करना आवश्यक है। भारतीय संस्कृति के व्यापक दृष्टिकोण तथा प्रकृति के साथ तालमेल बनाकर चलने वाली परम्पराएँ ऐसे में बासी व अनुपयुक्त प्रतीत न होंगी। जैसे भारतीय पौराणिक कथाओं में समुद्र मंथन को यदि सच्ची कथा न भी माने, तो यह इस बात का प्रतीक तो हो ही सकता है कि इस समुद्र मंथन में चौदह रत्न के साथ ही समस्त सृष्टि के विनाश का अकेला कारक विष भी प्राप्त हुआ था। मंथन करने से कुछ अच्छी तो कुछ बुरी बातें भी दिखाई देंगी। बस हमें गंभीरता के साथ रत्न चुनने होंगे। वर्तमान जीवन की कई विकृतियों को हम तभी दूर कर पाएंगे। जब मानव अपने गहन विचारों में डूब कर शांत चित्त होकर मंथन करना आरम्भ करने लगता है, तो मन-मस्तिष्क के विकारों का विरेचन होने लगता है। जीवन के इन विकारों के विगलन से अमृत रूपी समाधान स्वतः ही प्राप्त हो जाता है|

बोध प्रश्न:

- अतीत को समझने के लिए हमें क्या करना होगा ?
- वर्तमान जीवन की विकृतियों का समाधान हमें कहाँ प्राप्त होगा ?

आत्ममंथन के द्वारा मनुष्य को अपने यथार्थ स्वरूप का बोध होता है। आज के आपाधापी भरे समय में मानव स्वयं को भूलने लगा है। आत्ममंथन अति विशाल आकाश के समान आत्मा को विस्तार प्रदान करता है। आत्ममंथन के माध्यम से अतीत में देखते हुए पूर्व काल की गलतियों से स्वयं को बचाकर वर्तमान को सुंदरतम बनाया जा सकता है। अपने जीवन की सफलता-असफलता से प्रेरक प्रसंगों को लेकर नवीन दृष्टि का विकास करना संभव हो सकता है। अतीत की सफलता हमें जीवन में सफल होने की प्रेरणा प्रदान करती है। अतीत की असफलता हमें जीवन में पुनः उन गलतियों को दोहराने से बचने के लिए सतर्क करती है। अतीत हमारी दृष्टि को विस्तार देती है। हमारे पूर्वजों का स्वप्न, उनका भविष्य अर्थात हमारा वर्तमान है। वर्तमान मानव जीवन अच्छा-बुरा न होकर हमारे पूर्वजों की कल्पनाओं का साकार रूप है। यही कारण है कि अतीत के जीवन मूल्यों का शाश्वत स्वरूप अब तक प्रासंगिक बना हुआ है।

बोध प्रश्न:

- आत्ममंथन करने से हमारी आत्मा का क्या होता है ?
- अतीत की असफलता हमें किससे बचाती है ?

22.3.2. 'अतीत: एक आत्ममंथन' का प्रयोजन

वर्तमान परिवेश में मानव की सांस्कृतिक पहचान लुप्त होती जा रही है। निर्मल वर्मा के निबंध 'अतीत: एक आत्ममंथन' का प्रयोजन मानव सभ्यता के इसी अस्तित्व को संरक्षित करना है। अतीत को देखने के लिए बड़े साहस की जरुरत होती है। अतीत को देखने के लिए विशेष दृष्टि की आवश्यकता होती है। यह दृष्टि जातीय परंपरा की मौलिकता से जुड़ना होता है। निबंधकार परंपरा को आयातित न कहकर नैसर्गिक मानते हैं। किसी भी देश की संस्कृति को उनके बिम्बों, प्रतीकों तथा मिथकों का समुच्चय माना जाता है। संस्कृति को इन सबसे अलग करके नहीं देखा जा सकता है। इन बिम्बों, प्रतीकों और मिथकों के द्वारा ही धर्म-अधर्म, नैतिकता-अनैतिकता में विभेद करने का विवेक विकसित होता है। जिसके फलस्वरूप एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से तथा विश्व मानव से जुड़ता है।

बोध प्रश्न:

- निबंधकार के अनुसार अतीत को देखने का प्रयोजन क्या है ?
- संस्कृति को किससे अलग नहीं किया जा सकता है ?

निबंधकार के द्वारा निबंध में पश्चिम और पूर्व के जीवनदर्शन को विश्लेषित किया गया है। यूरोपीय संस्कृति व्यक्ति आधारित आत्मचेतना से गहरे जुड़ी हुई है। यह संस्कृति खंडित चेतना से पल्लवित हुई है। खंडित चेतना में मानव स्वयं को प्रकृति, विश्व तथा दूसरे मनुष्य से नितांत अलग मानता है। मध्य युग के बाद यूरोप का जीवनदर्शन अलग दिशा में परिवर्तित होने लगा। यूरोपीय व्यक्ति को धर्म और परंपरा सहारा और सांत्वना देने वाले प्रतीत होने लगे। निजी स्तर पर पश्चिमी व्यक्ति स्वयं को अकेला तथा निसहाय अनुभव करने लगें। ऐसी स्थिति में अपार स्वतंत्रता होते हुए भी उसकी आत्मा में गहरी खाईं बनती जा रही थी। मनुष्य के सेक्युलर और

धार्मिक अनुभव के बीच ऐसी विभाजक-रेखा खींच गई, जिसे पाटने की प्रक्रिया में आधुनिक यूरोपीय संस्कृति का विकास हुआ।

भारतीय जीवनदर्शन में धार्मिक अंतर्दृष्टि तथा सेक्युलर अनुभव के बीच कोई ऐसी विभाजक रेखा नहीं है। क्योंकि भारतीय जीवनदर्शन में मानव के समस्त कार्यकलाप धार्मिक प्रतीकों के माध्यम से ही व्यक्त होते हैं। यही कारण है कि भारतीय जीवनदृष्टि में अखंड चेतना की अविरल धारा प्रवाहित होती है। भारतीय जनमानस की विचारधारा ऐतिहासिकता से नहीं बिम्बों, प्रतीकों तथा मिथकों से संचालित होती है। फलस्वरूप भारत में इतिहास का नकार नहीं आह्वान किया जाता है। यूरोपीय मनीषा सांस्कृतिक पतन, औद्योगिक क्रांति तथा चर्च की प्रभुसत्ता के पतन को 'बौद्धिक वैभव' (रीज़न) में परिवर्तित करने लगी। 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध में प्रकृति और संस्कृति के संतुलन को स्थापित करने का प्रयास किया गया है। प्रकृति पर विजय प्राप्त करके पश्चिमी देश मनुष्य को गुलाम बनाने के मार्ग पर अग्रसर हो गए हैं|

बोध प्रश्न :

- खंडित चेतना किस संस्कृति का प्रतीक है ?
- भारतीय जीवनदृष्टि में किसकी अविरल धारा बहती है ?

अंग्रेजी शासन के माध्यम से पश्चिमी सभ्यता मनुष्य, इतिहास तथा भविष्य के ऐसे आदर्शों को भारतीयों पर आरोपित करने लगी, जिनकी कोई आवश्यकता न थी। औपनिवेशिक मनोवृति का जो बीज उन्नीसवीं शती में भारतीय मनीषा में रोपित किया गया था, वह आज वटवृक्ष बन चुका है। यह मनोवृति गहन हीनता-बोध और प्रांतीय अस्मिता के प्रति अविश्वास-भाव से जुड़ा हुआ है। अपने अतीत को पुनर्जीवित करने के इसी प्रयास में भारतीय बुद्धिजीवी यह भूल गए कि अतीत चेतना का प्रबल पक्ष होता है। यह जीने का प्रमुख तत्व है, दिखाने का नहीं। अंग्रेजी माध्यम से पढ़े-लिखे बुद्धिजीवी यूरोपीय महानताबोध के चिंतन को सर्वोपरि स्थान देने लगे। लेखक इस निबंध के माध्यम से भारतीयों को आत्ममंथन करते हुए पश्चिम के क्षणिक सम्मोहन से बाहर आने के लिए कहते हैं। यूरोपीय यह मानते हैं कि यूरोपीय चिंतन और इसाई धर्म में ही विकास और मानवीय स्वतंत्रता का मूल स्रोत प्राप्त हो सकता है।

किसी भी संस्कृति का मूल्यांकन किसी एक देश की संस्कृति को आधार बनाकर नहीं किया जा सकता है। भारतीय जीवन संस्कृति का मूल्यांकन अंग्रेजीयत की सोच में ढले भारत के महान बुद्धिजीवियों के द्वारा किया जाता रहा है। किसी भी जाति के धर्म-विश्वासों, संस्कारों तथा जीवन-गति को भ्रष्ट करके प्रगति के नाम पर अपने विचारों को आरोपित करना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता है। पश्चिम ने भारतीय संस्कृति को जितनी क्षति प्रत्यक्ष रूप से नहीं पहुँचाई, उससे कहीं अधिक भारतीय 'एलीट' ने अपने देश की संस्कृति को चोटिल किया है। मार्क्स ने 'वर्गहीन समाज' की परिकल्पना करते हुए उत्पीडन-शोषण मुक्त समाज का चित्रण किया है। यहूदी संत भी 'धरती पर स्वर्ग' की विचारधारा का प्रतिपादन किया करते थे।

बोध प्रश्न:

- महानताबोध के चिंतन को सर्वोच्च स्थान कौन देते हैं ?
- मार्क्स ने किस समाज की परिकल्पना की थी ?

इतिहास भक्त तथा भविष्य के उपासक विचारों के साथ वर्तमान की अवज्ञा करने के कारण वर्तमान मानव जीवन में अनैतिकता, मानव-विरोधी विचारों का बोलबाला हो गया है। स्टालिनवादी विचारधारा में जिस मनुष्य के भविष्य का उल्लेख हुआ है, वहाँ मनुष्य के लिए कोई भी स्थान नहीं है। इस निबंध में मानव-विरोधी व्यवस्था की विचारधारा को तोड़ने का प्रयत्न किया गया है। वर्तमान को विकृत करके कोई भी सकारात्मक परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। पश्चिमी देश तथा रूस, चीन के औपनिवेशिक मनोवृति को अपनाकर भारत का विकास संभव नहीं है। एकमात्र महात्मा गाँधी ने हमारे बौद्धिक आलस्य की कड़ी आलोचना की थी। 'उन्होंने इस सत्य को बार-बार दुहराया था कि हमारा भविष्य हमारे अतीत से जुड़ा है – और भविष्य और अतीत दोनों ही हमारी वर्तमान जीवनधारा के अंग हैं। यह अनिवार्य नहीं कि पश्चिम की तकनीकी सभ्यता को हम जोर-जबर्दस्ती अपने भविष्य पर लागू करें- और जान-बूझकर उन अमानवीय अंतर्विरोधों के शिकार बनें, जिनसे आज पश्चिमी जगत (पूंजीवादी और समाजवादी दोनों ही) इतनी बुरी तरह से ग्रस्त हैं। मार्क्स ने जो चेतावनी पश्चिमी दुनिया को दी, गांधीजी ने उन खबरों के प्रति हमारा ध्यान वर्षों पहले आकृष्ट किया था।'

हमारी जीवन चेतना शताब्दियों के बहुमुखी स्रोतों से विकसित हुई है, जिसे किसी 'यूनिफार्म' ढाँचे में नहीं ढाला जा सकता है। इस निबंध का प्रयोजन अपने अतीत का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए प्रेरित करना है। भारतीय संस्कृति-समुद्र में अन्य संस्कृतियाँ नदियों की तरह मिलती हुई इसे मानव संस्कृति का उत्कृष्ट स्वरूप प्रदान करती हैं। अतः इसे किसी पैटर्न में नहीं ढाला जा सकता है।

बोध प्रश्न:

- बौध्दिक आलस्य की आलोचना किसने की ?
- विश्व के कई देशों की संस्कृतियाँ कहाँ जाकर मिलती हैं ?

22.3.3. अतीत: एक आत्ममंथन' में व्यक्त वैचारिकता

निर्मल वर्मा हिन्दी साहित्य में अपनी कहानी शैली के लिए जाने जाते हैं। जीवन और अध्यात्म के गूढ़ विषयों पर उन्होंने सरल शब्दों में विचार किया है। हिन्दी गद्य को वैचारिकी की ऊँचाइयों तक पहुँचाने में निर्मल वर्मा का अन्यतम स्थान है। उनके साहित्य को जीवन के त्वरा में अनुभूत किया जा सकता है। अतीत की पड़ताल करते समय लेखक सर्वत्र संतुलन साधते हुए पूरी संवेदनशीलता के साथ निबंध की गति बढ़ाते हैं। हिन्दी गद्य जगत को निर्मल वर्मा ने वैभवशाली बनाया है। उनकी रचनाओं में विषय, भाषा, अनुभव तथा शैली आदि इतनी संयत रहती है कि घटनाएँ अधिक न होने पर पाठक उन विचारों में आकंठ डूब जाता है। लेखक अपने गहन विचार अध्यवसाय तथा व्यापक जीवन अनुभव की गहराई से प्राप्त करते हैं।

अतीत में लिए गए फैसलों को हम अपने वर्तमान समय में निपटाते हैं। मौलिक परंपरा को अंतिम परंपरा से मिला कर जीवन में जीवंतता का रोपण किया जाता है। अतीत की परम्पराओं में जब शाश्वतता होती है, तभी वे हमारे जीवन का अभिन्न अंग बनती हैं। यूरोपीय संस्कृति की धारा का प्रवाह व्यक्ति की विकसित आत्मचेतना से हुआ है। किसी एक व्यक्ति के अनुभव से इसकी जड़ें फूटी हैं, अर्थात प्रकृति, विश्व और मनुष्यों से विलग अनुभव को इसका

मूलाधार मान सकते हैं। किन्तु मध्ययुग के बाद यूरोपीय व्यक्ति यह सोच सकें कि धर्म तथा परंपरा व्यक्ति को सांत्वना तो दे सकते हैं किन्तु अंतर्मन तक नहीं पैठ सकते हैं। अतः यूरोपीय विचारधारा में यहीं से वैयक्तिक चेतना का विकास होना आरम्भ होता है। परिणामतः मनुष्य की चेतना और धार्मिक विश्वासों के बीच दूरी बढ़ने से मनुष्य स्वयं को अकेला और निस्सहाय पाने लगा। अब मनुष्य समस्त मूल्यों और मान्यताओं का अंतिम स्रोत अपनी चेतना में ढूँढने लगा। यूरोप के सांस्कृतिक भावभूमि में परिवर्तन यहीं से शुरू होता है, जब वह स्वयं को विश्व का केंद्रबिंदु और समस्त चीजों का मापदंड मान लेता है।

बोध प्रश्न:

- यूरोपीय संस्कृति की धारा का प्रवाह व्यक्ति की किस आत्मचेतना से हुई है ?
- स्वयं को विश्व का केंद्रबिंदु और समस्त चीजों का मापदंड किस विचारधारा के लोग मानते हैं ?

भारतीय चेतना में ऐसी कोई विभाजक रेखा कभी भी नहीं रही। क्योंकि यहाँ किसी भी समय मनुष्य की धार्मिक अंतर्दृष्टि और सांसारिक अनुभवों के बीच विभाजक रेखा नहीं खिंची गई। मनुष्य के सांसारिक कार्यों में धार्मिक प्रतीक तथा धार्मिक अनुष्ठानों में दैनिक जीवन के आचार-व्यवहार एक-दूसरे से गहरे जुड़े हुए हैं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति एक समग्र, अखंडित और सम्पूर्ण चेतना पर आधारित है। भारतीय संस्कृति में बाहरी परिवर्तन अवश्य आएँ हैं, किन्तु मूल जीवनधारा में उसके सदियों से चले आ रहे मिथक एवं प्रतीक इतिहास की अवधारणा को नकार देते हैं। भारतीय वैचारिकी में व्यवहारिक स्तर पर इतिहास से समझौता करते हुए भी मनीषा के स्तर पर इतिहास को उपेक्षित करते रहें। भारत में अंग्रेजों के आने तक भारतीय अपने इसी द्वंद्वात्मक प्रक्रिया के बीच संतुलन बनाते रहें। अंग्रेजों के आने के बाद से प्रकृति और मनुष्य के बीच विरोध इसी 'खंडित आत्मा' का प्रतिनिधित्व करता है। औद्योगिक क्रांति का लक्ष्य इसी प्रकृति पर विजय की घोषणा का प्रतीक बन गया। पश्चिमी लोकतंत्र, अंग्रेजी शिक्षा, आचार-विचार, औद्योगीकरण तथा महाजनी-सभ्यता के राह पर चलकर ही आधुनिक बना जा सकता है। आधुनिकता के ये पश्चिमी मानदंड भारतीय जीवन दर्शन में कहीं भी फिट नहीं बैठते थे।

भारतीय पुनरुत्थानवादी बुद्धिजीवियों ने पश्चिमी महानता को स्वीकारते हुए भारतीय संस्कृति का गौरव गाना शुरू किया। जिससे वे विद्वान् वेद-उपनिषदों की दुहाई के साथ जान स्टुअर्ट मिल के विचारों का समर्थन करने लगे। इसे 'समन्वय का अभियान' माना जाता है। इस तरह की मनोवृति ने भारतीयों को हीनताबोध से भर दिया। क्योंकि पश्चिमी जीवन पध्दति की नक़ल करते हुए हम अपने मूल से भी बहुत दूर चले गए। मैक्स मूलर के शब्दों में- 'भारत का प्राचीन धर्म मृतप्राय हो चुका है। यदि ईसाई धर्म उसकी जगह नहीं लेता तो दोष किसका होता।' भारतीय बुद्धिजीवी भारत के विकास के मार्ग को पश्चिमी विचारधारा में ढूँढ रहे थे। इस तरह की विचारधारा के सन्दर्भ में एक बात ध्यान देने योग्य है कि उन्नीसवीं शती में पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से आक्रांत विद्वानों की तरह ही आज के मार्क्सवादी इतिहास के सामने स्वयं को भाग्यवादी मानते हैं। वे ईश्वरीय सत्ता को ठुकराकर इतिहास के ईश्वर के समक्ष नतमस्तक हैं।

'पश्चिम की तथाकथित चुनौती का सामना करने के बहाने अपने देश की समूची जीवनधारा को एक ऐसे भविष्य की ओर मोड़ दिया था, जो सिर्फ आत्मछलना था। पिछले सौ वर्षों की आत्मछलना में हमारे वर्तमान संकट के बीज निहित हैं।'

बोध प्रश्न:

- समग्र, अखंडित और सम्पूर्ण चेतना पर आधारित संस्कृति कौन सी है ?
- भारतीय पुनरुत्थानवादी बुद्धिजीवियों के विचार बताइए।

यूरोपीय वैचारिकी भविष्य की काल्पनिक चिंतन के मोह में डूबी हुई है। भविष्य यदि वर्तमान को कुरूप बनाकर गढ़ा जाय, तो वह सम्मोहन से अधिक कुछ नहीं है। यही कारण है कि 'भविष्य के प्रति दास-वृति अपने में ऐसी मनोवृति है, जो हर प्रकार की मानव-विरोधी, अधिनायकवादी व्यवस्था को न्यायोचित ठहरा सकती है। पश्चिमी विचारधारा में स्टालिनवादी व्यवस्था में मनुष्य के भविष्य का निर्माण करते हुए मनुष्य के लिए ही कोई स्थान नहीं रखा गया है।' अल्वेयर कामू वर्तमान को सब कुछ देकर ही भविष्य के प्रति उदारता व्यक्त करते हैं। भारतीय बुद्धिजीवी इतिहास से भयभीत होकर पश्चिमी राजनीतिक, सामाजिक संस्थाओं में भारत की मुक्ति और विकास की कल्पना में जी रहे हैं। कल्पना इसलिए कि पश्चिम की समता और स्वतंत्रता का स्वरूप भारतीय परम्पराओं और जीवन पद्धतियों से कोसो दूर है।

वैचारिकी के स्तर पर अतीत का आत्ममंथन करने पर ही यह ज्ञात होता है कि भविष्य के प्रति दास-वृति का परिणाम मानव-विरोधी, अधिनायकवादी व्यवस्था को न्यायसंगत मानने लगता है। इतिहास की कसम खाकर सुंदरतम भविष्य की कल्पना वर्तमान के लिए विनाशक सिध्द होता है। क्योंकि मानव संवेदनशील प्राणी होता है, जिसे बलपूर्वक किसी साँचे में नहीं ढाला जा सकता है। तकनीकी विकास के नाम पर उसका यांत्रिक परिवर्तन करना संभव नहीं है। भारतीय विकास की इसी यांत्रिक दृष्टि ने उसे दरिद्र बनाया है। गरीब भारत को विकास के नाम पर दरिद्र भारत बनाने का षड्यंत्र तथाकथित औद्योगिक क्रांति के अग्रदूतों ने किया है। मानव संस्कृति ने अपने अस्तित्व को अतीत के प्रतिबिम्ब में ही पाया है। जब किसी वर्ग विशेष के अस्तित्व पर संकट मंडराता है, तो वह अपनी परंपराओं को, अपने जीवन के अँधेरे को मिटाने का माध्यम बनाती है। जैसे चेकोस्लोवाकिया देश ने अपने देश के संकट की घड़ी में आत्ममंथन करते हुए प्राचीन परम्पराओं को पुनः अपनाया था। आत्ममंथन के लिए शोर से हटकर शांतिपथ को चुनना पड़ता है। ताकि जीवन-सत्य तक पहुँचा जा सके।

बोध प्रश्न:

- भारतीय विकास की यांत्रिक दृष्टि ने उसे क्या बनाया है ?
- किसी वर्ग विशेष के अस्तित्व पर संकट मंडराने पर क्या किया जाता है?

22.3.4. 'अतीत: एक आत्ममंथन' का भाषा-सौष्ठव

निर्मल वर्मा के साहित्य में यदि सबसे उच्च कोटि का कुछ ढूँढना हो, तो वह उनका भाषा-सौष्ठव है। यद्यपि कई वाक्य इस निबंध में अत्यंत लंबे हैं। ये वाक्य चार से पाँच पंक्तियों तक के हैं। कई बार काव्यात्मक सघनता भाषा के प्रयोग को अधिक ग्राह्य बनाता है । वैसे भी निर्मल वर्मा में शब्दों को विषय के अनुरूप गढ़ने की समझ खूब थी। निर्मल वर्मा का भाषिक प्रयोग

उनकी रचनाओं को मंथर गति से बहने वाली नदी बनाती है, जिसके ज्ञान गंगा में पाठक सहज ही गोते लगाते हुए स्वयं को विस्मृत कर बैठता है। जिस समय लेखक रचना-कर्म की ओर प्रवृत्त हो रहे थे, हिन्दी जगत पश्चिम के प्रभाव से आक्रांत होकर एकांकी भाव में डूब रहा था। जीवन का आध्यात्म्य साहित्य का आध्यात्म्य कैसे बने? इसकी ओर निर्मल वर्मा ने सार्थक प्रयत्न किए। 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध की भाषा भी चौकसी करती हुई अपने पैनेपन के कारण जीवंत हो उठी है। लेखक भाषा–प्रयोग अत्यंत पारदर्शिता के साथ करते हैं। वे अपनी हाजिरजवाबी के लिए भी जाने जाते थे। जब भी कोई विदेशी भारतीयों द्वारा अपने देश की भाषा छोड़ विदेशी भाषा के प्रयोग से संबंधित प्रश्न करते थे, तो वे इसे दूसरी भाषाओं के प्रति सम्मान भाव का प्रकटीकरण कहते थे। निर्मल वर्मा को भारतीय तथा पाश्चात्य भाषा तथा संस्कृति की प्रभावी जानकारी थी। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में कई बार तुलनात्मकता का सहज प्रवेश हो जाता है। एक लेखक की भाषिक पकड़ भाषिक वैविध्य की स्थिति में रचना अत्यंत सशक्त हो जाती है। निर्मल वर्मा के निबंध 'अतीत: एक आत्ममंथन' में भाषिक सशक्तता को पाठक अनुभूत कर सकते हैं। उनके भाषिक प्रयोग को इन पंक्तियों में देख सकते हैं –

'हम आज संकट के जिस भयावह दौर से गुजर रहे हैं, वहाँ भावी समाज के समस्त आदर्श थोथे और अर्थहीन होंगे–यदि हम अपने अतीत और वर्त्तमान को नंगी आँखों से देखने का साहस नहीं बटोर पाते।'

निर्मल वर्मा की रचनाओं में हिन्दी भाषा के नए रूप का संदर्शन किया जा सकता है। साठ के दशक में लेखक की भाषिक अभिव्यक्ति किसी नई खोज की तरह प्रतीत होती है। जहाँ मानव जीवन में दो-दो विश्वयुद्धों के बाद गहन एकाकीपन व्याप्त हो चुका था। निर्मल वर्मा की रचनाएँ ऐसी निराशा में भारतीय आध्यात्मिकता को लेकर जीवनी का संचार कर रही थीं।

बोध प्रश्न:

- निर्मल वर्मा के साहित्य में कैसी भाषा का प्रयोग किया गया है ?
- 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का भाषिक प्रयोग किस कोटि का है ?

22.3.5. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का शैली-सौन्दर्य

'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध में निर्मल वर्मा ने बातचीत और आत्ममनन की सहज तथा गंभीर शैली का प्रयोग किया है। पूर्वजों के स्वप्न का साकार रूप वर्तमान जीवन शैली को मानने वाले लेखक ने कहीं भी चेतना को कुंठित नहीं होने दिया है। वे कहते है 'अतीत को देखना कभी सपाट और बेलौस नहीं होता। देखने की प्रक्रिया में चुनने और आँकने का विवेक जुड़ा रहता है। जिस तरह एक जाति अपनी परंपरा की आँखों से यथार्थ को छानती है।' निर्मल वर्मा ने संकट की घड़ी में अपनी परंपरा के मूल्यांकन को ही स्वयं का मूल्यांकन माना है। किसी भी समस्या का समाधान उसके मूल में ही होता है। वे कभी परंपरा को निभाने के क्रम को निरंतरता का बोध कहते हैं, तो कभी उसकी ताल्कालिकता में शाश्वतता का अवलोकन करते है। अंगों की समग्रता को उन्होंने देह कहा है। देह का निर्माण परंपराओं को ढोने से नहीं, अपितु सभी अंगों के मिलने

से होता है। अंग और देह के माध्यम से लेखक पाश्चात्य जीवन दृष्टि को स्पष्ट करते हुए भारतीय जीवन दृष्टि की सम्पूर्णता को प्रस्तुत करते हैं। 'यूरोपीय संस्कृति का विकास एक तरह से मनुष्य की आत्मा में खिंची इस खाईं को पाटने का गौरवपूर्ण प्रयास रहा है। इसके विपरीत भारतीय चेतना में भारतीय संस्कृति का विशिष्ट पहलू छिपा है। निर्मल वर्मा आत्ममंथन की शैली में कहते हैं कि 'भारतीय मनीषा का निर्माण व्यक्ति के ऐतिहासिक बोध द्वारा नहीं, उन मिथकों, प्रतीकों और संस्कारों के संश्लिष्ट प्रवाह में लक्षित होता है। जो इतिहास को नकारते नहीं, केवल उसकी लहरों को अपनी मूल धारा में समाहित कर लेते हैं। निर्मल वर्मा तुलनात्मक शैली के साथ जहाँ निबंध को प्रस्तुत करते हैं, वहीं अपने गंभीर विचारों को इतिहासबध्द भी बनाते हैं। उनकी निबंध शैली पर ऐतिहासिकता का सहज प्रभाव देखा जा सकता है। चूँकि लेखक इतिहास विषय के अध्येता हैं, इस कारण उनके निबंधों में गंभीरता का समावेश हो ही जाता है। अतीत के विवेचन में लेखक ने कई उध्दरणात्मक प्रसंगों का चित्रण किया है। यद्यपि ये प्रसंग वाक्य रचना की दृष्टि से अत्यंत सरल हैं, किन्तु मिश्र तथा संयुक्त वाक्यों के द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं।

बोध प्रश्न:

- 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध किस शैली में लिखी गई है?
- निर्मल वर्मा ने तुलना के लिए किन प्रमुख संस्कृतियों को प्रस्तुत किया है ?

22.4 : पाठ सार

अतीत को खोजने के लिए हमारे जीवनशैली में व्याप्त परंपराओं का विवेचन करना अत्यंत आवश्यक है। मानव समाज की ये प्राचीन परम्पराएँ उन्हें अपने मूल की ओर ले जाती हैं। हम अपने जीवन में उन परंपराओं को जीवन की कसौटी पर कसकर ही अपनाते हैं। भारतीय तथा यूरोपीय चेतना का विकास अलग-अलग पृष्ठभूमि में हुआ है। यूरोपीय संस्कृति की खंडित चेतना व्यक्तिवादिता की पोषक रही है। जबकि भारतीय संस्कृति में अखंडित चेतना की व्याप्ति है। पाश्चात्य ऐतिहासिक परिदृश्य में बौध्दिक वैभव यूनानी दार्शनिकों के द्वारा शुरू किया गया। इस वैभव में तार्किकता का तूफ़ान मचा हुआ था। भारतीय विद्वान् व्यवहारिक स्तर पर ऐतिहासिक परिवर्तनों को स्वीकारते हुए भी मानसिक स्तर पर सभी परिवर्तनों से तटस्थ रहें।

पाश्चात्य विचारक अतीत का भय और भविष्य की काल्पनिक दुनिया में वर्तमान आधुनिकता का नाटक करते रहें। लगभग सभी यूरोपीय विचारक अतीत के भक्त और भविष्य के पुजारी रहे हैं। एक खंडित विचार जब सम्पूर्णता को प्राप्त करने का मार्ग बताने लगता है, तो वह मार्ग संदेहों से भरा हुआ होता है। अतीत को समझने के लिए आत्ममंथन करना जरुरी है। भारतीय संस्कृति के विशाल दृष्टिकोण तथा प्रकृति के साथ समन्वय बनाकर चलने वाली परंपराएँ ऐसे में उन्हें जीवनी देती रहीं। आत्ममंथन के द्वारा मनुष्य को अपने यथार्थ स्वरूप का बोध होता है। आज के भाग-दौड़ वाले समय में मानव स्वयं को भूलने लगा है। आत्ममंथन अति विशाल आकाश के समान आत्मा को विस्तार प्रदान करता है। आत्ममंथन के द्वारा अतीत में देखते हुए पूर्व में की गई गलतियों से स्वयं को बचाकर वर्तमान को उत्तम बनाया जा सकता है ।

अपने जीवन की सफलता-असफलता से प्रेरक प्रसंगों को लेकर नवीन दृष्टि का विकास करना संभव हो सकता है। अतीत की सफलता हमें जीवन में सफल होने की प्रेरणा प्रदान करती है। अतीत की असफलता हमें जीवन में पुनः उन गलतियों को दोहराने से बचने के लिए सतर्क करती है। अतीत हमारी दृष्टि को व्यापक बनाती है। निबंध में यह स्पष्ट किया गया है कि हमारे पूर्वजों का स्वप्न, उनका भविष्य आज हमारा वर्तमान है।

वर्तमान समय में इतिहास भक्त तथा भविष्य के उपासक विचारों के साथ वर्तमान की अवज्ञा करना आत्मघातक सिद्ध होगा। वर्तमान मानव जीवन में अनैतिकता, मानव-विरोधी विचारों का बाहुल्य है। भारतीय जीवन चेतना में विश्व की कई संस्कृतियों का सम्मिश्रण है। अतः इसे किसी 'यूनिफार्म' ढाँचे में नहीं रखा जा सकता है। अपने अतीत का पुनर्मूल्यांकन करते हुए वर्तमान को ईमानदारी के साथ भोगते हुए उज्ज्वल भविष्य की आधारशिला रखी जा सकती है। भारत के विशाल सांस्कृतिक समुद्र में अन्य मानव संस्कृतियाँ नदियों की तरह मिली हुई हैं। इसीलिए भारतीय संस्कृति मानव संस्कृति का उत्कृष्ट उदाहरण सिद्ध होती हैं।

22.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

विवेचित पाठ 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध के द्वारा निर्मल वर्मा ने मानव को अतीत से जुड़े रहना आवश्यक बताया है। क्योंकि अतीत से जुड़ने का स्पष्ट अर्थ है कि मानव जीवन अपनी जड़ों से जुड़ा रहता है। इस पाठ के अध्ययन की निम्नांकित उपलब्धियाँ हैं –

1. हिन्दी के साठोत्तरी साहित्य के प्रमुख रचनाकार निर्मल वर्मा के व्यक्तित्व तथा कृतित्व से परिचित हुए।
2. हिन्दी निबंध लेखन विधा के प्रौढ़ रूप से अवगत हुए।
3. 'अतीत: एक आत्ममंथन' के द्वारा मानव जीवन को सरल बनाने का मार्ग ज्ञात हुआ।
4. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध के माध्यम से भारतीय तथा पाश्चात्य विचारों के धरातल को समझने में सहायता मिली।
5. वर्तमान जीवन की अशांति का शमन अतीत में ढूँढ़ने की विधि का पता चला ।

22.6 : शब्द संपदा

1. प्रतिस्पर्द्धा = मुकाबला
2. प्राक्कथन = पहले कही गई बात
3. मंतव्य = विचार
4. मंथन = किसी विषय पर गंभीर विचार करना
5. टटोलना = तलाश करना
6. कोसना = भला-बुरा कहना
7. अल्पज्ञता = कम जानना

8. परिदृश्य = चारों ओर दिखने वाला
9. निर्लिप्त = लगाव न रखने वाला
10. धूमिल = अस्पष्ट
11. वायवी = हृदय के भीतर
12. ढोंग = छल
13. गहन = गहरा
14. विगलन = ढीला पड़ना
15. शाश्वत = सदा रहने वाला
16. समुच्चय = बहुत सी चीजों का एक में मिलना
17. खंडित चेतना = टूटे-फूटे विचार
18. अविरल = लगातार
19. विरेचन = शुद्धि करना
20. क्षणिक = अस्थायी
21. क्षति = नुकसान
22. एलीट = संभ्रांत वर्ग
23. विकृत = बिगड़ा हुआ
24. त्वरा = जल्दी

22.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड – (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के 500 शब्दों में उत्तर लिखिए।

1.निर्मल वर्मा के व्यक्तित्व व कृतित्व का विस्तृत परिचय दीजिए।
2. 'अतीत: एक आत्ममंथन' के कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।
3. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध की वैचारिकता को स्पष्ट कीजिए।
4. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध का प्रयोजन सिद्ध कीजिए।

खंड – (आ)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के 200 शब्दों में उत्तर लिखिए।

1. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध के भाषा-सौष्ठव का विवेचन कीजिए।
2. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध की शैलीगत विशेषताएँ बताइए।
3.शिल्प-कला की दृष्टि से 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध को विवेचित कीजिए।
4. 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध की प्रासंगिकता अपने शब्दों में लिखिए।

खंड – (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. निर्मल वर्मा का जन्म किस वर्ष हुआ था?

अ) सन् 1929 में आ) सन् 1923 में इ) सन् 1925 में

2. इनमें से निर्मल वर्मा की रचना नहीं है -

अ) 'अकाला त्रिपाठी' आ) 'डेढ़ इंच मुस्कान' इ) 'बीच बहस में'

3. निर्मल वर्मा ने प्राग में चेक भाषा सीख कर कितनी विश्व क्लासिक्स रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया?

अ) 9 आ) 11 इ) 17

4. निर्मल वर्मा की कहानी 'माया दर्पण' को लेकर सन् 1972 में किसके निर्देशन में 'माया दर्पण' फिल्म बनी ?

अ) कुमार शाहनी आ) कुमार शानू इ) कुमार विश्वास

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. 'रात का रिपोर्टर' (1989)...................विधा में लिखी गई है ।
2. निर्मल वर्मा का जन्म ....स्थान पर हुआ।
3. निर्मल वर्मा को पद्म भूषण सम्मान से सन्..................में सम्मानित किया गया।
4. 'किशोर एकांत' ....विधा में लिखी गई रचना है।

III. सुमेल कीजिए –

1. शब्द और स्मृति अ) 1981
2. कला का जोखिम आ) 1991
3. भारत और यूरोप: प्रतिश्रुति के क्षेत्र इ) 1976
4. परिंदे ई) 1965
5. जलती झाड़ी उ) 1959

22.8 : पठनीय पुस्तकें

1. वर्मा, निर्मल, शब्द और स्मृति
2. गिल, विनीत, संपादक,निर्मल वर्मा और उनका साहित्यिक संसार
3. मेहेर,छबिल कुमार, संपादक, निर्मल वर्मा एक मूल्यांकन
4. गिल,गगन, संपादक, संसार में निर्मल वर्मा: वृहत् संस्करण
5. पालीवाल, कृष्णदत्त, संपादक, निर्मल वर्मा और उत्तरउपनिवेशिक विमर्श

इकाई 23 : निबंधकार कुबेर नाथ राय : एक परिचय

इकाई की रूपरेखा

23.1 प्रस्तावना
23.2 उद्देश्य
23.3 मूल पाठ : निबंधकार कुबेरनाथ राय : एक परिचय
2 3.3.1 निबंधकार का जीवनवृत्त
23.3. 2 निबंधकार की रचना यात्रा
23.3.3 निबंधकार की वैचारिकता के विविध आयाम
23.3.4 भाषा शैली
23.3.5 निबंधकार का हिन्दी साहित्य में स्थान
23.4 पाठ सार
23.5 पाठ की उपलब्धियां
23.6 शब्द संपदा
23.7 परीक्षार्थ प्रश्न
23.7 पठनीय पुस्तकें

23.1 : प्रस्तावना

आप जानते ही हैं कि सर्जनात्मक साहित्य की दो प्रमुख विधाएं गद्य और पद्य है।गद्य साहित्य में निबंध और उसमें भी ललित निबंध अपने आप में एक सशक्त विधा है। इस विधा के एक बेहतरीन निबंधकार कुबेरनाथ राय(1933-1996) हैं। निबंध तो बहुत से लेखक लिखते हैं, पर केवल ललित निबंध लिखकर जिन निबंधकारों ने खूब नाम कमाया उनमें इनका नाम बड़े आदर से लिया जाता है। इस इकाई में इन्हीं कुबेर नाथ राय का निबंधकार के रूप में आप परिचय प्राप्त करेंगे। शुरू से ही शुरू करेंगे। 15 मार्च 1964 में इनका 'हेमंत की संध्या' नामक एक निबंध डॉ धर्मवीर भारती द्वारा संपादित 'धर्मयुग' पत्रिका में छपा था और पत्रिका के संपादक ने लेखक का परिचय इस प्रकार दिया था, " चिंतन और अनुभूति से पेज ललित निबंधों की परंपरा में एक सर्वथा नवीन हस्ताक्षर।" अंग्रेजी के इस प्रोफेसर ने भारतीय इतिहास, संस्कृति, धर्म, पुराण, पुरातत्व और दर्शन आदि बहुत से विषयों को गहराई से पढ़ा और पढ़कर जो कुछ भी लिखा,उसे पढ़कर आप इनको मान जाएंगे। हिन्दी के ललित निबंधकारों की चर्चा निबंधकार कुबेर नाथ राय के बिना अधूरी है। इस इकाई को पढ़ने के लिए एक जरूरी शर्त है- थोड़ी सावधानी बरतनी होगी। भाषा इनकी गंगा-जमुनी-सरस्वती सी है तो भाव भारतीयता की परिभाषा।

23.2 : उद्देश्य

इस इकाई के पाठ से आप:

- निबंध और ललित निबंध के बारे में जानते हुए इस विधा के एक लेखक का परिचय प्राप्त करेंगे।

- कुबेरनाथ के साहित्यिक व्यक्तित्व और कृतित्व का बोध प्राप्त करेंगे।
- कुबेरनाथ राय के लेखन और उनकी भाषा शैली की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- निबंधकार के रूप में कुबेरनाथ राय के लेखन और उनके अवदान का विवेचन विश्लेषण कर सकेंगे।

23.3 : मूल पाठ : निबंधकार कुबेर नाथ राय : एक परिचय

23.3. 1 निबंधकार का जीवनवृत्त

कुबेरनाथ राय का जन्म 26 मार्च 1933 को उत्तर प्रदेश के भोजपुरी-भाषी क्षेत्र गाजीपुर जिले के मतसाँ ग्राम में हुआ।उनके पिताजी का नाम बैकुण्ठ नारायण राय एवं माताजी का नाम लक्ष्मी राय था।उनकी पत्नी का नाम महारानी देवी था। श्री राय का परिवार साधारण किसान का था किन्तु साहित्यिक, सांस्कृतिक और धार्मिक रुचि से भरा था। साहित्य प्रेम और देश भक्ति की भावना इनको विरासत में मिली थी। राय को अंग्रेजी भाषा का ज्ञान और राष्ट्रीय विचारधारा के बीज अपने दादा जी से मिले। आप कह सकते हैं कि बचपन में कुबेर नाथ राय को अपने गाँव में भी पढ़ने-लिखने का वातावरण मिला।

प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के प्राइमरी स्कूल में हुई। मिडिल और हाई स्कूल की शिक्षा भी पास के स्कूलों में हुई।फिर क्विंस कालेज, वाराणसी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी और कलकत्ता विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की।कुबेर नाथ राय ने एम ए करने के बाद 'पोयटिक ड्रामा ऑफ टी एस एलियट' पर रिसर्च करना चाहा परंतु पैसे की तंगी ने उन्हें नौकरी करने पर मजबूर किया। हिन्दी में एम ए करने और शोध कार्य करने से भी वे चूक गए। हाँ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से आपने 'साहित्यरत्न' की परीक्षा जरूर पास की।

अपने सेवाकाल के आरम्भ में उन्होंने विक्रम विद्यालय कोलकाता में कुछ समय के लिए अध्यापन किया। उसके बाद 1959 में वे नलबारी, असम में अंग्रेजी के प्राध्यापक नियुक्त हुए। 1959 से 1986 तक नलबारी कॉलेज में अंग्रेजी व्याख्याता एवं विभागाध्यक्ष रहे। रोजी-रोटी के लिए 27 वर्ष तक आसाम में परिवार से दूर रहते हुए उन्होंने अपना वक्त अपने साहित्यकार मित्रों की संगति में बिताया।इन 27 वर्षों में आपने खूब लिखा। असम में वे स्थानीय भाषा की दृष्टि से 'आउट साइडर' थे ,परंतु मन और आत्मा से 'इन-साइडर'। असम का राजनीतिक माहौल बदल जाने के कारण असम छोड़कर आप वापिस आ गए। फिर गाजीपुर के स्वामी सहजानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय में 1986 से 1995 तक प्राचार्य पद पर नियुक्त रहे।

वे एक सहज सरल स्वभाव के साथ अपनी परंपरा के अनुसार पारिवारिक जिम्मेदारी निभाया करते थे। संयुक्त परिवार की बहुत सी जिम्मेदारियों की वजह से वे अपनी एकमात्र संतान कौशलेन्द्र कुमार राय को आगे नहीं बढा सके। इसलिए उनके पुत्र एक साधारण किसान ही रहे। श्री राय का निधन 5 जून 1996 को उनके अपने गांव मतसा में अपने पैतृक आवास पर हुआ।इस तरह रिटायरमेंट के बाद वे मुश्किल से एक वर्ष ही इस संसार में रह पाए।

उपलब्धियां-सम्मान: कुबेरनाथ राय बचपन से ही लेखक बनना चाहते थे। लेखन का बीज स्कूल में ही पड़ गया था, पर वे किसी को नहीं बताते थे कि वे अभी किशोरावस्था में हैं

और केवल विद्यार्थी हैं। वे अपने राष्ट्रीय और साहित्यिक उत्तरदायित्व के प्रति बचपन से ही सजग और सतर्क थे। वे कुछ नया और आंदोलनकारी लिखना चाहते थे। 'माधुरी' और 'विशाल भारत' आदि पत्रिकाओं में छात्र जीवन से ही लिखना शुरू कर दिया था।1962 में जब उन्होंने प्रो हुमायूँ कबीर की इतिहास की पुस्तक पढ़ी तो उन्होंने उसके खिलाफ एक निबंध लिख दिया। तभी पंडित श्री नारायण चतुर्वेदी के कहने से 'सरस्वती' में लिखना शुरू किया। 1964 में ललित निबंधकार के रूप में श्री राय ने अपनी उपस्थिति 'धर्मयुग' पत्रिका में दर्ज कराई।

कुबेरनाथ राय के 'मराल', 'प्रिया नीलकंठी', 'रस आखेटक', 'गंधमादन', 'निषाद बांसुरी', 'विषाद योग', 'पर्णमुकुट', 'महाकवि की तर्जनी', 'पत्र मणिपुतुल के नाम', 'किरात नदी में चंद्रमधु', 'मनपवन की नौका', 'दृष्टि अभिसार', 'त्रेता का वृहत्साम', 'कामधेनु' और 'रामायण महातीर्थम' आदि 20 पुस्तकों में निबन्ध मिलते हैं । कविताएं भी आपने कुछ लिखी पर बहुत कम।

उन्हें भारतीय ज्ञानपीठ के मूर्ति देवी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश शासन से उनके निबंध संकलन 'प्रिया नीलकंठी', 'गंधमादन' और 'विषाद योग' को भी पुरस्कृत किया गया था। उत्तर प्रदेश हिन्दी समिति और उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने भी इनकी पुस्तकों को पुरस्कार दिये। इसके अलावा गांधी शांति प्रतिष्ठान, भारतीय भाषा परिषद के पुरस्कार भी मिले। ये सब पुरस्कार और सम्मान और इनके 20 निबंध संग्रहों के कई कई बार प्रकाशित संस्करण इनकी व्यापक लोकप्रियता के प्रमाण हैं।

कुबेरनाथ राय ने भारतीय धर्म, दर्शन, इतिहास, मिथक, साहित्य, संस्कृति, कला, नृतत्वविज्ञान आदि बहुत से विषयों पर सोच-विचारकर बड़ी सुलझी भाषा में लिखा। अपने लेखन में भारत की खोज करते हुए कुबेरनाथ राय ने अपने देश का अनोखा और खरा रूप रचकर प्रस्तुत किया। अपने विशुद्ध देशी संस्कारों की जमीन पर खड़े होकर राय ने आधुनिक अंग्रेजी साहित्य और असम-बंगाल के साहित्यिक जगत के प्रभाव से अपने को अछूता न रखा। अपने लेखन में शेक्सपीयर के मनमौजी और रवींद्र नाथ के शालीन लेखन के बीच 'रचनात्मक सामंजस्य (क्रिएटिव बैलन्स) रखने की कोशिश की। कुबेरनाथ राय ने अपनी हिंदुस्तानी संस्कृति को हमेशा कसकर पकड़े रखा। इनके ललित निबंधों में भारतीय रस परंपरा और देशी लोक-संस्कृति का अनूठा मेल रहा है। श्री राय के बारे में लिखते हुए एक विद्वान समीक्षक ने ठीक ही कहा है, " वे प्रकृति से अक्खड़, स्पष्टवादी, पर तत्वाभिनिवेशी दृष्टि के रहे हैं। और अपनी स्थापना के कारणों को भी बड़े बेलौस लहजे में उद्घाटित करते रहे हैं।"

बोध प्रश्न

- कुबेरनाथ राय के लेखन पर किन साहित्यकारों का प्रभाव ज्यादा पड़ा?
- लेखन और पारिवारिक उत्तरदायित्वों के बीच कुबेरनाथ राय ने कैसे सामंजस्य स्थापित किया?

23.3. 2 निबंधकार की रचना यात्रा

कुबेरनाथ राय सिर से पैर तक सोलह आने केवल ललित निबंधकार थे। आप यह भी जान लें कि वे कोई मामूली निबंधकार न थे। वे ललित निबंधकार थे और उनका यह जो 'लालित्य' था वह भी अपने आप में निराला था। वे खुद कह गए हैं - मेरा लालित्य'क्रुद्ध लालित्य' है। वे बहुत गुस्से में हो जाते हैं जब आज के भारत को पुराने भारत से मिलाकर देखते हैं। एक बार उन्होंने कहा था कि "मेरा संपूर्ण साहित्य या तो क्रोध है, नहीं तो अंदर का हाहाकार, पर इस क्रोध और इस आर्तनाद को मैंने सारे हिंदुस्तान के क्रोध और आर्तनाद के रूप में देखा है।" ('रस आखेटक' 2006, पृष्ट 185)।

आप जब इनके निबंधों को पढ़ेंगे तो खुद समझ जाएंगे कि ये केवल चिंतनपरक नहीं हैं बल्कि चिंतापरक हैं। ये निबंध आपके लिए भी एक चुनौती से कम नहीं। इनको पढ़ने के लिए भारतीय सांस्कृतिक संस्कार चाहिए।

सबसे पहले तो आप यह जान लें कि यह 'ललित'क्या है? और ललित निबंध किसे कहेंगे? अपने एक व्याख्यान में 'लालित्य' की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा था कि जिस हालत में चित्त अपनी सीमाओं को भूलकर एक मुक्ति या इच्छा तृप्ति का अनुभव करता है और यही अनुभव है लालित्य बोध का सुख या रसानुभूति का सुख। जिससे आस्वादन-सुख मिले वह ललित है। जो ललित है वही सरस है। वे अपने मन को कभी रस आखेटक, कभी मधु लोलुप और कभी आरण्यक मन कहते हैं। उन्होंने अपने सारे लेखन को आनंद की जुगाली कहा है।

यह बात भी ध्यान रखने की है कि कुबेरनाथ राय कवि नहीं हैं । उनके निबंधों की भाषा जरूर तत्सम प्रधान और आलंकारिक है, पर उन्होंने कविता कम ही लिखी थी। 'कंथामणि'(1998) उनका अकेला एक काव्य संकलन है। दरअसल,आचार्य कुबेरनाथ राय के अगर उनके एकमात्र कविता संग्रह 'कंथामणि'(1998) को छोड़ दिया जाये तो सिर्फ एक विधा 'निबन्ध' को उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। यह संग्रह भी कुबेर नाथ राय की मृत्यु के बाद प्रकाशित हुआ।

कुबेरनाथ राय आलोचक और समीक्षक भी नहीं हैं। उनके निबंधों में कहीं कहीं आलोचना के स्वर जरूर हैं, पर वे हैं ठेठ निबंधकार ही। निबंधकारों में भी वे ललित निबंधकार थे। गद्यकार के रूप में कुबेरनाथ राय के लेखन पर आधुनिक अंग्रेजी के कवि और नाटककार शेक्सपीयर, निबंधकार लैंब और विलियम हैजलिट और बंगला के रवींद्र नाथ तथा सुनील गांगुली आदि का प्रभाव पड़ा। अपने समय में प्रचलित गिनसबर्ग के 'हाउल' और 'अकविता' का असर उन्होंने खुद पर न पड़ने दिया। शायद इसी वजह से कुबेरनाथ राय की गद्य शैली में एक साथ ही गंभीरता और मनमौजीपन देखा जा सकता है। अपने विशुद्ध देशी संस्कारों के साथ उन्होंने जो कुछ भी लिखा उसमें कहीं भी फूहड़पन और भदेस का दिखावा नहीं है। वे अपने निबंधों के विषय भारतीय साहित्य की क्लासिक परंपरा और आधुनिकता-बोध से लेते हैं। लोक जीवन और देशी लोक संस्कृति कुबेरनाथ राय के निबंधों का उपजीव्य है।

बोध प्रश्न

- 'क्रुद्ध लालित्य' के विचार को अपने शब्दों में समझाइए।
- कुबेरनाथ राय के ललित निबंधों का उपजीव्य क्या है?

23.3.3 निबंधकार की वैचारिकता के विविध आयाम

ललित निबंधकार के रूप में कुबेर नाथ राय के लेखन में पाँच प्रमुख दिशाएं देखी जा सकती हैं। भारतीयता, गंगा तीरी लोक जीवन और आर्येतर भारत, राम कथा, गांधी दर्शन, और आधुनिक विश्व चिंतन। इन सारे विषय-क्षेत्रों में लेखक का उद्देश्य मनुष्य को पृथ्वी से जोड़कर प्रस्तुत करना रहा है। अपने समस्त ललित-निबंध लेखन में कुबेर नाथ राय ने चार बातों पर खास ध्यान दिया है। ये हैं- मनुष्य को पृथ्वी और ईश्वर से जोड़कर देखना, साहित्य को राजनीति का अनुचर न मानना, इस शताब्दी में नए सिरे से सोचना और अपनी जमीन को न छोड़ना तथा देसी प्रज्ञा पर भरोसा करना।

अपने निबंधों में आचार्य कुबेरनाथ राय ने वृहत्तर भारत की संकल्पना को साकार किया है। 'मनपवन की नौका' में वृहत्तर भारत की पहचान करते हुए वे प्राचीन भारत का विस्तार स्याम, जावा, सुमात्रा, मलाया, कम्बोडिया, मलेशिया, इंडोनेशिया तक बताते हैं। इसका सबूत वे विभिन्न किताबों और ऐतिहासिक उदाहरणों से पेश करते हैं। वह तमाम ऐसे द्वीपों का जिक्र करते हैं, जहां भारतीयता की छाप है। उनका मानना है कि भारतीयता एक संयुक्त उत्तराधिकार है जिसके रचनाकर आर्यों के अलावा द्रविड़, निषाद और किरात आदि हैं। उन्होंने भारतीयता में नगरीय सभ्यता, कला शिल्प, और भक्ति योग जैसे तत्त्वों को द्रविड़ों की देन माना है। वे भारतीय अतीत को समूचा स्वीकार नहीं करते। वे भारतीय जाति-प्रथा को ठीक नहीं समझते। वे 'गंधमादन'(पृष्ठ8) में लिखते हैं कि यह जाति भोजन से अधिक महत्व थाली-तसले और आसन को देती है, मनुष्यत्व से अधिक महत्व वरन व्यवस्था को देती है, और भावों=विचारों से अधिक महत्व व्याकरण को देती है। यह अपनी शिथिल कर्म निष्ठा को छिपाने के लिए तरह-तरह के कर्म-कंद –कलाप रचती है। भारतीय पुरोहितवाद को वे सख्त नापसंद करते हैं।

कुबेरनाथ राय ने रामकथा को अपने लेखन का प्रमुख विषय बनाया। वे मानते हैं कि "राम शब्द के मर्म को पहचानने का अर्थ है भारतीयता के सारे स्तरों के आदर्श रूप को पहचानना। मेरे लेखन की एक दूसरी प्रमुख दिशा इसी राम की महागाथा से संयुक्त है। राम मनुष्यत्व के आदर्श की चरम सीमा हैं। सही भारतीयता क्षुद्र, संकीर्ण राष्ट्रीयता के दंभ से बिलकुल अलग तथ्य है।यह सर्वोत्तम मनुष्यत्व है। पूर्ण भारतीय बनने का अर्थ है 'राम' जैसा बनना"।श्री राय के लिए 'भारतीयता' कोई अमूर्त अथवा यूटोपिया नहीं है। 'मुझसे जब कोई पूछता है कि 'भारतीयता क्या है तो मैं इसका एक शब्द में उत्तर देता हूँ, वह शब्द है'रामत्व'- राम जैसा होना ही सही ढंग की भारतीयता है। हमारे युग में भी एक पुरुष ऐसा हो गया था जिसने राम होने की चेष्टा की और बहुत कुछ सफल भी रहा।"

'वे एक सही हिन्दू थे' निबंध में कुबेरनाथ राय जवाहरलाल नेहरू को आधुनिक हिन्दू बताते हैं और गांधी जी को 'सही' हिन्दू। वे कहते हैं कि गांधी में यह जो सद्भावना है, इसके मूल में हिन्दू होना ही है। "यदि गांधीजी हिन्दू न होते, या भारतीय न होते तो उनकी चिंता और कर्म पद्धति के अंग प्रत्यंग में ऐसी एकसूत्रता या 'हारमनी' नहीं आ पाती या आती भी तो यह भिन्न स्वरूप की होती। हिन्दू होने के कारण ही उनकी चिंता पद्धति का रूप संकेंद्रित वृत्तों का है"।

- कुबेरनाथ राय के लेखन की दिशाओं का विवेचन कीजिए।
- रामकथा के मर्म को समझने का क्या अर्थ है?
- किसने इस युग में 'राम' बनने की कोशिश की?

23.3.4 भाषा शैली

कुबेरनाथ राय को ठीक से पढ़ना और उन पर लिखना खासा चुनौती भरा है। उनकी भाषा का अर्थ समझना बच्चों का खेल नहीं। वे ऐसे ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं कि जो परेशान कर देते हैं। उदाहरण के लिए एक निबंध का शीर्षक है- प्रजागर पर्व में साहित्यकार। यहाँ 'प्रजागर' का अर्थ क्या है? यह महाभारत के वक्त का शब्द है। वे 'जागरण पर्व' भी लिख सकते थे। किन्तु उन्होंने नया शब्द दिया। इसके लिए उनका कहना है कि वे 'पाठक के चित्त को एक परिमार्जित भव्यता देना और साथ साथ ही उसकी चित-ऋद्धि का विस्तार' करना चाहते हैं।

कुबेरनाथ राय के बारे में यह कहा जाता है कि वे कई बार बहुत से ऐसे गैरजरूरी शब्दों का प्रयोग भी करते हैं जिनका अर्थ मुश्किल से पता लग पाता है। इससे आम पाठक को बड़ी दिक्कत होती है। पर वे कभी कभी ऐसा जानबूझकर भी करते हैं जिससे पढ़ने वाला ध्यान देकर पढे। उसको भी नए शब्दों का पता चले। कई शब्द जानने लायक होते हैं और उन्हें जानना फायदे का सौदा ही होगा। वे पाठक को अपनी भाषिक संस्कृति से जोड़ना चाहते हैं,इसलिए कई बार शुद्ध देशी शब्दों का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए 'गोदारा' का अर्थ होता है नौका संघट्ट । 'जल्दी करो, गोदारा लगा है! अन्यथा नाव छूट जाएगी।" यह वाक्य नदी के किनारे आज भी सुना जा सकता है। पर आम पाठक इसे भूलने लगा है। कुबेरनाथ राय इस शब्द का प्रयोग करके उसका अर्थ खोलते हैं। वे हमें बताते हैं कि शब्दों को भूल जाने का मतलब होता है अपने संस्कारों को भूल जाना।कुबेरनाथ राय का कहना रहा कि हिन्दी ऐसी होनी चाहिए जिसे सारा भारत समझ सके और इसका शब्द भंडार लोकभाषा, प्रांतीय भाषा, और संस्कृत आदि के मेल और सहयोग से आगे बढ़ेगा।

आपका भी यदि ऐसे किसी कठिन शब्द से सामना होता है तो घबराने के बजाय या शब्दकोश को तरफ भागने के स्थान पर उस निबंध को सावधानी से पढ़ना चाहिए। अर्थ खुद-ब-खुद शीशे की तरह साफ हो जाएगा।

शब्दों के इस तरह के प्रयोग के बावजूद राय के निबंधों को पढ़ते वक्त कोई भी सुध -बुध खोए बगैर नहीं रहता। इसका कारण है उनके निबंधों की आत्मीयता और उनकी शैली का वैशिष्ट्य। आलोचक विश्व नाथ प्रसाद तिवारी के शब्दों में, "श्री राय कहीं आत्मप्रसंगों द्वारा, कहीं कथा द्वारा, कहीं किसी लोक कथा या बहुत प्रेत की काल्पनिक कथा द्वारा ऐसा आत्मीय

वातावरण बनाते हैं कि कभी आत्मकथा का, कभी संस्मरण का, कभी रिपोर्ताज का आनंद मिलने लगता है।“

कुबेरनाथ राय लिखने से पहले विषय और वातावरण को अच्छी तरह से जान पहचान लेते हैं। फिर उसे चित्रकार की तरह से सुंदर बनाते हैं। आबो-हवा से उनका जुड़ाव अव्वल दर्जे का है। मौसम के मिजाज से वे खुश होकर लिखते हैं तो निबंध तस्वीर की मानिंद चकाचक हो जाता है। गाँव की सुंदर सुबह हो या शहर की खुशनुमा शाम, कुबेर नाथ राय हमेशा पुलक पुलक कर लिखते हैं। वे प्रकृति को अपना परिवार मानते हैं।

जहां तक कुबेरनाथ राय के निबंधों की शैली का सवाल है, वह अपने आप में अनूठी है। जिस गहराई से आपने बहुत से विषयों का गहन अध्ययन करके इस ललित शैली में लिखा है, वह अपने आप एक उदाहरण है। एक ही वाक्य में वे कैसे लिख लेते हैं, “ अंग्रेज गया, हिंदरेज मलिक बना। जब हिंदरेज हटेगा तो वह जन आएगा और जनतंत्र आएगा।” यूँ तो कुबेरनाथ राय ने अपने निबंधों में अक्सर ‘मैं’ की शैली अपनाई है, लेकिन बात केवल ‘मैं’ की ही नहीं होती। इसमें ‘अहं’ भी आता है और ‘इदं’ भी। श्री राय ने अपने ललित निबंधों में ऐसे बहुत से निबंधों का शुमार किया है जिन्हे ‘कथात्मक’ शैली का कहा जा सकता है। इनमें कहानी के कई तत्व मिल जाते हैं। उदाहरण के लिए ‘महाकवि की तर्जनी’ निबंध में कहानी ज्यादा है और निबंध कम। कथा से मिलती-जुलती जिस दूसरी शैली के तत्व इनकी रचनाओं में मिलते हैं वह है आत्मकथ्य या एकालाप। इस शैली के निबंधों को उत्तम पुरुष में लिखा गया है। ‘रस आखेटक’ में इस शैली के कई निबंध हैं जैसे ‘ कवि प्रेत ने कहा’। इन निबंधों में आवेग शैली की प्रधानता है। वाक्य छोटे छोटे होते हैं। उदाहरण के लिए ये पंक्तियाँ देखें, “ मैं बड़ी हुई। सभी मुझे प्यार से राजहंसी-‘पिनीलोपी’ कहने लगे अन्यथा मेरा नाम था ‘अनाइया।’”

इस तरह से लेखक अपने निबंधों में देश, काल –वातावरण का चित्रण तो करता ही है उन पर टिप्पणी भी करता चलता है।

कुबेरनाथ राय ने अपने कई निबंध पत्र शैली में भी लिखे हैं। एक पूरा निबंध संग्रह है – पत्र मणिपुत्तुल के नाम’ । कुबेरनाथ इस शैली को ‘संस्कृत की ‘चंपू’ शैली के अनुरूप मानते हैं। कुबेरनाथ राय के कई निबंध ‘फ़ैंटेसी शैली’ में भी हैं। इन निबंधों में बिखरे हुए स्वप्न चित्र और अजीबोगरीब नजारे दिखाई देते हैं। न केवल कथा-कहानी, एकालाप, पत्र, या फैंटेसी के ही तत्व इनकी शैली में नहीं बल्कि रेखाचित्र, संस्मरण,रिपोर्ताज,यात्रा-वृत्तान्त आदि अनेक विधाओं के तत्व भी इनकी रचनाओं में हैं। शैली के बहुत से शिल्पगत प्रयोगों ने इनके निबंधों को अंग्रेजी के ‘एस्से’ की एकरसता से दूर कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि ये निबंध एक विधा के रूप में विस्तार पाकर ‘ललित’ हो गए। अपने निबंधों में बहुत सी विधाओं का मेल कराकर कुबेरनाथ राय ने हिन्दी ललित निबंध को उसके बने बनाए फ्रेम से आजाद कर दिया।

आपको कुबेरनाथ राय के निबंधों में उनकी मस्ती बहुत पसंद आएगी। वे ऐसे लिखते हैं जैसे आपको सलाह या परामर्श दे रहे हों। एक जगह उन्होंने अपने मन की हालत बयान करते हुए लिखा है, “ मैं कोई हलनद्ध गोरू यानी ‘गोरूप’ जेव तो हूँ नहीं कि पैना खाता हुआ सीधी

हराई पर ही चलता रहें। मैं स्वयं आनंद लेने के लिए शिव के सांड की तरह थोड़ा इधर-उधर बहक भी जाऊँ तो क्या हर्ज है? आखिर सारा साहित्य लेखन के द्वारा प्राप्त आनंद की जुगाली ही तो है।”

बोध प्रश्न

- कुबेरनाथ राय के निबंधों में शब्द प्रयोग क्यों और कैसे खास है?
- एकालाप से आप क्या समझते हैं?

23.3.5 निबंधकार का हिन्दी साहित्य में स्थान

हिन्दी साहित्य में कुबेरनाथ राय को अक्सर ललित निबंधकार कहा जाता है। उन्हें ललित-निबंध के लिए प्रसिद्ध स्वयंभू त्रयी (विद्या निवास मिश्र, हजारी प्रसाद द्विवेदी, कुबेरनाथ राय) में शामिल किया जाता है। साहित्य लेखन में कुबेर नाथ राय की विधा निबंध और खासकर ललित-निबंध है।

उनके निबंधों में पाठक बहुत महत्वपूर्ण है। वे अपने पाठकों के लिए ‘मणि’(भारतीयता) की खोज करके प्रस्तुत करते हैं और इतिहास से ‘शहद’ निचोड़कर अपने पाठकों का मन मिठास से भरते हैं।

प्रभाकर श्रोत्रिय के अनुसार कुबेरनाथ राय के निबंधों में उनके सांस्कृतिक ज्ञान की प्रतिच्छवि भरपूर रहती है और बड़ा विस्मय होता है कि अंग्रेजी के अध्यापक को भारतीय संस्कृति के विभिन्न आयामों का और प्राचीन भारतीय साहित्य का इतना गहरा मर्म क्या केवल निजी साधना के बल पर मिला। विद्यानिवास मिश्र हिन्दी की ललित निबंध परंपरा के निष्ठ प्रतिनिधि थे कुबेरनाथ राय। उन्होंने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के फक्कड़ अंदाज और खुलेपन के बदले अपनी निजी शास्त्री किस्म की रसज्ञता की राह चुनी थी। उन्होंने जो भी लिखा, वह गहरी आस्था और निष्ठा से लिखा। सांस्कृतिक समयबोध उनमें प्रभूत ज्ञान और अंततः प्रज्ञा से जुड़ा पुष्ट हुआ। कुबेरनाथ राय निबंध साहित्य, विशेषकर ललित निबंध के कीर्तिमान हैं। उन्होंने इस विधा की आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की परंपरा को अपनी गौरवशाली सृजन-शृंखला से प्रतिष्ठित किया है।

विवेकी राय के शब्दों में इनके निबंधों में गंभीर पांडित्य, चिंतन, अन्वेषण और विश्लेषण के साथ भावावेश की अजस्र ऊर्जा लक्षित होती है। इनकी ऊँचाइयों को छानते हुए भी वे गाँव की जमीन से निरंतर जुड़े होते हैं, यह उनकी अन्यतम विशेषता है। ग्राम-संस्कृति के माध्यम से बृहत्तर भारतीय संस्कृति की खोज वाली विचार प्रवण दृष्टि कुबेरनाथ राय में है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। खेत-खलिहान की आत्मीयता, ग्राम-संस्कृति के सूक्ष्म रस-गंधों की पहचान, वर्तमान विकृति के भीतर से आदिम सांस्कृतिक स्रोतों का अन्वेषण और सबको वैदिक जीवन से जोड़ते हुए अप्रतिहत जीवन के प्रवाह रूप में उपस्थित करना लेखक की अद्‌भुत प्रतिभा का प्रमाण है।

बोध प्रश्न

- कुबेरनाथ राय जिस त्रयी के सदस्य हैं, उनके दूसरे दो सदस्य कौन हैं?

- ‘ग्राम संस्कृति’ से आप क्या समझते हैं?

23.4 : पाठ सार

हिन्दी के ललित निबंधकारों में कुबेरनाथ राय का प्रमुख स्थान है। इनके 20 निबंध संग्रहों में व्यक्ति-प्रधान निबंध हैं जिनको पढ़कर निबंधकार के ज्ञान की छाप पाठक पर हमेशा के लिए अंकित हो जाती है। कुबेरनाथ राय का अध्ययन बहुत व्यापक है। वे अपने निबंधों में भारतीय पौराणिक ग्रंथों और प्रतीकों का बहुत ही सटीक उपयोग करते हैं। कुबेरनाथ राय की रचनाओं का मूल स्वर भारतीयता का है। उनके लेखन में रामायण, महाभारत या पुराणों के संदर्भ अक्सर आते हैं।इनके निबंधों की भाषा तत्सम प्रधान है। वे बड़ी सरस शैली में ‘मैं’ से शुरुआत करके ‘इदं’तक अपने निबंध को ले जाते हैं। परंपरा से आधुनिकता की तरफ ले जाते हैं। कहा जा सकता है कि कुबेर नाथ राय के निबंध ‘भारतीय मन और विश्वमन’के बीच सामंजस्य स्थापित करते हैं। उन्होंने खुद अपने समूचे रचना-कर्म को पाँच खंडों या दिशाओं में बांटते हैं। पहला भारतीय साहित्य, दूसरा गंगा तीरी लोक-जीवन और आर्येतर भारत, तीसरा राम-कथा, चौथा गांधी-दर्शन, और पाँचवा आधुनिक विश्व चिंतन की चर्चा। विद्वानों के लिए इनके निबंधों में चिंतन-मनन की प्रचुर सामग्री मिलती है। आम पाठक इनके ललित निबंधों की भाषा-शैली की सुंदरता से प्रभावित होता है और इनकी विषय- वस्तु को समझते हुए प्रशंसा करता है।

23.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

‘निबंधकार कुबेरनाथ राय: एक परिचय’ इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित उपलब्धियां प्राप्त होती हैं।

1. निबंधकार कुबेरनाथ राय(1933-1996) हिन्दी के अद्वितीय ललित निबंधकार हैं।
2. इनके बीस निबंध संग्रहों के दो सौ से अधिक ललित और व्यक्ति व्यंजक निबंध हैं।
3. इन निबंधों में कुबेरनाथ राय देश और समाज, भारतीय संस्कृति पर विचार प्रकट करते हैं।
4. अंग्रेजी और यूरोपीय साहित्य से लेकर संस्कृत और भारतीय साहित्य के ज्ञान से कुबेरनाथ राय के निबंध भरे पड़े हैं।
5. इन निबंधों की भाषा संस्कृत निष्ठ तत्सम प्रधान हैं।
6. कुबेरनाथ राय की विशिष्ट शैली में ‘मैं’ से शुरुआत करके ‘इदं’ तक पहुंचा जाता है।
7. गंभीर चिंतन-मनन को सहजता से पेश करने वाले कुबेरनाथ राय के ललित निबंध हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि हैं।

23.6 : शब्द संपदा

1. उपजीव्य - जिन पुस्तकों के आधार पर बाद के लेखक अपनी किताबें लिखें। रामायण और महाभारत हमारे देश के साहित्यकारों के लिए उपजीव्य ग्रंथ रहे हैं।
2. भदेस - आवेश में आकर किसी पर प्रकट किया जाने वाला मानसिक असंतोष, अभद्र
3. फूहड़पन - किसी काम को भद्दे ढंग से करके उसे बिगाड़ देना ।
4. आदिम - सर्वप्रथम, आदि में उत्पन्न, पहला · अविकसित, सीधे-सादे ढंग का, · बहुत पुराना
5. आर्तनाद - दुःखी व्यक्ति की दर्द भरी पुकार
6. आक्रोश - बहुत अधिक क्रोध या गुस्सा दिखाना
7. रिपोर्ताज - किसी घटना, खबर, का आंखो देखा हाल का ज्यों का त्यों वर्णन जिसमें संपूर्ण विवरण सामने आ जाए।
8. चंपू – गद्य और पद्य का मेल
9. प्रभूत - बहुत अधिक

23.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड –(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए

1. कुबेरनाथ के व्यक्तित्व और कृतित्व पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
2. ललित निबंधकार के रूप कुबेरनाथ राय के योगदान का सारगर्भित परिचय दीजिए।
3. कुबेरनाथ राय के निबंधों के सांस्कृतिक पक्ष को उदाहरण देकर पुष्ट कीजिए।
4. निबंधकार के रूप में कुबेरनाथ राय की भाषा-शैली पर विचार कीजिए।
5. 'कुबेरनाथ राय के निबंधों में भारतीयता' विषय पर एक सारगर्भित निबंध लिखिए।

खंड –(ब)

लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए

1. कुबेरनाथ राय के निबंध व्यक्ति-प्रधान किस तरह से हैं?
2. कुबेरनाथ राय ने अपने निबंध किन किन शैलियों में लिखे? किन्ही चार शैलियों के नाम उदाहरण सहित दीजिए।

3. विश्व साहित्य के ज्ञान का उपयोग कुबेरनाथ राय ने अपने निबंधों में क्यों और कैसे किया?
4. 'कुबेरनाथ राय का तन-मन भारतीयता से भरा है।"इस कथन को मद्देनजर रखकर इनका परिचय दीजिए।
5. कुबेरनाथ ने अपने रचना कर्म को किन पाँच भागों या खंडों में विभाजित किया है?

खंड- (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1) इनमें से कौन ललित निबंधकार नहीं है

A) आचार्य राम चंद्र शुक्ल B) विद्या निवास मिश्र

C) कुबेरनाथ राय D) हजारी प्रसाद द्विवेदी

2) कुबेरनाथ राय के निबंध संग्रहों की संख्या है।

A) 20 B) 21 C) 12 D) इनमें से एक भी नहीं

3) कुबेरनाथ राय की शैली की यह विशेषता नहीं है-

A) चंपू शैली B) ललित निबंध C) फ़ैंटेसी शैली D) पत्र शैली

4) 'प्रजागर पर्व में साहित्यकार' में 'प्रजागर' किस ग्रंथ से लिया गया शब्द है?

A) रामायण B) महाभारत C) वेद-पुराण D) इनमें से किसी में नहीं

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

1) कुबेरनाथ राय के निबंध एक विधा के रूप में विस्तार पाकर ______________ हो गए।
2) कुबेरनाथ राय ने अपने निबंधों में अक्सर _____________ की शैली अपनाई है।
3) कुबेरनाथ राय की रचनाओं का मूल स्वर ___________________ का है।
4) 'महाकवि की तर्जनी' निबंध में ________________ ज्यादा है और निबंध कम।

III. सुमेल कीजिए

1) मिश्र, द्विवेदी, और राय क) सही हिंदू
2) पंडित जवाहरलाल नेहरू ख)निबंध संग्रह
3) पत्र मणिपुत्तुल के नाम ग) ललित निबंध के स्वयंभू त्रयी
4) महात्मा गांधी घ) आधुनिक हिंदू

23.8 : पठनीय पुस्तकें

1. कुबेरनाथ राय:रचना संचयन : हनुमानप्रसाद शुक्ल
2. कुबेरनाथ राय : विश्वनाथ प्रसाद तिवारी
3. कुबेरनाथ राय : परिचय और पहचान : राजीव रंजन
4. हिन्दी निबंध साहित्य के परिदृश्य में कुबेरनाथ राय: डॉ॰ कृष्णचंद्र गुप्त

इकाई 24 : कुबेरनाथ राय के निबंध 'एक महाकाव्य का जन्म' की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

24.1 प्रस्तावना
24.2 उद्देश्य
24.3 मूल पाठ : कुबेरनाथ राय के निबंध 'एक महाकाव्य का जन्म' की विवेचना
24.3.1 विषय-वस्तु
24.3.2 प्रयोजन
24.3.3 व्यक्त वैचारिकता
24.3.4 भाषा- सौष्ठव
24.3.5 शैली-सौन्दर्य
24.4 पाठ सार
24.5 पाठ की उपलब्धियां
24.6 शब्द संपदा
24.7 परीक्षार्थ प्रश्न
24.8 पठनीय पुस्तकें

24.1 : प्रस्तावना

भारत में कौन ऐसा होगा जिसने अयोध्या के राजा राम की कहानी पढ़ी , सुनी या न देखी हो। अल्लामा इकबाल ने हिंदुस्तान में राम के वजूद को ठीक ही पहचाना था।

है राम के वजूद पे हिन्दोस्ताँ को नाज़
अहल-ए-नज़र समझते हैं इनको इमाम-ए-हिंद।

'रामायण' कहते ही आप एक दम से बात समझ जाते हैं। इस महाकाव्य को पहले पहल ऋषि वाल्मीकि ने संस्कृत में लिखा था।हमारे देश में 'रामायण' का बड़ा सम्मान है। वाल्मीकि की इतनी इज्जत है कि आपको आदि कवि कहा जाता है। 'आदि' का मतलब है 'पहला' या शुरुआती।

आदि कवि वाल्मीकि के संस्कृत में लिखे गए महाकाव्य के जन्म की एक कहानी कही जाती है। यूँ तो इसे बहुत से लोग जानते हैं, पर ललित निबंधकार कुबेरनाथ राय ने इस महाकाव्य के जन्म की कहानी अपने अंदाज में पेश की है। उनका अनोखा अंदाजे-बयां 'महाकाव्य का जन्म'नामक इस निबंध में आप देख सकते हैं। इस इकाई में 'रामायण के जन्म की मनोवैज्ञानिक पूर्वभूमि या पृष्ठभूमि की चर्चा आप पढ़ने जा रहे हैं। कुबेरनाथ राय यहाँ हिन्दी, संस्कृत, और अंग्रेजी साहित्य के महाकाव्यों और नाटकों से उदाहरण लेकर यह बताते हैं कि रामायण की समूची थीम का सूचक यह एक श्लोक बहुत से अर्थों को उजागर करता है। इसे फिर फिर और बार बार पढ़ना-समझना होगा। जितनी वाल्मीकि कृत 'रामायण' बेहतरीन है, उतनी ही इस महाकाव्य के जन्म की कहानी भी दिलचस्प है। वाल्मीकि से उनकी प्रज्ञा, बुद्धि, मन, ब्रह्म ने एक महाकाव्य लिखवा लिया। यह कैसे हुआ,इसे जानना इस इकाई का मकसद है।

24.2 : उद्देश्य

इस इकाई के पाठ से आप

- कुबेरनाथ राय के ललित निबंध 'एक महाकाव्य का जन्म' का पाठ कर सकेंगे।
- वाल्मीकि रामायण के लेखन की प्रेरणा के बारे में जान सकेंगे।
- 'एक महाकाव्य का जन्म' के आधार पर इस निबंध के लेखन का प्रयोजन और लेखक की वैचारिकता और भाषा शैली की विविधता का विवेचन विश्लेषण कर सकेंगे।
- इस निबंध के आधार पर ललित निबंधकार के रूप में कुबेरनाथ राय के लेखन की विशेषताओं का आकलन कर सकेंगे।

24.3 : मूल पाठ : कुबेरनाथ राय के निबंध 'एक महाकाव्य का जन्म' की विवेचना

24.3.1 विषय वस्तु

ललित निबंधकार कुबेरनाथ राय ने लगभग 200 निबंध लिखे हैं। 1964 में प्रकाशित पहले निबंध से लेकर आपने जो भी निबंध लिखे उसमें उनकी लेखन शैली और गंभीर ज्ञान का सिलसिलेवार विकास देखा जा सकता है। 'विषादयोग'(1974) नामक निबंध संग्रह के बहुत से निबंधों में लेखक ने इसी बात को अलग अलग तरह से पेश किया है। इस निबंध संग्रह में एक ललित निबंध है- महाकाव्य का जन्म।

इस निबंध में कुबेरनाथ राय ने वाल्मीकि कृत रामायण नामक महाकाव्य के लेखन की पृष्ठभूमि का ललित निबंध शैली में वर्णन किया है। इस निबंध के लिखने का कारण है - संस्कृत के आदि कवि वाल्मीकि द्वारा रचित महाकाव्य के जन्म की कथा कहना।

कुबेरनाथ राय के द्वारा लिखित ललित निबंध 'एक महाकाव्य का जन्म' में जिस महाकाव्य के जन्म की कहानी बतायी गई है वह वाल्मीकि की 'रामायण' के जन्म की है। कुबेर नाथ राय इस निबंध को शुरू करते हुए लिखते हैं, " अब भी रामकथा में उतना ही आनंद आता है,जितना प्रथम बार पढ़ने सुनने में आया था। हम यहाँ पर ऐसी ही एक जानी –सुनी कथा की चर्चा कर रहे हैं। यों हमारा लक्ष्य कथा नहीं, उसके अभ्यंतर का अनुसंधान है। देखा जाय। "
यह बात तो ठीक है कि जानी-सुनी बात को दोबारा सुनना और सुनाना उतना मजेदार नहीं होता। फिर भी रामायण की कहानी ऐसी है जो बार बार सुनी जाती है।'रामायण के जन्म की कथा' भी कई बार बताई जाती है। बात उन दिनों की है जब तमसा और गंगा नदी के किनारे निषाद लोगों की बस्तियां थीं। नदी के किनारे नाविक और मछली पकड़कर रोजगार करने वाले किसी तरह गरीबी में जिंदगी बिता रहे थे। दूसरी तरफ ऋषि, मुनि और ज्ञानी वेद मंत्रों और ऋचाओं का गायन कर रहे थे। तब के प्रतापी राजा इक्ष्वाकु कुल या वंश के थे। मतलब यह है कि एक तरफ तो देश में खुशहाली थी, दूसरी तरफ लोग गरीब भी थे। आज भी तो हमारे देश में कहीं अठारहवीं शताब्दी जैसे हालात हैं और कहीं लोग 21 वीं सदी से भी आगे निकलकर खुशहाल हैं। तब तीर कमान चलाने में महारत हासिल किये एक निषाद ने एक बार फिर से अपना तीर चलाया। निशाना था सारस जैसा क्रौंच पक्षी का एक जोड़ा। यह जोड़ा मजे से आपस में चोंच लड़ा रहा था। इस प्रेमी जोड़े में से एक को तीर जा लगा। वह फडफड़ाता हुआ नीचे गिर

गया। सारा जंगल चीख पड़ा। हवा चुप हो गई। कायनात काँप गई। कुबेरनाथ राय कहते हैं कि इससे पहले तो शोक का जन्म हुआ,और फिर क्रोध का। हुआ कुछ यूँ कि उसी वक्त एक ऋषि नदी से नहाकर बाहर आए। उनके मुँह से एक बार नहीं बार बार यही बात बेसाख्ता निकल पड़ी, " ओ निषाद, जा तू कभी प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं करेगा-क्योंकि काममोहित क्रौंच के जोड़े में से एक को तूने मार डाला है।"

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधी काममोहितम् ।।

इस संस्कृत श्लोक को आज बहुत से लोग जानते हैं। यह घटना भी जानी सुनी है। इसी घटना से साहित्य में राम के अवतार का प्रसंग सामने लाया जा सका। इस घटना का बहुत महत्व है। कुबेरनाथ राय कहते हैं कि रामायण का यह प्रसंग रामायण की पूरी 'थीम' का सूचक है।रामायण की थीम है 'पौलत्स्य वध' और इसका सूचक वृत्त है 'क्रौंच वध'। बहुत से देशी-विदेशी महाकाव्यों में यह खास तरह की तकनीक अपनाई जाती रही है।कवि कुल गुरु कालिदास के 'अभिज्ञान-शाकुंतल' में हरिण या मृग का प्रसंग है तो शेक्सपीयर के 'मैकबेथ' नाटक में तीन डायनों का जिक्र है। इन्ही के दूसरे नाटक ' हैमलेट' में कथानायक के पिता का भूत है। कहने का मतलब यह है कि रामायण की लेखन प्रक्रिया का अंग बनकर काममोहित क्रौंच के जोड़े की यह घटना आती है। वाल्मीकि ने इस घटना की चर्चा करके रामायण के अर्थ-विस्तार का संकेत बीज पेश किया है।

रामायण वीर रस का काव्य है और साथ ही करुण रस का भी। इस महाकाव्य की थीम है शिव-अशिव का संघर्ष। अतः यह वीर रस का काव्य है। पर यह भी सच है कि रामायण की जड़ें शोक और करुणा में हैं, चाहे यह राम की करुणा हो या समूची कायनात का दर्द। आजकल के अध्यापकों से लेकर कवि कालिदास तक यही कहते हैं कि 'शोक ही श्लोक बन गया' और साहित्य का आदि श्लोक ही करुण रस है। पर सच्चाई यह है कि शोक नहीं, शोक से जन्मा 'रोष' श्लोक बन गया। यह श्लोक शोक नहीं, शाप है। यह पवित्र रोष है। यह पवित्र क्रोध है। रामायण की समूची 'थीम' का सूचक का यह श्लोक इसी शोक रूप 'उत्स' और क्रोध रूप 'विस्तार' की सूचना देते हैं। जैसे ही यह श्लोक महाकवि वाल्मीकि को मिलता है, उनका मन मूर्छा या ट्रांस (Trance) की अवस्था में पहुँच जाता है। वे बार बार ध्यान में चले जाते हैं और मन में बैठे ब्रह्म का ख्याल करके उस घटना को याद करते हैं। उन्हें उनके हृदय में बैठे ब्रह्मा ही तो राम चरित का वर्णन करने की प्रेरणा देते हैं।

ब्रह्मा या प्रजापति एक दार्शनिक प्रतीक हैं। ये बुद्धि का प्रतीक हैं।आपको इस बुद्धि के बारे में एक मिसाल देकर समझाते हैं। "एक बड़ी कड़ाही में चाशनी रखी है। उसमें रसगुल्ले, खीरमोहन, गुलाबजामुन, जलेबी – और मान लें कि तली हुई मिर्च भी – डाले गए हैं। प्रत्येक के अंदर चाशनी का रस आ आ गया है। पर सब के भीतर चाशनी का रस अलग अलग स्वाद देगा। यह स्वाद 'प्रज्ञा' है।" एक उदाहरण छान्दोग्य उपनिषद में भी आता है। देव-दानव-और मनुष्य को इसी सत्ता से 'द' का उपदेश दिया जाता है। भोगी देवताओं के लिए 'द' का अर्थ होता है

'दम', दानवों के लिए 'दया' और लोभी मनुष्यों के लिए इसका अर्थ 'दान' होता है। कहने का मतलब है कि ब्रह्मा को विश्वप्रज्ञा या बुद्धि का प्रतीक माना गया है।

इस बात को और आगे न बढ़ाते हुए आप को यह जान लेना ही बहुत होगा कि किसी भी भावात्मक मूल रूप (फॉर्म) अथवा किसी ज्ञान का बीज सदा मन से उपजता है। फिर यह वहाँ से दान (जकात) के रूप में लिया जाता है। वाल्मीकि ने अपने मन में बैठे ब्रह्मा से ज्ञान प्राप्त किया। बाहर एक निर्मम घटना घटी। इससे वाल्मीकि का मन बड़ा दुखी हुआ। वे कुछ देर के लिए खुद को भी भूल गए। उनके मन से तब यह श्लोक अपने आप निकला। यह रोष से भरा था। फिर उस रोष से उनके मन के भीतर से धीरे धीरे रामकथा का पूरा 'फॉर्म' उदित हुआ। उनके मन में बैठे ब्रह्मा ने उनकी प्रज्ञा को आशीर्वाद दिया। और वे श्लोक लिखने लगे। इस तरह एक महाकाव्य जिसे रामायण कहते हैं उसका जन्म हुआ।

रामायण की कथा में राम सीता की अग्नि परीक्षा के अवसर पर राम ने कहा था कि कुल की और अपनी मर्यादा के लिए उन्होंने रावण का वध किया। पर निबंधकार ने रामायण की कथा को ध्यान से पढ़कर यह माना है कि मर्यादा के लिए नहीं बल्कि दुनिया के दुख और कष्ट को दूर करने के लिए राम ने रावण से युद्ध किया था। संसार को दुख और पाप से मुक्त करने के लिए राम ने रावण को मारा।

बोध प्रश्न

- किस घटना से वाल्मीकि का मन पहले शोक और फिर क्रोध से भर गया?
- 'शोक','रोष' और 'क्रोध' शब्दों का प्रयोग करते हुए 'एक महाकाव्य का जन्म' की पृष्ठभूमि स्पष्ट कीजिए।

24.3.2 प्रयोजन

आपने देखा और समझ लिया होगा कि इस निबंध का लेखक रामायण की कहानी नहीं सुना रहा। उसका उद्देश्य है रामायण की कथा के भीतर जाकर कुछ नयी बात खोज कर पेश करना। तार्किक रूप से यह समझाना कि रामायण नामक इस विश्व प्रसिद्ध महाकाव्य का जन्म कैसे हुआ। ललित निबंधकार कुबेर नाथ राय एक तो एक शिकारी या बहेलिये के तीर से सारस जैसे क्रौंच पक्षी के मारे जाने की कहानी सुनाते हैं , दूसरी ओर वह इस कहानी के असर या प्रभाव की चर्चा करते हैं। इस घटना का जो असर कवि पर हुआ उसको यहाँ बहुत से उदाहरण देकर समझाया गया है। यह बताया गया है कि किस तरह मन में बैठी प्रज्ञा या बुद्धि आदमी को उसकी आदतों के अनुसार रास्ता दिखाती है। वे इस कथा के बहाने उसके 'अभ्यंतर का अनुसंधान' करने की कोशिश करते हैं।

इस श्लोक के निकलते ही कवि वाल्मीकि खुद से सवाल करते हैं कि इसका मकसद या प्रयोजन क्या है। वे बेसुध से हो जाते हैं। तब उन्हें अपने अंदर की आवाज सुनाई देती है। वे समझ जाते हैं कि अंदर बैठी शक्ति, देवता, विधाता उनकी बुद्धि या प्रज्ञा है।हम सब के अंदर बैठी यह शक्ति हमें सलाह देती है, आशीर्वाद देती है, रहनुमाई करती है, मार्गदर्शन करती है और रास्ता दिखाती है। ठीक वैसे ही जैसे महाकवि को एक महाकाव्य लिखने की प्रेरणा मिली।

उन्हें एक घटना से शोक हुआ, फिर रोष और उससे उनके मन में विचार हुआ कि राम कथा लिखी जाए।

निबंध लेखक ने क्रौंच वध प्रसंग को रामायण की कहानी में इस तरह पिरोया है कि लगता है राम और सीता छिन्न मिथुन क्रौंच हैं। क्रूर व्याघ्र या शिकारी की भूमिका का विस्तार रावण में दिखाई देता है। शाप का फैलाव राम और रावण के युद्ध में होता दिखाई देता है। कुबेरनाथ राय का मत है कि राम ने रावण का वध कुल की और अपनी मर्यादा के लिए नहीं कहा। उन्होंने सारी दुनिया के दुखों को दूर करने के लिए अवतार लिया था। इसलिए उसे मार कर सनसार से बुराई को मिटाया। इसलिए यह कहना कुबेरनाथ राय को ज्यादा ठीक लगता है कि वाल्मीकि ने अपने मन में बैठे ब्रह्म से प्रेरणा पाकर इस महाकाव्य को लिखना शुरू किया।

वाल्मीकि और ब्रह्मा का साक्षात्कार इसी तथ्य का एक स्थूल और कथात्मक रूपांतर है। बाहर एक निर्मम घटना घटी, काम मोहित क्रौंच का वध। इससे वाल्मीकि का मन इतना शोकाभिभूत हुआ कि वे व्यक्तिसत्ता भूल गए और निवैयक्तिक मनःस्थिति में इनकी बुद्धि का चैतन्यमय स्तर जाग्रत हो गया और उससे प्रथम निकला उच्छवास की भांति एक रोशदीप्त श्लोक। और,फिर उस उच्छवास के स्तर से भी ऊपर उठने पर उनके मन में धीरे धीरे राम कथा का पूरा 'फॉर्म' उदित हुआ और उस लोकोत्तर मनःस्थित से ध्यान-योग की दृढ़ समाधि के मध्य बुद्धि या विश्व-प्रज्ञा ने उन्हें आशीर्वाद देकर उक्त 'फॉर्म' या रूप को छंदोबद्ध वाणी प्रदान करने का आदेश दिया। यही है रामायण के जन्म की मनोवैज्ञानिक पूर्व भूमि। इसी को समझना और समझाना इस निबंध का प्रयोजन है।

एक वाक्य में कहें तो कुबेरनाथ राय के द्वारा लिखित "एक महाकाव्य का जन्म' निबंध का प्रयोजन यह बताना है कि क्रोध से नहीं बल्कि करुणा या हमदर्दी से रामायण जैसे महाकाव्य का जन्म होता है। कुबेरनाथ राय को अपने जीवन में धीरे-धीरे यह बात अच्छी तरह से समझ में आयी कि बेमतलब का गुस्सा करना, विद्रोह का बिगुल बजाना, और घमंड दिखाना बेकार है।

बोध प्रश्न

- 'क्रौंच वध'का कवि पर क्या असर हुआ?
- 'क्रौंच वध' की घटना ने वाल्मीकि से एक महाकाव्य कैसे लिखवा लिया?
- रामायण की कथा लिखने का प्रयोजन या मकसद क्या है?

24.3.3 व्यक्त वैचारिकता

श्री कुबेरनाथ राय को एक ललित निबंधकार के रूप में जाना पहचाना जाता है। उनका नाम ललित निबंधकारों की प्रस्थान-त्रयी की एक कड़ी में भी शुमार किया जाता है। भारत और भारतीयता को समझने के लिए आपके निबंध पढे जाते हैं। कुबेरनाथ राय ने लगभग 200 निबंध लिखे हैं। शुरुआत से ही लेखक ने अपने ललित निबंधों में अपने विचारों और भावनाओं का खुलासा किया है। उदाहरण के लिए 'रस आखेटक' निबंध में लेखक ने 'क्रुद्ध लालित्य' की वकालत की थी। पर बाद में उन्होंने अनुभव किया कि भारतीय साहित्य में 'क्रोध' को भी जगह मिलती रही है। आप जानते ही हैं कि वाल्मीकि का 'मा निषाद' वाला श्लोक और उसका अर्थ कवि के क्रोध से जुड़ा हुआ है। पर सही क्रोध का जन्म 'करुणा' से होता है। 'एक महाकाव्य का

जन्म' निबंध भी दरअसल भारत की प्राचीन धरोहर की पहचान कराने के लिए लिखा गया है। इस निबंध में भारत और भारतीयता की जड़ों की चर्चा की गई है। कैसे रामायण की रचना हुई ? इस महाकाव्य का जन्म कैसे हुआ? कुबेरनाथ राय इस निबंध के द्वारा उस जमाने या युग में हमें अपने साथ ले जाते हैं। यह बताते हैं कि उनका सम्पूर्ण साहित्य या तो क्रोध है, या उनके मन का हाहाकार। इस दुख या क्रोध को वे इस घटना से जोड़कर देखते हैं जिसमें एक निषाद ने एक पक्षी को मार डाला और जिसे देखकर ऋषि वाल्मीकि का मन व्यथा, क्रोध और रोष से भर गया। परिणाम स्वरूप रामायण लेखन का बीजारोपण हुआ। एक महाकाव्य का जन्म हुआ । इस महाकाव्य ने हमें मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के दर्शन कराए। 'रामत्व' में ही श्री कुबेरनाथ राय 'भारतीयता' को देखते हैं। उनकी नजर में राम जैसा होना ही सही ढंग की भारतीयता या हिंदुस्तानियत है। यह भारतीयता किसी एक की बपौती नहीं , सबकी है। पूर्ण भारतीय बनने का अर्थ है राम जैसा बनना।

निबंधकार जानते हैं कि रामायण की कहानी भारत भर में सबको पता है। वे कहानी सुनाने नहीं चले हैं बल्कि रामायण के लेखन की शुरुआत में हुई घटना का असली मतलब और मकसद तलाशने की कोशिश करते हैं। वे यह भी जानते हैं कि भारत के लोग एक साथ ही भूत, वर्तमान और भविष्य में रहते हैं। 'कल' उनके लिए आने वाला कल तो है ही, बीता हुआ कल भी है। इसलिए वे निबंध के शुरुआत में ही कहते हैं कि आज भी भारत के एक ही गाँव में गरीबी और अमीरी देखी जा सकती है। ठीक इसी तरह उस जमाने में भी यदि राजा राज करते थे और ऋषि मुनि पूजा पाठ तो गरीब लोग खेती और शिकार करके भोजन का जुगाड़ करते थे। ऋषि वाल्मीकि ने एक शिकारी को शिकार करते देखा और उससे उनके दिल को खासा दुख हुआ। उनके मुख से यकायक एक श्लोक निकल पड़ा। वे सोचने लगे। उनके दिल से आवाज आई। उन्होंने अपने मन की बात सुनी और राम सीता की कथा लिखनी शुरू की। अचानक हुई एक घटना ने उनसे एक महाकाव्य लिखवा लिया। इस प्रसंग को कुबेरनाथ राय ने अपने ढंग से पेश किया है।

संस्कृत साहित्य के आदि कवि का लिखा हुआ 'रामायण' नामक महाकाव्य विश्व साहित्य की अमूल्य निधि है। कुबेरनाथ राय ने यूरोपीय, अंग्रेजी, और संस्कृत साहित्य के दूसरे महाकाव्यों से तुलना करके यह बताया कि हर महान ग्रंथ के लेखन के पीछे एक घटना होती है। इसका इशारा कई बार कवि या रचनाकार अपने ग्रंथ में कहीं न कहीं जरूर करता है।

बोध प्रश्न

- आप कैसे कह सकते हैं कि सही क्रोध का जन्म करुणा से होता है?
- राम जैसा बनने का क्या अर्थ है?

24.3.4 भाषा सौष्ठव

ललित निबंधकार के निबंधों की सफलता का आधार उनकी भाषा-शैली भी है। लेखक अपना सारा पांडित्य इसमें डुबो देता है। कहानी में घटना के सहारे बात बढ़ाई जाती है, ललित निबंध में भाषा के सहारे बात बढ़ाई जाती है। कुबेरनाथ राय ने अपने निबंधों में तुलसी दास की तरह भाषाई विविधता को अपनाया है। कुबेरनाथ राय अंग्रेजी साहित्य में एम. ए. थे पर लिखा उन्होंने हिन्दी में। भोजपुरी/हिन्दी उनकी मातृभाषा थी। वे अपनी भाषा से तो लगाव रखते ही

थे, दूसरी भाषाओं से भी शब्द लेने में संकोच न करते थे। वे अवधी-भोजपुरी-मगही-मैथिली-छत्तीसगढ़ी के 'जानदार-पानीदार' शब्दों को लेने के लिए सदा तैयार रहते थे। श्री राय की हिन्दी ऐसी है जिसके पीछे भाषा की तत्सम प्रकृति की ताकत है। इसे समूचा भारत समझता है।श्री राय अपनी भाषा को संस्कृत जैसा बनाते हैं।

कुबेरनाथ राय की भाषा तत्सम प्रधान है। मिथक, पुराण, इतिहास, और प्राचीन भारतीय संस्कृति के संदर्भ लेकर लिखे गए ललित निबंधों की भाषा प्रसंगानुकूल होती है। 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध में लेखक की भाषाई विविधता की बानगी मिल जाती है। इस निबंध का विषय है एक महाकाव्य अर्थात संस्कृत के महाकाव्य 'रामायण' के जन्म की कथा को उजागर करना। निबंध में भाषा विषय के अनुकूल होनी चाहिए और यहाँ भी है। यदि आप इस निबंध को पढ़ते समय कुछ शब्दों को कठिन पाते हैं तो यह दिक्कत कुबेरनाथ राय के द्वारा पैदा नहीं की गई है। उनके अनुसार यह पाठक की कमजोरी या सीमा है। लेखक अपने भाषा प्रयोग से अपने पाठकों को शिक्षित भी करते चलते हैं। जिससे उनके पाठकों के शब्द कोश में भी बढ़ोतरी हो। वे भी अपनी भाषा और शब्द सामर्थ्य को बढा सकें।

यह भी आप देख सकते हैं कि निबंधकार अपने पाठकों को प्राचीन शब्दों से परेशान नहीं करना चाहते। वे उन्हें उदाहरण दे देकर अपनी बात को समझाते हैं। सांख्य-दर्शन के सिद्धांत "प्रज्ञा" का विवेचन करते वक्त वे एक आसान उदाहरण भी देते हैं, " एक बड़ी कढ़ाही में चाशनी रखी है। उसमें रसगुल्ले,खीरमोहन, गुलाबजामुन, जलेबी, - और मान लें कि तली हुई मिर्च भी- डाले गयें हैं। प्रत्येक के अंदर चाशनी का रस आ गया है। पर प्रत्येक के अंदर चाशनी का रस भिन्न स्वाद का भिन्न व्यक्तित्व का लगता है, यद्यपि है वह एक ही रस-जो बाहर-भीतर, ऊपर – नीचे व्याप्त किये हुए है। ब्रह्म-सत्ता और परमा प्रकृति की निर्वैयक्तिक स्थितियाँ, जैसे बुद्धि आदि भी इसी चाशनी की तरह हैं । यह विश्वव्यापी प्रज्ञा है।"

यह भी आप यहाँ जोड़ लें तो बेहतर रहेगा कि कुबेरनाथ राय के भाषा प्रयोग में तत्सम शब्दों की बहुतायत जरूर है, पर बीच बीच में कहीं कहीं देशज शब्दों का प्रयोग करने से भी वे नहीं चूकते। इस तरह के भाषिक प्रयोग निबंध को जगमगा देते हैं। निबंध के पहले ही पैराग्राफ का बेबाक अंतिम वाक्य है- देखा जाए। चाशनी वाला उदाहरण तो है ही। 'मन ही भूतों का अड्डा है' लिखकर वे अपनी मस्ती को पाठक के पास पहुंचाते है। आपको याद होगा कि कुबेरनाथ राय ने ललित निबंध की परिभाषा देते हुए उसे 'सांड' से जोड़ते हुए कहा था कि जो निबंध विषय के आसपास शिव के सांड की तरह छुट्टा यानी मुक्त रूप से चरण और संचरण-विचरण करे वह है ललित निबंध। 'मैं' का प्रयोग बेतकल्लुफ़ी का बायस है। अंग्रेजी के शब्दों से भी कोई परहेज वे नहीं करते। इसलिए यहाँ 'थीम' भी है और 'फोर्म' भी। ट्रांस(Trance) शब्द को तो वे बाकायदा समझाते हैं। इसे वे 'मूर्छा' कहते हैं। कुबेरनाथ राय अपने देशी संस्कारों के साथ हमारे सामने आते हैं।

बोध प्रश्न

- तत्सम प्रधान भाषा क्या होती है?

- कुबेरनाथ राय तत्सम प्रधान भाषा में क्यों लिखते हैं?

24.3.5 शैली सौन्दर्य

कुबेरनाथ राय का यह निबंध ललित निबंध तो है ही, इसमें कहानी का पुट भी खूब है। श्री कुबेरनाथ राय की तर्क-शैली बड़े कमाल की है। इसे धार देने के लिए वे विज्ञान, नृतत्व शास्त्र, भाषा विज्ञान, मिथक, इतिहास, आदि अनुशासनों का सहारा भी लेते हैं। अपने विशाल अध्ययन, अगाध पांडित्य, और अटल आत्मविश्वास की बदौलत वे भारत की सही 'आइडेंटिटी' (पहचान, परिचय) बताते हैं। वे बड़ी चतुराई से हिन्दी-पाठक के हिंदुस्तानी मन को दुनिया से जोड़ते हैं। इनके निबंध 'भारतीय मन और विश्व मन' के बीच पुल बनाते चलते हैं।

'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध में भी लेखक जब रामायण के जन्म की कथा पटकथा को पर्त दर पर्त खोलता है तो वह अंग्रेजी के महान नाटककार शेक्सपियर के एक नाटक 'मैकबेथ'का जिक्र करते हैं। जिस तरह इस नाटक में ठंडी रात, प्रेत चर्चा, और भीतर ही भीतर आत्मा की बीमारी का संकेत है, वैसे ही रामायण की सूचक 'मा निषाद' वाली घटना है।लेखक संस्कृत के कवि कालिदास के नाटक 'अभिज्ञान शाकुंतल' के पहले दृश्य का भी जिक्र करते हैं और बताते हैं कि वहाँ भी भयभीत मृग वाला प्रसंग एक बृहत्तर ट्रेजिक संकेत लेकर उपस्थित होता है। इस तरह निबंधकार अपनी लेखन शैली से तर्क और प्रमाण देते हुए बात को आगे बढ़ाते हैं। अर्थ-विस्तार करते हैं।

श्री राय की भाषा शैली को शुद्ध नागर शैली कह सकते हैं। आत्मीयता के लिए कुबेरनाथ राय अपने निबंधों में 'मैं' की शैली अपनाते हैं। 'एक महाकाव्य का जन्म' का पहला ही वाक्य है , " जानता हूँ कि जानी-सुनी बात को पुनः –पुनः सुनना और सुनाना बड़ा ही विरक्तिकर होता है।' और अंत में एक वाक्य आता है, " यहाँ पर मुझे स्मरण आता है एक प्रसंग।' विविध प्रसंगों और संदर्भों को अपनी लेखन शैली में शुमार करते हुए एक ओर तो पाठक को चमत्कृत करता है, दूसरी ओर आश्वस्त करता है कि निबंधकार उनके साथ है और उसका उद्देश्य अपनी विद्वत्ता का सिक्का जमाना नहीं है बल्कि पाठक को एक महाकाव्य के जन्म की पृष्ठभूमि से परिचित कराना है।

पौराणिक और मिथकीय संदर्भ कुबेरनाथ राय की भाषा और शैली को प्रांजल बनाते हैं। 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध को समझने के लिए इन संदर्भों का जानना जरूरी है। ब्रह्मा विष्णु और महेश का जिक्र यहाँ है। उपनिषदों जैसे छान्दोग्य और वृहदारण्यक का वर्णन विवेचन है। इनमें देवता, असुर, मनुष्य, प्रजापति, विराज, इन्द्र, देव-दानव, प्रजापति, विरोचन, आदि के उल्लेख हैं। इनके अलग अलग पौराणिक अर्थों का जिक्र है।

बोध प्रश्न

- कुबेरनाथ राय की शैली में तर्क का क्या स्थान है?
- अर्थ विस्तार के लिए कुबेरनाथ राय क्या करते हैं?

24.4 : पाठ सार

ललित निबंधकार कुबेरनाथ राय की रचना 'एक महाकाव्य का जन्म' को उनके एक प्रतिनिधि निबंध के रूप में देखा जा सकता है। आदि कवि वाल्मीकि ने संस्कृत में रामायण नामक महाकाव्य की रचना की। इस महाकाव्य के जन्म की एक बड़ी खास कहानी है। एक शिकारी ने क्रौंच पक्षी के जोड़े में से एक को अपने तीर से मार डाला। इस वाकये या वारदात का कवि के दिल पर बड़ा भारी असर पड़ा। वे क्रोध से भर गए। गुस्से में भरकर उन्होंने इस शिकारी को बददुआ देते हुए कहा कि वह इस तरह से किसी परिंदे की जान लेकर जिंदगी में कभी चैन न पा सकेगा। चैन इस हादसे के बाद कवि को भी नहीं आई। उनके मुँह से निकला संस्कृत का एक श्लोक बाद में एक महाकाव्य के जन्म की वजह बना। कुबेरनाथ राय संस्कृत और अंग्रेजी के कई ग्रंथों और उपनिषदों-पुराणों की कहानियों और मिसालों को सबूत की तरह पेश करते हैं। वे यह बताते हैं कि किसी महाकाव्य के जन्म के पीछे उसके कवि की जिंदगी में घटी कोई घटना होती है। अक्सर क्रोध, रोष या करुणा से भरी किसी घटना का असर होता है। यहाँ भी रामायण में राम-सीता के जीवन की कहानी को लिखने की प्रेरणा कवि वाल्मीकि को एक घटना से मिली। इस घटना से कवि के मुख से एक श्लोक 'मा निषाद' निकल पड़ा और रामायण जैसे श्रेष्ठ महाकाव्य के जन्म का कारण बना। इस निबंध की विवेचना करने से यह पता चलता है कि कवि के शोक से 'मा निषाद' वाले श्लोक का जन्म नहीं हुआ। शोक नहीं, शोक से जन्मा 'रोष' श्लोक बन गया।

24.5 : पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के पाठ से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं।

1. कुबेरनाथ राय के 20 निबंध संग्रहों में से एक 'विषाद योग' में 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध यहाँ लिया गया है।
2. इस ललित निबंध में 'एक महाकाव्य के जन्म' की पूरी कहानी का विवेचन किया गया है।
3. वाल्मीकि ऋषि ने क्रौंच पक्षी के एक जोड़े में से एक को एक शिकारी के तीर से मरते हुए देखा।
4. इससे उनके मन में रोष, क्रोध और करुणा आदि भाव पैदा हुए। एक श्लोक भी मुख से अचानक निकल पड़ा।
5. इन भावों ने उन्हें राम कथा को 'रामायण' के रूप में लिखने की प्रेरणा दी। उनके मन में बैठी प्रज्ञा या ब्रह्म ने उन्हें यह प्रेरणा दी।
6. एक महाकाव्य का जन्म आदि कवि वाल्मीकि की लेखनी से हुआ, इसके कारणों को कुबेरनाथ राय ने इस ललित निबंध में बड़ी खूबसूरती से विश्व साहित्य से उद्धरण और उदाहरण देते हुए पेश किया है।
7. तत्सम प्रधान भाषा शैली में कुबेरनाथ राय ने पौराणिक और मिथकीय उदाहरणों से इस निबंध को प्रस्तुत किया है। 'मैं' की शैली अपनाते हुए बड़ी आत्मीयता से लेखक ने पाठक को प्रभावित किया है।

24.6 : शब्द संपदा

1. महाकाव्य -	वाल्मीकि ने राम को नायक बनाकर आदि काव्य प्रस्तुत किया। उनके द्वारा अपनाई गई काव्य पद्यति कुछ समय तक सर्ग-बद्ध रचना कही गई, बाद में इसे महाकाव्य कहा गया।
2. उत्स -	आरंभ, बीज,शुरुआत
3. पांडित्य -	किसी विषय का बहुत अच्छा ज्ञान रखना
4. प्रस्थान-त्रयी –	सर्वश्रेष्ठ पहले तीन में से एक
5. मिथकीय -	मिथक संबंधी; मिथक से उत्पन्न, काल्पनिक; अनुश्रुत, लोककथात्मक
6. प्रांजल -	शुद्ध, खरा, ईमानदार, सच्चा, सरल,स्पष्ट, सहज।

24.7 : परीक्षार्थ प्रश्न

खंड –(अ)

दीर्घ प्रश्न

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में लिखिए।

1. 'एक महाकाव्य का जन्म' ललित निबंध के शीर्षक की सार्थकता सिद्ध कीजिए।
2. 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध के लेखन से निबंधकार का कौनसा प्रयोजन सिद्ध होता है?
3. पठित निबंध के आधार पर कुबेरनाथ राय की भाषा-शैली की विवेचना कीजिए।
4. "'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध की तत्सम-प्रधान भाषा विषयानुकूल है।" सिद्ध कीजिए।

खंड –(ब)

लघु प्रश्न

निम्न लिखित प्रश्नों के उत्तर 200 शब्दों में लिखिए।

1. निम्नलिखित श्लोक का अर्थ उस घटना का जिक्र करते हुए स्पष्ट कीजिए जिसकी वजह से यह कवि के मुख से निकल पड़ा।

   मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
   यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधी काममोहितम् ।।
2. 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध के आधार पर लेखक की तत्सम-प्रधान भाषा पर प्रकाश डालिए।
3. 'प्रज्ञा' के अर्थ को 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध में किस उदाहरण से समझाया गया है?
4. "एक महाकाव्य का जन्म" में प्रज्ञा के जन्म के लिए 'द' का उपदेश किस तरह मदद करता है?

खंड- (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1) यह प्रसंग रामायण की पूरी 'थीम' का सूचक है।

अ) पौलत्स्य वध ब) क्रौंच वध

क) 'द' का उपदेश ड) इनमें से एक भी नहीं

2)'विषाद योग' क्या है?

अ) निबंध संग्रह ब) दुख का समूह

क) ललित निबंध ड) ये सभी

3)'एक महाकाव्य का जन्म' में निबंधकार शेक्सपीयर के इस नाटक का उदाहरण देते हैं।

अ) किंग लीयर ब) द प्रिंस क) हैलमेट ड) हैमलेट

4) 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध में 'एक बड़ी कढ़ाही में चाशनी' उदाहरण से किसकी चर्चा है?

अ) प्रज्ञा ब) रामायण क) वाल्मीकि ड) शिकारी का जाल

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

1) सही क्रोध का जन्म ________________ से होता है।

2)'मा निषाद' वाले श्लोक का अर्थ कवि के _______________ से जुड़ा हुआ है।

3) 'एक महाकाव्य का जन्म' निबंध का प्रयोजन यह बताना है कि सही क्रोध का उत्स _______________ होना चाहिए, विद्रोह या अहंकार नहीं।

4) आत्मीयता के लिए कुबेरनाथ राय अपने निबंधों में _____________ की शैली अपनाते हैं।

III. सुमेल कीजिए

1) रामचरित मानस क) 'द' का प्रसंग

2) रामायण ख) संस्कृत

3) छान्दोग्य ग) महाकाव्य

4) अभिज्ञान शाकुंतल घ) अवधी

24.8 : पठनीय पुस्तकें

1. विषाद योग: कुबेरनाथ राय

2. कुबेरनाथ राय:रचना संचयन,हनुमानप्रसाद शुक्ल

3. कुबेरनाथ राय : विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

4. कुबेरनाथ राय : परिचय और पहचान : राजीवरंजन

परीक्षा प्रश्नपत्र का नमूना

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: B.A – HINDI (Core)

VI – SEMESTER EXAMINATION - 2024

TITLE & PAPER CODE : हिन्दी निबंध (BAHN602DST)

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग -2 और भाग -3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग 1 –

1. निम्न लिखित विकल्पों में सही विकल्प चुनिए। 10X1=10

i. प्रभाववादी समीक्षा के अग्रदूत कौन हैं? ( )

(A) रामचंद्र शुक्ल (B) भारतेंदु हरिश्चंद्र

(C) विद्यानिवास मिश्र (D) शांतिप्रिय द्विवेदी

ii. . शुक्ल युग की कालावधि है .... ( )

(A) सन् 1920 से 40 (B) सन् 1915 से 35

(C) सन् 1900 से 1920 (D) सन् 1857-1900

iii. पं. बालकृष्ण भट्ट का जन्म कहाँ हुआ था? ( )

(A) प्रयागराज (B) वाराणसी (C) दिल्ली (D) मुंबई

iv. प्रथम कलात्मक कथाकार माने जाते हैं- ( )

(A) जयशंकर प्रसाद (B) चंद्रधर शर्मा गुलेरी

(C) इंशा अल्लाह खान (D) कोई नहीं

v. रामचंद्र शुक्ल के पिता का ....नाम था? ( )

(A) पं. चंद्रबली पांडे (B) पं.चंद्रबली शुक्ल

(C) अ और ई (D) निवासी देवी

vi. हजारी प्रसाद की जन्म किस वर्ष में हुआ था ? ( )

(A) 1907 (B). 1890 (C) 1920 (D). 1930

vii. हुंकार' रचना का प्रकाशन वर्ष क्या है ? ( )

(A) 1925 (B) 1940 (C) 2000 (D)1938

viii. निबंध में 'मुख्य द्वार' से क्या तात्पर्य है? ( )

(A) खास रास्ता (B) सही रास्ता (C) मुश्किल भरा रास्ता (D) आसान रास्ता

ix. अस्ति की पुकार हिमालय' किस विधा की रचना है- ( )

(A) संस्मरण (B) कहानी (C) निबंध (D) रेखाचित्र

x. 'कविता क्या है' निबंध के लेखक कौन हैं? ( )

(A)श्याम सुंदर दास (B) महावीर प्रसाद द्विवेदी

(C)डॉ० नगेंद्र (D) आचार्य रामचंद्र शुक्ल

2 – भाग

निम्न लिखित आठ प्रश्नों में से किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 200 शब्दों में देना अनिवार्य है। 5X6 =30

2. शुक्लोत्तर युग का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
3. गुलाबराय के निबंधों की क्या विशेषता है?
4. सौ अजान एक सुजान' उपन्यास की मुख्य कथा क्या है?
5. कछुआ धरम से क्या अभिप्राय है?
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी के भाषा संबंधी विचारों पर प्रकाश डालिए।
7. डॉ. विद्यानिवास मिश्र के उपलब्धियों और सम्मान के बारे में लिखिए
8. 'अस्ति की पुकार हिमालय' निबंध की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
9. शिल्प-कला की दृष्टि से 'अतीत: एक आत्ममंथन' निबंध को विवेचित कीजिए।

भाग- 3

निम्न लिखित पाँच प्रश्नों में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 500 शब्दों में देना अनिवार्य है। **3X10=30**

10. हिन्दी निबंध में बालकृष्ण भट्ट का क्या योगदान है?
11. हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा जैनेंद्र की निबंध रचना की विशेषता बताइए।
12. गुलेरी जी के निबंधों की वैचारिकता के विविध आयामों को रेखांकित कीजिए।
13. निबंधकार के रूप में रामचंद्र शुक्ल की उपलब्धियों का विवरण दें।
14. महादेवी वर्मा ने भारतीय स्त्रियों की सोचनीय दशा का जिम्मेवार किसे बताया है?

****